

ऋग्वेद संहिता

(सरल हिन्दी भावार्थ सहित)

भाग-३

(मण्डल ७-८)



सम्पादक

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य



ऋग्वेद संहिता

[सरल हिन्दी भावार्थ सहित]

भाग- ३

[मण्डल ७-८]

संपादक :

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

भगवती देवी शर्मा

*

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं० – २५३०२००

२०१०

मूल्य : १७५ रुपये



• प्रकाशक
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

• संपादक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
भगवती देवी शर्मा

• संस्करण : २०१०



• मुद्रक :
युग निर्माण योजना प्रेस
गायत्री तपोभूमि, मथुरा (उ. प्र.)



देवसंस्कृति के उन्नायक, युगपुरुष पूज्यपाद श्रीराम शर्मा आचार्य



गीतों की संजीवनी द्वारा प्राणसुधा पिला जिनने लाखों को नवजीवन दिया





भूर्भुवः स्वः

तत्सवितुर्वरेण्यं

भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात्॥

***

उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अन्तरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करे।

*



अनुक्रमणिका

संकेत-विवरण

अथर्व० = अथर्ववेद
उत्त० = उत्तरार्द्ध
उ० भा० = उवट भाष्य
ऋ० = ऋग्वेद
ऐत० आ० = ऐतरेय आरण्यक
ऐत० ब्रा० = ऐतरेय ब्राह्मण
काठ० सं० = काठक संहिता
काठ० संक० = काठक संकलन
कौषी० ब्रा० = कौषीतकि ब्राह्मण
जैमि० ब्रा० = जैमिनीय ब्राह्मण
तैत्ति० ब्रा० = तैत्तिरीय ब्राह्मण
तैत्ति० सं० = तैत्तिरीय संहिता
द्र० = द्रष्टव्य
नि० = निरुक्त
पू० = पूर्वार्द्ध
मही० भा० = महीधर भाष्य
मैत्रा० सं० = मैत्रायणी संहिता
यजु० = यजुर्वेद
यजु० सर्वा० = यजुर्वेद सर्वानुक्रमसूत्र
शत० ब्रा० = शतपथ ब्राह्मण
सा० भा० = सायण भाष्य



ॐ

॥ अथ सप्तमं मण्डलम् ॥

[सूक्त - १]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- विराट्, १९-२५ त्रिष्टुप् ।]

५१३४. **अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युती जनयन्त प्रशस्तम् ।**
दूरेदृशं गृहपतिमथर्युम् ॥१ ॥

प्रशंसनीय, गतिमान्, दूर से परिलक्षित होने वाले गृहपति अग्नि को नर श्रेष्ठों ने हाथों और अँगुलियों की कुशलता से प्राप्त किया ॥१ ॥

५१३५. **तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन्त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित् ।**
दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः ॥२ ॥

घर में प्रज्वलित किये जाने योग्य, नित्य दर्शनीय, सदैव ज्वालायुक्त जो अग्निदेव हैं, उन्हें याजकों ने अपने रक्षण हेतु यज्ञ-स्थल में स्थापित किया है ॥२ ॥

५१३६. **प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ ।**
त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः ॥३ ॥

हे शक्तिशाली अग्निदेव ! भली प्रकार से प्रज्वलित हुए आप प्रचण्ड ज्वालाओं से हमारे निकट प्रदीप्त हों । ये आहुतियाँ निरन्तर आपको समर्पित की जा रही हैं ॥३ ॥

५१३७. **प्र ते अग्नयोऽग्निभ्यो वरं निः सुवीरासः शोशुचन्त द्युमन्तः ।**
यत्रा नरः समासते सुजाताः ॥४ ॥

जिनके पास सुन्दर जन्म वाले (मानव जीवन को सार्थक करने वाले याजक) बैठते हैं, वे अग्नियों में श्रेष्ठ अग्निदेव प्रकाशित होते हैं । अति तेजस्वी वे अग्निदेव हमारा कल्याण करते एवं सन्तान प्रदान करते हैं ॥४ ॥

५१३८. **दा नो अग्ने धिया रयिं सुवीरं स्वपत्यं सहस्य प्रशस्तम् ।**
न यं यावा तरति यातुमावान् ॥५ ॥

शत्रुओं को जीतने वाले हे अग्निदेव ! आप हमें वीर, बुद्धिमान् एवं श्रेष्ठ पुत्रों सहित प्रशंसित धन प्रदान करें, जिसका हिंसक शत्रु अपहरण न कर सकें ॥५ ॥

५१३९. **उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची ।**
उप स्वैनमरमतिर्वसूयुः ॥६ ॥



आहुति के योग्य, घृत धारण करने वाली जो नित्य सम्ब (यज्ञ पात्र जुहू अथवा स्थूल-सूक्ष्म सामग्री) सुदक्ष-श्रेष्ठ-कुशल (यज्ञाग्नि) के पास पहुँचती है, वह अपने ही धन दीप्ति प्राप्त करती है ॥६ ॥

[जो सामग्री यज्ञाग्नि में पहुँचती है, उसके अपने ही गुण यज्ञ की बहुलीकरण शक्ति से बढ़ते एवं भासित होते हैं ।]

५१४०. **विश्वा अग्नेऽप दहारातीर्येभिस्तपोभिरदहो जरूथम् ।**
प्र निस्वरं चातयस्वामीवाम् ॥७ ॥

हे अग्निदेव ! जिन तेजस्वी ज्वालाओं से आपने कटुभाषी असुरों का नाश किया, उसी तेज से समस्त शत्रुओं का नाश करें । आप हमारे रोगों को जड़ से मिटाएँ ॥७ ॥

५१४१. **आ यस्ते अग्न इधते अनीकं वसिष्ठ शुक्र दीदिवः पावक ।**
उतो न एभिः स्तवथैरिह स्याः ॥८ ॥

हे पवित्र करने वाले अग्निदेव ! आपकी प्रदीप्त ज्वालाएँ धवल हैं । जिस प्रकार आप अपने याजक के पास रहते हैं, वैसे ही हमारे स्तोत्रों से प्रसन्न होकर इस यज्ञ में रहें ॥८ ॥

५१४२. **वि ये ते अग्ने भेजिरे अनीकं मर्ता नरः पित्र्यासः पुरुत्रा ।**
उतो न एभिः सुमना इह स्याः ॥९ ॥

हे अग्निदेव ! आपके तेज को पितरों के हितैषी मनुष्यों ने विभिन्न स्थानों-देशों में फैलाया है । हमारे स्तोत्रों से प्रसन्न होकर आप हमारे यज्ञ में निवास करें ॥९ ॥

५१४३. **इमे नरो वृत्रहत्येषु शूरा विश्वा अदेवीरभि सन्तु मायाः ।**
ये मे धियं पनयन्त प्रशस्ताम् ॥१० ॥

(अग्निदेव का कथन है-) जो मनुष्य हमारे उत्तम कर्मों को जानते हैं । वे संग्राम में शत्रु-असुरों की माया को दूर करके विजयी होते हैं ॥१० ॥

५१४४. **मा शूने अग्ने नि षदाम नृणां माशेषसोऽवीरता परि त्वा ।**
प्रजावतीषु दुर्यासु दुर्य ॥११ ॥

हे अग्निदेव ! वीरतारहित पुत्र-पौत्रादि रहित घरों में हमें न रहना पड़े । घर के हितैषी हे अग्निदेव ! पुत्र-पौत्रादि से भरे-पूरे घर में हम आपकी उपासना करते हुए निवास करें ॥११ ॥

५१४५. **यमश्वी नित्यमुपयाति यज्ञं प्रजावन्तं स्वपत्यं क्षयं नः ।**
स्वजन्मना शेषसा वावृधानम् ॥१२ ॥

अश्वारूढ़, पूजनीय अग्निदेव की जहाँ नित्य उपासना की जाती हो (अर्थात् यज्ञ किया जाता हो), वैसा प्रजा से परिपूर्ण, सुसंतति को बढ़ाने वाला, घर हमें प्राप्त हो ॥१२ ॥

५१४६. **पाहि नो अग्ने रक्षसो अजुष्टात् पाहि धूर्तेरररुषो अघायोः ।**
त्वा युजा पृतनायूँरभि ष्याम् ॥१३ ॥

हे अग्निदेव ! असम्बद्ध, दुष्ट असुरों से आप हमारी रक्षा करें । सेना सहित आक्रमण करने वाले दुष्ट शत्रुओं से आप हमें बचाएँ । आपकी सहायता से हम उन्हें जीत लें ॥१३ ॥

५१४७. **सेदग्निरग्नींरत्यस्त्वन्यान्यत्र वाजी तनयो वीळुपाणिः । सहस्रपाथा अक्षरा समेति ॥१४॥**



दृढ़ भुजाओं वाला बलवान्-पुत्र अक्षय स्तोत्रों (अनश्वर- सनातन मंत्रों- सूत्रों) से जिन अग्निदेव की निकटता प्राप्त करता है, वे अग्निदेव अन्य अग्नियों को जाग्रत् करें ॥१४ ॥

[मंत्रों से जाग्रत् यज्ञाग्नि जनित ऊर्जा के प्रभाव से प्राणियों, वनस्पतियों एवं प्रकृति में वाञ्छित अग्नि-ऊर्जा विकसित हो, ऐसी कामना की गयी है। ऊर्जा के सार्थक प्रयोग के सूत्र अक्षर-सनातन हैं, समय के अनुरूप उनका जो स्वरूप पुरुषार्थपूर्वक प्रकट किया जा सके, वे प्रयोग वृद्धि पाएँ- बढ़ते रहें।]

५१४८. **सेदग्निर्यो वनुष्यतो निपाति समेद्धारमंहस उरुष्यात्।**
सुजातासः परि चरन्ति वीराः ॥१५ ॥

जो अग्निदेव अपने को प्रदीप्त करने वाले की, हिंसकों से एवं पापों से रक्षा करते हैं और जिनकी उपासना मनुष्य को उत्तम औरस पुत्र प्रदान करती है, वही अग्निदेव श्रेष्ठ हैं ॥१५ ॥

५१४९. **अयं सो अग्निराहुतः पुरुत्रा यमीशानः समिदिन्धे हविष्मान्।**
परि यमेत्यध्वरेषु होता ॥१६ ॥

जिन अग्निदेव को याजक, हवि प्रदान करके अच्छी तरह से प्रदीप्त करते है, याजक आदि जिनकी परिक्रमा करते हैं, वे ही श्रेष्ठ अग्निदेव हैं। इन्हें अनेकों बार आहुतियाँ अर्पित की गई हैं ॥१६ ॥

५१५०. **त्वे अग्न आहवनानि भूरीशानास आ जुहुयाम नित्या।**
उभा कृण्वन्तो वहतू मियेधे ॥१७ ॥

हे अग्निदेव ! हम प्रतिदिन दोनों प्रकार के कर्म (स्तुति एवं यजन) आपके निमित्त करते हैं। आप कृपा करके हमें धन के स्वामी बनाते हैं ॥१७ ॥

५१५१. **इमो अग्ने वीततमानि हव्याजस्रो वक्षि देवतातिमच्छ।**
प्रति न ईं सुरभीणि व्यन्तु ॥१८ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमारी इन सदैव प्रिय लगने वाली हवियों को समस्त देवताओं तक पहुँचाएँ। हमारे द्वारा अर्पित यह सुगन्धित आहुतियाँ देवताओं को बहुत प्रिय हैं ॥१८ ॥

५१५२. **मा नो अग्नेऽवीरते परा दा दुर्वाससेऽमतये मा नो अस्यै।**
मा नः क्षुधे मा रक्षस ऋतावो मा नो दमे मा वन आ जुहूर्थाः ॥१९ ॥

हे अग्निदेव ! आपकी कृपा से हम बुद्धिहीन न हों और न हमें भूखे रहना पड़े। हे देव ! हम कभी वस्त्र और संतान बिना न रहें। हे अग्निदेव ! हमें असुर शत्रु न मिलें। हमें घर या जंगल के मार्ग में मृत्यु प्राप्त न हो ॥१९ ॥

५१५३. **नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः।**
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२० ॥

हे अग्ने ! आप हमारे लिए उत्तम अन्न प्रदान करें। आप अपने याजकों को अन्न देते हैं। हम दोनों (स्तोता एवं हविदाता) आपके द्वारा दिये जाने वाले अनुदानों को प्राप्त करें। आप हमें सुरक्षित रखते हुए हमारा कल्याण करें ॥२० ॥

५१५४. **त्वमग्ने सुहवो रण्वसन्दृक् सुदीती सूनो सहसो दिदीहि।**
मा त्वे सचा तनये नित्य आ धङ्मा वीरो अस्मन्नर्यो वि दासीत् ॥२१ ॥

हे बल से उत्पन्न अग्निदेव ! उत्तम प्रकार (हवनीय) आहूत किये जाने वाले आप, रमणीय ज्वालाओं सहित प्रकट हों। आप हमारे पुत्र को दग्ध न करें। सदा उसकी रक्षा करते हुए, उस वीर पुत्र को दीर्घायु प्रदान करें ॥२१ ॥



५१५५. मा नो अग्ने दुर्भृतये सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु प्र वोचः ।

मा ते अस्मान्दुर्मतयो भृमाच्चिद्देवस्य सूनो सहसो नशन्त ॥२२ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे सहायक बनें । देवों-ऋत्विजों द्वारा प्रवृद्ध अग्निदेव हमारा पर्याप्त पोषण करें । हे बल के पुत्र अग्ने ! आपकी निग्रहात्मक (दण्डात्मक) बुद्धि और माया विभ्रम हमें व्याप्त न कर सकें ॥२२ ॥

५१५६. स मर्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम् ।

स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति ॥२३ ॥

हे अग्निदेव ! आप तेजस्वी एवं अमर हैं । आपके निमित्त जो याजक हवि अर्पित करता है, वह धनवान् हो जाता है । स्तोतागणों द्वारा गाये गये स्तोत्र, जिसके आश्रय में जाते हैं, वे अग्निदेव याजक की सदा रक्षा करें ॥२३ ॥

५१५७. महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान् रयिं सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम् ।

येन वयं सहसावन्मदेमाविक्षितास आयुषा सुवीराः ॥२४ ॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वज्ञ हैं । अतः आप हमें उत्तम एवं कल्याणकारी कार्यों में प्रेरित करें । हम स्तोतागण आपकी स्तुति करते हैं । हे बल द्वारा रक्षा करने वाले अग्निदेव ! आप हमें महान् ऐश्वर्य प्रदान करें, जिससे हम वीर पुत्र-पौत्रादि सहित पूर्ण आयु वाले होकर सुख से रहें ॥२४ ॥

५१५८. नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।

रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे निमित्त अन्न को पवित्र करें । जो हवि देते हैं, आप उन्हें अन्न-धन प्रदान करें । हम दोनों (स्तोतागण एवं याजकगण) आपके द्वारा दिये जा रहे दिव्य दान को प्राप्त करें । आप कृपा करके कल्याणकारी रक्षण साधनों से हमारी रक्षा करें ॥२५ ॥

[सूक्त - २]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** आप्री सूक्त (१ इध्म, समिद्ध अग्नि, २ नराशंस, ३ इळ; ४ बर्हि, ५ देवीर्द्वार, ६ उषासानक्ता, ७ दिव्यहोता- प्रचेतस् , ८ सरस्वती, भारती, इळा- तीन देवियाँ, ९ त्वष्टा, १० वनस्पति, ११ स्वाहाकृति) । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५१५९. जुषस्व नः समिधमग्ने अद्य शोचा बृहद्यजतं धूममृण्वन् ।

उप स्पृश दिव्यं सानु स्तूपैः सं रश्मिभिस्ततनः सूर्यस्य ॥१ ॥

हे अग्निदेव !आप आज हमारी समिधाओं को अंगीकार करें । यज्ञीय धूम्र को फैलाते हुएअच्छी तरह प्रदीप्त हों ।आपकी दिव्य, कान्तियुक्त, स्तुत्य किरणें (ऊर्जा) अन्तरिक्ष का स्पर्श कर, सूर्य की किरणों के साथ मिल जाएँ ॥१॥

५१६०. नराशंसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः ।

ये सुक्रतवः शुचयो धियंधाः स्वदन्ति देवा उभयानि हव्या ॥२ ॥

उत्तम कर्म करने वाले जो देवगण दोनों प्रकार की (सोमरूप एवं अन्नरूप) हवियों का आस्वादन करते हैं, उनके बीच प्रशंसनीय एवं पूजनीय अग्निदेव को हवियाँ प्रदान करते हुए, हम उनकी महिमा वर्णित करते हैं ॥२ ॥

५१६१. ईळेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम् ।

मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम ॥३ ॥



हे यजमानो ! आप उन अग्निदेव का सदैव पूजन (यजन) करते रहें, जो बलवान्, स्तुति के योग्य, सुदक्ष (कुशल) एवं द्यावा-पृथिवी के मध्य दूत के समान कार्य करते हैं ॥३ ॥

५१६२. **सपर्यवो भरमाणा अभिज्ञु प्र वृञ्जते नमसा बर्हिरग्नौ ।**
आजुह्वाना घृतपृष्ठं पृषद्वदध्वर्यवो हविषा मर्जयध्वम् ॥४ ॥

हे अध्वर्युगण ! आप घृत से भीगी कुशा अर्पित करते हुए यजन करें । याजकगण सेवा भाव से घुटने टेक कर (अर्थात् नम्र होकर) पात्र को भरते हैं एवं हविर्द्रव्य अर्पित करते हैं ॥४ ॥

५१६३. **स्वाध्यो३ वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता ।**
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे समग्रुवो न समनेष्वञ्जन् ॥५ ॥

देवत्व चाहने वाले, रथ प्राप्ति की इच्छा वाले, श्रेष्ठ कर्म करने वाले मनुष्य यज्ञ का आश्रय लें । यज्ञों में अग्नि को घृत से वैसे ही सींचें, जिस प्रकार नदियाँ समीपवर्ती क्षेत्र को सिंचित करती हैं । यज्ञाग्नि को याजक वैसा ही प्यार करें, जैसा कि गौ माता अपने बछड़े को करती हैं ॥५ ॥

५१६४. **उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः ।**
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय श्रयेताम् ॥६ ॥

जो कुशा के आसन पर विराजमान होने वाली, बहुतों से प्रशंसित, धन-ऐश्वर्य प्रदायिनी हैं, वे दोनों दिव्य रूप वाली, यजन करने योग्य उषा और रात्रि देवी स्वेच्छा से श्रेष्ठ दुग्ध देने वाली (अर्थात् कामधेनु) के समान हमारा कल्याण करें, हमें आश्रय प्रदान करें ॥६ ॥

५१६५. **विप्रा यज्ञेषु मानुषेषु कारू मन्ये वां जातवेदसा यजध्यै ।**
ऊर्ध्वं नो अध्वरं कृतं हवेषु ता देवेषु वनथो वार्याणि ॥७ ॥

हे होता ! आप यज्ञ करें, हम आपसे यह प्रार्थना करते हैं । आप हमारी स्तुति सुनकर इस यज्ञ को ऊर्ध्वगामी बनाकर देवताओं तक पहुँचाएँ । देवगण प्रसन्न होकर हमें धन प्रदान करें ॥७ ॥

५१६६. **आ भारती भारतीभिः सजोषा इळा देवैर्मनुष्येभिरग्निः ।**
सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु ॥८ ॥

भारतीगणों (सौर्य प्रवाहों) के साथ देवी भारती पधारें, देवताओं और मनुष्यों के साथ देवी इला (इळा) आएँ एवं सारस्वतों के साथ माँ सरस्वती पधारें और इन कुशाओं के आसन पर विराजें ॥८ ॥

५१६७. **तन्नस्तुरीपमध पोषयित्नु देव त्वष्टर्वि रराणः स्यस्व ।**
यतो वीरः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा जायते देवकामः ॥९ ॥

हे त्वष्टादेव ! प्रसन्न होकर आप हमें स्फूर्तियुक्त वीर्यवान् बनाएँ, जिससे देवताओं की कामना करने वाला, वीर, उत्तम दक्षता से कर्म (यज्ञ-कर्म) करने वाला पुत्र उत्पन्न किया जा सके ॥९ ॥

५१६८. **वनस्पतेऽव सृजोप देवानग्निर्हविः शमिता सूदयाति ।**
सेदु होता सत्यतरो यजाति यथा देवानां जनिमानि वेद ॥१० ॥

हे वनस्पते ! आप प्रज्वलित हों, अग्निरूप से समस्त देवगणों का आवाहन करें । अग्निदेव ही शान्तिदायक हवि को देवताओं के लिए अर्पित करते हैं । वे अग्निदेव ही देवगणों को बुलाने वाला सत्यनिष्ठ यज्ञ करें । (क्योंकि) अग्निदेव ही, वास्तव में देवों की उत्पत्ति के ज्ञाता हैं ॥१० ॥



५१६९. **आ याह्यग्ने समिधानो अर्वाङ् इन्द्रेण देवैः सरथं तुरेभिः ।**
बर्हिर्न आस्तामदितिः सुपुत्रा स्वाहा देवा अमृता मादयन्ताम् ॥११ ॥

हे अग्निदेव ! आप प्रदीप्त होकर, इन्द्र और त्वष्टादि देवगणों सहित रथारूढ़ होकर हमारे निकट आएँ । सुपुत्रों की माता अदिति इस कुशा के आसन पर बैठें तथा प्रदत्त आहुतियों से अमर-देवगण हर्षित हों ॥११ ॥

[सूक्त - ३]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५१७०. **अग्निं वो देवमग्निभिः सजोषा यजिष्ठं दूतमध्वरे कृणुध्वम् ।**
यो मर्त्येषु निध्रुविर्ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकः ॥१ ॥

हे देवताओ ! आप उन अनेक अग्नियों में पूज्य यज्ञाग्नि को दूत बनाकर प्रयुक्त करें, जो देवता होकर भी मनुष्य के साथी हैं जो यज्ञवान् या सत्यवान् हैं, घृत जिनका आहार है, जिनका तप-तेज विकारनाशक एवं पवित्रता प्रदान करने वाला है ॥१ ॥

५१७१. **प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ।**
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति ॥२ ॥

हिनहिनाते घोड़े जिस प्रकार घास को चरते चले जाते हैं, उसी प्रकार दावानल वृक्षों को उदरस्थ करता हुआ चलता है । इस अवस्था में वायु के प्रभाव से जिस ओर काला धुआँ जाता है, वही मार्ग अग्निदेव का होता है ॥२ ॥

५१७२. **उद्यस्य ते नवजातस्य वृष्णोऽग्ने चरन्त्यजरा इधानाः ।**
अच्छा द्यामरुषो धूम एति सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान् ॥३ ॥

हे यज्ञाग्ने ! आपकी नवीन ज्वालाएँ वृष्टि करने में समर्थ हैं । हे प्रकाशित यज्ञाग्ने ! आप नष्ट न होने वाली अपनी ऊर्जा सहित द्युलोक में पहुँचकर, देवों को तुष्ट करते हैं ॥३ ॥

५१७३. **वि यस्य ते पृथिव्यां पाजो अश्रेत्तृषु यदन्ना समवृक्त जम्भैः ।**
सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि ॥४ ॥

हे अग्निदेव ! आप जौ की तरह काष्ठादि का भी भक्षण करते हैं । जब आप अपने ज्वालारूपी दाँतों से काष्ठरूप अन्नों का भक्षण करते हैं, तब पृथ्वीलोक में आपका तेज शीघ्रता से फैलता है ॥४ ॥

५१७४. **तमिद्दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः ।**
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः ॥५ ॥

इच्छाओं की पूर्ति करने में समर्थ अग्निदेव की ज्वालाएँ तेजस्वी होती हैं । निशि-वासर गतिमान् अश्व के समान याजक, अग्निदेव की उपासना करते हैं । ये अति तरुण अग्निदेव अतिथि की तरह पूजनीय हैं ॥५ ॥

५१७५. **सुसन्दृक्ते स्वनीक प्रतीकं वि यद्रुक्मो न रोचस उपाके ।**
दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रति चक्षि भानुम् ॥६ ॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! उस समय आपका स्वरूप अति शोभनीय हो जाता है, जब आप सूर्यदेव जैसे देदीप्यमान होते हैं । आपका तेज विद्युत्वत् अन्तरिक्ष में फैलता है । दर्शनीय सूर्यदेव के समान आप भी प्रकाशित होते हैं ॥६ ॥



५१७६. **यथा वः स्वाहाग्नये दाशेम परीळाभिर्घृतवद्भिश्च हव्यैः ।**
तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि ॥७ ॥

हे अग्निदेव ! हम आपके निमित्त गो- घृत से युक्त हवि पदार्थ अर्पित करते हैं तथा आपकी सेवा करते हैं ! आप भी प्रसन्न होकर अपने अपरिमित तेज से उसी प्रकार हमारी रक्षा करें, जैसे लोहे के सुदृढ़ सौ किले मनुष्यों की रक्षा करते हैं ॥७ ॥

५१७७. **या वा ते सन्ति दाशुषे अधृष्टा गिरो वा याभिर्नृवतीरुरुष्याः ।**
ताभिर्नः सूनो सहसो नि पाहि स्मत्सूरीञ्जरितॄञ्जातवेदः ॥८ ॥

हे बल के पुत्र जातवेदा अग्निदेव ! आपकी प्रदीप्त शिखाएँ हविदाता का कल्याण करती हैं । आप तेजस्वी वाणी और ज्वालाओं से सुपुत्रवान् प्रजा का रक्षण करते हैं ॥८ ॥

५१७८. **निर्यत्पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात् स्वया कृपा तन्वा३ रोचमानः ।**
आ यो मात्रोरुशेन्यो जनिष्ट देवयज्याय सुक्रतुः पावकः ॥९ ॥

माता स्वरूपिणी अरणियों के गर्भ से उत्पन्न तीक्ष्णशस्त्रवत् अग्निदेव यज्ञकर्म करने में समर्थ होते हैं ।वे इस कामना योग्य प्रिय कर्म (यज्ञ) को करने में तब समर्थ होते हैं, जब वे अपनी पवित्र ज्वालाओं को प्रदीप्त करते हैं ॥९॥

५१७९. **एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।**
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१० ॥

हे अग्निदेव ! आप हमें उत्तमकर्म करने के लिए श्रेष्ठ धन प्रदान करें । यज्ञ करने वाले एवं श्रेष्ठ बुद्धि वाले पुत्र सहित समस्त प्रकार के धन-ऐश्वर्य हम उद्‌गाताओं एवं स्तोताओं को प्राप्त हों । आप सभी प्रकार से हमारा कल्याण करें ॥१० ॥

[सूक्त - ४]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५१८०. **प्र वः शुक्राय भानवे भरध्वं हव्यं मतिं चाग्नये सुपूतम् ।**
यो दैव्यानि मानुषा जनूंष्यन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति ॥१ ॥

हे याजको ! आप सभी शुद्ध-पवित्र अग्निदेव को उत्तम हवि एवं श्रेष्ठ स्तोत्र प्रेषित करें । वे अग्निदेव समस्त देवताओं, मनुष्यों एवं समस्त प्राणियों के अन्तःकरण में विद्यमान रहते हैं ॥१ ॥

५१८१. **स गृत्सो अग्निस्तरुणश्चिदस्तु यतो यविष्ठो अजनिष्ट मातुः ।**
सं यो वना युवते शुचिदन् भूरि चिदन्ना समिदत्ति सद्यः ॥२ ॥

वे अग्निदेव महान् ज्ञानी, उत्साही एवं तरुण हैं । माता स्वरूपिणी दोनों अरणियों से उत्पन्न होते ही तेजस्वी और युवा हो जाते हैं । वे वनों में संव्याप्त होकर काष्ठ एवं प्रचुर अन्न का शीघ्र ही भक्षण करने में समर्थ हैं ॥२ ॥

५१८२. **अस्य देवस्य संसद्यनीके यं मर्तासः श्येतं जगृभ्रे ।**
नि यो गृभं पौरुषेयीमुवोच दुरोकमग्निरायवे शुशोच ॥३ ॥

देवों की तेजस्वी यज्ञशाला में जिन तेजस्वी अग्निदेव को प्रतिष्ठित करके मानवों ने सेवा की, वे सेवा से प्रसन्न होकर आहुतियाँ ग्रहण करके तीव्रता से तेजोमय हो जाते हैं । वह तेज मनुष्यों के लिए असहनीय होता है ॥३ ॥



५१८३. **अयं कविरकविषु प्रचेता मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि ।**
स मा नो अत्र जुहुरः सहस्वः सदा त्वे सुमनसः स्याम ॥४ ॥

अमर, ज्ञानवान् एवं तेजस्वी अग्निदेव अज्ञानी मनुष्यों के बीच रहते हैं । हे बलवान् अग्निदेव ! हम आपकें (तेजस्वी अमर ज्ञान को धारण करने के) निमित्त अपनी बुद्धि निरन्तर सचेष्ट रखेंगे । आप हमारी रक्षा करें ॥४ ॥

५१८४. **आ यो योनिं देवकृतं ससाद क्रत्वा ह्य१ग्निरमृताँ अतारीत् ।**
तमोषधीश्च वनिनश्च गर्भं भूमिश्च विश्वधायसं बिभर्ति ॥५ ॥

वे अग्निदेव देवताओं द्वारा निर्मित स्थान-विशेष (यज्ञकुण्ड) में स्थापित होते हैं । वे अग्निदेव अपने प्रखर कर्मों द्वारा अमर देवताओं को सुरक्षित रखते हैं । सबको पोषण द्वारा धारण करने वाले अग्निदेव को पृथ्वी, ओषधियाँ एवं वृक्ष भी अपने अन्दर धारण करते हैं ॥५ ॥

५१८५. **ईशे ह्य१ग्निरमृतस्य भूरेरीशे रायः सुवीर्यस्य दातोः ।**
मा त्वा वयं सहसावन्नवीरा माप्सवः परि षदाम मादुवः ॥६ ॥

अग्निदेव उत्तम अमरत्व का दान देने में समर्थ हैं । हे अग्निदेव ! हम सदा आपकी सेवा करते रहें । आपकी कृपा से हम कभी भी वीर पुत्र एवं सुन्दर रूप से हीन न हों ॥६ ॥

५१८६. **परिषद्यं ह्यरणस्य रेक्णो नित्यस्य रायः पतयः स्याम ।**
न शेषो अग्ने अन्यजातमस्त्यचेतानस्य मा पथो वि दुक्षः ॥७ ॥

हम अज्ञानी पुरुष के बताए गये मार्ग पर चलकर ऋणग्रस्त न हों, क्योंकि दूसरे के पुत्र को लेकर कोई पुत्रवान् नहीं हो सकता । (अग्निदेव) हमें सदा विद्यमान रहने वाले धन का स्वामी बनाएँ ॥७ ॥

५१८७. **नहि ग्रभायारणः सुशेवोऽन्योदर्यो मनसा मन्तवा उ ।**
अधा चिदोकः पुनरित्स एत्या नो वाज्यभीषाळेतु नव्यः ॥८ ॥

दत्तक पुत्र भले ही सेवा करने वाला एवं ऋण न लेने वाला हो, फिर भी उसका मन अपने जनक के पास जायेगा ही । दत्तक पुत्र से सन्तोष नहीं होता, अतः हे देव ! हमें शत्रुओं को जीतने वाला पुत्र प्रदान करें ॥८ ॥

५१८८. **त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात् ।**
सं त्वा ध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री ॥९ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमें पापों और हिंसा करने वालों से सुरक्षित रखें । हम आपके लिए पवित्र हविष्यान्न अर्पित करते हैं । आपकी कृपा से हमें इच्छित धन की प्राप्ति हो ॥९ ॥

५१८९. **एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।**
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१० ॥

हे अग्निदेव ! हमें सभी तरह के धन-ऐश्वर्य प्राप्त हों तथा यजन (यज्ञादि सत्कर्म) करने वाला यशस्वी पुत्र प्राप्त हो । हम स्तोताओं को सभी प्रकार के धन मिलें । अपने आश्रय में स्थित हमारा आप सभी प्रकार कल्याण करें ॥१० ॥



[सूक्त - ५]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- वैश्वानर अग्नि । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५१९०. **प्राग्नये तवसे भरध्वं गिरं दिवो अरतये पृथिव्याः ।**
यो विश्वेषाममृतानामुपस्थे वैश्वानरो वावृधे जागृवद्भिः ॥१ ॥

जिन वैश्वानर अग्निदेव को समस्त देवताओं की उपस्थिति में प्रज्वलित कर बढ़ाया (प्रदीप्त किया) जाता है, वे बढ़े हुए अग्निदेव द्युलोक और पृथ्वीलोक में विचरण करते हैं । (हे मनुष्यो !) उन अग्निदेव की स्तुति करो ॥१ ॥

५१९१. **पृष्टो दिवि धाय्यग्निः पृथिव्यां नेता सिन्धूनां वृषभः स्तियानाम् ।**
स मानुषीरभि विशो वि भाति वैश्वानरो वावृधानो वरेण ॥२ ॥

जो वैश्वानर अग्निदेव मनुष्यों के बीच प्रकाशित हैं, वे ही श्रेष्ठ हवि द्वारा वर्धमान होकर द्युलोक एवं भूलोक में स्थापित हुए हैं । वे अच्छी प्रकार पूजित, सर्व कल्याणकारी अग्निदेव ही प्रसन्न होकर जल बरसाते और नदियों को जल से भरकर प्रवाहित करते हैं ॥२ ॥

५१९२. **त्वद्भिया विश आयन्नसिक्नीरसमना जहतीर्भोजनानि ।**
वैश्वानर पूरवे शोशुचानः पुरो यदग्ने दरयन्नदीदेः ॥३ ॥

हे अग्निदेव ! आपने जब अपने प्रदीप्त तेज से 'राजा पुरु' के शत्रुओं के नगरों को ध्वस्त किया था, तब दुष्ट कर्म वाले लोग भोजनादि त्यागकर तितर-बितर हो गये थे ॥३ ॥

५१९३. **तव त्रिधातु पृथिवी उत द्यौर्वैश्वानर व्रतमग्ने सचन्त ।**
त्वं भासा रोदसी आ ततन्थाजस्रेण शोचिषा शोशुचानः ॥४ ॥

हे अग्निदेव ! आप विशिष्ट आभा से प्रकाशित होकर अपने तेज से द्युलोक एवं पृथ्वी को विस्तृत करते हैं । तीनों लोकों के निवासी आपके व्रत का पालन करते हैं ॥४ ॥

५१९४. **त्वामग्ने हरितो वावशाना गिरः सचन्ते धुनयो घृताचीः ।**
पतिं कृष्टीनां रथ्यं रयीणां वैश्वानरमुषसां केतुमह्नाम् ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! आप कृषकों के स्वामी, धन के संचालक एव उषाओं सहित दिवस के ध्वज के समान हैं । आपके घोड़े आपकी सेवा करते हैं । पापनाशक वाणियाँ और घृत की आहुतियाँ आपकी सेवा करती हैं ॥५ ॥

५१९५. **त्वे असुर्यं१ वसवो न्यृण्वन्क्रतुं हि ते मित्रमहो जुषन्त ।**
त्वं दस्यूँरोकसो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनयन्नार्याय ॥६ ॥

हे अग्निदेव ! आपको वसुओं ने विलक्षण बल प्रदान कर बलवान् बनाया है । आप मित्रों के सहायक होते हैं । श्रेष्ठकर्म (यज्ञ) करने वाले आर्यजनों (सज्जनों) की रक्षा करने के लिए आपने प्रखर तेज द्वारा भयभीत करके दस्युओं को भगा दिया ॥६ ॥

५१९६. **स जायमानः परमे व्योमन्वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः ।**
त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन् ॥७ ॥

हे अग्निदेव ! आप अंतरिक्ष में सूर्यरूप से प्रकट होकर सोमरस को वाष्पीकृत कर सर्वप्रथम ग्रहण करते हैं । हे ज्ञान स्वरूप अग्निदेव ! आप भुवनों में जल (मेघ) को प्रकट करते हैं । आपका विद्युत् रूप देखकर एवं



गड़गड़ाहट (मेघ गर्जना) को सुनकर अन्न की कामना वाले व्यक्ति आशान्वित होते हैं ॥७ ॥

५१९७. **तामग्ने अस्मे इषमेरयस्व वैश्वानर द्युमतीं जातवेदः ।**
यया राधः पिन्वसि विश्ववार पृथु श्रवो दाशुषे मर्त्याय ॥८ ॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! आप समस्त मानवों द्वारा वरणीय हैं । आप उन्हें यश प्रदान करते हैं । आप वह विद्युत्मयी बरसात हमारे लिए प्रेरित करें, जिससे अन्न एवं धन की वृद्धि हो ॥८ ॥

[विज्ञान का मत भी यही है कि बिजली चमकने से नाइट्रोजन आदि गैसों से उर्वरता बढ़ाने वाले अणु बनते हैं, इसीलिए विद्युत् युक्त वर्षा की कामना की गई है ।]

५१९८. **तं नो अग्ने मघवद्भ्यः पुरुक्षुं रयिं नि वाजं श्रुत्यं युवस्व ।**
वैश्वानर महि नः शर्म यच्छ रुद्रेभिरग्ने वसुभिः सजोषाः ॥९ ॥

हे समस्त मनुष्यों के हितैषी अग्निदेव ! रुद्रगणों तथा वसुओं के साथ आप हमारा कल्याण करें । हम याजक आपके लिए हवि अर्पित करते हैं । आप हमें यशवर्धक अन्न, धन एवं बल प्रदान करें ॥९ ॥

[सूक्त - ६]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वैश्वानर अग्नि । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५१९९. **प्र सम्राजो असुरस्य प्रशस्तिं पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य ।**
इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारुं वन्दमानो विवक्मि ॥१ ॥

(शत्रु की) नगरियों को विध्वंस करने वाले वीर (अग्नि) की हम वन्दना करते हैं । असुर एवं वीर मनुष्यों द्वारा स्तुत्य, सम्राट् इन्द्र के समान बलवान् (अग्नि) की स्तुति करते हुए, हम उनके कार्यों का वर्णन करते हैं ॥१ ॥

५२००. **कविं केतुं धासिं भानुमद्रेर्हिन्वन्ति शं राज्यं रोदस्योः ।**
पुरन्दरस्य गीर्भिरा विवासेऽग्नेर्व्रतानि पूर्व्या महानि ॥२ ॥

अग्निदेव कवि (विद्वान्) , केतुरूप (प्रदर्शक) मेघों को धारण करने वाले और सबका कल्याण करने वाले हैं । द्यावा-पृथिवी के सुशासक अग्निदेव ही हैं । परम पुरुषार्थी, शत्रुओं के किलों को ध्वस्त करने वाले पुरातन अग्निदेव का हम यशोगान करते हैं ॥२ ॥

५२०१. **न्यक्रतून् ग्रथिनो मृध्रवाचः पणींरश्रद्धाँ अवृधाँ अयज्ञान् ।**
प्रप्र तान्दस्यूँरग्निर्विवाय पूर्वश्चकारापराँ अयज्यून् ॥३ ॥

अकर्मी, बकवादी, कटुवक्ता, पणि, श्रद्धाशून्य, यज्ञ न करने वाले एवं पतित आदि को अग्निदेव प्रगतिहीन बनाकर दूर करें । प्रमुख देव (अग्निदेव) यज्ञ न करने वाले को कनिष्ठ (प्रगतिहीन) बना देते हैं ॥३ ॥

५२०२. **यो अपाचीने तमसि मदन्तीः प्राचीश्चकार नृतमः शचीभिः ।**
तमीशानं वस्वो अग्निं गृणीषेऽनानतं दमयन्तं पृतन्यून् ॥४ ॥

अन्धकार से घिरे मानवों को अग्निदेव ने प्रकाशरूप प्रज्ञा (बुद्धि) से श्रेष्ठ मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी । हम ऐसे शत्रुनाशक, धन के स्वामी, अग्निदेव की स्तुति करते हैं ॥४ ॥

५२०३. **यो देह्यो३ अनमयद्वधस्नैर्यो अर्यपत्नीरुषसश्चकार ।**
स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निर्विशश्चक्रे बलिहृतः सहोभिः ॥५ ॥



जिन (अग्निदेव) ने अपने आयुधों से आसुरी माया को झुकाया (काबू में किया) और सूर्य पत्नी उषा को उत्पन्न किया, उन्हीं ने अपनी प्रतिरोधक शक्ति से प्रजाओं को निरुद्ध करके, उन्हें (प्रजाओं को) नहुष को 'कर' (टैक्स) देने वाली बनाया ॥५ ॥

[राजा से सुविधाएँ प्राप्त करने वाले का कर्त्तव्य बनता है कि वह 'कर' भी चुकाये। नहुष राजा प्रसिद्ध हैं, किन्तु भाववाचक संज्ञा के रूप में इसके अर्थ (वाचस्पत्यम् के अनुसार) ब्रह्म, मरुत् तथा मनुष्य भी होते हैं। इस दृष्टि से इस मंत्र के भिन्न-भिन्न प्रेरक भाव निकलते हैं, जैसे प्रजागण मनुष्यादि मरुत् (वायु) से श्वास द्वारा पोषण प्राप्त करते हैं और अशुद्ध वायु छोड़ते रहते हैं। अग्निदेव यज्ञकर्म द्वारा मरुतों को 'कर' के रूप में पुनः पोषण दिलवाते हैं। ब्रह्म से जीवन प्राप्त करके मनुष्य ब्रह्मकर्म से ही विमुख होने लगते हैं, अग्निदेव उनसे ब्रह्मकर्म (यज्ञादि) कराते हैं। मनुष्य शरीर की प्रजाएँ -इन्द्रियादि को अग्निदेव ऊर्जा देकर उन्हें सेवा कार्यों में प्रवृत्त करते हैं।]

५२०४. **यस्य शर्मन्नुप विश्वे जनास एवैस्तस्थुः सुमतिं भिक्षमाणाः ।**
वैश्वानरो वरमा रोदस्योराग्निः ससाद पित्रोरुपस्थम् ॥६ ॥

अपने सत्कर्मों सहित हविदाता सद्बुद्धि की कामना से वैश्वानर अग्निदेव के निकट उपस्थित होते हैं। समस्त प्राणियों के हितैषी वे अग्निदेव द्यावा-पृथिवी के मध्य प्रकट होते हैं ॥६ ॥

[वेद ने द्यावा-पृथिवी का प्रयोग बार-बार किया है। लगता है, पंच भूतों (आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी) को समग्ररूप से द्यावा-पृथिवी (आकाश से पृथ्वी तक) कहा गया है। क्रमानुसार उनके मध्य में ही अग्नि का क्रम या स्थान आता है। साथ ही दोनों अदृश्य तत्त्वों (वायु और आकाश) तथा दृश्य तत्त्वों (जल और पृथ्वी) को क्रमशः दृश्य और अदृश्य में परिवर्तित करने की सामर्थ्य भी अग्नि में है।]

५२०५. **आ देवो ददे बुध्न्या३ वसूनि वैश्वानर उदिता सूर्यस्य ।**
आ समुद्रादवरादा परस्मादाग्निर्ददे दिव आ पृथिव्याः ॥७ ॥

वैश्वानर अग्निदेव सूर्यरूप में प्रकट होकर अन्धकार का नाश करते हैं। अन्तरिक्ष एवं द्यावा-पृथिवी से अन्धकार को समाप्त करते हैं ॥७ ॥

[सूक्त - ७]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अग्नि । **छन्द-** त्रिष्टुप् । **]**

५२०६. **प्र वो देवं चित् सहसानमग्निमश्वं न वाजिनं हिषे नमोभिः ।**
भवा नो दूतो अध्वरस्य विद्वान्त्मना देवेषु विविदे मितद्रुः ॥१ ॥

हे अग्निदेव ! आप देवताओं में, वृक्षों को जलाने वाले के रूप में ख्याति प्राप्त हैं। आप यज्ञ में सर्वज्ञ होकर, अश्व की तरह तीव्र गति से असुरादि को खदेड़ (भगा) देते हैं ॥१ ॥

५२०७. **आ याह्यग्ने पथ्या३अनु स्वा मन्द्रो देवानां सख्यं जुषाणः ।**
आ सानु शुष्मैर्नदयन्पृथिव्या जम्भेभिर्विश्वमुशधग्वनानि ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! आप अति आनन्दित होते हुए देवताओं से मित्रता करें। आप पृथ्वी के ऊपरी भागों को अपने शोषक तेज से ध्वनित करते हुए एवं वनों को ज्वालाओं द्वारा भस्म करते हुए अपने मार्ग से आएँ ॥२ ॥

५२०८. **प्राचीनो यज्ञः सुधितं हि बर्हिः प्रीणीते अग्निरीळितो न होता ।**
आ मातरा विश्ववारे हुवानो यतो यविष्ठ जज्ञिषे सुशेवः ॥३ ॥

यज्ञ के पूर्व में कुशा अच्छी प्रकार स्थापित करें। विश्व के माता-पिता का आवाहन करें। यज्ञाग्नि की अच्छी



प्रकार सेवा करके, उन्हें युवा (प्रज्वलित) बना करके हविदाता प्रसन्न मन से आहुति समर्पित करके अग्निदेव को तृप्त करें ॥३ ॥

५२०९. **सद्यो अध्वरे रथिरं जनन्त मानुषासो विचेतसो य एषाम्।**
विशामधायि विश्पतिर्दुरोणे३ग्निर्मन्द्रो मधुवचा ऋतावा ॥४ ॥

विशेषज्ञ जन रथारूढ़ अग्निदेव को शीघ्रता से उत्पन्न कर लेते हैं, तब सत्यनिष्ठ एवं मधुरभाषी अग्निदेव प्रजाओं के घर में रहकर हवि ग्रहण करते हैं और प्रसन्न होकर सभी को आनन्द प्रदान करते हैं ॥४ ॥

५२१०. **असादि वृतो वह्निराजगन्वानग्निर्ब्रह्मा नृषदने विधर्ता।**
द्यौश्च यं पृथिवी वावृधाते आ यं होता यजति विश्ववारम् ॥५ ॥

प्रजाओं के घरों में रहने वाले, जो अग्निदेव होता द्वारा पूजित होते हैं, जिन्हें द्युलोक और भूलोक बढ़ाते हैं; वे अग्निदेव हविदाता के हव्य को वहन कर ब्रह्मादि देवों तक पहुँचाते हैं ॥५ ॥

५२११. **एते द्युम्नेभिर्विश्वमातिरन्त मन्त्रं ये वारं नर्या अतक्षन्।**
प्र ये विशस्तिरन्त श्रोषमाणा आ ये मे अस्य दीधयन्नृतस्य ॥६ ॥

जो मनुष्य यज्ञ के निमित्त अग्निदेव को प्रज्वलित कर उन्हें मन्त्रों से संस्कारित करते हैं, वे अग्निदेव अन्न से हमारा सब प्रकार पोषण करते हैं ॥६ ॥

५२१२. **नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसो वसूनाम्।**
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे अग्ने ! आप बल से समुत्पन्न एवं वसुओं के ईश हैं । हम सब वसिष्ठ गोत्रीय होतागण, आपके निमित्त हवि समर्पित करते हैं ।आप हविदाता एवं स्तोताओं को सुरक्षा प्रदान करते हुए उन्हें अन्नादि से परिपूरित करें ॥७ ॥

[सूक्त - ८]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५२१३. **इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन।**
नरो हव्येभिरीळते सबाध आग्निरग्र उषसामशोचि ॥१ ॥

श्रेष्ठ शासक अग्निदेव को वन्दनापूर्वक प्रज्वलित किया जा रहा है । मनुष्य अबाध आहुतियों द्वारा जिनका यजन करते हैं, घृत द्वारा जिनका संवर्धन होता है, वे अग्निदेव (सूर्यरूप में) उषाओं से पूर्व प्रकाशित होते हैं ॥१ ॥

५२१४. **अयमु ष्य सुमहाँ अवेदि होता मन्द्रो मनुषो यह्वो अग्निः।**
वि भा अकः ससृजानः पृथिव्यां कृष्णपविरोषधीभिर्ववक्षे ॥२ ॥

ये अग्निदेव महान् हैं । प्रसन्न हुए विस्तृत अग्निदेव अपनी दीप्ति फैलाते हैं । कृष्णमार्ग गामी (धूम्रमार्गगामी) अग्निदेव पृथ्वी पर ओषधियों (काष्ठ) द्वारा वृद्धि को प्राप्त होते हैं ॥२ ॥

५२१५. **कया नो अग्ने वि वसः सुवृक्तिं कामु स्वधामृणवः शस्यमानः।**
कदा भवेम पतयः सुदत्र रायो वन्तारो दुष्टरस्य साधोः ॥३ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमारी स्तुति को, कौन सा हवि-द्रव्य अर्पित करने पर स्वीकार करेंगे ? हे उत्तम दानदाता अग्निदेव ! हमको कब अलभ्य धन प्राप्त होगा और कब हम उसको बाँटने (दान-देने) में समर्थ होंगे ? ॥३ ॥





५२१६. **प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः ।**
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच ॥४ ॥

हविष्य प्रदान करने वाले याजक के आमंत्रण को स्वीकार कर, देवों के अतिथि अग्निदेव अति तेजस्वी होकर सूर्यदेव के समान ही प्रकाश फैलाते हैं । 'पूरु' को पराजित करने वाले अग्निदेव हमारे लिए कल्याणकारी भावों से युक्त होकर प्रज्वलित होते हैं ॥४ ॥

५२१७. **असन्नित्त्वे आहवनानि भूरि भुवो विश्वेभिः सुमना अनीकैः ।**
स्तुतश्चिदग्ने शृण्विषे गृणानः स्वयं वर्धस्व तन्वं सुजात ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! आपका जन्म भली प्रकार हुआ है । आप तेजस्विता धारण कर प्रसन्न हों । पर्याप्त आहुतियों को ग्रहण कर आपका शरीर विस्तृत हो । आप स्तुतियों को सुनकर हर्षित हों ॥५ ॥

५२१८. **इदं वचः शतसाः संसहस्रमुदग्नये जनिषीष्ट द्विबर्हाः ।**
शं यत्स्तोतृभ्य आपये भवाति द्युमदमीवचातनं रक्षोहा ॥६ ॥

हजारों गौओं के स्वामी तथा सैकड़ों गौओं के दानदाता, कर्म के मर्म को जानने वाले, विशिष्ट विद्याओं के ज्ञानी, महान् ऋषि वसिष्ठ ने अग्निदेव की इस स्तोत्र से स्तुति की ॥६ ॥

५२१९. **नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसो वसूनाम् ।**
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे अग्निदेव ! आप बल से उत्पन्न एवं वसुओं के ईश हैं । हम सब वसिष्ठ गोत्रीय होता आपके निमित्त हवि अर्पित करते हैं । आप हविदाता एवं स्तोताओं को सुरक्षा प्रदान करते हुए उन्हें अन्नादि से परिपूरित करें ॥७ ॥

[सूक्त - ९]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अग्नि । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५२२०. **अबोधि जार उषसामुपस्थाद्धोता मन्द्रः कवितमः पावकः ।**
दधाति केतुमुभयस्य जन्तोर्हव्या देवेषु द्रविणं सुकृत्सु ॥१ ॥

जार (अन्धकार या पापों को जीर्ण कर देने वाले), होता, हर्ष प्रदायक, विद्वान्, पवित्र करने वाले अग्निदेव उषाकाल में जाग गये हैं । ये अग्निदेव देवों एवं मनुष्यों, दोनों को प्रज्ञावान् बनाते हैं । देवों के लिए हवि प्रदान करने वालों और सत्कर्म करने वालों को धन देते हैं ॥१ ॥

५२२१. **स सुक्रतुर्यो वि दुरः पणीनां पुनानो अर्कं पुरुभोजसं नः ।**
होता मन्द्रो विशां दमूनास्तिरस्तमो ददृशे राम्याणाम् ॥२ ॥

जिन श्रेष्ठ कर्मा अग्निदेव ने पणियों के द्वार को खोलकर गौओं को मुक्त कराया था, वे पूजनीय, दुधारू गौओं के समूह को ढूँढ़ने वाले, देवों को आनन्द प्रदान करने वाले, मन से संयमित रहने वाले अग्निदेव रात्रि के अन्धकार को नष्ट कर देते हैं ॥२ ॥

५२२२. **अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः ।**
चित्रभानुरुषसां भात्यग्रेऽपां गर्भः प्रस्व१ आ विवेश ॥३ ॥

जो मूढ़ नहीं हैं । जो ज्ञानी, अदीन, मित्र, पूज्य, तेजस्वी, मंगलकारी, विशेष रूप से प्रकाशित अग्निदेव उषाओं



के पूर्व प्रकाशित होते हैं, वे अग्निदेव जल के गर्भ से उत्पन्न होकर ओषधियों में प्रवेश करते हैं ॥३ ॥

५२२३. **ईळेन्यो वो मनुषो युगेषु समनगा अशुचज्जातवेदाः ।**
सुसन्दृशा भानुना यो विभाति प्रति गावः समिधानं बुधन्त ॥४ ॥

हे अग्ने ! जब मनुष्य यज्ञ कर्म करते हैं, उस समय आपकी स्तुति की जाती है । जातवेदा अग्निदेव संग्राम के समय प्रदीप्त होते हैं । वे दर्शनीय आभा से सुशोभित होते हैं । स्तुतियाँ समिद्ध अग्नि को प्रेरित करती हैं ॥४ ॥

५२२४. **अग्ने याहि दूत्यं१ मा रिषण्यो देवाँ अच्छा ब्रह्मकृता गणेन ।**
सरस्वतीं मरुतो अश्विनापो यक्षि देवान् रत्नधेयाय विश्वान् ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! आप दौत्य कर्म के निमित्त देवताओं के पास गमन करें । हे देव ! संघ में रहने वाले हम स्तोताओं को न मारें । हमें रत्नों का दान देने के लिए, आप सरस्वती, मरुद्‍गण एवं सभी देवताओं का यजन करें ॥५ ॥

५२२५. **त्वामग्ने समिधानो वसिष्ठो जरूथं हन्यक्षि राये पुरन्धिम् ।**
पुरुणीथा जातवेदो जरस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे अग्निदेव ! वसिष्ठ गोत्रीय होता आपके लिए समिधा अर्पित करते हैं । आप कटुभाषी असुरों का संहार करें । हे जातवेदा अग्निदेव ! आप उनके स्तोत्रों द्वारा देवों को तुष्ट करें और हमारा कल्याण एवं पोषण करें ॥६ ॥

[सूक्त - १०]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- अग्नि । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५२२६. **उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद्दविद्युतद्दीद्यच्छोशुचानः ।**
वृषा हरिः शुचिरा भाति भासा धियो हिन्वान उशतीरजीगः ॥१ ॥

उषा के जार (उषा के प्रभाव को जीर्ण करने वाले) सूर्यदेव के समान अग्निदेव तेज का आश्रय लेकर विस्तृत होते हैं । विद्युत् के समान चमक वाले, देदीप्यमान, शोभनीय, कामनाओं के पूरक, दुःखहारी, पावन अग्निदेव कर्मों को प्रेरित करते हैं और अपनी आभा से प्रकाशित होते हैं ॥१ ॥

५२२७. **स्व१र्ण वस्तोरुषसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म ।**
अग्निर्जन्मानि देव आ वि विद्वान्द्रवद् दूतो देवयावा वनिष्ठः ॥२ ॥

उषाओं के आगे अग्निदेव, दिन में सूर्यदेव के समान सुशोभित होते हैं । सुख की कामना वाले ऋत्विग्गण मननीय स्तोत्रों का गान करते हुए, यज्ञ का विस्तार करते हैं । विद्वान्, देवताओं के दूतरूप अग्निदेव देवताओं के पास जाते हैं और प्राणियों को द्रवित करते हैं ॥२ ॥

५२२८. **अच्छा गिरो मतयो देवयन्तीरग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षमाणाः ।**
सुसन्दृशं सुप्रतीकं स्वञ्चं हव्यवाहमरतिं मानुषाणाम् ॥३ ॥

देवत्व प्राप्ति की इच्छा वाली बुद्धियाँ और धन की याचना करने वाली वाणी (स्तुति) उन अग्निदेव तक पहुँचती हैं । अग्निदेव, हवि को ले जाने वाले, सुन्दर दर्शनीय हैं और मनुष्यों के स्वामी हैं ॥३ ॥

५२२९. **इन्द्रं नो अग्ने वसुभिः सजोषा रुद्रं रुद्रेभिरा वहा बृहन्तम् ।**
आदित्येभिरदितिं विश्वजन्यां बृहस्पतिमृक्वभिर्विश्ववारम् ॥४ ॥



हे अग्निदेव ! आप वसुओं के साथ इन्द्रदेव का, आदित्यों के साथ विश्व की माता अदिति का, स्तुत्य अंगिरा के साथ श्रेष्ठ बृहस्पतिदेव का और रुद्रों के साथ मिलकर महान् रुद्रदेव का आवाहन करें ॥४ ॥

५२३०. **मन्द्रं होतारमुशिजो यविष्ठमग्निं विश ईळते अध्वरेषु ।**
स हि क्षपावाँ अभवद्रयीणामतन्द्रो दूतो यजथाय देवान् ॥५ ॥

धन की कामना करने वाले मनुष्य स्तुति योग्य, होता और युवा अग्निदेव की यज्ञ में स्तुति करते हैं । वे अग्निदेव रात्रि में भी प्रकाशित होते हैं और देव यज्ञ में हविर्दान के लिए देवताओं के तन्द्रारहित (स्फूर्तिवान्) दूत हैं ॥५ ॥

[सूक्त - ११]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- अग्नि । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५२३१. **महाँ अस्यध्वरस्य प्रकेतो न ऋते त्वदमृता मादयन्ते ।**
आ विश्वेभिः सरथं याहि देवैर्न्यग्ने होता प्रथमः सदेह ॥१ ॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञ का, ध्वजा के समान ज्ञापन करने वाले हैं । आप महान् हैं । आप समस्त देवगणों सहित रथ पर आरूढ़ होकर आएँ एवं प्रथम होता के रूप में कुश का आसन ग्रहण करें । आपके बिना देवगण हर्षित नहीं होते ॥१ ॥

५२३२. **त्वामीळते अजिरं दूत्याय हविष्मन्तः सदमिन्मानुषासः ।**
यस्य देवैरासदो बर्हिरग्नेऽहान्यस्मै सुदिना भवन्ति ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! आप प्रगतिशील हैं । हविर्दान करने वाले मनुष्य दूतकर्म के लिए सदैव आपसे याचना करते हैं । आप देवताओं के साथ जिस याजक के कुश-आसन पर विराजते हैं, उसके आने वाले दिन शुभप्रद होते हैं ॥२ ॥

५२३३. **त्रिश्चिदक्तोः प्र चिकितुर्वसूनि त्वे अन्तर्दाशुषे मर्त्याय ।**
मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान्भवा नो दूतो अभिशस्तिपावा ॥३ ॥

हे अग्निदेव ! ऋत्विग्गण मनुष्य के निमित्त दिन में तीन बार आपको हवि अर्पित करते हैं । जैसे आप मनु के यज्ञ में दूत बने थे, वैसे ही हमारे इस यज्ञ में दूत बनकर, हमें शत्रुओं (दुष्कृत्यों) से बचाएँ ॥३ ॥

५२३४. **अग्निरीशे बृहतो अध्वरस्याग्निर्विश्वस्य हविषः कृतस्य ।**
क्रतुं ह्यस्य वसवो जुषन्ताथा देवा दधिरे हव्यवाहम् ॥४ ॥

अग्निदेव यज्ञ एवं समस्त आहुतियों के पति हैं । देवताओं ने अग्निदेव को हवि वहन करने वाला बनाया है । इन्हीं अग्निदेव की वसुगण सेवा करते हैं ॥४ ॥

५२३५. **आग्ने वह हविरद्याय देवानिन्द्रज्येष्ठास इह मादयन्ताम् ।**
इमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! आप हविष्यान्न ग्रहण करने के लिए देवताओं का आवाहन करें । आप इस यज्ञ को स्वर्गलोक तक वहन कर, वहाँ देवताओं तक पहुँचाएँ । इस यज्ञ के मुख्य देव (इन्द्रदेव) हर्षित हों । आप सब देवगण हमारा रक्षण करके कल्याण करें ॥५ ॥



[सूक्त - १२]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अग्नि । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५२३६. **अगन्म महा नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे ।**
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुतं विश्वतः प्रत्यञ्चम् ॥१ ॥

जो अपने स्थान (यज्ञ वेदिका) में प्रदीप्त और आकाश एवं पृथ्वी के मध्य विशेष रूप से दीप्तिमान् हैं, उन उत्तम आहुति युक्त, सर्वत्र व्याप्त, चिर युवा अग्निदेव को श्रद्धापूर्वक नमन करते हुए, हम उनका आश्रय प्राप्त करते हैं ॥१ ॥

५२३७. **स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः ।**
स नो रक्षिषद् दुरितादवद्यादस्मान्गृणत उत नो मघोनः ॥२ ॥

अपने महान् तेज से समस्त पापों को नष्ट करने वाले, ज्ञानरूपी प्रकाश के विस्तारक अग्निदेव, यज्ञशाला में प्रतिष्ठित होते हैं । वे स्तुत्य अग्निदेव हमें दोषपूर्ण एवं निन्दित कर्मों से बचाते हैं और आहुतियाँ स्वीकार करके, हमारे योग-क्षेम का वहन करते हैं ॥२ ॥

५२३८. **त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः ।**
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

हे अग्निदेव ! आप वरुण (कामनाओं) की पूर्ति करने वाले और मित्र (स्नेहपूर्वक सहयोग देनेवाले) हैं । विशिष्ट ऋत्विग्गण श्रेष्ठ स्तुतियों से आपको गौरवान्वित करते हैं । आप श्रेष्ठ धन एवं कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें ॥३ ॥

[सूक्त - १३]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** वैश्वानर अग्नि । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५२३९. **प्राग्नये विश्वशुचे धियन्धेऽसुरघ्ने मन्म धीतिं भरध्वम् ।**
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम् ॥१ ॥

सबको प्रेरणा देने वाले, (यज्ञ) कर्म को धारण करने वाले, असुरों का संहार करने वाले अग्निदेव के निमित्त हम स्तुति सहित यज्ञ कर रहे हैं । वे प्रसन्न होकर हमारी मनोकामनाओं को पूर्ण करें ॥१ ॥

५२४०. **त्वमग्ने शोचिषा शोशुचान आ रोदसी अपृणा जायमानः ।**
त्वं देवाँ अभिशस्तेरमुञ्चो वैश्वानर जातवेदो महित्वा ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! आप उत्पन्न होते ही प्रदीप्त होकर सम्पूर्ण द्युलोक एवं पृथ्वीलोक को प्रकाश से भर देते हैं । हे जातवेदा वैश्वानर अग्निदेव ! आपने अपनी महिमा द्वारा शत्रुओं से देवगणों की रक्षा की ॥२ ॥

५२४१. **जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशून्न गोपा इर्यः परिज्मा ।**
वैश्वानर ब्रह्मणे विन्द गातुं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

हे वैश्वानर अग्निदेव ! उत्पन्न होते ही आप सर्वप्रेरक एवं सर्वत्रगामी होकर पशुओं की सुरक्षा करते हैं । आप ज्ञान दान के लिए मार्ग खोजते एवं भुवनों का निरीक्षण करते हैं । आप सदा हमारा पालन करें, कल्याण करें ॥३ ॥



[सूक्त - १४]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- त्रिष्टुप् १-बृहती ।]

५२४२. **समिधा जातवेदसे देवाय देवहूतिभिः ।**
हविर्भिः शुक्रशोचिषे नमस्विनो वयं दाशेमाग्नये ॥१ ॥

हम हविदाता, जातवेदा अग्निदेव की सेवा, समिधाओं से करते हैं । हम हविर्द्रव्य द्वारा एवं स्तोत्रों के गान द्वारा शुभ्र-आभायुक्त अग्निदेव की सेवा करते हैं ॥१ ॥

५२४३. **वयं ते अग्ने समिधा विधेम वयं दाशेम सुष्टुती यजत्र ।**
वयं घृतेनाध्वरस्य होतर्वयं देव हविषा भद्रशोचे ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! हम समिधाओं से आपकी सेवा करेंगे । हे पूजनीय अग्निदेव ! उत्तम स्तुति द्वारा हम आपकी पूजा करेंगे । हे यज्ञ के होता अग्निदेव ! हम घृत से आपकी सेवा करेंगे । हे मंगलकारी प्रदीप्त ज्वालाओं वाले अग्निदेव ! हविर्द्रव्य द्वारा हम आपकी सेवा करेंगे ॥२ ॥

५२४४. **आ नो देवेभिरुप देवहूतिमग्ने याहि वषट्कृतिं जुषाणः ।**
तुभ्यं देवाय दाशतः स्याम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

हे अग्निदेव ! वषट्कार से दिये गये अन्नरूप हवि को स्वीकार करते हुए, आप देवगणों सहित हमारे यज्ञ में पधारें । हे देव ! हम आपकी सेवा करने वाले बनें । आप सदा हमारा कल्याण करें, पालन करें ॥३ ॥

[सूक्त - १५]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- गायत्री ।]

५२४५. **उपसद्याय मीळ्हुष आस्ये जुहुता हविः । यो नो नेदिष्ठमाप्यम् ॥१ ॥**

हे ऋत्विजो ! जो अग्निदेव हमारे अत्यधिक निकट रहने वाले मित्र हैं, ऐसे समीपस्थ अग्निदेव के निमित्त उनके मुख में हवि अर्पित करें ॥१ ॥

५२४६. **यः पञ्च चर्षणीरभि निषसाद दमेदमे । कविर्गृहपतिर्युवा ॥२ ॥**

हे ज्ञानी, गृहपति अग्निदेव ! आप तरुण हैं । आप पञ्चजनों (पाँच वर्णों या पंच प्राणों) के समक्ष घर-घर में प्रतिष्ठित हैं ॥२ ॥

५२४७. **स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु विश्वतः । उतास्मान्पात्वंहसः ॥३ ॥**

अत्यन्त कल्याणकारी वे अग्निदेव हमारे धन की रक्षा में सहायक हों और हमें पापों से दूर करें ॥३ ॥

५२४८. **नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम् । वस्वः कुविद्वनाति नः ॥४ ॥**

द्युलोक में शीघ्रगामी श्येन पक्षी के तुल्य अग्निदेव के निमित्त, हम स्तोतागण नया स्तोत्र प्रस्तुत करते हैं । वे हमें पर्याप्त धन प्रदान करें ॥४ ॥

५२४९. **स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा । अग्रे यज्ञस्य शोचतः ॥५ ॥**

देदीप्यमान अग्नि शिखाएँ यज्ञ के अग्रभाग में वैसे ही सुशोभित दिखती हैं, जैसे पुत्रवान् याजक का धन शोभनीय होता है ॥५ ॥



५२५०. सेमां वेतु वषट्कृतिमग्निर्जुषत नो गिरः ।
यजिष्ठो हव्यवाहनः ॥६ ॥

यजनीय हविर्द्रव्यों का वहन करने वाले अग्निदेव, हमारे द्वारा अर्पित वषट्कृति (स्तोत्रयुक्त आहुतियाँ) स्वीकार करें एवं हमारी प्रार्थना सुनें ॥६ ॥

५२५१. नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं देव धीमहि । सुवीरमग्न आहुत ॥७ ॥

हे आभायुक्त, सुवीर अग्निदेव ! हम आपको यहाँ प्रतिष्ठित करते हैं । हे उपास्य जगत्पते ! आप याजकों द्वारा आहूत किये गये हैं ॥७ ॥

५२५२. क्षप उस्रश्च दीदिहि स्वग्नयस्त्वया वयम् । सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥८ ॥

आप रात्रि और दिन में प्रदीप्त हों । हे अग्निदेव ! आपसे ही हम उत्तम अग्नि वाले बनेंगे । आप हमारे शोभन (सुन्दर) स्तोत्रों के द्वारा प्रसन्न हों ॥८ ॥

५२५३. उप त्वा सातये नरो विप्रासो यन्ति धीतिभिः । उपाक्षरा सहस्रिणी ॥९ ॥

आपके पास विप्रजन बुद्धिपूर्वक किये गये कर्मों द्वारा धन पाने के लिए पहुँचते हैं । सहस्रों अक्षरों वाली वाणी (स्तुति) भी आपके पास पहुँचती है ॥९ ॥

५२५४. अग्नी रक्षांसि सेधति शुक्रशोचिरमर्त्यः ।
शुचिः पावक ईड्यः ॥१० ॥

धवल, आभायुक्त, अमर, पावन और शुद्ध करने वाले अग्निदेव असुरों का नाश करते हैं । वे देव स्तुति करने योग्य हैं ॥१० ॥

५२५५. स नो राधांस्या भरेशानः सहसो यहो । भगश्च दातु वार्यम् ॥११ ॥

हे बल के पुत्र अग्निदेव ! आप समस्त विश्व के अधिपति होकर हमें उत्तम धन प्रदान करें । भगदेव भी हमें धन प्रदान करें ॥११ ॥

५२५६. त्वमग्ने वीरवद्यशो देवश्च सविता भगः । दितिश्च दाति वार्यम् ॥१२ ॥

हे अग्निदेव ! युद्ध में आप हमसे विपरीत न हों, जिस प्रकार भारवाहक भार को उठा लाता है; उसी प्रकार शत्रु से जीती हुई, संगृहीत सम्पदा को लाकर हमें प्रदान करें ॥१२ ॥

५२५७. अग्ने रक्षा णो अंहसः प्रति ष्म देव रीषतः । तपिष्ठैरजरो दह ॥१३ ॥

हे अग्निदेव ! पाप से हमें बचाएँ । हमारी रक्षा कर आप अपने अजर-अमर तथा प्रखर तेज से हिंसक शत्रुओं की कामनाओं को भस्मीभूत करें ॥१३ ॥

५२५८. अधा मही न आयस्यनाधृष्टो नृपीतये । पूर्भवा शतभुजिः ॥१४ ॥

हे शत्रुओं द्वारा आक्रान्त न होने वाले अग्निदेव ! आप हम मनुष्यों की सुरक्षा के लिए सैकड़ों विशेषताओं से सम्पन्न लौहवत् एक सुदृढ़ नगर बनाएँ ॥१४ ॥

५२५९. त्वं नः पाह्यंहसो दोषावस्तरघायतः । दिवा नक्तमदाभ्य ॥१५ ॥

हे अदम्य अग्निदेव ! आप हमें दिन-रात पापों से बचाएँ और दिन एवं रात के समय दुष्ट शत्रुओं से आप हमारी रक्षा करें ॥१५ ॥



[सूक्त - १६]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अग्नि । **छन्द-** प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) ।]

५२६०. **एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।**
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥१ ॥

शक्ति क्षीण न होने देने वाले, चेतना एवं स्नेह प्रदाता, उत्तम यज्ञ के आधाररूप, ज्ञानदाता, सनातन अग्निदेव का आवाहन करते हुए हम उनकी वन्दना करते हैं ॥१ ॥

५२६१. **स योजते अरुषा विश्वभोजसा स दुद्रवत्स्वाहुतः ।**
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम् ॥२ ॥

वे अग्निदेव विश्व के प्राणियों का पोषण करने में समर्थ तेज को नियोजित करते हैं । वे उत्तम ज्ञानी, संयमी, पवित्र अग्निदेव श्रेष्ठ आहुतियों से प्रदीप्त होकर गतिमान् होते हैं । ये अग्निदेव ही विद्वानों के श्रेष्ठ धन हैं ॥२ ॥

५२६२. **उदस्य शोचिरस्थादाजुह्वानस्य मीळ्हुषः ।**
उद्धूमासो अरुषासो दिविस्पृशः समग्निमिन्धते नरः ॥३ ॥

कामनाओं की पूर्ति करने वाले अग्निदेव को लोग प्रदीप्त कर रहे हैं । उसमें (अग्नि में) हवि अर्पित करने पर, अग्निदेव का तेज ऊर्ध्वगामी होता है । तेजवान् एवं दिविस्पर्शी (स्वर्ग लोक तक पहुँचने वाला) धूम्र ऊर्ध्वगमन कर रहा है ॥३ ॥

५२६३. **तं त्वा दूतं कृण्महे यशस्तमं देवाँ आ वीतये वह ।**
विश्वा सूनो सहसो मर्तभोजना रास्व तद्यत्त्वेमहे ॥४ ॥

हे बल से उत्पन्न यशस्वी अग्निदेव ! आपको हम अपना दूत स्वीकार करते हैं । हे देव ! हवि ग्रहण करने के लिए आप समस्त देवताओं का आवाहन करें । जब हम आपसे याचना करें, तब आप हमें मानवोचित भोग्य (उपयोगी) धन प्रदान करें ॥४ ॥

५२६४. **त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे ।**
त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि वेषि च वार्यम् ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! आप इस यज्ञ के होतारूप और गृहपति हैं । आप सभी के द्वारा स्वीकार करने योग्य हैं तथा सभी को पवित्र करने वाले हैं । आप श्रेष्ठ ज्ञानी हैं और धनादि प्राप्त करके उसे वितरित भी करते हैं ॥५ ॥

५२६५. **कृधि रत्नं यजमानाय सुक्रतो त्वं हि रत्नधा असि ।**
आ न ऋते शिशीहि विश्वमृत्विजं सुशंसो यश्च दक्षते ॥६ ॥

हे श्रेष्ठकर्मा अग्निदेव ! आप याजकों को रत्न प्रदान करें । रत्नदाता आप हमारे यज्ञ में सभी ऋत्विजों को तेजस्वी बनाएँ । जो प्रशंसनीय हैं, उन्हें कुशलतापूर्वक आगे बढ़ाएँ ॥६ ॥

५२६६. **त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः ।**
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान्दयन्त गोनाम् ॥७ ॥

हे अग्निदेव ! उत्तम अग्नि कार्य (यज्ञ) करने वाले विद्वज्जन, धन का नियोजन करने वाले, प्रजा की व्यवस्था बनाने वाले तथा गौओं का पालन करने वाले आपकी कृपा के पात्र बनें ॥७ ॥



५२६७. येषामिळा घृतहस्ता दुरोण आँ अपि प्राता निषीदति ।
ताँस्त्रायस्व सहस्य द्रुहो निदो यच्छा नः शर्म दीर्घश्रुत् ॥८ ॥

यज्ञ के निमित्त जिन घरों में घृत और हविष्यान्न से पूर्ण पात्र लिए हुए देवीस्वरूपा स्त्रियाँ निवास करती हैं, हे बलवान् अग्निदेव ! आप निन्दकों एवं शत्रुओं से उनकी रक्षा करें । हम आपकी स्तुति करते रहें ॥८ ॥

५२६८. स मन्द्रया च जिह्वया वह्निरासा विदुष्टरः ।
अग्ने रयिं मघवद्भ्यो न आ वह हव्यदातिं च सूदय ॥९ ॥

हे अग्निदेव ! आप, हविर्द्रव्य प्रेषित करने वाले हम सबको श्रेष्ठ कर्म में प्रेरित करें । आप हवि वाहक हैं । आनन्द देने वाली जिह्वा से हवि का वहन करने वाले हे देव ! आप हमें धन प्रदान करें ॥९ ॥

५२६९. ये राधांसि ददत्यश्व्या मघा कामेन श्रवसो महः ।
ताँ अंहसः पिपृहि पर्तृभिष्ट्वं शतं पूर्भिर्यविष्ठ्य ॥१० ॥

हे अतितरुण अग्निदेव ! जो लोग यश प्राप्ति की कामना से साधना करते हैं एवं अश्वात्मक (गतिशील) हवि अर्पित करते हैं, उन्हें आप पापों से बचाएँ; अपने संरक्षण साधनों तथा सैकड़ों नगरियों (किलों) द्वारा उनको सुरक्षित करें ॥१० ॥

५२७०. देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्यासिचम् ।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते ॥११ ॥

(हे याजको !) धन प्रदाता अग्निदेव आपसे पूर्ण पात्र या पूर्ण भाव युक्त आहुति की अपेक्षा करते हैं । आप उन्हें सिंचित करें अथवा (पात्र को) परिपूर्ण करें, तब वे देवता आपके कार्यों (यज्ञादि अथवा काम्य कर्मों) का वहन करेंगे ॥११ ॥

५२७१. तं होतारमध्वरस्य प्रचेतसं वह्निं देवा अकृण्वत ।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे ॥१२ ॥

देवों ने श्रेष्ठ प्रज्ञावान् उन अग्निदेव को अपना सहायक बनाया है, जो हवि के वाहक हैं । वे यज्ञ करने वालों तथा दान देने वालों के लिए पराक्रम आदि श्रेष्ठतम विभूतियाँ प्रदान करते हैं ॥१२ ॥

[सूक्त - १७]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अग्नि । **छन्द-** द्विपदा त्रिष्टुप् ।]

५२७२. अग्ने भव सुषमिधा समिद्ध उत बर्हिरुर्विया वि स्तृणीताम् ॥१ ॥

हे अग्निदेव ! आप भली प्रकार प्रज्वलित हों । याजक अच्छी तरह से कुश का आसन बिछाएँ ॥१ ॥

५२७३. उत द्वार उशतीर्वि श्रयन्तामुत देवाँ उशत आ वहेह ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! देवताओं की कामना करने वाली (नारियों अथवा वाणियों) को आप आश्रय प्रदान करें एवं यज्ञ (आहुतियों) की अभिलाषा करने वाले देवताओं का आप इस यज्ञ में आवाहन करें ॥२ ॥

५२७४. अग्ने वीहि हविषा यक्षि देवान्त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः ॥३ ॥

हे जातवेदा अग्निदेव ! आप देवताओं के पास पहुँचकर, हवि द्वारा देवताओं का यजन करें । उन्हें शोभन यज्ञकर्त्ता बनाएँ ॥३ ॥



५२७५. **स्वध्वरा करति जातवेदा यक्षद्देवाँ अमृतान्पिप्रयच्च ॥४ ॥**

हे जातवेदा अग्निदेव ! आप अमर्त्य देवताओं का यजन करें । आप स्तोत्रों द्वारा उनको प्रसन्न करें ॥४ ॥

५२७६. **वंस्व विश्वा वार्याणि प्रचेतः सत्या भवन्त्वाशिषो नो अद्य ॥५ ॥**

हे प्रज्ञावान् अग्निदेव ! आप हमें सभी प्रकार का श्रेष्ठ धन प्रदान करें । (आपकी कृपा से) आज हमारे (प्रति प्रदान किए गये) आशीर्वाद सत्य (फलित) हों ॥५ ॥

५२७७. **त्वामु ते दधिरे हव्यवाहं देवासो अग्न ऊर्ज आ नपातम् ॥६ ॥**

हे बल के पुत्र अग्निदेव ! आपको देवताओं ने हवि-वाहक के रूप में धारण (स्वीकार) किया है ॥६ ॥

५२७८. **ते ते देवाय दाशतः स्याम महो नो रत्ना वि दध इयानः ॥७ ॥**

हे अग्निदेव ! आप प्रकाशस्वरूप, महान् एवं उपास्य हैं । हम आपके निमित्त आहुतियाँ अर्पित करेंगे । आप हमें रत्न (धन या विभूतियाँ) प्रदान करें ॥७ ॥

[सूक्त - १८]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** इन्द्र, २२-२५ सुदास पैजवन । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५२७९. **त्वे ह यत्पितरश्चिन्न इन्द्र विश्वा वामा जरितारो असन्वन् ।**
त्वे गावः सुदुघास्त्वे ह्यश्वास्त्वं वसु देवयते वनिष्ठः ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीनकाल में हमारे पूर्वज स्तुति द्वारा आपको प्रसन्न करके धन को प्राप्त करते थे । आप उत्तम घोड़ों एवं दुधारू गौओं के स्वामी हैं ।आप, देवत्व-प्राप्ति की कामना वाले हम सभी को प्रभूत धन प्रदान करते हैं ॥ १ ॥

५२८०. **राजेव हि जनिभिः क्षेष्येवाव द्युभिरभि विदुष्कविः सन् ।**
पिशा गिरो मघवन् गोभिरश्वैस्त्वायतः शिशीहि राये अस्मान् ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार रानियों के मध्य राजा सुशोभित होते हैं, उसी प्रकार आप भी द्युलोक में सुशोभित होते हैं । हे इन्द्रदेव ! आप ज्ञानी और कवि होकर स्तुति करने वालों को रूप प्रदान करें एवं अश्वों द्वारा उनकी रक्षा करें । हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप हमें संस्कारवान् बनाएँ, जिससे धन हमारे पास आये ॥२ ॥

५२८१. **इमा उ त्वा पस्पृधानासो अत्र मन्द्रा गिरो देवयन्तीरुप स्थुः ।**
अर्वाची ते पथ्या राय एतु स्याम ते सुमताविन्द्र शर्मन् ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! इस यज्ञ में हम स्तोता, स्तोत्रों द्वारा आपका यशोगान करते हैं । स्पर्धा करने वाली, हर्षित करने वाली एवं देवत्व की कामना वाली हमारी ये वाणियाँ आपके समीप पहुँचती हैं । हम, आप द्वारा प्रेषित सद्बुद्धि से (सत्कर्म करते हुए) सुख पायें एवं धन भी प्राप्त करें ॥३ ॥

५२८२. **धेनुं न त्वा सूयवसे दुदुक्षन्नुप ब्रह्माणि ससृजे वसिष्ठः ।**
त्वामिन्मे गोपतिं विश्व आहा न इन्द्रः सुमतिं गन्त्वच्छ ॥४ ॥

वसिष्ठ, आपके (अनुदान रूप दुग्ध) दोहन के निमित्त, बछड़ा रूपी स्तोत्रों की रचना करके उसी तरह दुह लेते हैं, जिस तरह उत्तम घास वाली गोशाला की गाय को (बछड़े के सहारे से) गोपालक दुह लेता है । विश्व में आप ही गौओं (इन्द्रियों एवं किरणों) के पतिरूप में प्रसिद्ध हैं । हे इन्द्रदेव ! हम वसिष्ठ गोत्रीय होता की स्तुति सुनकर आप हमारे निकट आएँ ॥४ ॥



५२८३. अर्णांसि चित्पप्रथाना सुदास इन्द्रो गाधान्यकृणोत्सुपारा ।
शर्धन्तं शिम्युमुचथस्य नव्यः शापं सिन्धूनामकृणोदशस्तीः ॥५ ॥

स्तुति से प्रसन्न होकर इन्द्रदेव ने राजा 'सुदास' (श्रेष्ठ भक्त) को उत्ताल तरंगों वाली, कठिन, पार न की जा सकने वाली नदी 'परुष्णी' को सहजता से पार करा दिया । स्तुति करने वालों को अपने तरंगित नदियों के शाप से मुक्त किया ॥५ ॥

५२८४. पुरोळा इत्तुर्वशो यक्षुरासीद्राये मत्स्यासो निशिता अपीव ।
श्रुष्टिं चक्रुर्भृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद्विषूचोः ॥६ ॥

'तुर्वश' (राजा तुर्वश अथवा कामना युक्त जल्दबाज व्यक्ति) यज्ञ द्वारा प्रगति चाहते थे, मत्स्यों (मत्स्य वंशियों अथवा मछलियों) की तरह धन-ऐश्वर्य के लिए प्रयत्नरत थे, 'भृगु' (वेदज्ञ, यजनशील ज्ञानी) तथा 'द्रुह' (द्वेषपूर्वक रहने वाले) धन के लिए स्पर्धारत थे; इस स्पर्धा में मित्र (इन्द्र) ने 'तुर्वश' आदि को नष्ट किया । मित्र सुदास (सदाशय सम्पन्न भृगु आदि) को तार दिया ॥६ ॥

५२८५. आ पक्थासो भलानसो भनन्तालिनासो विषाणिनः शिवासः ।
आ योऽनयत्सधमा आर्यस्य गव्या तृत्सुभ्यो अजगन्युधा नृन् ॥७ ॥

हविष्यान्न पकाने में कुशल, तपोनिष्ठ, भद्रमुख (प्रसन्नचित्त) , विषाण धारक (दीक्षित) स्तोतागण सबके कल्याण की इच्छा से उन इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं, जिन इन्द्रदेव ने साथ-साथ रहने वाले उत्तम पुरुषों की गौओं को वापस लाने के लिए, युद्ध में गौओं को चुराने वालों का संहार किया ॥७॥

५२८६. दुराध्यो३ अदितिं स्रेवयन्तोऽचेतसो वि जगृभ्रे परुष्णीम् ।
मह्नाविव्यक् पृथिवीं पत्यमानः पशुष्कविरशयच्चायमानः ॥८ ॥

दुष्ट बुद्धि वाले मूढ़ शत्रुओं ने 'परुष्णी' नदी के तटों को तोड़ डाला । इन्द्रदेव की कृपा से 'सुदास' ने 'चयमान' के पुत्र को, पाले गये पशु के समान सहज ही धराशायी कर दिया, जिससे 'सुदास' का यश विश्वव्यापी हुआ ॥८ ॥

५२८७. ईयुरर्थं न न्यर्थं परुष्णीमाशुश्चनेदभिपित्वं जगाम ।
सुदास इन्द्रः सुतुकाँ अमित्रानरन्धयन्मानुषे वध्रिवाचः ॥९ ॥

इन्द्रदेव ने 'परुष्णी' नदी के तटों को सुधरवा कर जल-प्रवाह को व्यवस्थित किया । 'सुदास' का घोड़ा भी अपने गन्तव्य स्थान को गया । इन्द्रदेव ने सुदास के उन शत्रुओं का संहार कर दिया, जो बकवादी तथा बहुत संतान युक्त थे ॥९ ॥

५२८८. ईयुर्गावो न यवसादगोपा यथाकृतमभि मित्रं चितासः ।
पृश्निगावः पृश्निनिप्रेषितासः श्रुष्टिं चक्रुर्नियुतो रन्तयश्च ॥१० ॥

गोपालक के बिना भी जिस प्रकार गौएँ जौ के निमित्त जाती हैं, वैसे ही माता के द्वारा प्रेरित, चैतन्य, विभिन्न वर्णों की गौओं वाले (मरुद्‌गण) पूर्व निश्चयानुसार अपने मित्र इन्द्रदेव के सहयोग के लिए जाते हैं । मरुद्‌गणों के अश्व भी चपलता से गतिमान् होते हैं ॥१० ॥

५२८९. एकं च यो विंशतिं च श्रवस्या वैकर्णयोर्जनान्राजा न्यस्तः ।
दस्मो न सद्मन्नि शिशाति बर्हिः शूरः सर्गमकृणोदिन्द्र एषाम् ॥११ ॥



वीर इन्द्रदेव ने सुदास (उत्तम जनों) की सहायता के लिए मरुतों को उत्पन्न किया । ये मरुद्‌गण संग्राम में शत्रुओं को उसी तरह काटते हैं, जैसे युवक दर्भों को काटता है । इन्द्रदेव ने सुदास की रक्षा के लिए इक्कीस वैकर्णों (विकर्ण क्षेत्रवासी, अथवा न सुनने वाले अथवा निर्देश की उपेक्षा करने वाले) का वध किया ॥११ ॥

५२९०. **अध श्रुतं कवषं वृद्धमप्स्वनु द्रुह्युं नि वृणग्वज्रबाहुः ।**
वृणाना अत्र सख्याय सख्यं त्वायन्तो ये अमदन्ननु त्वा ॥१२ ॥

इसके अतिरिक्त हाथ में वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव ने श्रुत, कवष तथा वृद्ध द्रोही जनों को जल में डुबाकर मार डाला । हे इन्द्रदेव ! उस समय जिन्होंने आपके अनुकूल आनन्दवर्धक कार्य किये, वे आपके मित्र कहलाए ॥१२ ॥

५२९१. **वि सद्यो विश्वा दृंहितान्येषामिन्द्रः पुरः सहसा सप्त दर्दः ।**
व्यानवस्य तृत्सवे गयं भाग्जेष्म पूरुं विदथे मृध्रवाचम् ॥१३ ॥

इन्द्रदेव ने स्वयं की सामर्थ्य से शत्रुओं की सैन्य शक्ति एवं सुदृढ़ किलों को ध्वस्त किया । 'अनु' के पुत्र के गय (घर या प्राण) को 'तृत्सु' के लिए प्रदान किया । हे इन्द्रदेव ! आप हम पर ऐसी कृपा करें, ताकि हम कटुभाषी पर विजय प्राप्त कर सकें ॥१३ ॥

[इन्द्रदेव जीव चेतना के प्रतीक हैं, शरीर की सप्त धातुओं में असुरों-विकारों के मोर्चे बन जाते हैं, उन्हें वे ध्वस्त कर देते हैं । उन विकारों के अनुगामी- उन्हें पोषण देने वालों के घर या प्राण उन विकारों के उच्छेदकों (तृत्सुओं) को प्रदान कर देने से उनके पुनः विकसित होने की सम्भावना समाप्त हो जाती है ।]

५२९२. **नि गव्यवोऽनवो द्रुह्यवश्च षष्टिः शता सुषुपुः षट् सहस्रा ।**
षष्टिर्वीरासो अधि षड् दुवोयु विश्वेदिन्द्रस्य वीर्या कृतानि ॥१४ ॥

हे इन्द्रदेव ! 'अनु' और 'द्रुह' के अनुयायी छासठ हजार छासठ वीरों का, आपने सुदास के हित के लिए वध किया था, ये समस्त कार्य आपके पराक्रम के ही द्योतक हैं ॥१४ ॥

५२९३. **इन्द्रेणैते तृत्सवो वेविषाणा आपो न सृष्टा अधवन्त नीचीः ।**
दुर्मित्रासः प्रकलविन् मिमाना जहुर्विश्वानि भोजना सुदासे ॥१५ ॥

संग्राम भूमि में अज्ञानी, दुष्ट सहयोगियों वाले 'तृत्सु' , इन्द्र के समक्ष टिक न सके और निम्न प्रवाही जल की तरह तीव्रगति से भाग खड़े हुए । छोड़ी गयी भोग्य सामग्री सुदास को प्राप्त हुई ॥१५ ॥

५२९४. **अर्धं वीरस्य शृतपामनिन्द्रं परा शर्धन्तं नुनुदे अभि क्षाम् ।**
इन्द्रो मन्युं मन्युम्यो मिमाय भेजे पथो वर्तनिं पत्यमानः ॥१६ ॥

विनाश करने वाले वीरों, दुष्ट, हविरन्न के भक्षक, विनाशक शत्रुओं एवं शत्रुओं के क्रोध को इन्द्रदेव ने धराशायी कर दिया । भगोड़े शत्रु को पलायन-मार्ग से भागने को विवश किया ॥१६ ॥

५२९५. **आध्रेण चित्तद्वेकं चकार सिंह्यं चित्पेत्वेना जघान ।**
अव स्रक्तीर्वेश्याववृश्चदिन्द्रः प्रायच्छद्विश्वा भोजना सुदासे ॥१७ ॥

इन्द्रदेव ने सुदास द्वारा जो कार्य करवाये, वे वैसे ही चमत्कारपूर्ण लगे, जैसे कोई दरिद्र बड़ा दान करे, बकरा सिंहराज को मार डाले अथवा सुई से कोई यूप काट डाले । इस प्रकार इन्द्रदेव ने सुदास को ही समस्त प्रकार के भोग्य-ऐश्वर्य प्रदान किये ॥१७ ॥



५२९६. शश्वन्तो हि शत्रवो रारधुष्टे भेदस्य चिच्छर्धतो विन्द रन्धिम् ।
मर्ताँ एनः स्तुवतो यः कृणोति तिग्मं तस्मिन्नि जहि वज्रमिन्द्र ॥१८ ॥

हे इन्द्रदेव ! समस्त वीर शत्रुगण आपके वश में हो गये हैं । हे देव ! सुकर्मियों का अहित करने वाले 'भेद' (इस नाम के असुर या भेद वृत्ति) को भी वशीभूत करके, उस पर वज्र प्रहार करें ॥१८ ॥

५२९७. आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात्र भेदं सर्वताता मुषायत् ।
अजासश्च शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि ॥१९ ॥

इस सर्वव्यापी युद्ध में इन्द्रदेव ने 'भेद' (आदि) शत्रुओं का संहार किया था । यमुना और तृत्सुओं ने इन्द्रदेव को सन्तुष्ट किया था । 'अजा' 'शिग्रु' और 'यक्षु' जनों ने इन्द्रदेव के निमित्त अनके अश्व उपहार में दिये थे ॥१९ ॥

५२९८. न त इन्द्र सुमतयो न रायः सञ्चक्षे पूर्वा उषसो न नूत्नाः ।
देवकं चिन्मान्यमानं जघन्थाव त्मना बृहतः शम्बरं भेत् ॥२० ॥

हे इन्द्रदेव ! आपने पहले भी कृपा करके जो धनादि प्रदान किये, वे सब उषाओं की भाँति ही अवर्णनीय हैं । आपके नूतन उपकारों का भी वर्णन नहीं किया जा सकता है । आपने 'मान्यमान' के पुत्र 'देवक' का संहार किया एवं आपने बड़ी शिला के द्वारा शम्बर असुर का स्वयं वध किया ॥२० ॥

५२९९. प्र ये गृहादममदुस्त्वाया पराशरः शतयातुर्वसिष्ठः ।
न ते भोजस्य सख्यं मृषन्ताधा सूरिभ्यः सुदिना व्युच्छान् ॥२१ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिन्हें असुर मारना चाहते थे, ऐसे पराशर, वसिष्ठ आदि ऋषियों ने भक्तिपूर्वक आपकी स्तुति की है । आप उनके पालक हैं । अतः वे आपकी मित्रता को नहीं भूले । आपकी कृपा से इन ऋषियों को श्रेष्ठ दिवस (शुभ अवसर) प्राप्त हों ॥२१ ॥

५३००. द्वे नप्तुर्देववतः शते गोर्द्वा रथा वधूमन्ता सुदासः ।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्य दानं होतेव सद्म पर्येमि रेभन् ॥२२ ॥

हे अग्निदेव ! देववान् के पौत्र एवं पिजवन के पुत्र राजा सुदास ने दो सौ गौएँ और भारवाही दो रथों को दान में दिया, हम इस दान की प्रशंसा करते हुए, होता की ही भाँति यज्ञ गृह में यज्ञ सम्पन्न करने हेतु जाते हैं ॥२२ ॥

५३०१. चत्वारो मा पैजवनस्य दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिनो निरेके ।
ऋज्रासो मा पृथिविष्ठाः सुदासस्तोकं तोकाय श्रवसे वहन्ति ॥२३ ॥

पिजवन पुत्र राजा सुदास ने सोने के आभूषणों से सजे हुए एवं कठिन मार्गों में भी सहजता से गमन करने वाले, पुत्रवत् पाले गये चार-अश्व (वसिष्ठ ऋषि को) श्रद्धा सहित दान दिए । पृथ्वी पर प्रसिद्ध वे घोड़े वसिष्ठ ऋषि को पुत्र के समान (संरक्षित रखते हुए) पुत्र एवं यश (प्राप्ति) के लिए ले जाते हैं ॥२३ ॥

५३०२. यस्य श्रवो रोदसी अन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णे विबभाजा विभक्ता ।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नि युध्यामधिमशिशादभीके ॥२४ ॥

'राजा सुदास' का यश दान-दाता के रूप में पृथ्वी से स्वर्गलोक तक फैला है । सातों लोक इस महान् दानी की उसी तरह प्रशंसा करते हैं, जिस प्रकार इन्द्रदेव की । इनके युध्यामधि नामक शत्रु को नदियों द्वारा (डुबाकर)मार डाला गया ॥२४ ॥



५३०३. **इमं नरो मरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः ।**
अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणाशं क्षत्रमजरं दुवोयु ॥२५ ॥

हे नेतृत्व क्षमता सम्पन्न मरुतो ! ये राजा सुदास हैं, इनके पिता पिजवन हैं । आप दिवोदास के समान ही सुदास के निवास की रक्षा करें । इनका क्षात्रबल बढ़ता ही जाये, कम न हो ॥२५ ॥

[सूक्त - १९]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३०४. **यस्तिग्मशृङ्गो वृषभो न भीम एकः कृष्टीश्च्यावयति प्र विश्वाः ।**
यः शश्वतो अदाशुषो गयस्य प्रयन्तासि सुष्वितराय वेदः ॥१ ॥

जो इन्द्रदेव तीक्ष्ण सींग वाले वृषभ के समान भयंकर हैं, वे अकेले ही समस्त शत्रुओं को अपने स्थान से पतित कर देते हैं । जो यजन नहीं करते, ऐसे लोगों के निवास छीन लेने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हम याजकों को धन-ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१ ॥

५३०५. **त्वं ह त्यदिन्द्र कुत्समावः शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये ।**
दासं यच्छुष्णं कुयवं न्यस्मा अरन्धय आर्जुनेयाय शिक्षन् ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जब संग्राम काल में आपने 'कुत्स' की सुरक्षा, स्वयं शुश्रूषा करके की थी, तब अर्जुनी के पुत्र कुत्स को धन दिया था एवं दास 'शुष्ण' और 'कुयव' का संहार किया था ॥२ ॥

५३०६. **त्वं धृष्णो धृषता वीतहव्यं प्रावो विश्वाभिरूतिभिः सुदासम् ।**
प्र पौरुकुत्सिं त्रसदस्युमावः क्षेत्रसाता वृत्रहत्येषु पूरुम् ॥३ ॥

हे अदम्य इन्द्रदेव ! आप हवि पदार्थ अर्पित करने वाले राजा सुदास की सुरक्षा, अपनी रक्षण शक्ति सहित वज्र द्वारा करते हैं । आपने शत्रु का संहार करने के समय एवं भूमि के बँटवारे के समय, पुरुकुत्स के पुत्र त्रसदस्यु एवं पूरु का संरक्षण किया था ॥३ ॥

५३०७. **त्वं नृभिर्नृमणो देववीतौ भूरीणि वृत्रा हर्यश्व हंसि ।**
त्वं नि दस्युं चुमुरिं धुनिं चास्वापयो दभीतये सुहन्तु ॥४ ॥

मनुष्यों के हितैषी मनवाले हे इन्द्रदेव ! आपने युद्ध भूमि में मरुद्गणों की सहायता से उनके शत्रुओं का विनाश किया था । हे हरित वर्ण के अश्व वाले इन्द्रदेव ! आपने ही दभीति की सुरक्षा के लिए दस्यु चुमुरि एवं धुनि को मारा ॥४ ॥

५३०८. **तव च्यौत्नानि वज्रहस्त तानि नव यत्पुरो नवतिं च सद्यः ।**
निवेशने शततमाविवेषीरहञ्च वृत्रं नमुचिमुताहन् ॥५ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपने अपने प्रसिद्ध बल के द्वारा शत्रुओं के निन्यानवे नगरों को बहुत कम समय में ही ध्वस्त कर दिया । अपने निवास के लिए सौवें नगर में प्रवेश कर आपने वृत्रासुर एवं नमुचि को मारा ॥५ ॥

५३०९. **सना ता त इन्द्र भोजनानि रातहव्याय दाशुषे सुदासे ।**
वृष्णे ते हरी वृषणा युनज्मि व्यन्तु ब्रह्माणि पुरुशाक वाजम् ॥६ ॥



हे इन्द्रदेव ! आपने हविदाता राजा सुदास के लिए सदा रहने वाली धन-सम्पदा प्रदान की । हे बहुकर्मा इन्द्रदेव ! आप कामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं । हम आपके लिए दो बलशाली अश्वों को रथ में नियोजित करते हैं । आप बलवान् के पास हमारे स्तोत्र पहुँचें ॥६ ॥

५३१०. **मा ते अस्यां सहसावन्परिष्टावघाय भूम हरिवः परादै ।**
त्रायस्व नोऽवृकेभिर्वरूथैस्तव प्रियासः सूरिषु स्याम ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप बलवान् हैं और अश्वों के स्वामी हैं । आपके इस यज्ञ में हम दूसरों से सहायता प्राप्त करने का पाप न करें । आप अपने रक्षण साधनों से हमारी रक्षा करें । हम आपकी स्तुति करने वाले विशेष प्रिय पात्र बनें ॥७ ॥

५३११. **प्रियास इत्ते मघवन्नभिष्टौ नरो मदेम शरणे सखायः ।**
नि तुर्वशं नि याद्वं शिशीह्यतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् ॥८ ॥

हे धनपति इन्द्रदेव ! आपकी स्तुति करने वाले हम परस्पर प्रेमपूर्वक मित्रभाव से घर में प्रसन्न होकर रहें । आप अतिथि-सत्कार में निपुण सुदास को सुख प्रदान करते हुए, तुर्वश एवं यदुवंशी को परास्त करें ॥८ ॥

५३१२. **सद्यश्चिन्नु ते मघवन्नभिष्टौ नरः शंसन्त्युक्थशास उक्था ।**
ये ते हवेभिर्वि पर्णीरदाशन्नस्मान्वृणीष्व युज्याय तस्मै ॥९ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आपके यज्ञ में हम स्तोता ही उक्थ (स्तोत्रों) का उच्चारण करते हैं । आपको हवि अर्पित करके, उक्थों के उच्चारण द्वारा पणियों (लोभियों) को भी धन दान करने की प्रेरणा दी । हम सबको आप मित्रवत् स्वीकार करें ॥९ ॥

५३१३. **एते स्तोमा नरां नृतम तुभ्यमस्मद्र्यञ्चो ददतो मघानि ।**
तेषामिन्द्र वृत्रहत्ये शिवो भूः सखा च शूरोऽविता च नृणाम् ॥१० ॥

हे नेतृत्व करने वालों में श्रेष्ठ इन्द्रदेव ! स्तोत्रों और हवि द्वारा आपका यजन करने वालों ने आपको हम सबका हितैषी बना दिया है । आप युद्ध के समय इन्हीं स्तोताओं की रक्षा करें ॥१० ॥

५३१४. **नू इन्द्र शूर स्तवमान ऊती ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधस्व ।**
उप नो वाजान्मिमीह्युप स्तीन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥११ ॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! स्तुत्य होकर और ज्ञान से प्रेरित होकर आपके शरीर और रक्षण शक्तियों में वृद्धि हो । हम सबको आप अपनी कल्याणकारी शक्तियों द्वारा सुरक्षित कर, अन्न एवं आवास (घर) प्रदान करें ॥११ ॥

[सूक्त - २०]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३१५. **उग्रो जज्ञे वीर्याय स्वधावाञ्चक्रिरपो नर्यो यत्करिष्यन् ।**
जग्मिर्युवा नृषदनमवोभिस्त्राता न इन्द्र एनसो महश्चित् ॥१ ॥

धारणशक्ति युक्त पराक्रमी इन्द्रदेव वीरतापूर्ण कार्य करने के लिए ही उत्पन्न हुए हैं । वे उस कार्य को अवश्य ही पूर्ण करते हैं, जो उन्हें मनुष्यों के हित के लिए उचित लगता है । यज्ञशाला की ओर जाने वाले तरुण एवं संरक्षक, इन्द्रदेव महापातक से हमारी रक्षा करें ॥१ ॥



५३१६. **हन्ता वृत्रमिन्द्रः शूशुवानः प्रावीन्नु वीरो जरितारमूती ।**
कर्ता सुदासे अह वा उ लोकं दाता वसु मुहुरा दाशुषे भूत् ॥२ ॥

वृद्धि को प्राप्त होकर इन्द्रदेव वृत्र का संहार करते हैं । स्तोताओं को आश्रय प्रदान करके, वे वीर उनकी रक्षा करते हैं । वे सुदास राजा के लिए क्षेत्र का निर्माण करते हैं । वे याजक को बार-बार धन प्रदान करते हैं ॥२ ॥

५३१७. **युध्मो अनर्वा खजकृत्समद्वा शूरः सत्राषाड्जनुषेमषाळ्हः ।**
व्यास इन्द्रः पृतनाः स्वोजा अधा विश्वं शत्रूयन्तं जघान ॥३ ॥

युद्ध कला में कुशल, युद्धरत रहने वाले, योद्धा, संग्राम के लिए सदा तत्पर, शूरवीर एवं सहज स्वभाव से ही अनेक शत्रुओं को जीतने वाले, स्वयं कभी न हारने वाले, इन्द्रदेव ने शत्रु सैन्य दल को अस्त-व्यस्त करते हुए शत्रुओं का वध किया ॥३ ॥

५३१८. **उभे चिदिन्द्र रोदसी महित्वा पप्राथ तविषीभिस्तुविष्मः ।**
नि वज्रमिन्द्रो हरिवान्मिमिक्षन्त्समन्धसा मदेषु वा उवोच ॥४ ॥

हे परम ऐश्वर्यशाली इन्द्रदेव ! आप अपने बल एवं महिमा द्वारा, द्यावा-पृथिवी दोनों लोकों को परिपूरित करते हैं । वे इन्द्रदेव अश्व वाले और शत्रुओं पर वज्र से आघात करने वाले हैं । उन देव की यज्ञ में सोमरस द्वारा सेवा की जाती है ॥४ ॥

५३१९. **वृषा जजान वृषणं रणाय तमु चिन्नारी नर्यं ससूव ।**
प्र यः सेनानीरध नृभ्यो अस्तीनः सत्वा गवेषणः स धृष्णुः ॥५ ॥

बलवती माता एवं बलवान् पिता ने मनुष्यों के हित में युद्ध करने के लिए पुत्र इन्द्रदेव को उत्पन्न किया । जो मनुष्यों के हितकारी सेनानायक होकर प्रभावी स्वामी बन जाते हैं, वे शत्रुनाशक इन्द्रदेव गौओं (किरणों) की खोज करने वाले एवं शत्रुओं का दमन करने वाले हैं ॥५ ॥

५३२०. **नू चित्स भ्रेषते जनो न रेषन्मनो यो अस्य घोरमाविवासात् ।**
यज्ञैर्य इन्द्रे दधते दुवांसि क्षयत्स राय ऋतपा ऋतेजाः ॥६ ॥

जो मनुष्य इन शूरवीर इन्द्रदेव के मन को, यज्ञ द्वारा सेवा करके प्रसन्न करते हैं, वे पतित नहीं होते हैं और न क्षीण होते हैं । यज्ञोत्पन्न और यज्ञ रक्षक इन्द्रदेव, स्तोताओं को धन प्रदान करते हैं ॥६ ॥

५३२१. **यदिन्द्र पूर्वो अपराय शिक्षन्नयज्ज्यायान् कनीयसो देष्णम् ।**
अमृत इत्पर्यासीत दूरमा चित्र चित्र्यं भरा रयिं नः ॥७ ॥

हे विचित्र इन्द्रदेव ! जो धन पूर्वज अपने वंशजों को देते हैं । जो श्रेष्ठ से कनिष्ठ को प्राप्त होता है तथा जो अक्षय धन दूर देश जाकर प्राप्त किया जाता है । वे तीनों प्रकार के धन आप हमें प्रदान करें ॥७ ॥

५३२२. **यस्त इन्द्र प्रियो जनो ददाशदसन्निरेके अद्रिवः सखा ते ।**
वयं ते अस्यां सुमतौ चनिष्ठाः स्याम वरूथे अघ्नतो नृपीतौ ॥८ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! जो प्रिय मित्र आपके लिए हवि प्रदान करता है, उसे आपके द्वारा प्रदत्त दान प्राप्त हो । आपकी कृपा से हम धनवान् , अन्नवान् एवं अहिंसक वृत्ति वाले बनें । मनुष्यों के निवास योग्य सुरक्षित घर में हम रहें ॥८ ॥



५३२३. **एष स्तोमो अचिक्रदद्वृषा त उत स्तामुर्मघवन्नक्रपिष्ट ।**
रायस्कामो जरितारं त आगन्त्वमङ्ग शक्र वस्व आ शको नः ॥९ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आपका बलवर्धक यह सोम, शब्द करता है एवं स्तोतागण स्तुति करते हैं । हे इन्द्रदेव ! हम आपके स्तोतागण हैं, हमें धन की इच्छा है, अतएव आप हम लोगों को धन सहित निवास प्रदान करें ॥९ ॥

५३२४. **स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।**
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें धारण कर सुरक्षित रखें; ताकि आपके द्वारा प्रदत्त अन्न के उपभोग करने की शक्ति हमारे अन्दर रहे । जो धनवान् स्वेच्छा से हवि प्रदान करते हैं, उन्हें भी सुरक्षित करें । स्तोताओं में स्तुति करने की शक्ति रहे । आप कल्याणकारी रक्षण-साधनों से हम सबकी सुरक्षा करें ॥१० ॥

[सूक्त - २१]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३२५. **असावि देवं गोऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच ।**
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा नः स्तोममन्धसो मदेषु ॥१ ॥

यह निचोड़ा गया दिव्य सोमरस गो दुग्ध के साथ मिश्रित हुआ है । इन्द्रदेव जन्म से ही इसके प्रति रुचि रखते हैं । हे हरि (नामक) अश्वों से युक्त (इन्द्र !) हम यज्ञों में आपको जाग्रत् करते हैं । सोम से आनन्दित होकर आप हमारे स्तोत्रों पर ध्यान दें ॥१ ॥

५३२६. **प्र यन्ति यज्ञं विपयन्ति बर्हिः सोममादो विदथे दुध्रवाचः ।**
न्यु भ्रियन्ते यशसो गृभादा दूरउपब्दो वृषणो नृषाचः ॥२ ॥

याजक, यज्ञशाला में पहुँचकर कुशा के आसन बिछाते हैं और पत्थरों से सोम कूटते हैं । सोम कूटने से पत्थरों की टकराहट की कर्कश ध्वनि दूर से ही सुनाई पड़ती है । ऋत्विग्गण बलवर्धक सोम कूटने वाले पत्थर घर से ही लेकर आए थे ॥२ ॥

५३२७. **त्वमिन्द्र स्रवितवा अपस्कः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः ।**
त्वद्वावक्रे रथ्यो३ न धेना रेजन्ते विश्वा कृत्रिमाणि भीषा ॥३ ॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! वृत्र के द्वारा आक्रान्त होकर स्तब्ध हुए बहुत से जल प्रवाहों को आपने प्रवाहित किया । आपने ही नदियों को ऐसे प्रवाहित होने दिया, जैसे रथारूढ़ वीर जा रहे हों ।आपके भय से भुवन कम्पित हो गये ॥३ ॥

५३२८. **भीमो विवेषायुधेभिरेषामपांसि विश्वा नर्याणि विद्वान् ।**
इन्द्रः पुरो जर्हृषाणो वि दूधोद्वि वज्रहस्तो महिना जघान ॥४ ॥

इन्द्रदेव मानवों के हितकारी एवं समस्त कार्य करने में कुशल हैं । आयुध धारण करके भयंकर प्रतीत होने वाले इन्द्रदेव हर्षित होकर वज्र धारण कर, शत्रुओं की सेना में प्रविष्ट होकर, शत्रुओं को भय-कम्पित करते हुए उनका वध करते हैं ॥४ ॥

अगली ऋचा क्र० ५ में 'शिश्नदेवा:' शब्द आया है । पाश्चात्य विद्वान् इसके आधार पर यह आक्षेप लगाने का प्रयास करते हैं कि वेदकाल में 'शिश्न (लिंग) -पूजा' होती थी । विचारशीलों को ऐसे पूर्वाग्रह या दुराग्रह पूर्ण अर्थ करना शोभा नहीं देता ।



पाणिनि ने 'शिश्न' को 'श्नथ्' धातु से सम्बद्ध कहा है, जिसका अर्थ हिंसा या प्रताड़ना होता है । 'मा शिश्न देवाः अपि गुर्ऋतं नः' का सीधा अर्थ होता है कि हिंसक स्वभाव के देवतागण हमारे यज्ञ के निकट भी न आएँ । 'शिश्न का अर्थ कामेन्द्रिय लें, तो भी उसका अर्थ यही होता है कि कामी प्रवृत्ति के, ब्रह्मचर्य न निभा पाने वाले लोग इस यज्ञ के निकट भी न आएँ । आचार्य सायण, श्री सातवलेकर एवं पं० जयदेव आदि ने भी ऐसा ही अर्थ किया है । यहाँ उक्त दोनों भावों को समाहित करते हुए अर्थ किया गया है –

५३२९. **न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न वन्दना शविष्ठ वेद्याभिः ।**
स शर्धदर्यो विषुणस्य जन्तोर्मा शिश्नदेवा अपि गुर्ऋतं नः ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! असुरगण हमारे ऊपर घात न कर सकें । बलशाली (वे असुर) हमारे वन्दन एवं अध्ययन में भी (घात) नहीं करें । हे आर्य ! आप विषम (व्यक्तियों, जीवों या प्रवृत्तियों) को अपने नियंत्रण में रखें । हिंसक स्वभाव वाले या कामी वृत्ति के लोग हमारे यज्ञ के निकट भी न आने पायें ॥५ ॥

५३३०. **अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्न ते विव्यङ्महिमानं रजांसि ।**
स्वेना हि वृत्रं शवसा जघन्थ न शत्रुरन्तं विविदद्युधा ते ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने पुरुषार्थ द्वारा भूलोक के समस्त शत्रु प्राणियों को पराभूत करते हैं । आपकी महिमा को समस्त लोक (चौदहों भुवन) नहीं जानते हैं । आप निज बल से वृत्र-शत्रु का संहार करते हैं । युद्ध में शत्रुगण आपका पार नहीं पा सकते ॥६ ॥

५३३१. **देवाश्चित्ते असुर्याय पूर्वेऽनु क्षत्राय ममिरे सहांसि ।**
इन्द्रो मघानि दयते विषह्येन्द्रं वाजस्य जोहुवन्त सातौ ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! पूर्व देवों ने आपके बल एवं शत्रु मारने की शक्ति की तुलना में अपने को कमजोर ही माना था । आप शत्रुओं को जीतकर, (जीता हुआ) धन अपने भक्तों को प्रदान करते हैं । धन की इच्छा से याजक इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं ॥७ ॥

५३३२. **कीरिश्चिद्धि त्वामवसे जुहावेशानमिन्द्र सौभगस्य भूरेः ।**
अवो बभूथ शतमूते अस्मे अभिक्षत्तुस्त्वावतो वरूता ॥८ ॥

हे शासनकर्त्ता इन्द्रदेव ! स्तोतागण आपकी स्तुति करते हुए अपनी सुरक्षा की कामना करते हैं । आप सैकड़ों रक्षण साधनों के द्वारा हमारे धन की सुरक्षा करें । आपसे जो स्पर्धा करते हैं, ऐसे शत्रु का आप नाश करें ॥८ ॥

५३३३. **सखायस्त इन्द्र विश्वह स्याम नमोवृधासो महिना तरुत्र ।**
वन्वन्तु स्मा तेऽवसा समीके३ ऽभीतिमर्यो वनुषां शवांसि ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम सब आपका यशोवर्धन करने वाले सदैव आपके सखा रूप में रहें । महिमावान् - तारक हे इन्द्रदेव ! स्तोतागण आपके द्वारा सुरक्षित रहते हुए, आक्रमणकारियों को जीत लें ॥९ ॥

५३३४. **स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।**
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें ऐसी धारण शक्ति प्रदान करें, जिससे हम आपके द्वारा दिये गये अन्न का भोग कर सकें । जो धनवान् स्वेच्छा से हवि प्रदान करते हैं, उन्हें भी सुरक्षित करें । हम स्तोताओं में स्तुति करने की शक्ति धारण करायें । अपने समस्त कल्याणकारी रक्षण साधनों से आप हम सबकी सुरक्षा करें ॥१० ॥



[सूक्त - २२]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- विराट्, ९ त्रिष्टुप् ।]

५३३५. **पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः । सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥ १ ॥**

हे अश्वयुक्त इन्द्रदेव ! आप आनन्ददायक सोमरस का पान करें । संचालक के बाहुओं से सुनियंत्रित घोड़े के समान (यज्ञशाला में) सुरक्षित रखे गये पत्थर के द्वारा (कूटकर) आपके लिए सोमरस निकाला जाता है ॥१ ॥

५३३६. **यस्ते मदो युज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि । स त्वामिन्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥ २॥**

घोड़ों के स्वामी हे समृद्धिशाली इन्द्रदेव ! जिस सोमरस के उत्साह द्वारा आप वृत्रासुर (दुष्टों) का हनन करते हैं, वह श्रेष्ठ रस आपको आनन्द प्रदान करे ॥२ ॥

५३३७. **बोधा सु मे मघवन्वाचमेमां यां ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम् ।**
इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥३ ॥

हे ऐश्वर्यशाली इन्द्रदेव ! विशिष्ट याजक (वसिष्ठ) गुणगान करते हुए, जिस श्रेष्ठ वाणी से आपकी अर्चना कर रहे हैं, उसे आप भली-भाँति विचारपूर्वक स्वीकार करें ।यज्ञस्थल पर इस (ज्ञानरूपी) हविष्य को ग्रहण करें ॥३॥

५३३८. **श्रुधी हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम् ।**
कृष्वा दुवांस्यन्तमा सचेमा ॥४ ॥

सोमरस पीने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारे आवाहन पर ध्यान दें । अर्चना करने वाले ज्ञानियों की प्रार्थना सुनें । हमारी सेवाओं को अपने सच्चे मित्र की सेवाएँ मानकर ग्रहण करें ॥४ ॥

५३३९. **न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान् ।**
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके असाधारण बल को जानने वाले हम आपकी स्तुति को छोड़ नहीं सकते । यश को बढ़ाने वाले आपके स्तोत्रों का हम पाठ करते हैं ॥५ ॥

५३४०. **भूरि हि ते सवना मानुषेषु भूरि मनीषी हवते त्वामित् ।**
मारे अस्मन्मघवञ्ज्योक्कः ॥६ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! हम मनुष्यों द्वारा आपके निमित्त सोम-यज्ञ होते रहे हैं । आपके निमित्त हवन भी सम्पादित होते हैं, अतः आप हमसे दूर कभी न रहें ॥६ ॥

५३४१. **तुभ्येदिमा सवना शूर विश्वा तुभ्यं ब्रह्माणि वर्धना कृणोमि ।**
त्वं नृभिर्हव्यो विश्वधासि ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके लिए ये अनेक सवन हैं । ये स्तोत्र भी आपका यश बढ़ाने के लिए हैं । आप ही मनुष्यों द्वारा हवि प्रदान करने योग्य हैं ॥७ ॥

५३४२. **नू चिन्नु ते मन्यमानस्य दस्मोदश्नुवन्ति महिमानमुग्र ।**
न वीर्यमिन्द्र ते न राधः ॥८ ॥

हे दर्शनीय इन्द्रदेव ! आपकी ऐसी सम्माननीय महिमा का कोई पार नहीं पा सकता है । हे शूरवीर ! आपके पराक्रम एवं धन का पार भी कोई नहीं पा सकता है ॥८ ॥



५३४३. **ये च पूर्व ऋषयो ये च नूत्ना इन्द्र ब्रह्माणि जनयन्त विप्राः ।**
अस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीन एवं नवीन ऋषियों द्वारा रचे गये स्तोत्रों से स्तुत्य होकर आपने जिस प्रकार उनका कल्याण किया, वैसे ही हम स्तोताओं का भी मित्रवत् कल्याण करें । आप कृपा करके कल्याणकारी साधनों से हम सबकी सुरक्षा करें ॥९ ॥

[सूक्त - २३]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३४४. **उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ ।**
आ यो विश्वानि शवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥१ ॥

हे इन्द्रियजित् (वसिष्ठ) ऋषे ! आपकी शक्ति से सम्पूर्ण भुवनों को विस्तृत करने वाले तथा अन्न (पोषक आहार) प्राप्ति की कामना से यज्ञ में आप यश के संवर्धक उपासकों की प्रार्थना सुनने वाले इन्द्रदेव की महिमा का वर्णन करने वाले स्तोत्रों का पाठ करें ॥१ ॥

५३४५. **अयामि घोष इन्द्र देवजामिरिरज्यन्त यच्छुरुधो विवाचि ।**
नहि स्वमायुश्चिकिते जनेषु तानीदंहांस्यति पर्ष्यस्मान् ॥२ ॥

उस समय शोक को रोकने वाली ओषधियाँ बढ़ती हैं, जिस समय देवों की स्तुतियाँ की जाती हैं । हे इन्द्रदेव ! मनुष्यों में अपनी आयु को जानने वाला कोई नहीं है । आप हमें सारे पापों से पार ले जाएँ ॥२ ॥

५३४६. **युजे रथं गवेषणं हरिभ्यामुप ब्रह्माणि जुजुषाणमस्थुः ।**
वि बाधिष्ट स्य रोदसी महित्वेन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघन्वान् ॥३ ॥

गौ (किरणों अथवा इन्द्रियों) के आविष्कर्ता इन्द्रदेव के रथ में हरितवर्ण के दोनों अश्वों को (स्तोत्रों द्वारा हम वसिष्ठ) नियोजित करते हैं । स्तोत्र उन इन्द्रदेव की सेवा करते हैं, जो हमारे उपास्य हैं । ये इन्द्रदेव अपनी महिमा से द्यावा-पृथिवी को व्याप्त किए हैं । इन्द्रदेव अनुपम ढंग से वृत्र का वध करते हैं ॥३ ॥

५३४७. **आपश्चित्पिप्युः स्तर्यो३ न गावो नक्षन्नृतं जरितारस्त इन्द्र ।**
याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छा त्वं हि धीभिर्दयसे वि वाजान् ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से अप्रसूता गौओं की पुष्टि की तरह जल प्रवाह बढ़ते जाएँ । आपके स्तोतागण यज्ञ करते रहें । अश्व वायु के समान हमारे पास (आपको लेकर) आएँ । आप स्तोतागणों को बुद्धि-बल और अन्न प्रदान करते हैं ॥४ ॥

५३४८. **ते त्वा मदा इन्द्र मादयन्तु शुष्मिणं तुविराधसं जरित्रे ।**
एको देवत्रा दयसे हि मर्तानस्मिञ्छूर सवने मादयस्व ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! देवों में एकमात्र आप ही हम पर बड़ी दया करते हैं । आप इस यज्ञ में सोमरस पीकर आनन्दित हों ।शूरवीर हे देव !आप अपने उपासकों को ऐसा पुत्र प्रदान करें, जो बलशाली एवं अनेक विद्याओं में निपुण हो ॥ ५ ॥

५३४९. **एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।**
स नः स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥



वसिष्ठ लोग बलवान्, वज्रधारी इन्द्रदेव की पूजा स्तोत्रों द्वारा करते हैं। वे स्तुति द्वारा प्रसन्न होकर स्तोताओं को वीरों और गौओं सहित धन प्रदान करते हैं। वे कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें ॥६ ॥

[सूक्त - २४]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३५०. **योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्र याहि ।**
असो यथा नोऽविता वृधे च ददो वसूनि ममदश्च सोमैः ॥१ ॥

अनेक लोगों द्वारा स्तुत्य हे इन्द्रदेव ! यज्ञ वेदिका पर (निर्धारित स्थान पर) आप अपने सहयोगियों के साथ प्रतिष्ठित होने की कृपा करें। रक्षक, पोषणकर्त्ता तथा धनदाता आप सोमरस पान से आनन्द की अनुभूति करें ॥१ ॥

५३५१. **गृभीतं ते मन इन्द्र द्विबर्हाः सुतः सोमः परिषिक्ता मधूनि ।**
विसृष्टधेना भरते सुवृक्तिरियमिन्द्रं जोहुवती मनीषा ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप दोनों स्थानों में रहने वाले पूज्य हैं। सोमरस तैयार करके उसमें मधु मिलाया गया है। हम आपका ध्यानाकर्षण करते हुए आपके निमित्त मनन करने योग्य स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं ॥२ ॥

५३५२. **आ नो दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन्निदं बर्हिः सोमपेयाय याहि ।**
वहन्तु त्वा हरयो मद्र्यञ्चमाङ्गूषमच्छा तवसं मदाय ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप द्युलोक या भूलोक में जहाँ भी हों, वहाँ से आएँ। हमने आपके लिए आसन बिछाया है। आपके घोड़े आपको वहाँ ले जाएँ, जहाँ आप के निमित्त स्तुतियाँ की जा रही हैं। आप यहाँ आकर, बिछे हुए आसन पर बैठकर, सोमपान करके आनन्दित हों ॥३ ॥

५३५३. **आ नो विश्वाभिरूतिभिः सजोषा ब्रह्म जुषाणो हर्यश्व याहि ।**
वरीवृजत् स्थविरेभिः सुशिप्रास्मे दधद्वृषणं शुष्ममिन्द्र ॥४ ॥

हे हरिताश्वों वाले एवं श्रेष्ठ शिरस्त्राण वाले इन्द्रदेव ! आप समस्त रक्षण-साधनों सहित मरुद्गणों के सहयोग से शत्रुओं का वध करते हैं। हे इन्द्रदेव ! आप हमें बलवान् और सामर्थ्यवान् पुत्र प्रदान करें। आप हमारे पास आएँ ॥४ ॥

५३५४. **एष स्तोमो मह उग्राय वाहे धुरी३ वात्यो न वाजयन्नधायि ।**
इन्द्र त्वायमर्क ईट्टे वसूनां दिवीव द्यामधि नः श्रोमतं धाः ॥५ ॥

यह रथ के अश्व जैसा बलशाली स्तोत्र उन इन्द्रदेव के निमित्त प्रस्तुत किया गया है, जो महान् वीर और विश्व के संचालक हैं। हे इन्द्रदेव ! स्तोत्र गान करने वाला आपसे दिव्य सम्पदा की कामना करता है। जो स्वर्ग में भी यशस्वी हों, आप हमें ऐसा धन और पुत्र प्रदान करें ॥५ ॥

५३५५. **एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम ।**
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें कृपा करके श्रेष्ठ धन प्रदान करें। हम आपके द्वारा प्रेरित सुमति को प्राप्त करें। आप, हम हव्ययुक्तों (याजकों) को वीर पुत्र सहित अन्न-धन प्रदान करें। आप हमारा पालन तथा रक्षण करें ॥६ ॥



[सूक्त - २५]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३५६. **आ ते मह इन्द्रोत्युग्र समन्यवो यत्समरन्त सेनाः ।**
पताति दिद्युन्नर्यस्य बाह्वोर्मा ते मनो विष्वद्र्य१ग्वि चारीत् ॥१ ॥

जिस समय उत्साहित हुई सेनाएँ संग्राम करती हैं; उस समय हे मनुष्यों के हितैषी, हे वज्रधारी, पराक्रमी वीर इन्द्रदेव ! आपके बाहुओं में रहने वाला वज्र शत्रुओं पर गिरकर हमारी रक्षा करे । आपका सर्वतोगामी मन अविचलित रहे और आप हमारे लिए हितकारी कार्य करें ॥१ ॥

५३५७. **नि दुर्ग इन्द्र श्नथिह्यमित्रानभि ये नो मर्तासो अमन्ति ।**
आरे तं शंसं कृणुहि निनित्सोरा नो भर सम्भरणं वसूनाम् ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो मनुष्य हमें जीतने की इच्छा से संग्राम भूमि में हमारे समक्ष डटे हैं , आप उन शत्रुओं का संहार करें । निंदकों को हम से दूर ले जाएँ । हमें पर्याप्त धन प्रदान करें ॥२ ॥

५३५८. **शतं ते शिप्रिन्नूतयः सुदासे सहस्रं शंसा उत रातिरस्तु ।**
जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्यास्मे द्युम्नमधि रत्नं च धेहि ॥३ ॥

हम आपके उत्तम भक्त हैं । आप सैकड़ों रक्षण-साधनों से हमारी रक्षा करें । आपके द्वारा प्रदत्त धन हमारा हो । जो हिंसक वृत्ति वाले हैं , उनके अस्त्र - शस्त्रों को आप नष्ट कर दें । आप हमें यश और दीप्ति वाले रत्न दें ॥३ ॥

५३५९. **त्वावतो हीन्द्र क्रत्वे अस्मि त्वावतोऽवितुः शूर रातौ ।**
विश्वेदहानि तविषीव उग्रँ ओकः कृणुष्व हरिवो न मर्धीः ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके निमित्त किये जाने वाले शुभ कर्मों में नियुक्त रहते हैं । आपके अनुकूल रहकर आपका संरक्षण हमें प्राप्त हो । हे बलवान् एवं ओजस्वी इन्द्रदेव ! आप हमारे लिए सब दिनों के लिए उपयुक्त आवास बनाएँ , हम पर क्रोध न करें ॥४ ॥

५३६०. **कुत्सा एते हर्यश्वाय शूषमिन्द्रे सहो देवजूतमियानाः ।**
सत्रा कृधि सुहना शूर वृत्रा वयं तरुत्राः सनुयाम वाजम् ॥५ ॥

हरित वर्ण अश्वों वाले इन्द्रदेव के निमित्त हम सब स्तोता सुखकर स्तोत्रों का गान करते हैं । इन्द्रदेव से हम देव प्रेरित बल की कामना करते हैं । हे शूरवीर इन्द्रदेव ! सारे दु:खों से पार होकर हम ऐसा बल प्राप्त करें, जिस बल से हम शत्रुओं का सहज ही विनाश कर सकें ॥५ ॥

५३६१. **एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम ।**
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! हमें संरक्षणीय धन से परिपूर्ण करें । आपके द्वारा प्रेरित श्रेष्ठ सुमति हम प्राप्त करें । हम हविदाताओं को आप वीर पुत्र सहित अन्न प्रदान करें । आप कल्याणकारी साधनों के द्वारा हमें सुरक्षा प्रदान करें ॥६ ॥



[सूक्त - २६]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- इन्द्र । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५३६२. **न सोम इन्द्रमसुतो ममाद नाब्रह्माणो मघवानं सुतासः ।**
तस्मा उक्थं जनये यज्जुजोषन्नृवन्नवीयः शृणवद्यथा नः ॥१ ॥

जो सोमरस बिना स्तोत्र पाठ के निकाला गया हो और जो इन्द्रदेव के लिए न निकाला गया हो, ऐसा सोम आनन्ददायक नहीं होता । हम ऐसे श्रेष्ठ नवीन स्तोत्र की रचना करते हैं, जिसे मनुष्यों के मध्य एवं इन्द्रदेव के द्वारा सुनना स्वीकार किया जायेगा ॥१ ॥

५३६३. **उक्थउक्थे सोम इन्द्रं ममाद नीथेनीथे मघवानं सुतासः ।**
यदीं सबाधः पितरं न पुत्राः समानदक्षा अवसे हवन्ते ॥२ ॥

स्तोत्र पाठ के साथ तैयार किया गया सोमरस इन्द्रदेव को हर्षित करता है । सोमरस अर्पित करते समय धनवान् इन्द्रदेव की स्तुति करने से वे प्रसन्न होते हैं । जिस प्रकार पुत्रगण एक साथ मिलकर पिता को बुलाते हैं, उसी प्रकार हम सब अपने कार्यों में प्रवीण लोग इन्द्रदेव को अपनी सुरक्षा के लिए बुलाते हैं ॥२ ॥

५३६४. **चकार ता कृणवन्नूनमन्या यानि ब्रुवन्ति वेधसः सुतेषु ।**
जनीरिव पतिरेकः समानो नि मामृजे पुर इन्द्रः सु सर्वाः ॥३ ॥

सोमरस तैयार करते हुए स्तोत्रों में जिन (कार्यों) का वर्णन है, वे इन्द्रदेव ने पूर्वकाल में किये थे । इस समय भी वे श्रेष्ठ कर्म करते हैं । इन्द्रदेव शत्रुओं के नगरों को अपने वश में (वैसे ही) रखते हैं, जैसे पति, पत्नी को ॥३ ॥

५३६५. **एवा तमाहुरुत शृण्व इन्द्र एको विभक्ता तरणिर्मघानाम् ।**
मिथस्तुर ऊतयो यस्य पूर्वीरस्मे भद्राणि सश्चत प्रियाणि ॥४ ॥

इन्द्रदेव के पास परस्पर सहयोगी अनेक शक्तियाँ हैं । उन्हीं के द्वारा वे हम सबकी रक्षा करते हैं । स्तोतागण उन्हीं का वर्णन करके सुनाते हैं । ऐसे इन्द्रदेव धन बाँटने वाले एवं तारक हैं । वे देव ही हमारा कल्याण करें ॥४ ॥

५३६६. **एवा वसिष्ठ इन्द्रमूतये नृन्कृष्टीनां वृषभं सुते गृणाति ।**
सहस्रिण उप नो माहि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

वसिष्ठ ऋषि प्रजाजनों की कामनाओं की पूर्ति एवं सुरक्षा के निमित्त सोम तैयार करते हैं । हे इन्द्रदेव ! आप हमें अनेकानेक प्रकार के कल्याणकारी भोग्य पदार्थ प्रदान करते हुए हमारा कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - २७]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- इन्द्र । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५३६७. **इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः ।**
शूरो नृषाता शवसश्चकान आ गोमति व्रजे भजा त्वं नः ॥१ ॥

सेनानायकगण भी अपनी सहायता के लिए इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं । हे इन्द्रदेव ! आप पुरुषों के धन-दाता एवं बलवर्द्धक हैं । आप हमें गौओं से लाभ प्राप्त करने के लिए गोष्ठ में पहुँचाने की कृपा करें ॥१ ॥



५३६८. **य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति शिक्षा सखिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः ।**
त्वं हि दृळहा मघवन्विचेता अपा वृधि परिवृतं न राधः ॥२ ॥

हे पुरुहूत इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं को अपना बल प्रदान करें । हे मघवन् इन्द्रदेव ! आप सुदृढ़ बन्धनों को तोड़ने वाले हैं । अत: आप हमारे लिए (प्रज्ञा रूपी) गुप्त धन प्रकट कर दें ॥२ ॥

५३६९. **इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमि विषुरूपं यदस्ति ।**
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतश्चिदर्वाक् ॥३ ॥

इन्द्रदेव समस्त जीवधारियों के स्वामी तथा सभी पदार्थपरक वसुओं (धन) के राजा हैं, इसलिए दानवृत्ति वालों को वे जीवनोपयोगी वस्तुएँ प्रदान करते हैं । वे श्रेष्ठ (लौकिक एवं दैवी) सम्पदा हमारी ओर भेजें ॥३ ॥

५३७०. **नू चिन्न इन्द्रो मघवा सहूती दानो वाजं नि यमते न ऊती ।**
अनूना यस्य दक्षिणा पीपाय वामं नृभ्यो अभिवीता सखिभ्यः ॥४ ॥

हम अपनी रक्षा और अन्न प्राप्ति के लिए धनवान् - दाता इन्द्रदेव को बलवान् मरुद्‌गणों के साथ बुलाते हैं । वे अपने सखाओं (मरुतों या अन्य देवों) के लिए जो सर्वव्यापी, पूर्ण दान देते हैं, वही दान श्रेष्ठ मनुष्यों के लिए प्रकट करते हैं ॥४ ॥

[इन्द्रदेव सर्वव्यापी एवं पूर्णदान प्रदान करते हैं, ऐसा दान दिव्य शक्ति प्रवाहों को ही कहा जा सकता है । सत्पात्रों के लिए वे उसे प्रकट करते हैं ।]

५३७१. **नू इन्द्र राये वरिवस्कृधी न आ ते मनो ववृत्याम मघाय ।**
गोमदश्वावद्रथवद्व्यन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप गौ, अश्व, रथ आदि धन के स्वामी हैं । पूजनीय स्तोत्रों द्वारा हम आपका आवाहन करते हैं । आप हमें ऐश्वर्यवान् बनाने के लिए पर्याप्त धन प्रदान करें । सदा हमारी सुरक्षा एवं पालन करते हुए हमारा कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - २८]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३७२. **ब्रह्मा ण इन्द्रोप याहि विद्वानर्वाञ्चस्ते हरयः सन्तु युक्ताः ।**
विश्वे चिद्धि त्वा विहवन्त मर्ता अस्माकमिच्छृणुहि विश्वमिन्व ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव !आप सर्वज्ञ हैं, आप हमारी स्तुति सुनकर अश्वारूढ़ होकर हमारे पास आएँ ।हे समस्त विश्व को सन्तोष देने वाले इन्द्रदेव !आपको अलग-अलग कई लोग बुलाते हैं, फिर भी कृपा करके आप हमारी प्रार्थना सुनें॥ १ ॥

५३७३. **हवं त इन्द्र महिमा व्यानड् ब्रह्म यत्पासि शवसिन्नृषीणाम् ।**
आ यद्वज्रं दधिषे हस्त उग्र घोरः सन्क्रत्वा जनिष्ठा अषाळहः ॥२ ॥

हे बलवान् इन्द्रदेव ! आपकी महिमा से ऋषियों के स्तोत्र सुरक्षित रहते हैं । हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप उद्‌भट शूरवीर एवं सदैव अजेय हैं ॥२ ॥

५३७४. **तव प्रणीतीन्द्र जोहुवानान्त्सं यन्नॄन्न रोदसी निनेथ ।**
महे क्षत्राय शवसे हि जज्ञेऽतूतुजिं चित्तूतुजिरशिश्नत् ॥३ ॥





हे इन्द्रदेव !जो स्तोता, आपके द्वारा प्रणीत पद्धति के अनुसार स्तुति करता है, वह द्युलोक एवं भूलोक में आनन्दसहित प्रतिष्ठित होता है ।आप क्षात्र बल एवं धन बल द्वारा श्रेष्ठ कार्य करने के लिए ही उत्पन्न हुए हैं ॥३ ॥

५३७५. **एभिर्न इन्द्राहभिर्दशस्य दुर्मित्रासो हि क्षितयः पवन्ते ।**
प्रति यच्चष्टे अनृतमनेना अव द्विता वरुणो मायी नः सात् ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हम पर आक्रमण करने वाले दुष्टजनों का धन सदैव के लिए हमें प्रदान करें । निष्पाप वरुणदेव हमारे अन्दर के असत्य को खोज कर दोनों प्रकार से (प्रेरणा देकर अथवा बलपूर्वक) दूर करें ॥४ ॥

५३७६. **वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः ।**
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

जो इन्द्रदेव हमें महान् धन-ऐश्वर्य प्रदान करते हैं एवं स्तोताओं की रक्षा करते हैं, उन्हीं इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं । वे धनवान् इन्द्रदेव सदैव हमारा पालन करें-हमारा कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - २९]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- इन्द्र । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५३७७. **अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्व आ तु प्र याहि हरिवस्तदोकाः ।**
पिबा त्व१स्य सुषुतस्य चारोर्ददो मघानि मघवन्नियानः ॥१ ॥

हे हरित वर्ण अश्व वाले इन्द्रदेव ! आप शीघ्र आएँ । हम आपके लिए सोमरस निकालते हैं, आप आकर उसका पान करें एवं याचकों को धन प्रदान करें ॥१ ॥

५३७८. **ब्रह्मन्वीर ब्रह्मकृतिं जुषाणोऽर्वाचीनो हरिभिर्याहि तूयम् ।**
अस्मिन्नू षु सवने मादयस्वोप ब्रह्माणि शृणव इमा नः ॥२ ॥

हे ज्ञानी वीर इन्द्रदेव ! आप हमारे उत्तम स्तोत्रों को सुनकर तथा अश्वारूढ़ होकर हमारी ओर शीघ्रता से आएँ । इन स्तोत्रों का श्रवण कर आप इस सोमयज्ञ में प्रसन्न हों ॥२ ॥

५३७९. **का ते अस्त्यरङ्कृतिः सूक्तैः कदा नूनं ते मघवन् दाशेम ।**
विश्वा मतीरा ततने त्वायाधा म इन्द्र शृणवो हवेमा ॥३ ॥

हे धनपति इन्द्रदेव ! हम वास्तव में आपको कैसे प्रसन्न करें ? हम आपके लिए ही स्तोत्र रचते हैं, आप हमारे स्तोत्रों को सुनें । हमारे मन में एक ही अभिलाषा है कि ये सूक्त कब आपको अलंकृत करें ? ॥३ ॥

५३८०. **उतो घा ते पुरुष्या३ इदासन्येषां पूर्वेषामशृणोर्ऋषीणाम् ।**
अधाहं त्वा मघवञ्जोहवीमि त्वं न इन्द्रासि प्रमतिः पितेव ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीन काल के मानवों के हितैषी, ऋषियों द्वारा रचित स्तोत्रों को आपने सुना है । हम भी आपकी बार-बार स्तुति करते हैं । आप उत्तम बुद्धिवाले पिता के समान हैं ॥४ ॥

५३८१. **वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः ।**
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

जो इन्द्रदेव हमें श्रेष्ठ धन-ऐश्वर्य प्रदान करते हैं एवं स्तोताओं की रचना - स्तोत्रों की रक्षा करते हैं । ऐसे इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं । वे धनवान् इन्द्रदेव सदैव हमारा पालन एवं कल्याण करें ॥५ ॥



[सूक्त - ३०]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५३८२. **आ नो देव शवसा याहि शुष्मिन्भवा वृध इन्द्र रायः अस्य ।**
महे नृम्णाय नृपते सुवज्र महि क्षत्राय पौंस्याय शूर ॥१ ॥

हे बलशाली - आभावान् इन्द्रदेव ! आप हमारे पास आएँ एवं कृपा करके हमारे धन को बढ़ाएँ । हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप महान् क्षात्र बल सम्पन्न अपने पुरुषार्थ को बढ़ाएँ ॥१ ॥

५३८३. **हवन्त उ त्वा हव्यं विवाचि तनूषु शूराः सूर्यस्य सातौ।**
त्वं विश्वेषु सेन्यो जनेषु त्वं वृत्राणि रन्धया सुहन्तु ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप आवाहनीय हैं । आपको विवाद के समय लोग बुलाते हैं । सूर्यदेव की प्राप्ति हेतु लोग आपका आवाहन करते हैं । समस्त मानवी सेना के लिए आप अनुकरणीय हैं । आप सुहन्त (सुगमता से संहार करने वाला) नामक वज्र के द्वारा शत्रुओं को पराभूत करके हमारे अधीन करें ॥२ ॥

५३८४. **अहा यदिन्द्र सुदिना व्युच्छान्दधो यत्केतुमुपमं समत्सु ।**
न्य१ग्निः सीददसुरो न होता हुवानो अत्र सुभगाय देवान् ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे दिन अच्छे ढंग से व्यतीत होते चलें और युद्ध में भी हमारा (विवेक) ज्ञान स्थिर बना रहे, इस उद्देश्य से तथा शोभन धन की प्राप्ति के लिए पराक्रमी होता (अग्निदेव) देवों का आवाहन करते हुए इस यज्ञ में प्रतिष्ठित हों ॥३ ॥

५३८५. **वयं ते त इन्द्र ये च देव स्तवन्त शूर ददतो मघानि ।**
यच्छा सूरिभ्य उपमं वरूथं स्वाभुवो जरणामश्नवन्त ॥४ ॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! हम सब आपके ही हैं । हम आपके निमित्त हवि प्रदान करते एवं स्तुति करते हैं । विद्वानों को आप श्रेष्ठ निवास प्रदान करें । उत्तम ऐश्वर्य-सम्पन्न होकर वे वृद्धावस्था में सुख से रहें ॥४ ॥

५३८६. **वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः ।**
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

जो इन्द्रदेव हमें सिद्धिदायक महान् ऐश्वर्य प्रदान करते हैं एवं स्तुतिकर्त्ताओं द्वारा बनाये स्तोत्रों की सुरक्षा करते हैं; ऐसे इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं । वे धनपति इन्द्रदेव हमारा सदैव पालन करते हुए कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - ३१]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- गायत्री, १०-१२ विराट् ।]

५३८७. **प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वाय गायत । सखायः सोमपाव्ने ॥१ ॥**

हे साधको ! अश्वों के स्वामी, सोमपायी इन्द्रदेव को आनन्द प्रदान करने वाले स्तोत्रों का गान करो ॥१ ॥

५३८८. **शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः । चकृमा सत्यराधसे ॥२ ॥**

हे ऋत्विजो ! उत्तम दानदाता, न्यायोपार्जित सम्पत्ति वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना करो । हम भी उत्तम विधि से उनकी अभ्यर्थना करते हैं ॥२ ॥



५३८९. त्वं न इन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो । त्वं हिरण्ययुर्वसो ॥३ ॥

हे शतकर्मा (सौ अश्वमेध यज्ञ करने वाले) इन्द्रदेव ! आप हमें अन्न, गौ तथा स्वर्ण प्रदान करें ॥३ ॥

५३९०. वयमिन्द्र त्वायवोऽभि प्र णोनुमो वृषन् । विद्धी त्व१स्य नो वसो ॥४ ॥

हे श्रेष्ठ वीर इन्द्रदेव ! हम आपकी कामना करते हुए बारम्बार नमन करते हैं । सबको आश्रय देने वाले आप हमारी प्रार्थनाओं को सुनें और इस पर ध्यान देने की कृपा करें ॥४ ॥

५३९१. मा नो निदे च वक्तवेऽर्यो रन्धीरराव्णे । त्वे अपि क्रतुर्मम ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे स्वामी हैं । आपसे हम लोग प्रार्थना करते हैं कि हमें कटुभाषी, निंदक और कंजूस के वश में न रहना पड़े ॥५ ॥

५३९२. त्वं वर्मासि सप्रथः पुरोयोधश्च वृत्रहन् । त्वया प्रति ब्रुवे युजा ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! युद्ध क्षेत्र में शत्रुओं के सम्मुख पहुँचकर उनका नाश करने के लिए आप विश्व-विख्यात हैं । आप कवच के समान रक्षा करने वाले हैं । आपकी सहायता पाकर हम शत्रुओं का वध करने में समर्थ होते हैं ॥६ ॥

५३९३. महाँ उतासि यस्य तेऽनु स्वधावरी सहः । मम्नाते इन्द्र रोदसी ॥७ ॥

अन्न-सम्पन्न द्यावा-पृथिवी भी जिन के महान् बल को नमन करती है, वे महान् इन्द्रदेव आप ही हैं ॥७ ॥

५३९४. तं त्वा मरुत्वती परि भुवद्वाणी सयावरी । नक्षमाणा सह द्युभिः ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! साथ जाने वाली, तेजस् सहित विस्तीर्ण होने वाली, वीरों द्वारा की गई स्तुतियाँ आप तक पहुँचें ॥८ ॥

५३९५. ऊर्ध्वासस्त्वान्विन्दवो भुवन्दस्ममुप द्यवि । सं ते नमन्त कृष्टयः ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्वर्ग के समीप स्थित हैं और दर्शनीय हैं । आपके लिए सोम प्रस्तुत है । सभी लोग आपको नमन करते हैं ॥९ ॥

५३९६. प्र वो महे महिवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।
विशः पूर्वीः प्र चरा चर्षणिप्राः ॥१० ॥

हे मनुष्यो ! महान् कार्य सम्पन्न करने वाले, प्रख्यात इन्द्रदेव के लिए, सोम प्रदान करते हुए श्रेष्ठ स्तोत्रों से उनकी स्तुति करो । हे इन्द्रदेव ! आप भी हविदाता प्रजाओं की कामना पूर्ण करते हुए उनका कल्याण करें ॥१० ॥

५३९७. उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।
तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥११ ॥

अत्यन्त विशाल इन महान् इन्द्रदेव को ऋत्विग्गण उत्तम स्तुतियाँ और हविष्यान्न अर्पित करते हैं । धीर पुरुष उन इन्द्रदेव के व्रतों को डिगाते नहीं हैं ॥११ ॥

५३९८. इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै ।
हर्यश्वाय बर्हया समापीन् ॥१२ ॥

सबके राजा रूप इन्द्रदेव का मन्यु अतुलनीय है । ऐसे इन्द्रदेव के प्रति की गई स्तुतियाँ उनके शत्रु के पराभव का कारण बनती हैं । हे स्तोताओ ! आप अपने स्वजनों को इन्द्रदेव की स्तुति की प्रेरणा दें ॥१२ ॥



[सूक्त - ३२]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि , २६ पूर्वार्द्ध ऋचा के वसिष्ठ अथवा शक्ति वासिष्ठ । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती), ३ द्विपदा विराट् ।]

५३९९. **मो षु त्वा वाघतश्चनारे अस्मन्नि रीरमन् ।**
आरात्ताच्चित् सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! यजमान आपको हमसे दूर न कर सकें । आप हमारे यज्ञ में शीघ्रता से आएँ और हमारे पास रहकर हमारी स्तुतियों को ध्यान से सुनें ॥१ ॥

५४००. **इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते ।**
इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी तृप्ति के लिए सोमरस तैयार करके, सभी ऋत्विज् मधुमक्खियों की भाँति एकत्रित होकर बैठते हैं । ऐश्वर्य की कामना से वे रथारूढ़ होने की तरह, आपको स्तुतियाँ समर्पित करते हैं ॥२ ॥

५४०१. **रायस्कामो वज्रहस्तं सुदक्षिणं पुत्रो न पितरं हुवे ॥३ ॥**

जिस प्रकार पिता को पुत्र बुलाता है, वैसे ही धन प्राप्ति की इच्छा वाले हम लोग श्रेष्ठ दानदाता इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं ॥३ ॥

५४०२. **इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः ।**
ताँ आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ ॥४ ॥

हे वज्रधारक , तेजस्वी इन्द्रदेव ! दही मिले हुए , आनन्ददायक, विशेषरूप से तैयार किए गए इस सोमरस का पान करने के लिए आप यज्ञ स्थल पर पधारें ॥४ ॥

५४०३. **श्रवच्छ्रुत्कर्ण ईयते वसूनां नू चिन्नो मर्धिषद् गिरः ।**
सद्यश्चिद्यः सहस्राणि शता ददन्नकिर्दित्सन्तमा मिनत् ॥५ ॥

जो इन्द्रदेव प्रार्थना सुनने के लिए समर्थ है, उनसे हम धन माँगते हैं । वे हमारी वाणी को अनसुना न करें । सैकड़ों - हजारों प्रकार के दान तत्काल देने को तत्पर इन्द्रदेव को कोई धन देने से रोक नहीं सकता ॥५ ॥

५४०४. **स वीरो अप्रतिष्कुत इन्द्रेण शूशुवे नृभिः ।**
यस्ते गभीरा सवनानि वृत्रहन्त्सुनोत्या च धावति ॥६ ॥

हे वृत्र को मारने वाले इन्द्रदेव ! जो आपके लिए प्रचुर मात्रा में सोम तैयार करते हैं, उस वीर के प्रति आप अनुकूल होते हैं, जिससे वे मानवों में सम्मान पाते हैं ॥६ ॥

५४०५. **भवा वरूथं मघवन्मघोनां यत्समजासि शर्धतः ।**
वि त्वाहतस्य वेदनं भजेमह्या दूणाशो भरा गयम् ॥७ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप कवच के समान हविदाताओं की सुरक्षा करें एवं शत्रुओं का विनाश करके प्राप्त धन हम सबको बाँट दें । आप हमें अविनाशी धन प्रदान करें ॥७ ॥

५४०६. **सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे ।**
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित्पृणन्नित्पृणते मयः ॥८ ॥



हे याजको ! वज्रधारी सोमपायी इन्द्रदेव के लिए सोमाभिषव करो । इन्द्रदेव को प्रसन्न करने के लिए पुरोडाश पकाओ तथा यज्ञ करो । यजमान को सुखी बनाने के लिए इन्द्रदेव स्वयं हविष्यान्न ग्रहण करते हैं ॥८ ॥

५४०७. **मा स्रेधत सोमिनो दक्षता महे कृणुध्वं राय आतुजे ।**
तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे ॥९ ॥

सोमयाग को दक्षतापूर्वक पूरा करें, पीछे न हटें । शत्रुनाशक इन्द्रदेव के निमित्त धन प्राप्ति की इच्छा से शुभ कर्म (यज्ञादि) करें । शीघ्रता से कार्य करने वाला अवश्य ही विजय प्राप्त करता है एवं पुष्ट होकर उत्तम घर में निवास करता है । कुत्सित कर्म करने में देवगण सहायक नहीं होते ॥९ ॥

५४०८. **नकिः सुदासो रथं पर्यास न रीरमत् ।**
इन्द्रो यस्याविता यस्य मरुतो गमत्स गोमति व्रजे ॥१० ॥

सुदास (उत्तम हवि दाता) के रक्षक इन्द्रदेव और मरुद्गण हैं, अतः उनके रथ को पहुँचाने अथवा उनको रोकने में कोई समर्थ नहीं हो सकता है । उन्हे गौओं के गोष्ठ प्राप्त हों (प्रचुर मात्रा में गोधन की प्राप्ति हो ।) ॥१० ॥

५४०९. **गमद्वाजं वाजयन्निन्द्र मर्त्यो यस्य त्वमविता भुवः ।**
अस्माकं बोध्यविता रथानामस्माकं शूर नृणाम् ॥११ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप जिसकी रक्षा करते हैं, वह आपका यशोगान करते हुए अन्न आदि प्राप्त करता है । हे शूरवीर ! आप हमारे पुत्र-पौत्रादि एवं रथ की रक्षा करें ॥११ ॥

५४१०. **उदिन्न्वस्य रिच्यतेंऽशो धनं न जिग्युषः ।**
य इन्द्रो हरिवान्न दभन्ति तं रिपो दक्षं दधाति सोमिनि ॥१२ ॥

जो यजमान हरि (अश्व) युक्त इन्द्रदेव के लिए सोमरस तैयार कर अर्पित करते हैं, वे इन्द्रदेव की कृपा से प्राप्त बल द्वारा शत्रु को जीतते हैं ॥१२ ॥

५४११. **मन्त्रमखर्वं सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा ।**
पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मणा भुवत् ॥१३ ॥

(हे स्तोतागण !) यजनीय देवताओं में इन्द्रदेव के लिए बड़े-सुगढ़ एवं सुन्दर-शोभनीय स्तोत्र अर्पित करो । जिसके स्तोत्रों को इन्द्रदेव मन से स्वीकार कर लेते हैं, उसे कोई, किसी प्रकार का बन्धन, कष्ट नहीं दे सकता ॥१३ ॥

५४१२. **कस्तमिन्द्र त्वावसुमा मर्त्यो दधर्षति ।**
श्रद्धा इत्ते मघवन्पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥१४ ॥

हे सबके आश्रयदाता इन्द्रदेव ! भला आपको कौन अपमानित कर सकता है ? हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आपके प्रति श्रद्धा रखने वाले जन बलशाली होते हैं । वे दुःखों से पार होने के समय भी अनुदान प्राप्त करते हैं ॥१४ ॥

५४१३. **मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय ये ददति प्रिया वसु ।**
तव प्रणीती हर्यश्व सूरिभिर्विश्वा तरेम दुरिता ॥१५ ॥

हे वैभवशाली इन्द्रदेव ! हविष्यान्न समर्पित करने वाले याजकों को दुष्ट-दुराचारियों से संघर्ष की शक्ति प्रदान करें । हे अश्वपति ! आपकी प्रेरणा से ज्ञानी जन पापों से छुटकारा पायें ॥१५ ॥



५४१४. **तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम् ।**
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि नकिष्ट्वा गोषु वृण्वते ॥१६ ॥

हे इन्द्रदेव ! निम्नकोटि, मध्यम कोटि तथा उत्तम कोटि के धन के आप एक मात्र स्वामी हैं । आप जब गवादि धन का दान करते हैं, तो आपको कोई भी नहीं रोक सकता ॥१६ ॥

५४१५. **त्वं विश्वस्य धनदा असि श्रुतो य ईं भवन्त्याजयः ।**
तवायं विश्वः पुरुहूत पार्थिवोऽवस्युर्नाम भिक्षते ॥१७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप समस्त धन के दान करने वाले हैं । सभी युद्धों में भी आपकी प्रसिद्धि है । अनेकों द्वारा प्रशंसित हे वीर इन्द्रदेव ! भूलोक के सभी मनुष्य आपसे रक्षा और अन्न की याचना करते हैं ॥१७ ॥

५४१६. **यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।**
स्तोतारमिद्दिधिषेय रदावसो न पापत्वाय रासीय ॥१८ ॥

हे सम्पत्तिशाली इन्द्रदेव ! हम आपके समान सम्पदाओं के अधिपति होने की कामना करते हैं । स्तोताओं को धन प्रदान करने की हमारी अभिलाषा है, परन्तु पापियों को नहीं ॥१८ ॥

५४१७. **शिक्षेयमिन्महयते दिवेदिवे राय आ कुहचिद्विदे ।**
नहि त्वदन्यन्मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता चन ॥१९ ॥

कहीं भी रहकर हम आपके यजन के लिए धन निकालते हैं । हे इन्द्रदेव ! मेरा तो आपके सिवाय और कोई भाई नहीं, कोई पिता तुल्य रक्षक भी नहीं है ॥१९ ॥

५४१८. **तरणिरित्सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा ।**
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्र्वम् ॥२० ॥

तत्परता से कार्य करने वाला ही प्रगतिशील होकर अन्न एवं बल प्राप्त करता है । तष्टा (बढ़ई) द्वारा चक्र-नेमि को झुकाने (गोलाई देने) की तरह हम अपने स्तोत्रों से इन्द्रदेव को (अपनी ओर) झुकायेंगे ॥२० ॥

५४१९. **न दुष्टुती मर्त्यो विन्दते वसु न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।**
सुशक्तिरिन्मघवन्तुभ्यं मावते देष्णं यत्पार्ये दिवि ॥२१ ॥

मनुष्य दुष्ट वाणी से धन नहीं पा सकता । हिंसकों के पास भी ऐश्वर्य नहीं जाता । हे मघवन् ! मेरे जैसे (साधक) को पार होने के लिए दिये जाने योग्य धन को आपसे कोई उत्तम कर्म करने वाला ही पा सकता है ॥२१ ॥

५४२०. **अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धाइव धेनवः ।**
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥२२ ॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप इस स्थावर एवं जंगम जगत् के स्वामी हैं । दिव्य दृष्टि-सम्पन्न आपके लिए हम उसी तरह लालायित रहते हैं, जैसे न दुही हुई गौएँ अपने बछड़े के पास जाने के लिए लालायित रहती हैं ॥२२ ॥

५४२१. **न त्वावाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते ।**
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥२३ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव !आपके समान इस पृथ्वीलोक या दिव्यलोक में न कोई है, न कभी हुआ है और न कभी होगा ।हे देव !अश्व, गौ तथा धन-धान्य की कामना वाले हम, (स्तोतागण) आपकी प्रार्थना करते हैं ॥२३ ॥



५४२२. **अभी षतस्तदा भरेन्द्र ज्यायः कनीयसः ।**
पुरूवसुर्हि मघवन्त्सनादसि भरेभरे च हव्यः ॥२४ ॥

हे वैभव-सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप अभीष्ट ऐश्वर्य को हम जैसे अकिंचन को प्रदान करने की कृपा करें । आप संग्रामों (जीवन-संग्राम) में सहायता करने के लिए आवाहन करने योग्य हैं ॥२४ ॥

५४२३. **परा णुदस्व मघवन्नमित्रान्त्सुवेदा नो वसू कृधि ।**
अस्माकं बोध्यविता महाधने भवा वृधः सखीनाम् ॥२५ ॥

हे मघवन् (इन्द्रदेव) ! आप शत्रुओं को पराङ्मुख करते हुए हमसे दूर करें एवं हमें पर्याप्त धन दें । हे देव ! आप ही हमारे शरण-स्थल हैं । आप हमारी रक्षा करते हुए, हमें बढ़ने वाला धन प्रदान करें ॥२५ ॥

५४२४. **इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।**
शिक्षा णो अस्मिन्पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥२६ ॥

हे इन्द्रदेव ! हमें उत्तम कर्मों (यज्ञों) का फल प्राप्त हो । जैसे पिता, पुत्रों को धन आदि प्रदान करके पोषण करता है, वैसे ही आप हमें पोषित करें । अनेकों द्वारा सहायता के लिए पुकारे गये हे इन्द्रदेव ! यज्ञ में आप हमें दिव्य तेज प्रदान करें ॥२६ ॥

५४२५. **मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्यो३ माशिवासो अव क्रमुः ।**
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपोऽति शूर तरामसि ॥२७ ॥

हे इन्द्रदेव ! अज्ञात पापी, दुष्ट, कुटिल, अमंगलकारी लोग हम पर आक्रमण न करें । हे श्रेष्ठ वीर ! आपके संरक्षण में हम विघ्नों-अवरोधों के प्रवाहों से पार हों ॥२७ ॥

[सूक्त - ३३]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि, १०-१४ वसिष्ठ पुत्रगण । **देवता-** १-९ वसिष्ठ पुत्रगण, १०-१४ वसिष्ठ । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५४२६. **श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियंजिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः ।**
उत्तिष्ठन्वोचे परि बर्हिषो नॄन्न मे दूरादवितवे वसिष्ठाः ॥१ ॥

(इन्द्रदेव का कथन) गौरवर्ण वाले, सिर के दक्षिण भाग में शिखा (जटा) रखने वाले, बुद्धिसंगत कार्य करने वाले वसिष्ठ गोत्रीय हमें अति प्रसन्न करते हैं । बर्हि (यज्ञ या कुश-आसन) से ऊपर उठते हुए हम यही कहते हैं कि ऐसे वसिष्ठ वंशज (शिष्य या पुत्रगण) हमसे दूर न जाएँ ॥१ ॥

५४२७. **दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरो वैशन्तमति पान्तमुग्रम् ।**
पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात्सुतादिन्द्रोऽवृणीता वसिष्ठान् ॥२ ॥

वसिष्ठ वंशीय साधकगण उग्र इन्द्रदेव को 'पाशद्युम्न' द्वारा तैयार सोम का अतिक्रमण कराकर, इस (अपने द्वारा तैयार) सोम के लिए दूर से ले आये । इन्द्रदेव ने भी 'वयत' (वेगवान्) के पुत्र पाशद्युम्न को छोड़कर वसिष्ठ वंशियों का वरण कर लिया ॥२ ॥

['पाशद्युम्न' का व्यक्तिवाचक संज्ञा के स्थान पर भाववाचक अर्थ लें, तो इसका अर्थ होता है-चमकदार पाश या पाशबद्ध चमक । बादलों की बिजली 'अग्नि' का पाशद्युम्न स्वरूप है । बिजली को वयत (वेगवान् मेघों) का पुत्र भी कहा जा सकता है । बिजली चमकती है, तो नाइट्रोजन आदि वायु तत्व के उर्वर संयोग बन जाते हैं । यह पाशद्युम्न द्वारा तैयार सोम है, किन्तु वसिष्ठगण



इन्द्र को उस सोम का अतिक्रमण करवा कर यज्ञीय सोम तक ले आये, ऐसा भाव इस ऋचा का बनता है।]

५४२८. **एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारेवेन्नु कं भेदमेभिर्जघान।**

एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः ॥३॥

इसी प्रकार वसिष्ठ पुत्रों ने सहजता से सिन्धु (नदी, समुद्र या बादलों) को पार किया एवं इसी प्रकार 'भेद' का नाश किया तथा प्रसिद्ध "दाशराज युद्ध" में आप (वसिष्ठ पुत्रों) के ब्रह्मबल से इन्द्रदेव ने सुदास की रक्षा की ॥३॥

[इसी प्रकार का अर्थ है :- इन्द्र (संगठक देव) की सहायता से वसिष्ठ वंशियों ने यज्ञीय संगतिकरण (संगठन) द्वारा 'भेद' (फूट या बिखराव) को समाप्त किया। इसी प्रकार दाशराज (दस इन्द्रियों) के युद्ध में ब्रह्मबल से सुदास (श्रेष्ठ सेवक-मानवी व्यक्तित्व) की रक्षा की। उसे इन्द्रिय भोगों से पराजित नहीं होने दिया।]

५४२९. **जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितॄणामक्षमव्ययं न किला रिषाथ।**

यच्छक्वरीषु बृहता रवेणेन्द्रे शुष्ममदधाता वसिष्ठाः ॥४॥

हे मनुष्यो ! अपने लक्ष्य के प्रति हम सक्रिय हैं। आप सब बलवान् बनें तथा 'शक्वरी' ऋचाओं और 'बृहत्' (श्रेष्ठ) स्तुति-गान के द्वारा इन्द्रदेव का भी बलवर्धन करें। आपके स्तोत्रों से पितरगण भी तृप्त होते हैं ॥४॥

५४३०. **उद् द्यामिवेत्तृष्णजो नाथितासोऽदीधयुर्दाशराज्ञे वृतासः।**

वसिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रो अश्रोदुरुं तृत्सुभ्यो अकृणोदु लोकम् ॥५॥

'तृष्णज' (तृष्ण वंशीय राजाओं अथवा कामनायुक्तों) से घिरे वासिष्ठों ने दाशराज युद्ध में इन्द्र को तेजस्वी सूर्य की तरह धारण किया (उन्नत किया)। इन्द्रदेव ने उनके स्तोत्रों को सुनकर 'तृत्सुओं' (राजाओं अथवा वसिष्ठ समर्थित श्रेष्ठ इच्छा करने वाले साधकों) को विस्तृत लोक (स्थान या क्षेत्र) प्रदान किया ॥५॥

[संसार में रहकर अपने अस्तित्व एवं विकास के लिए श्रेष्ठ साधकों को भी कामनाएँ-इच्छाएँ करनी पड़ती हैं। दाशराज रूप इन्द्रियाँ उन कामनाओं को सुखोपभोग की ओर ही खींचना चाहती हैं। इस युद्ध में वसिष्ठगण (ब्रह्मबल सम्पन्न ऋषि) सहायता करते हैं, तो इन्द्र (साधकों को) श्रेष्ठ कामनाओं की पूर्ति करते हुए गरिमामय दिव्यजीवन जीने के लिए उन्हें व्यापक क्षेत्र प्रदान करते हैं।]

५४३१. **दण्डाइवेद्गोअजनास आसन्परिच्छिन्ना भरता अर्भकासः।**

अभवच्च पुरएता वसिष्ठ आदित्तृत्सूनां विशो अप्रथन्त ॥६॥

गौ प्रेरक दण्डों (अथवा इन्द्रियों को सही दिशा देने में समर्थ संकल्पों) की तरह भरत (भरण-पोषण में समर्थ संकल्प) कम और छोटे-छोटे थे; किन्तु जब वसिष्ठगण (ब्रह्मबल सम्पन्न ऋषि) उनके पुरोहित (प्रगति-प्रेरक) हुए, तो उनकी संख्या-क्षमता बढ़ने लगी ॥६॥

५४३२. **त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेतस्तिस्रः प्रजा आर्या ज्योतिरग्राः।**

त्रयो घर्मास उषसं सचन्ते सर्वाँ इत्ताँ अनु विदुर्वसिष्ठाः ॥७॥

भुवनों (उत्पन्न हुए लोकों) में तीन (सूर्य या अग्नि, वायु एवं जल) रेतस् (उत्पादक तेज) भरने वाले हैं। ज्योति की ओर बढ़ने वाली तीन (भावयुक्त, विचारयुक्त एवं कर्मयुक्त) श्रेष्ठ प्रजाएँ है। तीनों ही उष्णतायुक्त (जीवन या उत्साहयुक्त प्रजाएँ) उषा (प्रकाश के प्रारम्भिक प्रवाहों) का सेवन करने वाली हैं। वसिष्ठ वंशज (ब्रह्मबल-सम्पन्न पुरोहित) यह सब (तथ्य या रहस्य) भली-भाँति समझते हैं ॥७॥

५४३३. **सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः।**

वातस्येव प्रजवो नान्येन स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे वः ॥८॥



हे वसिष्ठ पुत्रो ! आपकी महिमा सूर्य की ज्योति के समान प्रकाशित है और समुद्र के समान गम्भीर है। वायु जैसे तीव्रगामी आपके स्तोत्र अद्वितीय हैं ॥८ ॥

आगे के मंत्रों के भाव स्पष्ट करने के लिए ऋषि वसिष्ठ के जन्म की कथा जानना आवश्यक है। वसिष्ठ ब्रह्मा के मानस पुत्र कहे गये हैं। अन्य सन्दर्भ से अगस्त्य एवं वसिष्ठ ऋषि मित्रावरुण देवों के अंशों से 'घट' द्वारा उत्पन्न हुए हैं। आज परखनली (टेस्ट ट्यूब) में भ्रूण विकसित करने की विद्या वैज्ञानिकों ने विकसित की है। वे टेस्ट ट्यूब भी बेलनाकार नहीं, घट (घड़े या फ्लास्क) के आकार के होते हैं।

घट में मित्रावरुण के रेतस् को परिपक्व किया गया, तो अगस्त्य पैदा हुए; किन्तु वसिष्ठ तेजस् रूप में पुनः मित्रावरुण में ही समा गये, तब उन्हें अप्सरा-उर्वशी के माध्यम से पुनः प्रकट किया गया। आज भी परखनली में विकसित भ्रूण को किसी भी नारी के गर्भ में संस्थापित करके पूर्ण बनने दिया जाता है। उर्वशी का अर्थ होता है-उरु प्रदेश को वश में रखने वाली। इस दृष्टि से गर्भ में भ्रूण को पोषण देने वाली नारी को उर्वशी कहा जाना युक्तिसंगत है। आज यह क्रिया, उपकरणों एवं रसायनों के माध्यम से ही की जाती है, तब उसे मन्त्रों के माध्यम से पूर्ण आध्यात्मिक शक्तियों से सम्पन्न किया जाता था।

यह पौराणिक रूपक हुआ। जैसा कि पूर्व मंत्रों में संकेत किया जा चुका है कि कुछ ऋचाओं के अर्थ पौराणिक के साथ-साथ प्रकृतिगत एवं आध्यात्मिक सन्दर्भों में भी सिद्ध होते हैं। ऋषियों को आचार्य सायण ने प्राण की विशिष्ट धाराएँ भी कहा है। इस सन्दर्भ से वसिष्ठ ब्रह्मबल सम्पन्न प्राण-प्रवाह अथवा ब्रह्मकर्मरत अग्नि विशेष (यज्ञाग्नि) भी सिद्ध होते हैं। अप्सरा का अर्थ है-'अप्' अर्थात् जल से उत्पन्न। मित्रावरुण (सूर्यदेव एवं वरुणदेव) का अंश (तेज) वनस्पतियों में स्थापित होता है, उनसे उत्पन्न एवं संवर्धित यज्ञाग्नि को वसिष्ठ कहा जा सकता है। महाभारत में वसिष्ठ संबोधन वरिष्ठ होने से एवं वास करने वाले के लिए दिया गया है। प्रकृतिगत अग्नियाँ भ्रमणशील हैं, यज्ञाग्नि एक स्थान पर 'वास' करती है, धर्म-कर्म में वरिष्ठ है, इसलिए उसे भी वसिष्ठ कहा जाना उचित है -

५४३४. **त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेतैः सहस्रवल्शमभि सं चरन्ति ।**
यमेन ततं परिधिं वयन्तोऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः ॥९ ॥

वे वसिष्ठगण हृदयस्थ गूढ़ ज्ञान को प्रकट करते हुए सहस्रों शाखाओं से युक्त (जगत् में) सम्यक् रूप से विचरण करते हैं। वे यम (नियामक सत्ता) द्वारा फैलाये गये ताने-बाने को बुनते हुए (मातृरूपा) अप्सराओं के समीप पहुँचते हैं ॥९ ॥

५४३५. **विद्युतो ज्योतिः परि सञ्जिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा ।**
तत्ते जन्मोतैकं वसिष्ठागस्त्यो यत्त्वा विश आजभार ॥१० ॥

हे वसिष्ठ ! विद्युत् ज्योति से पृथक् होते हुए, जब आपको मित्रावरुण ने देखा, जब अगस्त्य आपको प्रजाओं (प्रकृति-प्रवाहों) से बाहर लाये, तब आपका एक (प्रथम) जन्म हुआ था ॥१० ॥

[पौराणिक उपाख्यान के अतिरिक्त प्रकृतिगत अर्थ भी इससे निकलता है। मित्रावरुण का ही तेज विद्युत् है, उन्हीं का तेज प्रकृति में वास करने के लिए विद्युत् से पृथक् होता है, तो वनस्पतियों (अप्सराओं) के गर्भ में प्रवेश करने वाले वसिष्ठ (अग्नि विशेष) का पहला जन्म होता है। विद्युत् तेज से उर्वर अयन बनने की क्रिया के समतुल्य इसे कह सकते हैं।]

५४३६. **उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन्मनसोऽधि जातः ।**
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वे देवाः पुष्करे त्वाददन्त ॥११ ॥

हे ऋषि वसिष्ठ ! आप मित्र-वरुण के पुत्र हैं। हे ब्रह्मन् ! आप उर्वशी के मन से उत्पन्न हुए हैं। (इस प्रकार उत्पन्न हुए) आपको दिव्य मन्त्रों के साथ, विश्वेदेवों ने पुष्कर (पुष्टिकारक पदार्थों या विशाल क्षेत्र) में धारण किया था ॥११ ॥

५४३७. **स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान्त्सहस्रदान उत वा सदानः ।**
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरसः परि जज्ञे वसिष्ठः ॥१२ ॥

ये वसिष्ठ दोनों लोकों के समस्त विषयों के विशेष विद्वान् हैं, सहस्रों प्रकार के दान देने वाले हैं। सर्व नियामक द्वारा विस्तारित ताने-बाने (सृजन के ताने-बाने) को बुनने की इच्छा से ये उर्वशी से उत्पन्न हुए ॥१२॥

५४३८. सत्रे ह जाताविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतुः समानम्।
ततो ह मान उदियाय मध्यात्ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठम् ॥१३॥

दोनों (मित्र-वरुण ने) उस सत्र (अभियान या यज्ञ) में एक साथ रेतस् (उत्पादक तेज) कुंभ (पात्र अथवा विश्वघट) में स्थापित किया। उससे मान (अगस्त्य) उत्पन्न हुए। उसी (प्रक्रिया) से वसिष्ठ भी उत्पन्न कहे जाते हैं ॥१३॥

५४३९. उक्थभृतं सामभृतं बिभर्ति ग्रावाणं बिभ्रत्प्र वदात्यग्रे।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः ॥१४॥

हे भरत लोगो ! वसिष्ठ ऋषि आप लोगों के पास आ रहे हैं। आप सब प्रसन्न मन से इन माननीय का सत्कार करें। वसिष्ठ ऋषि उक्थ एवं साम गान करने वालों एवं सोमरस तैयार करने वालों का उचित नेतृत्व करेंगे ॥१४॥

[सूक्त - ३४]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता**- विश्वेदेवा, १६ अहि,१७ अहिर्बुध्न्य। **छन्द**- द्विपदा विराट्,२२-२५ त्रिष्टुप्।]

५४४०. प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत्सुतष्टो रथो न वाजी ॥१॥

बलवान् अश्वों द्वारा संचालित सुगढ़ रथ की तरह देवी मनीषा हमारे समीप पधारें ॥१॥

५४४१. विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं शृण्वन्त्यापो अध क्षरन्तीः ॥२॥

नीचे की ओर क्षरणशील जल (वृष्टि जल अथवा जीवन प्रवाह) द्यावा-पृथिवी के उत्पत्ति को जानने वाला है। वे (वह प्रवाह) सुनते भी हैं ॥२॥

[वे क्षरणशील प्रवाह चेतन हैं, उनमें समझने एवं सुनने की क्षमता है। ऋषि उन प्रकृति-प्रवाहों को अपनी भावनाओं-स्तुतियों से प्रभावित भी करते रहे हैं।]

५४४२. आपश्चिदस्मै पिन्वन्त पृथ्वीर्वृत्रेषु शूरा मंसन्त उग्राः ॥३॥

पृथ्वी पर जो जल विद्यमान है, वह इन्द्रदेव को पुष्टि प्रदान करता है। शत्रुओं के आक्रमण पर विद्वान् इन्हीं शूरवीर इन्द्रदेव को बुलाते हैं ॥३॥

५४४३. आ धूर्ष्वस्मै दधाताश्वानिन्द्रो न वज्री हिरण्यबाहुः ॥४॥

वज्रधारी और स्वर्ण पाणि इन्द्रदेव को यहाँ लाने के लिए, उनके रथ में अश्वों को नियोजित करें ॥४॥

५४४४. अभि प्र स्थाताहेव यज्ञं यातेव पत्मन्त्मना हिनोत ॥५॥

हे मनुष्यो ! यज्ञ करने के लिए स्वयं की इच्छा से, सहर्ष, तीव्र वेग से अवश्य ही आगे बढ़ें ॥५॥

५४४५. त्मना समत्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय वीरम् ॥६॥

हे मनुष्यो ! संग्राम में स्वयं आएँ एवं वीर पुरुषों को भी प्रेरित करें। लोगों के हित के लिए यज्ञ करें ॥६॥

[जीवन संग्राम अथवा अनीति-प्रतिरोध के लिए स्वयं प्रस्तुत होने वाला ही दूसरों को प्रेरणा दे सकता है। लोक-हितार्थ संघर्ष भी यज्ञ कहा जा सकता है।]



५४४६. उदस्य शुष्माद्भानुर्नार्त बिभर्ति भारं पृथिवी न भूम ॥७ ॥

इस (यज्ञ) के बल से ही सूर्यदेव उगते हैं । जैसे पृथ्वी समस्त भूतों (प्राणियों) का भार वहन करती है; वैसे ही यज्ञ सबका आधार है ॥७ ॥

५४४७. ह्वयामि देवाँ अयातुरग्ने साधन्नृतेन धियं दधामि ॥८ ॥

हे अहिंसक अग्निदेव ! हम साधनापूर्वक यज्ञ के देवों का आवाहन करते हैं और बुद्धि को देवों की परिचर्या में प्रयुक्त करते हैं (अर्थात् यज्ञीय अनुशासन में विचारों एवं कर्मों को नियोजित करते हैं) ॥८ ॥

५४४८. अभि वो देवीं धियं दधिध्वं प्र वो देवत्रा वाचं कृणुध्वम् ॥९ ॥

हे मनुष्यो ! आप लोग देवताओं के निमित्त बुद्धि का प्रयोग करें एवं देवों की स्तुति करें ॥९ ॥

५४४९. आ चष्ट आसां पाथो नदीनां वरुण उग्रः सहस्रचक्षाः ॥१० ॥

सहस्रों नेत्रों वाले ओजस्वी वरुणदेव नदियों के जल का निरीक्षण करते रहते हैं ॥१० ॥

५४५०. राजा राष्ट्रानां पेशो नदीनामनुत्तमस्मै क्षत्रं विश्वायु ॥११ ॥

ये वरुण देवता राष्ट्रों के राजा के समान नदियों के रूप में अपने बल से सब जगह गमन करने वाले हैं ॥११ ॥

५४५१. अविष्टो अस्मान्विश्वासु विक्ष्वद्युं कृणोत शंसं निनित्सोः ॥१२ ॥

हे देवताओ ! आप कृपा करके हमारी रक्षा करें, हमारी निन्दा करने वाले शत्रुओं की तेजस्विता को नष्ट करें ॥१२ ॥

५४५२. व्येतु दिद्युद् द्विषामशेवा युयोत विष्वग्रपस्तनूनाम् ॥१३ ॥

हे देवताओ ! आप सब हमारा अमंगल करने को तत्पर, शत्रुओं के आयुधों का चारों ओर से निवारण करें । हमारे कायिक पापों को भी दूर ले जाएँ ॥१३ ॥

५४५३. अवीन्नो अग्निर्हव्यान्नमोभिः प्रेष्ठो अस्मा अधायि स्तोमः ॥१४ ॥

हमने अग्निदेव के प्रति विनम्रतापूर्वक स्तोत्रों का गान किया है । वे अन्न का भक्षण करने वाले, प्रिय अग्निदेव प्रसन्न होकर हमारी रक्षा करें ॥१४ ॥

५४५४. सजूर्देवेभिरपां नपातं सखायं कृध्वं शिवो नो अस्तु ॥१५ ॥

अग्निदेव जल को ऊपर उठाते हैं, वे सखा भाव से हमारी रक्षा करें ॥१५ ॥

५४५५. अब्जामुक्थैरहिं गृणीषे बुध्ने नदीनां रजःसु षीदन् ॥१६ ॥

नदियों के समीपस्थ क्षेत्र में स्थापित अग्निदेव की स्तोत्रों द्वारा स्तुति करें । वे अग्निदेव जल के उत्पादक एवं शत्रुओं को मारने वाले हैं ॥१६ ॥

५४५६. मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धान्मा यज्ञो अस्य स्रिधदृतायोः ॥१७ ॥

मेघों में स्थित (विद्युत् रूप) अग्निदेव हमारे ऊपर घात न करें । सत्यमय जीवन जीने वाले का यज्ञ क्षीण नहीं होता है ॥१७ ॥

५४५७. उत न एषु नृषु श्रवो धुः प्र राये यन्तु शर्धन्तो अर्यः ॥१८ ॥

धनैश्वर्य प्राप्ति में हमारे प्रतिस्पर्धी (शत्रु) हमसे दूर चले जाएँ । हम सब पर्याप्त मात्रा में धन, यश एवं अन्न प्राप्त करें ॥१८ ॥



५४५८. **तपन्ति शत्रुं स्व१र्ण भूमा महासेनासो अमेभिरेषाम् ॥१९ ॥**

विशाल सेना से युक्त राजा अपने शत्रुओं को देवताओं की शक्ति से सूर्य की भाँति संतप्त करते हैं ॥१९ ॥

५४५९. **आ यन्नः पत्नीर्गमन्त्यच्छा त्वष्टा सुपाणिर्दधातु वीरान् ॥२० ॥**

जब पत्नियाँ हमारे निकट आती हैं, उस समय त्वष्टा (देवशिल्पी) श्रेष्ठ बाहुओं से वीरों को धारण करें ॥२० ॥

[त्वष्टा-देव शिल्पी हैं । कामना की गयी है कि गर्भाधान के समय वे ही वीर शिशुओं को गढ़ने का उत्तरदायित्व सँभालें ।]

५४६०. **प्रति नः स्तोमं त्वष्टा जुषेत स्यादस्मे अरमतिर्वसूयुः ॥२१ ॥**

उत्तम बुद्धि वाले त्वष्टा देव हमारे यज्ञ को स्वीकार करें एवं प्रसन्न होकर हमें पर्याप्त धन प्रदान करें ॥२१ ॥

५४६१. **ता नो रासन्रातिषाचो वसून्या रोदसी वरुणानी शृणोतु ।**
वरूत्रीभिः सुशरणो नो अस्तु त्वष्टा सुदत्रो वि दधातु रायः ॥२२ ॥

वे हमें अभीष्ट धन देने वाली दिव्य शक्तियाँ प्रदान करें । द्यावा-पृथिवी और वरुणदेव की शक्ति हम लोगों द्वारा गाये जा रहे स्तोत्रों को सुने । श्रेष्ठ दानदाता त्वष्टादेव विघ्ननिवारक शक्तियों सहित हमारे लिए शरणदाता बनें एवं हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२२ ॥

[लगता है यहाँ ऐश्वर्य के रूप में प्राणशक्ति-जीवनीशक्ति की कामना की गयी है, क्योंकि अगले मंत्र में उस सम्पत्ति की रक्षा के लिए प्रकृति के विभिन्न अंगों को प्रेरित किया जा रहा है ।]

५४६२. **तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आपस्तद्रातिषाच ओषधीरुत द्यौः ।**
वनस्पतिभिः पृथिवी सजोषा उभे रोदसी परि पासतो नः ॥२३ ॥

पर्वत, जल, ओषधियाँ और द्युलोक, वनस्पतियों सहित अन्तरिक्ष एवं देवशक्तियाँ हमारे उस (प्राण रूप) धन का संरक्षण करें ॥२३ ॥

५४६३. **अनु तदुर्वी रोदसी जिहातामनु द्युक्षो वरुण इन्द्रसखा ।**
अनु विश्वे मरुतो ये सहासो रायः स्याम धरुणं धियध्यै ॥२४ ॥

विशाल द्यावा-पृथिवी, शत्रुओं को हराने वाले मरुद्गण, तेजस्वी इन्द्रदेव एवं उनके मित्र वरुणदेव आदि देवतागण हमारे सहयोगी हों । इनकी कृपा से हम धारण करने योग्य धन को प्राप्त करें ॥२४ ॥

५४६४. **तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।**
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५ ॥

इन्द्रदेव, मित्रदेव, वरुणदेव, अग्निदेव, ओषधियाँ, जल एवं वन के वृक्षों के निमित्त हम स्तोत्र पाठ करते हैं । हमें मरुद्गणों के साथ मंगलकारी स्थान प्राप्त हों ।आप सब हमें कल्याणकारी रक्षण-साधनों द्वारा सुरक्षित रखें ॥२५ ॥

[सूक्त - ३५]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** विश्वेदेवा । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५४६५. **शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।**
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१ ॥

दिन और रात्रि हम सबके लिए मंगलकारी हों । इन्द्र और अग्निदेव तथा इन्द्र और वरुणदेव हम सभी का



कल्याण करें । इन्द्र और पूषादेव मंगलकारी अन्न और ऐश्वर्य प्रदान करें । इन्द्र और सोमदेव सुसन्तति प्राप्ति के लिए तथा रोगों के शमन और भय दूर करने के लिए, हमारे लिए मंगलमय हों ॥१ ॥

५४६६. **शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः ।**
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२ ॥

भग देवता हमें शान्ति प्रदान करें । यह शान्ति मनुष्यों द्वारा प्रशंसित हो । बुद्धि एवं धन हमें शान्ति प्रदान करे । श्रेष्ठ एवं शिष्ट बोले गये वचन हमें शान्ति देने वाले हों । अर्यमादेव हमें शान्ति देने वाले हों ॥२ ॥

५४६७. **शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।**
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३ ॥

धाता (आधार प्रदान करने वाले), धर्त्ता (धारण करने वाले), द्यावा-पृथिवी, पृथ्वी का अन्न, पर्वत, देवताओं की उपासना- ये सभी हम सबके लिए शान्तिदायक-कल्याणप्रद हों ॥३ ॥

५४६८. **शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् ।**
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥४ ॥

तेजस्वी अग्निदेव, मित्रावरुणदेव, सूर्यदेव, चन्द्रदेव, दोनों अश्विनीकुमार, सत्कर्मा एवं गमनशील वायुदेव हमें शान्ति प्रदान करें ॥४ ॥

५४६९. **शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।**
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५ ॥

द्यावा-पृथिवी हमें प्रथमबार प्रार्थना में शान्ति प्रदान करें । श्रेष्ठ दर्शन के निमित्त अंतरिक्ष हमें शान्ति प्रदान करें । वनस्पति एवं ओषधियाँ हमें शान्ति प्रदान करें । विजयशील लोकपाल भी हमें शान्ति प्रदान करें ॥५ ॥

५४७०. **शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।**
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥६ ॥

इन्द्र देवता वसुगणों के सहित हमें शान्ति प्रदान करें । आदित्यों के सहित वरुणदेव, रुद्रगणों सहित जलदेव हमें शान्ति प्रदान करें । त्वष्टा देव, देवपत्नियों सहित हमें शान्ति दें । (सभी देवगण) हमारी विनय सुनें ॥६ ॥

५४७१. **शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।**
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्व१ः शम्वस्तु वेदिः ॥७ ॥

सोम एवं ग्रावा (सोम कूटने वाला पत्थर) हमें शान्ति दें । ब्रह्म एवं यज्ञदेव हमें शान्ति प्रदान करें । यूपों का प्रमाण, ओषधियाँ, वेदिका आदि सभी हमें शान्ति प्रदान करें ॥७ ॥

५४७२. **शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।**
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥८ ॥

विशाल तेजधारी सूर्यदेव हमें शान्ति प्रदान करने के लिए उदित हों । चारों दिशाएँ हमें शान्ति दें, स्थिर पर्वत, जल एवं समुद्र हमें शान्ति प्रदान करें ॥८ ॥

५४७३. **शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।**
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥९ ॥



अदिति अपने व्रतों द्वारा हमें शान्ति प्रदान करें । उत्तम तेजस्वी मरुद्गण हमें शान्ति प्रदान करें । विष्णुदेव, पूषादेव, अन्तरिक्ष एवं वायुदेव हमें शान्ति प्रदान करें ॥९ ॥

५४७४. **शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।**
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥१० ॥

त्राण प्रदाता सवितादेव हमें शान्ति प्रदान करें । तेजस्वी उषाएँ हमें शान्ति प्रदान करें । पर्जन्य एवं क्षेत्रों के कल्याणकारी अधिपति हमारी प्रजा के लिए शान्ति प्रदायक-मंगलकारी हों ॥१० ॥

५४७५. **शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।**
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥११ ॥

विश्वदेव (समस्त देवगण) हमें शान्ति प्रदान करें । सद्बुद्धि देने वाली देवी सरस्वती हमें शान्ति प्रदान करें । यज्ञकर्त्ता, दानदाता, द्युलोक, पृथ्वी और जल के देवगण हमें शान्ति प्रदान करें ॥११ ॥

५४७६. **शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः ।**
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥१२ ॥

सत्य के अधिपति, अश्व एवं गौएँ हमें सुख-शान्ति प्रदान करें । श्रेष्ठ कर्म करने वाले एवं श्रेष्ठ भुजाओं वाले ऋभुगण हमें शान्ति प्रदान करें । हमारे पितरगण हमारी प्रार्थना सुनकर हमें शान्ति प्रदान करें ॥१२ ॥

५४७७. **शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्य१: शं समुद्रः ।**
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा ॥१३ ॥

एक पाद अजदेव हमारा कल्याण करें । अहिर्बुध्न्य और समुद्रदेव हमें शान्ति प्रदान करें । अपांनपात्देव शान्ति दें । देवताओं से संरक्षित गौ (किरणें या प्रकृति) हमें शान्ति प्रदान करें ॥१३ ॥

५४७८. **आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तेदं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः ।**
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः ॥१४ ॥

नवरचित स्तोत्रों को आदित्यगण, वसुगण एवं रुद्रगण ग्रहण करें । द्युलोक, पृथ्वी एवं स्वर्ग में उत्पन्न देवगण और भी जो यजनीय देव आदि हैं, वे सब हमारी स्तुति स्वीकार करें ॥१४ ॥

५४७९. **ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।**
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१५ ॥

यजनीय देवताओं के लिए भी जो पूज्य हैं एवं मनुष्य के लिए भी जो पूज्य हैं, ऐसे अमर, ऋतज्ञदेव आज प्रसन्न होकर हमें यशस्वी पुत्र दें तथा हमारा पालन एवं कल्याण करें ॥१५ ॥

[सूक्त - ३६]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** विश्वेदेवा । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५४८०. **प्र ब्रह्मैतु सदनादृतस्य वि रश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः ।**
वि सानुना पृथिवी सस्र उर्वी पृथु प्रतीकमध्येधे अग्निः ॥१ ॥

ऋत के गृह (यज्ञशाला) से ब्रह्मज्ञान स्तोत्रादि प्रसरित होकर सूर्य आदि देवों तक पहुँचते हैं । सूर्यदेव अपनी किरणों से जल वृष्टि करते हैं । पर्वतादि सहित विस्तार वाली पृथ्वी पर अग्निदेव प्रदीप्त होते हैं ॥१ ॥



५४८१. इमां वां मित्रावरुणा सुवृक्तिमिषं न कृण्वे असुरा नवीयः ।
इनो वामन्यः पदवीरदब्धो जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः ॥२ ॥

हे बलशाली वरुण और मित्रदेव ! आपके निमित्त इस नवीन स्तोत्र की रचना करते हैं । आप दोनों में एक वरुणदेव प्रभुता-सम्पन्न हैं । वे निष्पक्षरूप से धर्माधर्म का निर्णय करके सुनिश्चित स्थान (पद) प्रदान करते हैं । दूसरे देव 'मित्र' प्रशंसा किये जाने पर धर्ममार्ग में प्रेरणा प्रदान करते हैं ॥२ ॥

५४८२. आ वातस्य ध्रजतो रन्त इत्या अपीपयन्त धेनवो न सूदाः ।
महो दिवः सदने जायमानोऽचिक्रदद् वृषभः सस्मिन्नूधन् ॥३ ॥

वायुदेव गतिपूर्वक चारों दिशाओं में विचरण करते हैं, अन्तरिक्ष में गर्जते हुए मेघ सुशोभित होते हैं और बरसते हैं । इससे (जल वृष्टि से) दूध देने वाली गौएँ बढ़ती हैं ॥३ ॥

५४८३. गिरा य एता युनजद्धरी त इन्द्र प्रिया सुरथा शूर धायू ।
प्र यो मन्युं रिरिक्षतो मिनात्या सुक्रतुमर्यमणं ववृत्याम् ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो यजमान स्तुतिपाठ करते हुए आपके बलवान् अश्वों को रथ में नियोजित करता है, आप उस (यजमान की) यज्ञशाला में अवश्य जाते हैं । जो देव शत्रुओं की हिंसक वृत्ति नष्ट कर देते हैं, हम उन अर्यमादेव का आवाहन करते हैं ॥४ ॥

५४८४. यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च नमस्विनः स्व ऋतस्य धामन् ।
वि पृक्षो बाबधे नृभिः स्तवान इदं नमो रुद्राय प्रेष्ठम् ॥५ ॥

याजक अन्न-प्राप्ति के लिए, यज्ञ द्वारा रुद्रदेव को स्तुतियों से प्रसन्न करते हैं, उन रुद्रदेव को हम सब नमस्कार करते हैं ॥५ ॥

५४८५. आ यत्साकं यशसो वावशानाः सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता ।
याः सुष्वयन्त सुदुघाः सुधारा अभि स्वेन पयसा पीप्यानाः ॥६ ॥

मातृवत् स्नेह सलिला सिन्धु एवं सप्तम सरस्वती आदि नदियाँ पर्याप्त जलराशि से युक्त होकर प्रवहमान रहें । वे अपने जल से परिपूर्ण अन्न एवं दुग्धादि बढ़ाती हुई साथ-साथ प्रवहमान रहें ॥६ ॥

५४८६. उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना धियं तोकं च वाजिनोऽवन्तु ।
मा नः परि ख्यदक्षरा चरन्त्यवीवृधन्युज्यं ते रयिं नः ॥७ ॥

आनन्दवर्धक पराक्रमी मरुद्‌गण हमारे पुत्रों को और सद्‌बुद्धि प्रेरित कर्मों को सुरक्षित रखें । वाक् के अधिपति देव हम पर सदैव प्रसन्न रहें । वे हम लोगों के धन को बढ़ाते हैं ॥७ ॥

५४८७. प्र वो महीमरमतिं कृणुध्वं प्र पूषणं विदथ्यं१ न वीरम् ।
भगं धियोऽवितारं नो अस्याः सातौ वाजं रातिषाचं पुरन्धिम् ॥८ ॥

हे स्तोतागण ! आप इस विशाल एवं महान् पृथ्वी (देवी) का आवाहन करें । यजनीय, योद्धा, पराक्रमी पूषादेव का आवाहन करें ।बुद्धिसंगत कर्म करने के प्रेरक भगदेव एवं पुरातन, दानवीर वाजदेव का यज्ञ में आवाहन करें ॥ ८ ॥

५४८८. अच्छायं वो मरुतः श्लोक एत्वच्छा विष्णुं निषिक्तपामवोभिः ।
उत प्रजायै गृणते वयो धुर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९ ॥



हे मरुद्‌गणो ! आप तक एवं गर्भ संरक्षक, आश्रय प्रदान करने वाले विष्णुदेव के पास तक हमारे ये स्तोत्र पहुँचें । वे हम स्तोताओं को पुत्र एवं अन्न प्रदान करें । आप सदैव हमारा पालन करते हुए कल्याण करें ॥९ ॥

[सूक्त - ३७]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- विश्वेदेवा । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५४८९. आ वो वाहिष्ठो वहतु स्तवध्यै रथो वाजा ऋभुक्षणो अमृक्तः ।
अभि त्रिपृष्ठैः सवनेषु सोमैर्मदे सुशिप्रा महभिः पृणध्वम् ॥१ ॥

हे तेजस्वी ऋभुगणो ! आप श्रेष्ठ एवं निरापद रथ पर आरूढ़ होकर गमन करें । हे सुन्दर हनु वाले ऋभुगण ! आप सब दूध, दही और सत्तू मिले सोमरस का पान करके आनन्दित हों ॥१ ॥

५४९०. यूयं ह रत्नं मघवत्सु धत्थ स्वर्दृश ऋभुक्षणो अमृक्तम् ।
सं यज्ञेषु स्वधावन्तः पिबध्वं वि नो राधांसि मतिभिर्दयध्वम् ॥२ ॥

हे ऋभुगणो ! आप स्वदर्शी हैं, बलवान् हैं; आप सोमपायी होकर हम हविदाताओं को विशेष रत्नादि प्रदान करें । बुद्धियों सहित सिद्धिदायक ऐश्वर्य हमें दें ॥२ ॥

५४९१. उवोचिथ हि मघवन्देष्णं महो अर्भस्य वसुनो विभागे ।
उभा ते पूर्णा वसुना गभस्ती न सूनृता नि यमते वसव्या ॥३ ॥

हे धनपति ! महाधन एवं अल्पधन के विभाग के समय आप भी अपना भाग ग्रहण करते हैं । हे देव ! आपके दोनों हाथों में पर्याप्त धन है । आप निर्विघ्न दान देते हैं ॥३ ॥

५४९२. त्वमिन्द्र स्वयशा ऋभुक्षा वाजो न साधुरस्तमेष्यृक्वा ।
वयं नु ते दाश्वांसः स्याम ब्रह्म कृण्वन्तो हरिवो वसिष्ठाः ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप यशस्वी हैं, आप श्रेष्ठ साधक एवं ऋभुओं के स्वामी, हम स्तोताओं के घर में आएँ । हे हरितवर्ण वाले अश्व से युक्त पराक्रमी देव ! हम वसिष्ठगण आपकी स्तुति करते हुए, आप के निमित्त हवि अर्पित करते हैं ॥४ ॥

५४९३. सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद्याभिर्विवेषो हर्यश्व धीभिः ।
ववन्मा नु ते युज्याभिरूती कदा न इन्द्र राय आ दशस्येः ॥५ ॥

हरित वर्ण अश्व वाले हे देव ! आप हमारी स्तुतियों को सुनें । आप हवि-दाता याजक को उत्तम धन प्रदान करें । आप कब धन प्रदान करेंगे ? आज तक हम आपके संरक्षण में सुरक्षित रहते हुए आपका भजन (ध्यान) करते हैं ॥५ ॥

५४९४. वासयसीव वेधसस्त्वं नः कदा न इन्द्र वचसो बुबोधः ।
अस्तं तात्या धिया रयिं सुवीरं पृक्षो नो अर्वा न्युहीत वाजी ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप कब हमारे वचनों एवं प्रार्थनाओं पर ध्यान देंगे ? आप हमारे आश्रयदाता हैं । स्तुति से प्रसन्न होकर आप अपने बलवान् एवं तीव्रगामी अश्वों के द्वारा हमारे पास पराक्रमी पुत्र, धन एवं अन्न भेजें ॥६ ॥

५४९५. अभि यं देवी निर्ऋतिश्चिदीशे नक्षन्त इन्द्रं शरदः सुपृक्षः ।
उप त्रिबन्धुर्जरदष्टिमेत्यस्ववेशं यं कृणवन्त मर्ताः ॥७ ॥



पृथ्वी जिसे ईश मानती है, समस्त अन्नयुक्त संवत्सर जिन्हें सुख प्रदान करते हैं, मनुष्य जिन्हें अपने घरों में प्रतिष्ठित करते हैं; वे त्रिलोक-बन्धु इन्द्रदेव हमें विशाल बल प्रदान करें ॥७ ॥

५४९६. **आ नो राधांसि सवितः स्तवध्या आ रायो यन्तु पर्वतस्य रातौ ।**
सदा नो दिव्यः पायुः सिषक्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८ ॥

हे सवितादेव ! आप हमें अपना धन प्रदान करें । पर्वत प्रदत्त धन भी हमें प्राप्त हो । इन्द्रदेव अपनी संरक्षण शक्तियों से सदैव हमारी रक्षा करें तथा हम सबका पालन करें ॥८ ॥

[सूक्त - ३८]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- १-५ एवं ६ के पूर्वार्द्ध के सविता, ६ उत्तरार्द्ध के सविता अथवा भग, ७-८ वाजिन् । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५४९७. **उदु ष्य देवः सविता ययाम हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत् ।**
नूनं भगो हव्यो मानुषेभिर्वि यो रत्ना पुरूवसुर्दधाति ॥१ ॥

हे सवितादेव ! आप अपने आश्रित सुवर्ण 'आभा' को प्रकट करते हैं । मनुष्य सवितादेव की स्तुति करते हैं । वे अनेकों धनों के स्वामी स्तोताओं को श्रेष्ठ धन प्रदान करते हैं ॥१ ॥

५४९८. **उदु तिष्ठ सवितः श्रुध्य१स्य हिरण्यपाणे प्रभृतावृतस्य ।**
व्यु१र्वीं पृथ्वीममतिं सृजान आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः ॥२ ॥

हे सवितादेव ! आप उदित हों । हे स्वर्णमयी बाहु वाले देव ! आप व्यापक आभा, मानवों के उपयोग-योग्य धन एवं अन्न देते हैं ॥२ ॥

५४९९. **अपि ष्टुतः सविता देवो अस्तु यमा चिद्विश्वे वसवो गृणन्ति ।**
स नः स्तोमान्नमस्य१ श्चनो धाद्विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरीन् ॥३ ॥

हम सवितादेव की स्तुति करते हैं । जो सवितादेव सब देवों द्वारा स्तुत्य हैं, वे पूजनीय सवितादेव स्तोत्र एवं अन्न स्वीकार करें । हे देव ! आप अपनी समस्त रक्षण शक्तियों द्वारा स्तोताओं का पालन करें ॥३ ॥

५५००. **अभि यं देव्यदितिर्गृणाति सवं देवस्य सवितुर्जुषाणा ।**
अभि सम्राजो वरुणो गृणन्त्यभि मित्रासो अर्यमा सजोषाः ॥४ ॥

अदिति देवी जिन सवितादेव की स्तुति करती हैं एवं जिन देव की प्रेरणा का पालन करती हैं । उन्हीं सवितादेव की स्तुति मित्रावरुण देव एवं अर्यमादेव भी करते हैं ॥४ ॥

५५०१. **अभि ये मिथो वनुषः सपन्ते रातिं दिवो रातिषाचः पृथिव्याः ।**
अहिर्बुध्न्य उत नः शृणोतु वरूत्र्येकधेनुभिर्नि पातु ॥५ ॥

समस्त दानी भक्तगण आपस में मिलकर द्युलोक एवं पृथ्वीलोक के सखारूप सवितादेव की सेवा करते हैं; वे अहिर्बुध्न्य (विद्युत्रूप) देव हमारी स्तुति सुनें । वाग्देवी विशेष धेनुओं (वाणियों) सहित हम सबका पालन करें ॥५ ॥

५५०२. **अनु तन्नो जास्पतिर्मंसीष्ट रत्नं देवस्य सवितुरियानः ।**
भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमनुग्रो अध याति रत्नम् ॥६ ॥



प्रजाओं का पालन करने वाले सवितादेवता हमारी प्रार्थना सुनकर हमें रत्नादि प्रदान करें । पराक्रमी स्तोता भग देवता से सुरक्षा के लिए प्रार्थना करते हैं । जो पराक्रमी नहीं हैं, वे केवल धन माँगते हैं ॥६ ॥

५५०३. **शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ।**
जम्भयन्तोऽहिं वृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ॥७ ॥

संतुलित गति वाले, स्तुत्य, वाजी (अन्न या बल देने वाले) देव यज्ञीय प्रार्थनाओं से (प्रसन्न होकर) हम सबको सुख प्रदान करें । ये देव अदानशील और दुष्टों का संहार करें । समस्त जीर्ण रोगों से हम मुक्त हों ॥७ ॥

५५०४. **वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः ।**
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥८ ॥

हे वाजी (बलशाली) देवगण ! आप अमर, ऋतज्ञ एवं विद्वान् हैं । आप धन के निमित्त होने वाले युद्धों में हमारी रक्षा करें । आप इस यज्ञ में आकर, सोमरस पीकर आनन्दित हों एवं तृप्त हुए आप देवयान मार्ग से प्रस्थान करें ॥८ ॥

[सूक्त - ३९]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- विश्वेदेवा । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५०५. **ऊर्ध्वो अग्निः सुमतिं वस्वो अश्रेत्प्रतीची जूर्णिर्देवतातिमेति ।**
भेजाते अद्री रथ्येव पन्थामृतं होता न इषितो यजाति ॥१ ॥

हे ऊर्ध्वगामी अग्निदेव ! आप अपने याजकों की स्तुति को सुनें । पूर्व दिशा वाली उषादेवी इस यज्ञ में आएँ । आदरणीय याजक पति और पत्नी, रथी के समान, यज्ञ-मार्ग का आश्रय लेते हैं । होता यज्ञ करते हैं ॥१ ॥

५५०६. **प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषामा विश्पतीव बीरिट इयाते ।**
विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान् ॥२ ॥

समस्त प्राणियों के कल्याण के लिए नियुत संज्ञा वाले वाहन में आरूढ़ वायुदेव और पूषादेव, रात्रि के अन्त में, उषाकाल के पूर्व मनुष्यों द्वारा बुलाये जाने पर राजाओं की भाँति आते हैं । इन दोनों देवों के लिए यज्ञशाला में उत्तम प्रकार से कुश के आसन प्रयुक्त किये जाते हैं ॥२ ॥

५५०७. **ज्मया अत्र वसवो रन्त देवा उरावन्तरिक्षे मर्जयन्त शुभ्राः ।**
अर्वाक् पथ उरुज्रयः कृणुध्वं श्रोता दूतस्य जग्मुषो नो अस्य ॥३ ॥

इस यज्ञ में वसुगण भूमि पर विचरण करते हैं । विशाल अन्तरिक्ष में रहने वाले मरुद्गणों की सेवा इस यज्ञ से की जाती है । हे वसुगणो एवं मरुतो ! आप हमारे दूत की प्रार्थना पर ध्यान देकर हमारी ओर आएँ ॥३ ॥

५५०८. **ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि सन्ति देवाः ।**
ताँ अध्वर उशतो यक्ष्यग्ने श्रुष्टी भगं नासत्या पुरन्धिम् ॥४ ॥

रक्षा करने वाले यजनीय विश्वेदेवा यज्ञ में आये हैं । हे अग्निदेव ! आप यज्ञ में उपस्थित देवों के निमित्त यजन करें । हे भगदेव ! आप अश्विनीकुमारों एवं इन्द्रदेव का सत्कार करें ॥४ ॥

५५०९. **आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्या मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम् ।**
आर्यमणमदितिं विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो मादयन्ताम् ॥५ ॥



हे अग्निदेव ! द्युलोक एवं पृथ्वी के स्तुति करने योग्य मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि, अर्यमा, अदिति, विष्णु आदि देवताओं को आप हमारे इस यज्ञ में आवाहित करें । देवी सरस्वती और मरुद्गण (यहाँ आकर) आनन्दित हों ॥५ ॥

५५१०. **ररे हव्यं मतिभिर्यज्ञियानां नक्षत्कामं मर्त्यानामसिन्वन् ।**
धाता रयिमविदस्यं सदासां सक्षीमहि युज्येभिर्नु देवैः ॥६ ॥

यजनीय देवताओं के निमित्त हम स्तोत्र एवं हवि अर्पित करते हैं । मानवों की प्रगति की कामना से अग्निदेव यजन करें । हम आपके सहित समस्त सहायक देवताओं का आवाहन करते हैं । प्रसन्न होकर सब देवता हमें स्थायी एवं अक्षय धन प्रदान करें ॥६ ॥

५५११. **नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।**
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

आज वसिष्ठों ने द्यावा-पृथिवी की सुनिश्चित स्तुति की । यजनीय वरुण, इन्द्र और अग्निदेव की स्तुति की गयी । आनन्ददाता देवता हमें पूजा में प्रयुक्त किये जाने योग्य श्रेष्ठतम अन्न एवं धन प्रदान करें ॥७ ॥

[सूक्त - ४०]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५१२. **ओ श्रुष्टिर्विदथ्या३ समेतु प्रति स्तोमं दधीमहि तुराणाम् ।**
यदद्य देवः सविता सुवाति स्यामास्य रत्निनो विभागे ॥१ ॥

हम वेगवान् देवताओं के लिए स्तोत्रों का पाठ करते हैं । हमें वे सुख मिलें; जो 'सहकारिता' के आधार पर प्राप्त होते हैं । रत्नों के स्वामी सविता देव जिस समय अपना धन बाँटते हैं, उस समय उपस्थित रहकर हम भी वह धन प्राप्त करें ॥१ ॥

५५१३. **मित्रस्तन्नो वरुणो रोदसी च द्युभक्तमिन्द्रो अर्यमा ददातु ।**
दिदेष्टु देव्यदिती रेक्णो वायुश्च यन्नियुवैते भगश्च ॥२ ॥

मित्र, वरुण, द्यावा-पृथिवी, इन्द्र, अर्यमा, वायु, भगदेव एवं अदिति देवी सहित समस्त देवता हमारे स्तोत्रों से प्रसन्न होकर हमें वह श्रेष्ठ धन प्रदान करें, जो तेजस्वियों के लिए सेवनीय है ॥२ ॥

५५१४. **सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मी यं मर्त्यं पृषदश्वा अवाथ ।**
उतेमग्निः सरस्वती जुनन्ति न तस्य रायः पर्येतास्ति ॥३ ॥

हे पृषत् (चित्तीदार अथवा वायुवेग) घोड़े वाले मरुद्गणो ! आप महान् पराक्रमी एवं बलवान् मनुष्य की सुरक्षा करते हैं । उस मनुष्य को अग्निदेव, देवी सरस्वती तथा अन्य देवगण प्रेरणा देकर सत्कर्म में नियोजित करते हैं । ऐसे मनुष्य के धन का नाश नहीं होता है ॥३ ॥

५५१५. **अयं हि नेता वरुण ऋतस्य मित्रो राजानो अर्यमापो धुः ।**
सुहवा देव्यदितिरनर्वा ते नो अंहो अति पर्षन्नरिष्टान् ॥४ ॥

वे सत्य मार्ग में नेतृत्व करने वाले शासक देवता, वरुण, मित्र, अर्यमा आदि देव हमारे द्वारा किये जाने वाले श्रेष्ठ कार्यों को धारण करते हैं । विस्तृत तेजस्वी देवी अदिति स्तवनीय हैं । ये समस्त देवगण, हमारे श्रेष्ठ कर्मों को निर्विघ्न सम्पन्न होने में सहायक होकर हमें पाप कर्मों से बचाएँ ॥४ ॥



५५१६. **अस्य देवस्य मीळ्हुषो वया विष्णोरेषस्य प्रभृथे हविर्भिः ।**
विदे हि रुद्रो रुद्रियं महित्वं यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ॥५ ॥

देवगण यज्ञ में हवि द्वारा उपासनीय एवं कामनाओं की पूर्ति करने वाले विष्णुदेव के अंश हैं । रुद्रदेव अपनी महत्त्वपूर्ण शक्ति हमें प्रदान करें । हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे अन्नपूरित घर में आएँ ॥५ ॥

५५१७. **मात्र पूषन्नाघृण इरस्यो वरूत्री यद्रातिषाचश्च रासन् ।**
मयोभुवो नो अर्वन्तो नि पान्तु वृष्टिं परिज्मा वातो ददातु ॥६ ॥

हे तेजस्वी पूषन्देव ! सर्वश्रेष्ठ देवी सरस्वती और दानशील दिव्यशक्तियों से धन प्राप्त कराने में आप हमारे सहायक हों । सर्वत्रगामी वायुदेव जल वृष्टि में सहयोग करें एवं प्रगतिशील तथा सुखदायक देवता हमारा कल्याण करें-पोषण करें ॥६ ॥

५५१८. **नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।**
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

आप वसिष्ठों ने द्यावा-पृथिवी की सुनिश्चित स्तोत्रों से स्तुति की । यजन करने योग्य वरुण, इन्द्र एवं अग्निदेव की स्तुति भी की गयी । आनन्ददाता देवता हमें पूजा (श्रेष्ठ कार्यों) में प्रयुक्त किए जाने योग्य श्रेष्ठतम अन्न एवं धन प्रदान करें ॥७ ॥

[सूक्त - ४१]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- लिङ्गोक्तदेवता (अग्नि, इन्द्र, मित्रावरुण, अश्विनी कुमार, भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम, रुद्र); २-६ भग, ७ उषा । **छन्द**- त्रिष्टुप्, १-जगती ।]

५५१९. **प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।**
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम ॥१ ॥

प्रभातकाल में (यज्ञार्थ) हम अग्निदेव का आवाहन करते हैं । प्रभात में ही यज्ञ की सफलता के निमित्त इन्द्रदेव, मित्रावरुण, अश्विनीकुमारों, भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम और रुद्रदेव का भी आवाहन करते हैं ॥१ ॥

५५२०. **प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता ।**
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥२ ॥

हम उन भगदेवता का आवाहन करते हैं, जो जगत् को धारण करने वाले, उग्रवीर एवं विजयशील हैं ।वे अदिति पुत्र हैं, जिनकी स्तुति करने से दरिद्र भी धनवान् हो जाता है । राजा भी उनसे धन की याचना करते हैं ॥२ ॥

५५२१. **भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।**
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३ ॥

हे भगदेवता ! आप ही वास्तविक धन हैं । शाश्वत-सत्य ही धन है । हे भगदेव ! आप हमारी स्तुति से प्रसन्न होकर हमें इच्छित सत्य-धन प्रदान करें । हे देव ! हमें गौएँ, घोड़े, पुत्रादि प्रदान कर, श्रेष्ठ मानवों के समाज वाला बनाएँ ॥३ ॥

५५२२. **उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् ।**
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥४ ॥



हे देव ! आपकी कृपा से हम भाग्यवान् बनें । दिन के प्रारम्भ और मध्य में भी हम भाग्यवान् रहें । हे धनवान् भगदेवता ! हम सूर्योदय के समय, समस्त देवताओं का अनुग्रह प्राप्त करें ॥४ ॥

५५२३. **भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।**
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह ॥५ ॥

हे देवताओ ! भग देवता ही ऐश्वर्यवान् हों । वे कृपा कर हमें धनवान् बनायें । हे भगदेवता ! समस्त मानव समुदाय आपका आवाहन करता है, आप हमारे यज्ञ में आएँ ॥५ ॥

५५२४. **समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय ।**
अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥६ ॥

दधिक्रावा की तरह पवित्र पद की प्राप्ति के लिए उषाकाल में (देवगण) यज्ञ में पधारें । जिस प्रकार तीव्रगामी अश्व रथ को लाते हैं, वैसे ही वे धनवान् भगदेव को हमारे पास लाएँ ॥६ ॥

५५२५. **अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।**
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

समस्त गुणों से युक्त अश्वों, गौओं, वीरों से युक्त एवं घृत का सिंचन करने वाली कल्याणकारी उषाएँ हमारे घरों को प्रकाशित करें । आप सदैव हमारा पालन करते हुए कल्याण करें ॥७ ॥

[सूक्त - ४२]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

५५२६. **प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त प्र क्रन्दनुर्नभन्यस्य वेतु ।**
प्र धेनव उदप्रुतो नवन्त युज्यातामद्री अध्वरस्य पेशः ॥१ ॥

अंगिरस् के मन्त्र (स्तोत्र) सर्वव्यापी हों । पर्जन्य हमारे स्तोत्रों के लिए इच्छुक रहें । प्रसन्नता देने वाली नदियाँ जल का सिंचन करती हुई प्रवाहित हों । आदरणीय यजमान सपत्नीक यज्ञ के स्वरूप को और श्रेष्ठ बनाएँ ॥१ ॥

५५२७. **सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युक्ष्वा सुते हरितो रोहितश्च ।**
ये वा सद्मन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! आपका चिरपुरातन गमनयोग्य मार्ग सुगम बने । श्यामवर्ण एवं लाल वर्ण के अश्व यज्ञशाला में वीरों को लाते हैं । ऐसे तेजस्वी घोड़ों वाले रथ पर आरूढ हो, आप यज्ञ में आएँ । देवों के प्रकट होने के निमित्त हम स्तोत्रों का गान करते हैं ॥२ ॥

५५२८. **समु वो यज्ञं महयन्नमोभिः प्र होता मन्द्रो रिरिच उपाके ।**
यजस्व सु पुर्वणीक देवाना यज्ञियामरमतिं ववृत्याः ॥३ ॥

हे देवताओ ! नमस्कार करने वाले ये स्तोता, आपके यज्ञ की महिमा को बढ़ाते हैं । श्रेष्ठ यज्ञ के उपासक "होता" सर्वोत्तम माने जाते हैं । हे परम तेजस्वी अग्निदेव ! आप प्रदीप्त होकर, देवों का उत्तम प्रकार से यजन करें ॥३ ॥

५५२९. **यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे स्योनशीरतिथिराचिकेतत् ।**
सुप्रीतो अग्निः सुधितो दम आ स विशे दाति वार्यमियत्यै ॥४ ॥



धनवान् वीर के घर में जिस समय आदरणीय अग्निदेव सुखपूर्वक प्रतिष्ठित होकर प्रदीप्त होते हैं, उस समय समीपस्थ जनों (अर्थात् याजकों) को श्रेष्ठ धन प्राप्त होता है ॥४ ॥

५५३०. **इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व मरुत्स्विन्द्रे यशसं कृधी नः ।**
आ नक्ता बर्हिः सदतामुषासोशन्ता मित्रावरुणा यजेह ॥५ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमारे यज्ञ का सेवन करें । मरुद्गणों एवं इन्द्रदेव के बीच हमें यशस्वी बनायें । इस यज्ञ में मित्रावरुण का यजन करें । रात्रि और उषाकाल में भी कुशाओं पर विराजें ॥५ ॥

५५३१. **एवाग्निं सहस्यं१ वसिष्ठो रायस्कामो विश्वप्स्न्यस्य स्तौत् ।**
इषं रयिं पप्रथद्वाजमस्मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

ऐश्वर्य के इच्छुक वसिष्ठ ने सब प्रकार के धन हेतु बल के पुत्र अग्निदेव की स्तुति की । अग्निदेव हमें अन्न, बल और धन प्रदान करें । हे देवगणो ! आप हमारा पालन करें, कल्याण करें ॥६ ॥

[सूक्त - ४३]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५३२. **प्र वो यज्ञेषु देवयन्तो अर्चन्द्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्यै ।**
येषां ब्रह्माण्यसमानि विप्रा विष्वग्वियन्ति वनिनो न शाखाः ॥१ ॥

विद्वान् स्तोताओं के स्तोत्र वृक्ष की शाखाओं के समान समस्त दिशाओं में गमन करते हैं ।वे स्तोतागण देवत्व प्राप्ति के निमित्त नमस्कारों सहित आपकी तथा द्युलोक एवं पृथिवीलोक की भी स्तुति करते हैं ॥१ ॥

५५३३. **प्र यज्ञ एतु हेत्वो न सप्तिरुद्यच्छध्वं समनसो घृताचीः ।**
स्तृणीत बर्हिरध्वराय साधूर्ध्वा शोचींषि देवयून्यस्थुः ॥२ ॥

हमारा यह यज्ञ देवताओं की ओर तीव्रगामी अश्व के समान गमन करे । समान मन वाले आप घृत अर्पित करने वाले स्रुक् को उठाएँ । यज्ञ में देवों के लिए कुशाएँ बिछाएँ । हे अग्निदेव ! देवताओं की ओर जाने वाली आपकी ज्वालाएँ ऊर्ध्वगामी हों ॥२ ॥

५५३४. **आ पुत्रासो न मातरं विभृत्राः सानौ देवासो बर्हिषः सदन्तु ।**
आ विश्वाची विदथ्यामनक्त्वग्ने मा नो देवताता मृधस्कः ॥३ ॥

भरण-पोषण के योग्य बालक जिस प्रकार माता की गोद में बैठते हैं, उसी प्रकार देवगण कुशा के आसनों पर विराजें । हे अग्निदेव ! आपकी ज्वालाओं पर "जुहू" घृत का सिंचन करे । हे देव ! आप युद्ध में हमारे शत्रुओं को परास्त करें ॥३ ॥

५५३५. **ते सीषपन्त जोषमा यजत्रा ऋतस्य धाराः सुदुघा दुहानाः ।**
ज्येष्ठं वो अद्य मह आ वसूनामा गन्तन समनसो यति ष्ठ ॥४ ॥

यजन के योग्य देवता जल वृष्टि करते हुए हमारी सेवा स्वीकार करें । हे देवताओ ! आप सब समान मन से हमारे यज्ञ में पधारें एवं आज हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करें ॥४ ॥

५५३६. **एवा नो अग्ने विक्ष्वा दशस्य त्वया वयं सहसावन्नास्क्राः ।**
राया युजा सधमादो अरिष्टा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥



हे अग्निदेव ! आप प्रजाजनों में हमें धन प्रदान करें । हे बलवान् अग्निदेव ! हम सदा आपके आश्रय में रहकर धनवान् , हृष्ट-पुष्ट एवं अहिंसक वृत्ति वाले बनें । आप हमारा पालन एवं कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - ४४]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- दधिक्रा; १ लिङ्गोक्तदेवता (दधिक्रा, अश्विनीकुमार, उषा, अग्नि, भग, इन्द्र, विष्णु, पूषा, ब्रह्मणस्पति, आदित्य, द्यावापृथिवी, आप:) । **छन्द**- त्रिष्टुप् , १ जगती ।]

५५३७. **दधिक्रां वः प्रथममश्विनोषसमग्निं समिद्धं भगमूतये हुवे ।**
इन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिमादित्यान्द्यावापृथिवी अपः स्वः ॥१ ॥

आपकी सुरक्षा के निमित्त हम सर्वप्रथम दधिक्रादेव का आवाहन करते हैं । तत्पश्चात् दोनों अश्विनीकुमारों, उषा, समिद्ध अग्नि और भगदेव का आवाहन करते हैं । इन्द्र, पूषा, ब्रह्मणस्पति, आदित्यगण, द्यावा-पृथिवी, जलदेवता और सूर्यदेव की स्तुति भी करते हैं ॥१ ॥

५५३८. **दधिक्रामु नमसा बोधयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः ।**
इळां देवीं बर्हिषि सादयन्तोऽश्विना विप्रा सुहवा हुवेम ॥२ ॥

हम दधिक्रादेव को नमस्कारों द्वारा प्रवर्तित एवं प्रबोधित करते हुए, यज्ञ के निकट पहुँचते हैं । यज्ञ में इळा देवी की प्रतिष्ठा करके श्रेष्ठ, प्रार्थनीय विद्वज्जन, अश्विनीकुमारों को आवाहित करते हैं ॥२ ॥

५५३९. **दधिक्रावाणं बुबुधानो अग्निमुप ब्रुव उषसं सूर्यं गाम् ।**
ब्रध्नं मँश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं ते विश्वास्मद् दुरिता यावयन्तु ॥३ ॥

हम दधिक्रावा को संबोधित करते हुए अग्नि, उषा, सूर्य और भूमि अथवा गौ की स्तुति करते हैं । अहंकारी शत्रुओं के संहारक वरुणदेव के भूरे वर्ण वाले अश्व का स्तवन करते हैं । ये समस्त देवगण हमें सब प्रकार के पापों से बचाएँ ॥३ ॥

५५४०. **दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वाग्रे रथानां भवति प्रजानन् ।**
संविदान उषसा सूर्येणादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः ॥४ ॥

सर्वप्रधान, तीव्रगामी दधिक्रा, मंतव्य को जानकर उषा, आदित्यगण, वसुगण और अंगिरा एवं सूर्यदेव से सहमत होकर स्वयं ही रथ के अग्रभाग में नियोजित हो जाते हैं ॥४ ॥

५५४१. **आ नो दधिक्राः पथ्यामनक्त्वृतस्य पन्थामन्वेतवा उ ।**
शृणोतु नो दैव्यं शर्धो अग्निः शृण्वन्तु विश्वे महिषा अमूराः ॥५ ॥

यजन मार्ग से गमन के लिए दधिक्रादेव हमारे मार्ग को जल से सींचें । दिव्य रूप वाले वे अग्निदेव एवं समस्त बलवान् विद्वान् हमारी प्रार्थना सुनें ॥५ ॥

[सूक्त - ४५]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- सविता । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५४२. **आ देवो यातु सविता सुरत्नोऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः ।**
हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयञ्च प्रसुवञ्च भूम ॥१ ॥



जो देव उत्तम धन को धारण करते हैं, अपने तेज से अन्तरिक्ष को प्रकाशित करते हैं एवं हरित अश्व जिनके रथ को खींचते हैं, वे सवितादेव हमारे यज्ञ में पधारें। सवितादेव मनुष्य के हितसाधक धन को अपने हाथों (किरणों) में धारण किये रहते हैं। ये देव प्राणियों को धारण करते हैं एवं उन्हें कर्म की प्रेरणा प्रदान करते हैं ॥१ ॥

५५४३. उदस्य बाहू शिथिरा बृहन्ता हिरण्यया दिवो अन्ताँ अनष्टाम्।
नूनं सो अस्य महिमा पनिष्ट सूरश्चिदस्मा अनु दादपस्याम् ॥२ ॥

ये स्वर्णपाणि, दानशील सवितादेव द्युलोक में अन्त तक संव्याप्त हैं। इन देव की इस महिमा का हम गान करते हैं। ये सवितादेव मनुष्यों को शुभ कर्म करने की प्रेरणा प्रदान करें ॥२ ॥

५५४४. स घा नो देवः सविता सहावा साविषद्वसुपतिर्वसूनि।
विश्रयमाणो अमतिमुरूचीं मर्तभोजनमध रासते नः ॥३ ॥

धन के स्वामी, तेजस्वी सवितादेव हमें धन प्रदान करें। वे अति विशाल स्वरूप वाले देव हमें मानवोचित भोग्य-सामग्री एवं धन प्रदान करें ॥३ ॥

५५४५. इमा गिरः सवितारं सुजिह्वं पूर्णगभस्तिमीळते सुपाणिम्।
चित्रं वयो बृहदस्मे दधातु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ४ ॥

उत्तम जिह्वा वाले, समस्त धन से सम्पन्न, उत्तम हाथों (किरणों) वाले सवितादेव की हम इन स्तोत्रों द्वारा स्तुति करते हैं ॥४ ॥

[सूक्त - ४६]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता**- रुद्र। **छन्द**- जगती, ४ त्रिष्टुप्।]

५५४६. इमा रुद्राय स्थिरधन्वने गिरः क्षिप्रेषवे देवाय स्वधाव्ने।
अषाळहाय सहमानाय वेधसे तिग्मायुधाय भरता शृणोतु नः ॥१ ॥

ये स्तोत्र सुदृढ़ धनुषधारी, शीघ्रगामी बाण छोड़ने वाले, अजेय, तीक्ष्णास्त्रधारी एवं अन्न से पूर्ण रुद्रदेव को तुष्ट करें। वे इन्हें (हमारे स्तोत्रों को) सुनें ॥१ ॥

५५४७. स हि क्षयेण क्षम्यस्य जन्मनः साम्राज्येन दिव्यस्य चेतति।
अवन्नवन्तीरुप नो दुरश्चरानमीवो रुद्र जासु नो भव ॥२ ॥

हे रुद्रदेव ! आपको भौतिक एवं दिव्य विभूतियों के द्वारा जाना जाता है। आप सबको सुखी-सम्पन्न बनाते हुए, हमें नीरोग बनाकर हमारे घर में निवास करें ॥२ ॥

५५४८. या ते दिद्युदवसृष्टा दिवस्परि क्ष्मया चरति परि सा वृणक्तु नः।
सहस्रं ते स्वपिवात भेषजा मा नस्तोकेषु तनयेषु रीरिषः ॥३ ॥

हे स्वपिवात् (वायु के समान संचरणशील) रुद्रदेव ! आपके द्वारा संचरित अंतरिक्षीय विद्युत् हमें कष्ट न पहुँचाए। आपकी सहस्रों ओषधियाँ (रोगनाशक प्रवाह) हमारे बच्चों को क्षीण न करें ॥३ ॥

[रुद्र का अर्थ है - रुला देने में समर्थ। प्रकृति के रुद्र प्रवाह सज्जनों को बचाते हुए दुष्टता पर ही प्रहार करें; ऐसी प्रार्थना इस मंत्र में की गई है।]



५५४९. **मा नो वधी रुद्र मा परा दा मा ते भूम प्रसितौ हीळितस्य।**
आ नो भज बर्हिषि जीवशंसे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥

हे (रुद्र) देव ! न हमें मारें और न हमारा त्याग करें । आपके क्रोध के बन्धन हमें ग्रसित न करें । प्राणियों द्वारा प्रशंसित कार्य में हमें भागीदार बनायें । कल्याणप्रद साधनों से हमारी रक्षा करें ॥४॥

[सूक्त - ४७]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- आपः । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५५०. **आपो यं वः प्रथमं देवयन्त इन्द्रपानमूर्मिमकृण्वतेळः ।**
तं वो वयं शुचिमरिप्रमद्य घृतप्रुषं मधुमन्तं वनेम ॥१॥

हे जलदेव ! देवत्व के इच्छुकों के द्वारा इन्द्रदेव के पीने के लिए भूमि पर प्रवाहित शुद्ध जल को मिलाकर सोमरस बनाया गया है । शुद्ध पापरहित, मधुर रसयुक्त सोम का हम भी पान करेंगे ॥१॥

५५५१. **तमूर्मिमापो मधुमत्तमं वोऽपां नपादवत्वाशुहेमा ।**
यस्मिन्निन्द्रो वसुभिर्मादयाते तमश्याम देवयन्तो वो अद्य ॥२॥

हे जलदेवता ! आपका मधुर प्रवाह सोमरस में मिला है । उसे शीघ्रगामी अपांनपात् (अग्निदेव) सुरक्षित रखें ।उसी सोम के पान से वसुओं के साथ इन्द्रदेव मत्त होते हैं ।हम देवत्व की इच्छावाले आज उसे प्राप्त करेंगे ॥२॥

५५५२. **शतपवित्राः स्वधया मदन्तीर्देवीर्देवानामपि यन्ति पाथः ।**
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुभ्यो हव्यं घृतवज्जुहोत ॥३॥

ये जल देवता हर प्रकार से पवित्र करके तृप्ति सहित (प्राणियों में) प्रसन्नता भरते हैं । वे (जलदेव) यज्ञ में पधारते हैं, परन्तु विघ्न नहीं डालते । इसलिए नदियों के निरन्तर प्रवाह के लिए यज्ञ करते रहें ॥३॥

५५५३. **याः सूर्यो रश्मिभिराततान याभ्य इन्द्रो अरदद् गातुमूर्मिम् ।**
ते सिन्धवो वरिवो धातना नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥

जिस जल को सूर्यदेव अपनी रश्मियों के द्वारा बढ़ाते हैं एवं इन्द्रदेव के द्वारा जिन्हें प्रवाहित होने का मार्ग दिया गया है । हे सिन्धो (जल प्रवाहो) ! आप उन जलधाराओं से हमें धन-धान्य से परिपूर्ण करें तथा कल्याणप्रद साधनों से हमारी रक्षा करें ॥४॥

[सूक्त - ४८]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- ऋभुगण, ४ विश्वेदेवा अथवा ऋभुगण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५५४. **ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य ।**
आ वोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु ॥१॥

हे कर्मकुशल धनवान् ऋभुओ ! आप हमारे सोमरस से प्रसन्न हों । आपके कर्मकुशल समर्थ अश्व मनुष्यों के लिए हितकर मार्ग प्रशस्त करें ॥१॥

५५५५. **ऋभुर्ऋभुभिरभि वः स्याम विभ्वो विभुभिः शवसा शवांसि ।**
वाजो अस्माँ अवतु वाजसाताविन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम् ॥२॥



हम आपके साथ रहकर कर्म-कुशल, ऐश्वर्यवान् एवं बलवान् होंगे । वाज नामक ऋभुदेव युद्ध में हमारी रक्षा करें । इन्द्रदेव का सहयोग प्राप्त कर हम वृत्र से बच सकेंगे ॥२ ॥

५५५६. **ते चिद्धि पूर्वीरभि सन्ति शासा विश्वाँ अर्य उपरताति वन्वन् ।**
इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन्वि नृम्णम् ॥३ ॥

वे वीर शत्रु की बड़ी सेना को उत्तम अस्त्र-शस्त्रों से युद्ध भूमि में पराजित करते हैं । ऐश्वर्यवान् श्रेष्ठ शिल्पियों-विश्वकर्मा आदि से सेवित, बलवान् शत्रु को पराभूत करने वाले आर्य इन्द्र और ऋभुदेव शत्रुओं का विनाश करते हैं ॥३ ॥

५५५७. **नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे सजोषाः ।**
समस्मे इषं वसवो ददीरन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४ ॥

हे देवो ! हमें धन प्रदान करें तथा सभी एक विचार वाले ऋभुगण हमारी सुरक्षा करें । हमें अन्न प्रदान करके कल्याणकारी साधनों से सुरक्षित करें ॥४ ॥

[सूक्त - ४९]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- आपः । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५५८. **समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः ।**
इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥१ ॥

समुद्र जिनमें ज्येष्ठ हैं, वे जल-प्रवाह सदा अंतरिक्ष से आने वाले हैं । इन्द्रदेव ने जिनका मार्ग प्रशस्त किया था, वे जलदेव यहाँ हमारी रक्षा करें ॥१ ॥

५५५९. **या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयञ्जाः ।**
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥२ ॥

जो दिव्य जल आकाश से (वृष्टि के द्वारा) प्राप्त होते हैं, जो नदियों में सदा गमनशील हैं, खोदकर जो (कुएँ आदि से) निकाले जाते हैं और जो स्वयं स्रोतों के द्वारा प्रवाहित होकर पवित्रता बिखेरते हुए समुद्र की ओर जाते हैं, वे दिव्यतायुक्त पवित्र जल हमारी रक्षा करें ॥२ ॥

५५६०. **यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् ।**
मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥३ ॥

सर्वत्र व्याप्त होकर सत्य और मिथ्या के साक्षी वरुणदेव जिनके स्वामी हैं, वे ही रसयुक्ता, दीप्तिमती, शोधिका जल देवियाँ हमारी रक्षा करें ॥३ ॥

५५६१. **यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वे देवा यासूर्जं मदन्ति ।**
वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥४ ॥

राजा वरुण और सोम जिस जल में निवास करते हैं, जिसमें विद्यमान सभी देवगण अन्न से आनंदित होते हैं, विश्व-व्यवस्थापक अग्निदेव जिसमें निवास करते हैं । वे दिव्य जलदेव हमारी रक्षा करें ॥४ ॥



[सूक्त - ५०]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** १ मित्रावरुण, २ अग्नि, ३ विश्वेदेवा, ४- गंगा आदि नदियाँ । **छन्द-** जगती, ४ अतिजगती अथवा शक्वरी ।]

५५६२. **आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद् विश्वयन्मा न आ गन्।**
अजकावं दुर्दृशीकं तिरो दधे मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥१ ॥

हे मित्रावरुण ! आप यहाँ (संसार में) हमारी रक्षा करें । कुलायत (एक स्थान पर घर बनाकर रहने वाले) अथवा विश्वयत (सर्वत्र फैलने वाले विष या विषैले जन्तु) हमारे निकट न आएँ । अजकाय (पशुओं के आकार वाले) अथवा कठिनाई से दिखने वाले (सूक्ष्म) छद्म से आघात करने वाले सर्पादि हमारे पदचाप को न पहचानें, हमसे दूर ही रहें ॥१ ॥

५५६३. **यद्विजामन्परुषि वन्दनं भुवदष्ठीवन्तौ परि कुल्फौ च देहत्।**
अग्निष्टच्छोचन्नप बाधतामितो मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! वंदन नाम का (जकड़न पैदा करने वाला) जो विष सन्धि स्थानों में रुक जाता है, जो विष "जानु" और "पैरों" की ग्रन्थियों को फुला देता है; हम सबसे उस विष को दूर रखें । हमारे पद चाप से छद्मगामी सर्प हमें न पहचान सकें ॥२ ॥

५५६४. **यच्छल्मलौ भवति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम्।**
विश्वे देवा निरितस्तत्सुवन्तु मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥३ ॥

हे विश्वेदेवागण ! जो विष शाल्मली वृक्ष पर होता है, जो विष नदी जल एवं ओषधियों से उत्पन्न होता है, उसे दूर करें । छिपकर चलने वाले सर्पों से हमारी रक्षा करें ॥३ ॥

५५६५. **याः प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः । ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः**
शिवा देवीरशिपदा भवन्तु सर्वा नद्यो अशिमिदा भवन्तु ॥४ ॥

जो नदियाँ प्रवण देश (प्रवाह की दिशा) में प्रवहमान हैं, जो उच्च और निम्न प्रदेशों में होकर बहती हैं, जो जल-शून्य अथवा आप्लावित होकर संसार को तृप्त करती हैं । वे सभी दिव्य नदियाँ शिपद रोग से बचाकर कल्याणकारी बनें । सभी नदियाँ हमारी रक्षा करें ॥४ ॥

[सूक्त - ५१]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** आदित्यगण । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५५६६. **आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा शन्तमेन ।**
अनागास्त्वे अदितित्वे तुरास इमं यज्ञं दधतु श्रोषमाणाः ॥१ ॥

हे आदित्यो ! आपकी कृपा से हमें नवीन एवं सदा सुख देने वाला घर प्राप्त हो । हमारी प्रार्थना सुनकर यज्ञ और यजमान को पापरहित दरिद्रता से मुक्त करें ॥१ ॥

५५६७. **आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां मित्रो अर्यमा वरुणो रजिष्ठाः ।**
अस्माकं सन्तु भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोममवसे नो अद्य ॥२ ॥



हे वेगवान् देव आदित्य, अदिति, वरुण, अर्यमा और मित्र ! आप प्रसन्न हों । आप समस्त विश्व के रक्षक हैं, आप हमारा हित करें । आप आज हमारे हित-साधन के लिए सोमपान करें ॥२ ॥

५५६८. आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्व ऋभवश्च विश्वे ।
इन्द्रो अग्निरश्विना तुष्टुवाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

हमने समस्त देवगणों, समस्त मरुद्‌गणों, सभी आदित्यों, सभी ऋभुओं, अश्विनीकुमारों, इन्द्र और अग्नि देवों की प्रार्थना की है । कल्याणकारी साधनों द्वारा वे सदा हमारी रक्षा करें ॥३ ॥

[सूक्त - ५२]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- आदित्यगण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५६९. आदित्यासो अदितयः स्याम पूर्देवत्रा वसवो मर्त्यत्रा ।
सनेम मित्रावरुणा सनन्तो भवेम द्यावापृथिवी भवन्तः ॥१ ॥

हे आदित्यगण ! हम आपके अपने हैं, आप हमें दु:खों से मुक्त रखें । हे वसुओ ! देवों की शक्ति से मानवमात्र का कल्याण हो ।हे मित्रावरुण देवो !आपके यजन से हम धन प्राप्त करें ।हे द्यावा-पृथिवि !हम शक्तिशाली हों ॥१ ॥

५५७०. मित्रस्तन्नो वरुणो मामहन्त शर्म तोकाय तनयाय गोपाः ।
मा वो भुजेमान्यजातमेनो मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे ॥२ ॥

मित्र और वरुण आदि देवगण हमें उत्तम ऐश्वर्य प्रदान करें और हमारी सन्तानों को भी सुख देने वाले हों । हम आपके आत्मीय बनें, दूसरों के पापों का फल न भोगें । हे वसुदेवो ! जिस (कर्म) के कारण आप विनाश करते हैं, वह कर्म हम न करें ॥२ ॥

५५७१. तुरण्यवोऽङ्गिरसो नक्षन्त रत्नं देवस्य सवितुरियानाः ।
पिता च तन्नो महान् यजत्रो विश्वे देवाः समनसो जुषन्त ॥३ ॥

त्वरित गति से कार्य करने वाले अंगिरा ने सवितादेव की उपासना करके जिस दिव्य धन को प्राप्त किया था, उसी ऐश्वर्य को प्रजापति और देवगण हमें प्रदान करें ॥३ ॥

[सूक्त - ५३]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- द्यावा-पृथिवी । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५५७२. प्र द्यावा यज्ञैः पृथिवी नमोभिः सबाध ईळे बृहती यजत्रे ।
ते चिद्धि पूर्वे कवयो गृणन्तः पुरो मही दधिरे देवपुत्रे ॥१ ॥

जिन विशाल देव-जननी द्यौ और पृथ्वी की पूर्व काल में ऋषियों ने स्तुति की थी, उनसे हम यज्ञ और अन्न के द्वारा कष्ट दूर करने की प्रार्थना करते हैं ॥१ ॥

५५७३. प्र पूर्वजे पितरा नव्यसीभिर्गीर्भिः कृणुध्वं सदने ऋतस्य ।
आ नो द्यावापृथिवी दैव्येन जनेन यातं महि वां वरूथम् ॥२ ॥

हे याजको ! मातृ-पितृ रूपा द्यावा-पृथिवी को यज्ञ के अग्र भाग में स्थापित नवीन स्तोत्रों द्वारा सुपूजित करो । हे द्यावा-पृथिवि ! देवों के साथ दिव्य ऐश्वर्य देने के लिए आप हमारे पास पधारें ॥२ ॥



५५७४. **उतो हि वां रत्नधेयानि सन्ति पुरूणि द्यावापृथिवी सुदासे ।**
अस्मे धत्तं यदसदस्कृधोयु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आपके पास जो अनेक प्रकार का दिव्य, रमणीय और अक्षय धन है, वह हमें प्रदान करें तथा कल्याण के साथ हमारा पालन करें ॥३ ॥

[सूक्त - ५४]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** वास्तोष्पति । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५५७५. **वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः ।**
यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१ ॥

हे वास्तोष्पते (गृह-पालक देव) ! आप हमें जगाएँ । हमारे घर में पुत्र-पौत्र आदि द्विपदों, गौ, अश्व आदि चतुष्पदों को नीरोग एवं सुखी करें । जो धन हम आपसे माँगें, वह हमें प्रदान करें ॥१ ॥

५५७६. **वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो ।**
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रति नो जुषस्व ॥२ ॥

हे वास्तोष्पते ! आप हमारे लिए कल्याणकारी धन का विस्तार करें । हे सोम ! हम आपकी कृपा से गौओं और घोड़ों के साथ नीरोग रहें । आप हमारा पुत्रवत् पालन करें ॥२ ॥

५५७७. **वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या ।**
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

हे वास्तोष्पते ! हम आपसे सुखकर, रमणीय एवं ऐश्वर्य-सम्पन्न स्थान प्राप्त करें । हमें प्राप्त हुए और प्राप्त होने वाले श्रेष्ठ धन की आप रक्षा करें । हमें सदा कल्याणकारी साधनों से सुरक्षित रखें ॥३ ॥

[सूक्त - ५५]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** १ वास्तोष्पति; २-८ इन्द्र (प्रस्वापिनी उपनिषद्) । **छन्द-** १ गायत्री, २-४ उपरिष्टाद् बृहती, ५-८अनुष्टुप् ।]

५५७८. **अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन् । सखा सुशेव एधि नः ॥१ ॥**

हे वास्तोष्पते (गृहपालक) ! आप हमारे हर प्रकार से मित्र हैं , हमारे हर प्रकार के रोगों का नाश करें ॥१ ॥

५५७९. **यदर्जुन सारमेय दतः पिशङ्ग यच्छसे ।**
वीव भ्राजन्त ऋष्टय उप स्रक्वेषु बप्सतो नि षु स्वप ॥२ ॥

श्वेत सरमा (देव-कुक्कुरी) के वंशधर पीले वर्ण वाले हे वास्तोष्पति देव !जब आप दाँत दिखाते हैं, तो वे शस्त्रों की तरह चमकते हैं ।आहार के समय वे विशेष शोभा पाते हैं-ऐसे (दाँतों वाले) देव आप सुख से सो जाएँ ॥२ ॥

५५८०. **स्तेनं राय सारमेय तस्करं वा पुनःसर ।**
स्तोतॄनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान्दुच्छुनायसे नि षु स्वप ॥३ ॥

हे सरमा के पुत्र ! आप चोरों-तस्करों के पास पुनः-पुनः जाएँ । आप इन्द्रदेव के भक्तों के निकट क्यों जाते हैं ? हमारे कार्यों में व्यवधान क्यों डालते हैं ? अभी आप भली प्रकार सो जाएँ ॥३ ॥



५५८१. **त्वं सूकरस्य दर्दृहि तव दर्दर्तु सूकरः ।**
स्तोतृनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान्दुच्छुनायसे नि षु स्वप ॥४ ॥

(श्वान के प्रति) तुम शूकर को डराओ, शूकर तुम्हें डराये । इन्द्र के भक्तों (श्रेष्ठ कर्मियों) की ओर क्यों दौड़ते हो ? हमें परेशान न करो, जाकर सो जाओ ॥४ ॥

५५८२. **सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः ।**
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः ॥५ ॥

(श्वान के प्रति) तुम्हारी माँ शयन करे । तुम्हारे पिता सोएँ । स्वयं (श्वान) तुम भी सो जाओ । गृहस्वामी, सभी बान्धव एवं परिकर के सब लोग सो जाएँ ॥५ ॥

५५८३. **य आस्ते यश्च चरति यश्च पश्यति नो जनः ।**
तेषां सं हन्मो अक्षाणि यथेदं हर्म्यं तथा ॥६ ॥

जो यहाँ ठहरता एवं आता-जाता रहता है और हमारी ओर देखता है, उनकी दृष्टि को हम राज-प्रासाद की तरह निश्चल बनाएँ ॥६ ॥

५५८४. **सहस्रशृङ्गो वृषभो यः समुद्रादुदाचरत् ।**
तेना सहस्येना वयं नि जनान्त्स्वापयामसि ॥७ ॥

सहस्र शृंगों (रश्मियों) वाला वृषभ (वर्षा करने वाला सूर्य) समुद्र से ऊपर आ गया है । शत्रु का पराभव करने वाले उन (सूर्य) के बल से हम (स्तोतागण) सबको सुख से शयन करा देते हैं ॥७ ॥

५५८५. **प्रोष्ठेशया वह्येशया नारीर्यास्तल्पशीवरीः ।**
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास्ताः सर्वाः स्वापयामसि ॥८ ॥

जो नारियाँ घर के आँगन में शयन करती हैं । जो राह चलते वाहन पर सोने वाली हैं, जो बिछौने पर सोती हैं, जो उत्तम गंध से सुवासित होकर श्रेष्ठ शय्याओं पर सोती हैं । हम उन्हीं की तरह से सभी स्त्रियों को सुखपूर्वक सुला देते हैं ॥८ ॥

[सूक्त - ५६]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- मरुद्गण । **छन्द**- त्रिष्टुप् , १-११ द्विपदा विराट् ।]

५५८६. **क ईं व्यक्ता नरः सनीळा रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः ॥१ ॥**

एक ही तरह के गृह में रहने वाले, कान्तियुक्त, उत्तम घोड़ों से युक्त, सबके हितैषी ये रुद्रगण कौन हैं ? ॥१॥

५५८७. **नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम् ॥२ ॥**

अपने जन्म के बारे में ये (मरुद्गण) स्वयं जानते हैं । दूसरा कोई नहीं जानता ॥२ ॥

५५८८. **अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन् ॥३ ॥**

अपने दिव्य साधनों को साथ लेकर जब ये मिलते हैं, उस समय श्येन (बाज़) पक्षी की तरह आपस में प्रतिस्पर्धा करते हैं ॥३ ॥

५५८९. **एतानि धीरो निण्या चिकेत पृश्निर्यदूधो मही जभार ॥४ ॥**



बुद्धिमान् मनुष्य इन श्वेतवर्ण वाले मरुतों को जानते हैं । मरुतों की माता ने इन्हें अंतरिक्ष में अथवा अपने उदर में धारण कर रखा था ॥४ ॥

५५९०. सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु सनात्सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम् ॥५ ॥

वीर मरुतों के कारण वे मानवी शक्ति को बढ़ाने वाली और शत्रुहन्ता वीर पुत्र वाली हैं ॥५ ॥

५५९१. यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया सम्मिश्ला ओजोभिरुग्राः ॥६ ॥

वे वीर मरुद्गण आवश्यकता पड़ने पर (शत्रु पर) प्राण-घातक हमला करने वाले हैं । श्रेष्ठ अलंकारों से युक्त एवं तेजस्वी हैं ॥६ ॥

५५९२. उग्रं व ओजः स्थिरा शवांस्यधा मरुद्भिर्गणस्तुविष्मान् ॥७ ॥

हे मरुतो ! आप बुद्धिमान् हैं । आपके कारण यह (देव) संगठन बलवान् हुआ ।आपका बल स्थिर एवं तेज उग्र है ॥७ ॥

५५९३. शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि धुनिर्मुनिरिव शर्धस्य धृष्णोः ॥८ ॥

हे मरुद्गणो ! आप शोभायमान बल वाले हैं । आप मन से (शत्रुहनन के निमित्त) क्रोध (भी) करते हैं और आपका दूसरों को अभिभूत करने वाला वेग वृक्षादिकों को कम्पित करके उसी तरह शब्दायमान कर देता है, जैसे (मननशील) मुनिगण (स्तोत्रादि पाठ के समय) शब्दोच्चार करते हैं ॥८ ॥

५५९४. सनेम्यस्मद्युयोत दिद्युं मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः ॥९ ॥

हे मरुद्गणो ! आपके शत्रु-विनाशक, क्रूर-चिन्तन से हमारा अहित न हो । हमें श्रेष्ठ शक्ति दें । आपके तेजस्वी शस्त्र का हम पर आघात न हो ॥९ ॥

५५९५. प्रिया वो नाम हुवे तुराणामा यत्तृपन्मरुतो वावशानाः ॥१० ॥

हे वीर मरुत् ! आप वेगपूर्वक कार्य करने वाले हैं । हम प्रिय वाणी से आपके श्रेष्ठ नामों को लेकर पुकारते हैं, जिससे आप प्रसन्न हों ॥१० ॥

५५९६. स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्व१ः शुम्भमानाः ॥११ ॥

गतिमान्, श्रेष्ठ वीर मरुत् अस्त्र-शस्त्रों और आभूषणों को धारण करके अतिशय सुशोभित हो रहे हैं ॥११ ॥

५५९७. शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ॥१२ ॥

हे वीर मरुतो ! आप पवित्र अन्न से पोषित, पवित्र जीवन वाले हैं । आपके लिए हम हिंसारहित यज्ञ करते हैं, क्योंकि आप सत्य के व्यवहार से सत्यमय जीवन जीकर अन्यों को भी श्रेष्ठ बनाते हैं ॥१२ ॥

५५९८. अंसेष्वा मरुतः खादयो वो वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः ।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः ॥१३ ॥

हे मरुत् वीरो ! आपके कंधों पर आभूषण एवं वक्ष पर सोने के हार सुशोभित हैं । वर्षा के समय आप बिजली की तरह चमकीले अस्त्रों की वर्षा करके अपनी स्वधा शक्ति का परिचय देते हैं । जिस प्रकार वर्षा के समय बिजली शोभा पाती है, उसी प्रकार (शत्रुओं पर) आयुधों की वर्षा करके आप अपनी स्वधा शक्ति का परिचय देते हैं ॥१३ ॥



५५९९. **प्र बुध्न्या व ईरते महांसि प्र नामानि प्रयज्यवस्तिरध्वम् ।**
सहस्रियं दम्यं भागमेतं गृहमेधीयं मरुतो जुषध्वम् ॥१४ ॥

हे पूज्य मरुतो ! आपका प्रखर तेज अन्तरिक्ष में प्रवाहित रहता है । आप जल की वृष्टि करें । हजारों गृहों के गृहस्वामियों द्वारा प्रदत्त इस यज्ञ भाग को ग्रहण करें ॥१४ ॥

५६००. **यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथेत्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन् ।**
मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात नू चिद्यमन्य आदभदरावा ॥१५ ॥

हे मरुत् वीर ! यदि आप तेजस्वी, ज्ञानी मनुष्यों के द्वारा यज्ञ में की गई स्तुति को भली प्रकार जानते हों, तो श्रेष्ठ पुत्रयुक्त ऐसा धन प्रदान करें, जो शत्रु के द्वारा विनष्ट न हो ॥१५ ॥

५६०१. **अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः ।**
ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीळिनः पयोधाः ॥१६ ॥

मरुद्गण तीव्रगामी अश्व की तरह निरन्तर गमनशील हैं । वे यज्ञ दर्शक की तरह पवित्र मन वाले, राजकुमारों जैसे सुन्दर एवं खेलने वाले शिशु की तरह हैं । वे जल के धारक हैं ॥१६ ॥

५६०२. **दशस्यन्तो नो मरुतो मृळन्तु वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके ।**
आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम् ॥१७ ॥

शत्रुओं का संहार कर द्युलोक एवं पृथिवी लोक को संरक्षण देने वाले मरुद्गण हमें सुखी बनाएँ । आपके गो (मेघ स्थित जल) एवं मनुष्यों के लिए घातक शस्त्र हमारे पास न आएँ । हमें सुख के साधन प्रदान करें ॥१७ ॥

५६०३. **आ वो होता जोहवीति सत्तः सत्राचीं रातिं मरुतो गृणानः ।**
य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः सो अद्वयावी हवते व उक्थैः ॥१८ ॥

हे वीर मरुतो ! यज्ञशाला में बैठे हुए याजक आपकी दानवीरता की प्रशंसा करके बार-बार आपका आवाहन करते हैं । हे वर्षणशील (कामनाओं की पूर्ति करने वाले) ! जो याजक कर्मनिष्ठ एवं यजमान का संरक्षक है, वह माया-मुक्त होकर आपकी स्तुति करता है ॥१८ ॥

५६०४. **इमे तुरं मरुतो रामयन्तीमे सहः सहस आ नमन्ति ।**
इमे शंसं वनुष्यतो नि पान्ति गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति ॥१९ ॥

ये मरुद्गण त्वरित गति से कार्य करने वाले यजमान से प्रसन्न होते हैं, अपने पराक्रम से दूसरे बलवानों को झुका देते हैं (अभिभूत कर देते हैं), स्तोतागणों की हिंसकों (व्यक्तियों-प्राणियों) से रक्षा करते हैं तथा यज्ञ न करने वालों से अत्यधिक रुष्ट हो जाते हैं ॥१९ ॥

५६०५. **इमे रध्रं चिन्मरुतो जुनन्ति भृमिं चिद्यथा वसवो जुषन्त ।**
अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे ॥२० ॥

ये मरुद्गण धनी और दरिद्र दोनों को समान रूप से संरक्षण प्रदान करते हैं । मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाले हे वीरो ! आप हमें अंधकार से दूर कर पुत्र-पौत्रादि सहित सब प्रकार के सुख प्रदान करें ॥२० ॥

५६०६. **मा वो दात्रान्मरुतो निरराम मा पश्चाद्दघ्म रथ्यो विभागे ।**
आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये३ यदीं सुजातं वृषणो वो अस्ति ॥२१ ॥



हे रथारूढ़ मरुतो ! अपनी सम्पत्ति-दान के समय आप हमें अलग न करें । अपनी दिव्य सम्पत्ति में हमें भी भागीदार बनाएँ ॥२१ ॥

५६०७. **सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ।**
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासस्त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः ॥२२ ॥

हे रुद्रपुत्र मरुतो ! जिस समय विक्रमशाली योद्धा उत्साहित होकर नदियों में, ओषधि क्षेत्रों एवं प्रजाओं में शत्रुओं की तरह क्रोधसहित आक्रमण करें, तब उस संग्राम में आप हमें संरक्षण प्रदान करें ॥२२ ॥

५६०८. **भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्युक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित् ।**
मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साळ्हा मरुद्भिरित्सनिता वाजमर्वा ॥२३ ॥

हे मरुतो !हमारे पूर्वजों के लिए आपने अनेक कार्य किए हैं । पहले भी आपने प्रशंसित कार्य किए हैं । ओजस्वी व्यक्ति आपसे सहयोग पाकर शत्रुजयी होता है ।आपकी कृपा से स्तोतागण अन्नादि प्राप्त करते हैं ॥२३

५६०९. **अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु जनानां यो असुरो विधर्ता ।**
अपो येन सुक्षितये तरेमाध स्वमोको अभि वः स्याम ॥२४ ॥

हे मरुतो ! हमें (ऐसी) बलवान् संतति प्राप्त हो, जो बुद्धिमान् और शत्रुओं का विनाश करने वाली हो । जिस की सहायता से हम शत्रुओं का विनाश कर सकें और आपकी कृपा से अपने अभीष्ट स्थान पर प्रतिष्ठित हो सकें ॥२४॥

५६१०. **तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।**
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५ ॥

इन्द्र, वरुण, मित्र, अग्नि, जल, ओषधि और वृक्षदेव हमारी प्रार्थना स्वीकार करें । मरुतों की छत्र-छाया में हम सुखी रहें । आप सब हमें कल्याणकारी साधनों से सुरक्षित रखें ॥२५ ॥

[सूक्त - ५७]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- मरुद्‌गण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५६११. **मध्वो वो नाम मारुतं यजत्राः प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ।**
ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी पिन्वन्त्युत्सं यदयासुरुग्राः ॥१ ॥

हे यजनीय मरुतो ! आपके सुन्दर नामों से स्तोतागण प्रार्थना करते हैं । आप पृथिवी और अंतरिक्ष को कम्पायमान कर सर्वत्र गमनशील हैं । आपकी कृपा से सर्वत्र जल वृष्टि होती है ॥१ ॥

५६१२. **निचेतारो हि मरुतो गृणन्तं प्रणेतारो यजमानस्य मन्म ।**
अस्माकमद्य विदथेषु बर्हिरा वीतये सदत पिप्रियाणाः ॥२ ॥

हे मरुतो ! आप अपने भक्तों पर प्रसन्न होकर,उन्हें ढूँढ़कर उनकी मनोकामना पूरी करते हैं । आप हम पर प्रसन्न होकर, हमारी यज्ञशाला में कुशों के बने आसन पर विराजमान होकर सोमपान करें ॥२ ॥

५६१३. **नैतावदन्ये मरुतो यथेमे भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः ।**
आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम् ॥३ ॥

ये मरुद्‌गण जितने उदारचेता हैं, वैसा कोई नहीं है । ये वीर आभूषण, वस्त्र एवं आयुधों से अपने तेज को प्रदीप्त करते हैं । आकाश और पृथिवी को सुशोभित करते हैं ॥३ ॥



५६१४. ऋधक्सा वो मरुतो दिद्युदस्तु यद्व आगः पुरुषता कराम ।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥४ ॥

हे पूज्य वीरो ! आपके निमित्त हमसे जो गलतियाँ हुई हों, उन्हें क्षमा करें । हम आपके कोपभाजन न बनें । आप हमें अन्नदान करने वाली बुद्धि प्रदान करें ॥४ ॥

५६१५. कृते चिदत्र मरुतो रणन्तानवद्यासः शुचयः पावकाः ।
प्र णोऽवत सुमतिभिर्यजत्राः प्र वाजेभिस्तिरत पुष्यसे नः ॥५ ॥

हे अनिन्दनीय पवित्र मरुतो ! हमारी यज्ञशाला में आप विहरण करें । हे पूज्य वीरो ! आपकी श्रेष्ठ बुद्धि हमारे कल्याण में लगी रहे । हम आपकी सुन्दर स्तुति करते हैं । हमें अन्न के द्वारा पोषण प्रदान करें ॥५ ॥

५६१६. उत स्तुतासो मरुतो व्यन्तु विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि ।
ददात नो अमृतस्य प्रजायै जिगृत रायः सूनृता मघानि ॥६ ॥

नेतृत्व प्रदान करने वाले मरुद्‌गण अनेक नामों से प्रशंसित होकर हमारे द्वारा हमारी प्रजाओं (संतानों) को अमृत प्रदान करें तथा याजकों को सन्मार्ग से प्राप्त होनेवाला महान् धन प्रदान करें ॥६ ॥

५६१७. आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात ।
ये नस्त्मना शतिनो वर्धयन्ति यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे प्रशंसनीय मरुतो ! आप सर्वत्र व्याप्त होने वाले यज्ञ में ज्ञानियों की ओर अभिमुख हों । स्तोताओं का सदा कल्याण करें । ये स्वयं ही यजमान को संतानादि से परिपूर्ण बना देते हैं । आप कल्याणकारी साधनों से हमें सुरक्षा प्रदान करें ॥७ ॥

[सूक्त - ५८]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- मरुद्‌गण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५६१८. प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान् ।
उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवंशात् ॥१ ॥

हे स्तोताओ ! आप देवस्थान में निवास करने वाले मरुतों की पूजा करो । जो अपने दिव्य प्रभाव से विनाशकारी आपदाओं से बचाते हैं और पृथिवी तथा अन्तरिक्ष में स्वर्गीय परिस्थितियाँ बनाते हैं ॥१ ॥

५६१९. जनूश्चिद्वो मरुतस्त्वेष्येण भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः ।
प्र ये महोभिरोजसोत सन्ति विश्वो वो यामन्भयते स्वर्दृक् ॥२ ॥

हे विकराल रूप वाले मरुतो ! आपका जन्म रुद्रदेव से हुआ है । आपका बल और तेज दिग्दिगन्त में व्याप्त है । आपके प्रवाहित होने पर सूर्यदेव पर दृष्टि रखने वाला (सारा) जगत् भयभीत हो जाता है ॥२ ॥

५६२०. बृहद्वयो मघवद्भ्यो दधात जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः ।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ॥३ ॥

हे मरुद्‌गण ! आप यज्ञ करने वाले को धन-धान्य से परिपूर्ण करें । हमारी स्तुतियों से आप प्रसन्न हों । जिस मार्ग से आप जाते हैं, उसका अनुसरण करने पर प्राणी समुदाय विनष्ट नहीं होता । आप हमें मनोभिलषित ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३ ॥



५६२१. युष्मोतो विप्रो मरुतः शतस्वी युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री ।
युष्मोतः सम्राळुत हन्ति वृत्रं प्र तद्वो अस्तु धूतयो देष्णम् ॥४ ॥

हे मरुत् वीरो ! आपके द्वारा रक्षित स्तोता (ज्ञानी) सहस्रों धनों का स्वामी होता है । आपके द्वारा संरक्षित चंचल (अश्व) शत्रुजयी होता है । आपसे संरक्षण प्राप्त कर राजा भी शत्रुओं का विनाश करता है । आपके द्वारा दिया गया धन वृद्धि को प्राप्त हो ॥४ ॥

५६२२. ताँ आ रुद्रस्य मीळ्हुषो विवासे कुविन्नंसन्ते मरुतः पुनर्नः ।
यत्सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविरव तदेन ईमहे तुराणाम् ॥५ ॥

मनोभिलषित ऐश्वर्य प्रदान करने वाले रुद्रपुत्र मरुतों की हम उपासना करते हैं । बार-बार हमें आपका संरक्षण प्राप्त होता है । शीघ्रता में हुए ज्ञाताज्ञात पापों को हम आपकी प्रार्थना से धो देंगे ॥५ ॥

५६२३. प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोनामिदं सूक्तं मरुतो जुषन्त ।
आराच्चिद्द्वेषो वृषणो युयोत यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हम ऐश्वर्यवान् मरुतों की स्तुति करते हैं । वे हमारी प्रार्थना से प्रसन्न हों । हमारे शत्रुओं को दूर से ही हटा दें । हमें सदा श्रेष्ठ साधनों से सुरक्षित रखें ॥६ ॥

[सूक्त - ५९]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** मरुद्गण, १२ रुद्र (मृत्यु विमोचनी) । **छन्द-** प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती), ७-८ त्रिष्टुप्, ९-११ गायत्री, १२ अनुष्टुप् ।]

५६२४. यं त्रायध्व इदमिदं देवासो यं च नयथ ।
तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन्मरुतः शर्म यच्छत ॥१ ॥

हे अग्नि, वरुण, मित्र, अर्यमा और मरुत् देवो ! आप जिन्हें श्रेष्ठ मार्ग पर चलाते हों, उन्हें सुख भी प्रदान करें । अपने उपासकों को भय से मुक्त करें ॥१ ॥

५६२५. युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय ईजानस्तरति द्विषः ।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ॥२ ॥

हे देवो ! आपसे संरक्षित होकर शुभ दिवस में जो यज्ञ करता है, वह शत्रुओं को पराजित करता है । जो बहुत सा द्रव्य प्रदान करता है, वह अपनी हर तरह से वृद्धि (उन्नति) करता है ॥२ ॥

५६२६. नहि वश्चरमं चन वसिष्ठः परिमंसते ।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबत कामिनः ॥३ ॥

हे मरुतो ! आपमें जो कनिष्ठ (मन्द) हैं, उनकी भी स्तुति वसिष्ठ ऋषि करते हैं । आज हमारे इस यज्ञ में एक साथ बैठकर आप सभी (उनचासों मरुत्) सोमरस का पान करें ॥३ ॥

५६२७. नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति यस्मा अराध्वं नरः ।
अभि व आवर्त्सुमतिर्नवीयसी तूयं यात पिपीषवः ॥४ ॥

हे नेतृत्व क्षमता-सम्पन्न मरुद्गण ! आपसे संरक्षित व्यक्ति युद्ध में आपके रक्षण-साधनों से सुरक्षित रहता है । आपका नित-नव संरक्षण हमें प्राप्त हो । यथेच्छ सोम पान के लिए आप हमारे पास पधारें ॥४ ॥



५६२८. **ओ षु घृष्विराधसो यातनान्धांसि पीतये।**
इमा वो हव्या मरुतो ररे हि कं मो ष्व१न्यत्र गन्तन ॥५ ॥

हे मरुद्गण ! आपकी शक्ति संगठित है। हव्य ग्रहण करने के लिए आप यहाँ पधारें, अन्यत्र कहीं न जाएँ ॥५ ॥

५६२९. **आ च नो बर्हिः सदताविता च नः स्पार्हाणि दातवे वसु।**
अस्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ स्वाहेह मादयाध्वै ॥६ ॥

आप हमारे बिछाये हुए कुशाओं पर विराजमान हों और मनोभिलषित सम्पत्ति प्रदान करें। किसी को कष्ट न देने वाले हे वीरो ! इस यज्ञ में आप अपना सोमरस रूपी स्वाहुति भाग स्वीकार करें और आनन्दित हों ॥६ ॥

५६३०. **सस्वश्चिद्धि तन्व१ः शुम्भमाना आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन्।**
विश्वं शर्धो अभितो मा नि षेद नरो न रण्वाः सवने मदन्तः ॥७ ॥

अविज्ञात रूप से रहने वाले मरुद्गण नील वर्ण वाले हंसों की तरह अलंकारों से सुसज्जित होकर सोमपान कर आनन्दित होते हैं। रमणीय पुरुषों की तरह मरुद्गण हमारे चारों ओर बैठें ॥७ ॥

५६३१. **यो नो मरुतो अभि दुर्हणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति।**
द्रुहः पाशान्प्रति स मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्मना हन्तना तम् ॥८ ॥

हे वीर मरुतो ! जो अशिष्ट, तिरस्कृत करने वाले व्यक्ति हमारे मन को व्यग्र करना चाहते हैं, जो लोग पापों से द्रोह करने वाले वरुण के पाश में हमें बाँधना चाहते हैं, उन्हें आप अपने तीक्ष्ण आयुधों से नष्ट कर दें ॥८ ॥

५६३२. **सान्तपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन। युष्माकोती रिशादसः ॥९ ॥**

शत्रुओं को संताप देने वाले तथा उनका नाश करने वाले हे मरुतो ! आप इस हव्य को ग्रहण करके हमें संरक्षण प्रदान करें ॥९ ॥

५६३३. **गृहमेधास आ गत मरुतो माप भूतन। यष्माकोती सुदानवः ॥१० ॥**

गृहस्थ धर्मपालक, दानवीर हे मरुतो ! आप अपने रक्षा-साधनों के साथ यहाँ पधारें तथा हमसे दूर न जाएँ ॥१० ॥

५६३४. **इहेह वः स्वतवसः कवयः सूर्यत्वचः। यज्ञं मरुत आ वृणे ॥११ ॥**

सूर्य के समान तेजस्वी, स्वयं प्रवृद्ध- बल से युक्त, ज्ञानी हे मरुतो ! यहाँ यज्ञ में हम आपका आवाहन करते हैं ॥११ ॥

५६३५. **त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।**
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥१२ ॥

हम सुरभित पुण्य, कीर्ति एवं पुष्टिवर्धक (पोषण साधनों को बढ़ाने वाले) तथा तीन प्रकार से संरक्षण देने वाले (त्र्यम्बक) भगवान् की उपासना करते हैं। वे रुद्रदेव हमें उर्वारुक फल (ककड़ी-खरबूजा आदि) की तरह मृत्युबन्धन से मुक्त करें, (परन्तु) अमरता के सूत्रों से दूर न करें ॥१२ ॥

[आचार्य सायण ने "त्र्यंबक" का अर्थ त्रिदेवों-ब्रह्मा, विष्णु, महेश के पितृरूप देव भी किया है। जिस प्रकार ककड़ी-खरबूजा आदि पकने पर डंठल से सहज छूट जाते हैं, वैसे ही हम मृत्यु या संसार से मुक्त हो जाएँ; किन्तु अमृतत्व से जुड़े रहें, ऐसी प्रार्थना की गई है।]



[सूक्त - ६०]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- मित्रावरुण; १ सूर्य । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५६३६. **यदद्य सूर्य ब्रवोऽनागा उद्यन्मित्राय वरुणाय सत्यम् ।**
वयं देवत्रादिते स्याम तव प्रियासो अर्यमन् गृणन्तः ॥१ ॥

हे सूर्यदेव ! आज उदय होते ही अनुष्ठान के समय आप हमें निष्पाप बना दें । हे अदिते ! हम मित्रावरुण देवों के प्रियपात्र हों । हे अर्यमन् (दाता) ! हम आपकी कृपा के प्रियपात्र हों । हे अर्यमन् ! आपकी कृपा पाने के लिए हम प्रार्थना करते हैं ॥१ ॥

५६३७. **एष स्य मित्रावरुणा नृचक्षा उभे उदेति सूर्यो अभि ज्मन् ।**
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपा ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन् ॥२ ॥

हे मित्र और वरुण देवो ! ये सूर्यदेव, पृथ्वी और अन्तरिक्ष में उदय होकर सबका पोषण करते हुए मनुष्यों के अच्छे-बुरे कार्यों (कर्मों) को देखते हैं ॥२ ॥

५६३८. **अयुक्त सप्त हरितः सधस्थाद्या ईं वहन्ति सूर्यं घृताचीः ।**
धामानि मित्रावरुणा युवाकुः सं यो यूथेव जनिमानि चष्टे ॥३ ॥

हे मित्रावरुण देवो ! जलदाता, हरणशील, सात घोड़ों (सप्तवर्णी किरणों) द्वारा सूर्यदेव का रथ चलता है । वे (सूर्यदेव) आप दोनों को सन्तुष्ट करके गोपालन करने वाले की तरह प्राणि-जगत् का पालन करते हैं ॥३ ॥

५६३९. **उद्वां पृक्षासो मधुमन्तो अस्थुरा सूर्यो अरुहच्छुक्रमर्णः ।**
यस्मा आदित्या अध्वनो रदन्ति मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः ॥४ ॥

हे मित्रावरुण देवो ! पवित्र हव्यादि अन्न आपको समर्पित है । मित्र, वरुण और अर्यमा देव के बनाए रास्ते से सूर्य भगवान् अंतरिक्ष में गमन करते हैं ॥४ ॥

५६४०. **इमे चेतारो अनृतस्य भूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति ।**
इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोणे शग्मासः पुत्रा अदितेरदब्धाः ॥५ ॥

ये आदित्य, मित्र, वरुण, अर्यमा देवगण पापनाशक एवं सर्वत्र मंगल करने वाले हैं । ये अदितिपुत्र किसी से डरने वाले नहीं हैं । सदैव सुख प्रदान करने वाले ये यज्ञ द्वारा वृद्धि पाते हैं ॥५ ॥

५६४१. **इमे मित्रो वरुणो दूळभासोऽचेतसं चिच्चितयन्ति दक्षैः ।**
अपि क्रतुं सुचेतसं वतन्तस्तिरश्चिदंहः सुपथा नयन्ति ॥६ ॥

ये मित्र, वरुण और अर्यमादेव किसी से दबाए नहीं जा सकते । ये मूर्खों को भी ज्ञानवान् बनाते हैं । बुद्धिमान् कर्मनिष्ठ व्यक्ति को आगे बढ़ाते और पापियों को दण्ड देते हैं ॥६ ॥

५६४२. **इमे दिवो अनिमिषा पृथिव्याश्चिकित्वांसो अचेतसं नयन्ति ।**
प्रव्राजे चिन्नद्यो गाधमस्ति पारं नो अस्य विष्पितस्य पर्षन् ॥७ ॥

ये आकाश और पृथ्वीलोक की सारी जानकारियाँ रखने वाले अज्ञानी को भी ज्ञानवान् बनाकर श्रेष्ठ कर्मों में लगा देते हैं । इनकी प्रबल सामर्थ्य से गहरी नदियों में भी भूतल (ठोस आधार) मिल जाता है । ऐसे देव हमें कर्मों से पार लगाएँ ॥७ ॥



५६४३. **यद् गोपावददितिः शर्म भद्रं मित्रो यच्छन्ति वरुणः सुदासे ।**
तस्मिन्ना तोकं तनयं दधाना मा कर्म देवहेळनं तुरासः ॥८ ॥

मित्र, अर्यमा और वरुणदेव याजकों को जो कल्याणकारी और स्तुत्य सुख प्रदान करते हैं, वही सुख हमारी संततियों के लिए प्राप्त हो । शीघ्रता से कार्य करते समय हम कोई भूल न करें ॥८ ॥

५६४४. **अव वेदिं होत्राभिर्यजेत रिपः काश्चिद्वरुणध्रुतः सः ।**
परि द्वेषोभिरर्यमा वृणक्तूरुं सुदासे वृषणा उ लोकम् ॥९ ॥

यज्ञ वेदी पर बैठ कर जो देवों की प्रार्थना नहीं करता, वह वरुणदेव द्वारा मारा जाता है । मित्रावरुणदेव श्रेष्ठ दान करने वालों को सद्गति प्रदान करें तथा राक्षसों से बचाएँ ॥९ ॥

५६४५. **सस्वश्चिद्धि समृतिस्त्वेष्येषामपीच्येन सहसा सहन्ते ।**
युष्मद्भिया वृषणो रेजमाना दक्षस्य चिन्महिना मृळता नः ॥१० ॥

इन वीरों की संगति गूढ़ तथा तेजस्वी कही गई है । ये अपने गुप्त बल से शत्रु को पराजित करते एवं भय से कँपाते हैं । ऐसे देव उसी बल से हमें सुखी बनाएँ ॥१० ॥

५६४६. **यो ब्रह्मणे सुमतिमायजाते वाजस्य सातौ परमस्य रायः ।**
सीक्षन्त मन्युं मघवानो अर्य उरु क्षयाय चक्रिरे सुधातु ॥११ ॥

जो यजमान अन्न-धन दान के समय श्रेष्ठ स्तुति करता है, उसे मित्रादि देवगण ध्यानपूर्वक श्रवण करते हैं तथा स्तोतागणों को विशाल निवास प्रदान करते हैं ॥११ ॥

५६४७. **इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।**
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१२ ॥

हे मित्रावरुण देवो ! यह उपासना, यज्ञादि कर्म आपको प्रसन्न करने के लिए हैं । आप सभी आपत्तियों से बचाकर, श्रेष्ठ साधनों से हमारा पालन करें ॥१२ ॥

[सूक्त - ६१]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- मित्रावरुण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५६४८. **उद्वां चक्षुर्वरुण सुप्रतीकं देवयोरेति सूर्यस्ततन्वान् ।**
अभि यो विश्वा भुवनानि चष्टे स मन्युं मर्त्येष्वा चिकेत ॥१ ॥

हे मित्रावरुण देवो ! आप तेजस्वी हैं । आप देवों के नेत्रवत् सूर्यदेव जैसा सुन्दर प्रकाश फैलाते हुए आकाश में गमन करते हैं तथा सारे भुवनों को देखते हुए लोगों के कर्मों एवं मनोभावों को जानते हैं ॥१ ॥

५६४९. **प्र वां स मित्रावरुणावृतावा विप्रो मन्मानि दीर्घश्रुदियर्ति ।**
यस्य ब्रह्माणि सुक्रतू अवाथ आ यत्क्रत्वा न शरदः पृणैथे ॥२ ॥

हे मित्रावरुणो ! वे सत्यनिष्ठ, बहुश्रुतज्ञानी (वसिष्ठ) यज्ञकर्ता आपके स्तोत्र का पाठ करते हैं । उन ब्राह्मण की आप दोनों सुरक्षा करते हैं । आप अनन्तकाल से श्रेष्ठकर्मा उन (वसिष्ठ) की सुरक्षा करते हैं ॥२ ॥



५६५०. **प्रोरोर्मित्रावरुणा पृथिव्याः प्र दिव ऋष्वाद्बृहतः सुदानू ।**
स्पशो दधाथे ओषधीषु विक्ष्वृधग्यतो अनिमिषं रक्षमाणा ॥३ ॥

हे मित्रावरुणो ! आपने द्युलोक के साथ अति विस्तृत पृथ्वी की परिक्रमा की है । हे उत्तम दान देने वाले ! वनस्पतियों और प्रजाओं में आपका ही सौन्दर्य झलकता है । यज्ञ करने वालों की आप विशेष सुरक्षा करते हैं ॥३ ॥

५६५१. **शंसा मित्रस्य वरुणस्य धाम शुष्मो रोदसी बद्बधे महित्वा ।**
अयन्मासा अयज्वनामवीराः प्र यज्ञमन्मा वृजनं तिराते ॥४ ॥

हे ऋषे ! आप तेजस्वी मित्र और वरुण देवों की स्तुति करें । वे अपने पराक्रम से द्युलोक एवं पृथ्वीलोक को संतुलित रखे हुए हैं । यज्ञरहित व्यक्ति सन्तान रहित हों तथा यज्ञ करने वाले अपने बुद्धि-बल को बढ़ाएँ ॥४ ॥

५६५२. **अमूरा विश्वा वृषणाविमा वां न यासु चित्रं ददृशे न यक्षम् ।**
द्रुहः सचन्ते अनृता जनानां न वां निण्यान्यचिते अभूवन् ॥५ ॥

हे प्राज्ञदेवो ! आपकी ये जो स्तुतियाँ की गई हैं, इनमें अतिशयोक्ति कुछ भी नहीं है । झूठी प्रशंसा करने वाले लोग जनद्रोही होते हैं । इसलिए आपके ये स्तोत्र भ्रम में डालने वाले नहीं होते ॥५ ॥

५६५३. **समु वां यज्ञं महयं नमोभिर्हुवे वां मित्रावरुणा सबाधः ।**
प्र वां मन्मान्यृचसे नवानि कृतानि ब्रह्म जुजुषन्निमानि ॥६ ॥

हे मित्रावरुणो ! आपके यज्ञ को स्तुतियों के साथ सम्पन्न कर रहे हैं । हम बाधाग्रसित हैं, इसलिए आपको बुलाते हैं । आपकी प्रसन्नता के लिए नये स्तोत्रों का पाठ कर रहे हैं ॥६ ॥

५६५४. **इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।**
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे देवो ! यज्ञ के द्वारा की गई यह उपासना आप दोनों के लिए है । आप हमें समस्त विपत्तियों से मुक्त करें । सदैव कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें ॥७ ॥

[सूक्त - ६२]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** १-३ सूर्य; ४-६ मित्रावरुण । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५६५५. **उत्सूर्यो बृहदर्चींष्यश्रेत्पुरु विश्वा जनिम मानुषाणाम् ।**
समो दिवा ददृशे रोचमानः क्रत्वा कृतः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ॥१ ॥

ये सूर्यदेव ऊपर उठकर प्रभूत तेजस् को प्राप्त करते हुए सबके आश्रयदाता बनते हैं । दिन में प्रकाशित होने पर सबको एक जैसे दिखाई देते हैं । यज्ञकर्ताओं द्वारा पूज्य वे सूर्यदेव सबके निर्माता हैं, जिन्हें परमात्मा ने स्वयं बनाया है ॥१ ॥

५६५६. **स सूर्य प्रति पुरो न उद् गा एभिः स्तोमेभिरेतशेभिरेवैः ।**
प्र नो मित्राय वरुणाय वोचोऽनागसो अर्यम्णे अग्नये च ॥२ ॥

हे सूर्यदेव ! आप हमारे स्तोत्रों से प्रसन्न होकर, अपने गमनशील अश्वों पर चढ़कर आकाशमार्ग से गमन करें । मित्र, वरुण, अर्यमा एवं अग्निदेवों को हमारी निर्दोष भावना की जानकारी दें ॥२ ॥



५६५७. **वि नः सहस्रं शुरुधो रदन्त्वृतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।**
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कमा नः कामं पूपुरन्तु स्तवानाः ॥३ ॥

मानव मात्र को दुःख से मुक्त करने वाले, सत्यव्रती मित्र, वरुण और अग्निदेव हमें सहस्रों प्रकार के आनन्ददायक एवं प्रशंसनीय धन दें । प्रार्थना से प्रसन्न होकर वे हमारी मनोकामनाएँ पूर्ण करें ॥३ ॥

५६५८. **द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नो ये वां जज्ञुः सुजनिमान ऋष्वे ।**
मा हेळे भूम वरुणस्य वायोर्मा मित्रस्य प्रियतमस्य नृणाम् ॥४ ॥

हे विशाल द्यावा-पृथिवि ! हे अदिते ! आप हमें संरक्षण प्रदान करें । हम श्रेष्ठ जन्म वाले आपको जानते हैं । हमें वायु, वरुण और श्रेष्ठ मानवों के क्रोध से बचाएँ ॥४ ॥

५६५९. **प्र बाहवा सिसृतं जीवसे न आ नो गव्यूतिमुक्षतं घृतेन ।**
आ नो जने श्रवयतं युवाना श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा ॥५ ॥

हे चिरयुवा मित्रावरुणदेवो ! आप हमारी प्रार्थना से प्रसन्न होकर, भुजाएँ फैलाकर, उदारतापूर्वक हमें दीर्घजीवन प्रदान करें । हमारे जाने योग्य क्षेत्रों को घृत (पोषक रस) से सिंचित करें । हमें ख्याति प्रदान करें तथा हमारे आवाहन को सुनें ॥५ ॥

५६६०. **नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु ।**
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे मित्र, वरुण, अर्यमा देवो ! आप हमारी संततियों के लिए पवित्र धन दें । हमारे सभी गन्तव्य मार्ग सरल हों । आप श्रेष्ठ साधनों से हमारा पालन करें ॥६ ॥

[सूक्त - ६३]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- १-४ एवं ५ का पूर्वार्द्ध सूर्य, ५ का उत्तरार्द्ध एवं ६ मित्रावरुण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५६६१. **उद्वेति सुभगो विश्वचक्षाः साधारणः सूर्यो मानुषाणाम् ।**
चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्य देवश्चर्मेव यः समविव्यक् तमांसि ॥१ ॥

मित्रावरुण की आँख की तरह सुन्दर भाग्य वाले, समद्रष्टा सूर्यदेव चमड़े (बिछावन) की तरह अंधकार को समेटते हुए उदित हो रहे हैं ॥१ ॥

५६६२. **उद्वेति प्रसवीता जनानां महान् केतुरर्णवः सूर्यस्य ।**
समानं चक्रं पर्याविवृत्सन्यदेतशो वहति धूर्षु युक्तः ॥२ ॥

मानवी सृष्टि करने वाले, सबके ज्ञानदाता एवं जीवन देने वाले, ये सूर्यदेव सबके समय-चक्र को बदलने की इच्छा से उदित होकर हरि (हरित वर्ण अथवा हरि संज्ञक) अश्वों से जुते हुए रथ में चलते हैं ॥२ ॥

५६६३. **विभ्राजमान उषसामुपस्थाद् रेभैरुदेत्यनुमद्यमानः ।**
एष मे देवः सविता चच्छन्द यः समानं न प्रमिनाति धाम ॥३ ॥

अत्यन्त प्रकाशमान सूर्यदेव अपने भक्तों की स्तुति सुनते हुए उषाओं के बीच में उदित होते हैं । ये हमारी मनोकामनाओं को पूर्ण करते हैं और अपने तेज को कभी कम नहीं होने देते ॥३ ॥



५६६४. **दिवो रुक्म उरुचक्षा उदेति दूरेअर्थस्तरणिर्भ्राजमानः ।**
नूनं जनाः सूर्येण प्रसूता अयन्नर्थानि कृणवन्नपांसि ॥४ ॥

ये विशेष तेजस्वी सूर्यदेव दूर विराजमान होकर भी द्युलोक की शोभा बढ़ाते हुए उदित होते हैं । निश्चित ही, सूर्यदेव की प्रेरणा से लोग कर्म में प्रवृत्त होते हैं ॥४ ॥

५६६५. **यत्रा चक्रुरमृता गातुमस्मै श्येनो न दीयन्नन्वेति पाथः ।**
प्रति वां सूर उदिते विधेम नमोभिर्मित्रावरुणोत हव्यैः ॥५ ॥

देवताओं ने इन सूर्यदेव के लिए जिस मार्ग को बनाया है, वह (मार्ग) श्येन पक्षी की तरह अन्तरिक्ष से होकर जाता है । हे मित्रावरुण ! सूर्योदय होने पर यज्ञ और स्तोत्रों द्वारा हम आपका यजन करेंगे ॥५ ॥

५६६६. **नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु ।**
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे मित्र, वरुण और अर्यमा देवो ! आप हमें तथा हमारी संततियों को पवित्र धन प्रदान करें । हमारी प्रगति के सारे रास्ते निर्बाध हों । हमें कल्याणकारी साधनों से सुरक्षित रखें ॥६ ॥

[सूक्त - ६४]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** मित्रावरुण । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५६६७. **दिवि क्षयन्ता रजसः पृथिव्यां प्र वां घृतस्य निर्णिजो ददीरन् ।**
हव्यं नो मित्रो अर्यमा सुजातो राजा सुक्षत्रो वरुणो जुषन्त ॥१ ॥

हे मित्रावरुणदेव ! आप द्यावा-पृथिवी में जल के संचारकर्त्ता हैं । मित्र, सुजन्मा अर्यमा और बलवान् राजा वरुण हमारे इस हव्य का सेवन करें ॥१ ॥

५६६८. **आ राजाना मह ऋतस्य गोपा सिन्धुपती क्षत्रिया यातमर्वाक् ।**
इळां नो मित्रावरुणोत वृष्टिमव दिव इन्वतं जीरदानू ॥२ ॥

हे मित्र और वरुणदेवो ! आप सत्यरूपी यज्ञ के रक्षक, नदियों में जल के संचारकर्त्ता और क्षत्रिय (रक्षक वीर) हैं । हमारे लिए अन्तरिक्ष से जलरूपी अन्न प्रेषित करें ॥२ ॥

५६६९. **मित्रस्तन्नो वरुणो देवो अर्यः प्र साधिष्ठेभिः पथिभिर्नयन्तु ।**
ब्रवद्यथा न आदरिः सुदास इषा मदेम सह देवगोपाः ॥३ ॥

मित्र, वरुण, अर्यमा देवगण उदारदाता (व्यक्ति, यज्ञ या परमात्मा) से हमारी कथा कहें । साधनों से सम्पन्न रास्तों के द्वारा हमें वहाँ पहुँचा दें । हम आप देवों की कृपा से पुत्र-पौत्रादिकों के साथ अन्न द्वारा पोषित हों ॥३ ॥

५६७०. **यो वां गर्तं मनसा तक्षदेतमूर्ध्वां धीतिं कृणवद्धारयच्च ।**
उक्षेथां मित्रावरुणा घृतेन ता राजाना सुक्षितीस्तर्पयेथाम् ॥४ ॥

हे मित्रावरुणदेव ! उच्च धारणा शक्तिवाला व्यक्ति पूर्ण मनोयोग के साथ आपके रथ का निर्माण करता है । हे राजाओ ! आपकी कृपा से उसे सुन्दर निवास प्राप्त हो । उसे जल से सिंचित कर तृप्त करें ॥४ ॥



५६७१. **एष स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।**
अविष्टं धियो जिगृतं पुरन्धीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

मित्र, वरुण और वायु के लिए हमने सोमरस के समान आनन्द देने वाली यह स्तुति की है । आप हमारी बुद्धि और कर्म को संरक्षित करें । प्रज्ञा जाग्रत् करें तथा कल्याणकारी साधनों द्वारा हमारा कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - ६५]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- मित्रावरुण । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५६७२. **प्रति वां सूर उदिते सूक्तैर्मित्रं हुवे वरुणं पूतदक्षम् ।**
ययोरसुर्य१ मक्षितं ज्येष्ठं विश्वस्य यामन्नाचिता जिगत्नु ॥१ ॥

कभी नष्ट न होने वाला जिन (मित्रावरुण) का श्रेष्ठ बल प्राप्त होने पर व्यक्ति सर्वत्र विजयी होता है, उन सूर्योदय के समय पवित्र बल वाले वरुण और मित्रदेवों की सूक्तों से प्रार्थना करते हैं ॥१ ॥

५६७३. **ता हि देवानामसुरा तावर्या ता नः क्षितीः करतमूर्जयन्तीः ।**
अश्याम मित्रावरुणा वयं वां द्यावा च यत्र पीपयन्नहा च ॥२ ॥

हे मित्रावरुणो ! आप बलशाली हैं । हम आपकी प्रार्थना करते हैं । आप हमारी संततियों की वृद्धि करें । हम आपका सर्वत्र यशोगान करेंगे ॥२ ॥

५६७४. **ता भूरिपाशावनृतस्य सेतू दुरत्येतू रिपवे मर्त्याय ।**
ऋतस्य मित्रावरुणा पथा वामपो न नावा दुरिता तरेम ॥३ ॥

हे मित्रावरुण ! आप यज्ञ से विमुख व्यक्ति को अपने दृढ़ बन्धनों से बाँधते हैं । जैसे नाव से (नदी) जल पार किया जाता है, हे देव ! उसी प्रकार यज्ञ मार्ग से हम दुःखों से पार हो जाएँ ॥३ ॥

५६७५. **आ नो मित्रावरुणा हव्यजुष्टिं घृतैर्गव्यूतिमुक्षतमिळाभिः ।**
प्रति वामत्र वरमा जनाय पृणीतमुद्नो दिव्यस्य चारोः ॥४ ॥

हे मित्रावरुणो ! आप हमारे यज्ञ में पधारकर हव्य ग्रहण करें और अन्न एवं जल से हमारी गोचर भूमि का सिंचन करें । अमृत के समान मधुर जल से लोगों को तृप्ति प्रदान करें ॥४ ॥

५६७६. **एष स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।**
अविष्टं धियो जिगृतं पुरन्धीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

मित्र, वरुण और वायु देवों के लिए हमने सोम रस के समान आनन्द देने वाली स्तुति की है । आप हमारे बुद्धि और कर्म को संरक्षित करें । प्रज्ञा जाग्रत् कर कल्याणकारी साधनों द्वारा हमारा कल्याण करें ॥५ ॥

[सूक्त - ६६]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- मित्रावरुण, ४-१३ आदित्यगण, १४-१६ सूर्य । **छन्द** - गायत्री, १०-१५ प्रगाथ (समाबृहती, विषमा सतोबृहती), १६ पुर उष्णिक् ।]

५६७७. **प्र मित्रयोर्वरुणयोः स्तोमो न एतु शूष्यः । नमस्वान्तुविजातयोः ॥१ ॥**

हमारे स्तोत्र बार-बार आविर्भूत होने वाले मित्रावरुणदेव का अनुगमन करें ॥१ ॥



५६७८. **या धारयन्त देवाः सुदक्षा दक्षपितरा । असुर्याय प्रमहसा ॥२ ॥**

मित्रावरुणदेव आप श्रेष्ठ बल वाले और तेजस्वी हैं । शान्ति प्राप्त करने के लिए देवों ने आपको धारण किया था ॥२ ॥

५६७९. **ता नः स्तिपा तनूपा वरुण जरितॄणाम् । मित्र साधयतं धियः ॥३ ॥**

मित्र और वरुणदेव, गृह एवं शरीरों को संरक्षण प्रदान करते हैं ।आप उपासकों के स्तोत्रों को स्वीकार करें ॥३॥

५६८०. **यदद्य सूर उदितेऽनागा मित्रो अर्यमा । सुवाति सविता भगः ॥४ ॥**

सूर्योदय होने पर निष्पाप मित्र, अर्यमा, भग, सवितादेव हमारी ओर अभीष्ट धन को प्रेरित करें ॥४ ॥

५६८१. **सुप्रावीरस्तु स क्षयः प्र नु यामन्त्सुदानवः । ये नो अंहोऽतिपिप्रति ॥५ ॥**

हे कल्याणकारी देवो ! आपके आगमन से हमारा वह आवास सुरक्षित बने । आप हमें पापों से मुक्त कराएँ ॥५ ॥

५६८२. **उत स्वराजो अदितिरदब्धस्य व्रतस्य ये । महो राजान ईशते ॥६ ॥**

मित्रादि देवगण अपनी माता अदिति सहित हमारे संकल्पों के अधिष्ठाता हैं । हमारा अभीष्ट पूर्ण करने में समर्थ हैं, अतः वे शासक हैं ॥६ ॥

५६८३. **प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् । अर्यमणं रिशादसम् ॥७ ॥**

(हे मित्र और वरुणदेव !) हम सूर्योदय के अवसर पर आप दोनों तथा शत्रुसंहारक अर्यमा के साथ-साथ समस्त देवताओं की स्तुति करते हैं ॥७ ॥

५६८४. **राया हिरण्यया मतिरियमवृकाय शवसे । इयं विप्रा मेधसातये ॥८ ॥**

हे विद्वान् मित्र और वरुणदेव ! कल्याणकारी श्रेष्ठ धन तथा दुष्टतारहित बल एवं सद्‍बुद्धि पाने के लिए हम आपकी वन्दना करते हैं । आप इसे स्वीकार करें ॥८ ॥

५६८५. **ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह । इषं स्वश्च धीमहि ॥९ ॥**

हे वरुणदेव ! ज्ञानवानों के साथ आपकी स्तुति करते हुए हम वैभवयुक्त हों । हे मित्र ! आपकी स्तुति से हम अन्न-धन और स्वर्गोपम सुखों को उपलब्ध करें ॥९ ॥

५६८६. **बहवः सूरचक्षसोऽग्निजिह्वा ऋतावृधः ।**
त्रीणि ये येमुर्विदथानि धीतिभिर्विश्वानि परिभूतिभिः ॥१० ॥

अनेकों सूर्य की तरह तेजस्वी, अग्नि रूप जिह्वा वाले, यज्ञ के विस्तारक ये (मित्रादि देव) विश्व के तीनों स्थानों (द्यु, अन्तरिक्ष एवं पृथ्वी) को श्रेष्ठ विभूतियों द्वारा सुनियंत्रित रखते हैं ॥१० ॥

५६८७. **वि ये दधुः शरदं मासमादहर्यज्ञमक्तुं चादृचम् ।**
अनाप्यं वरुणो मित्रो अर्यमा क्षत्रं राजान आशत ॥११ ॥

वर्ष, मास, दिन, रात्रि को बनाकर यज्ञ और मन्त्र को धारण करने वाले वीर मित्रावरुण और अर्यमा देव ने दूसरों की भलाई के लिए अप्राप्य शक्ति पायी थी ॥११ ॥

५६८८. **तद्वो अद्य मनामहे सूक्तैः सूर उदिते ।**
यदोहते वरुणो मित्रो अर्यमा यूयमृतस्य रथ्यः ॥१२ ॥



हम आज सूर्योदय के समय वह धन माँगेंगे, जिसे सन्मार्ग दर्शक वीर मित्रावरुण और अर्यमा आदि देवगण धारण करते हैं ॥१२ ॥

५६८९. **ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः ।**
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे नरः स्याम ये च सूरयः ॥१३ ॥

आप सत्य को धारण करके यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करते हैं तथा सत्य से विमुख रहने वालों के शत्रु हैं । ऋत्विजों के साथ हम आपकी श्रेष्ठ शक्ति प्राप्त करें ॥१३ ॥

५६९०. **उदु त्यद्दर्शतं वपुर्दिव एति प्रतिह्वरे ।**
यदीमाशुर्वहति देव एतशो विश्वस्मै चक्षसे अरम् ॥१४ ॥

आज सूर्य उदित होने पर पापरहित हुए हमको मित्र, सविता, भग और अर्यमा देव उत्तम प्रेरणा देकर श्रेष्ठ कर्म में प्रेरित करें ॥१४ ॥

५६९१. **शीर्ष्णः शीर्ष्णो जगतस्तस्थुषस्पतिं समया विश्वमा रजः ।**
सप्त स्वसारः सुविताय सूर्यं वहन्ति हरितो रथे ॥१५ ॥

सबके शीर्षभाग में स्थित, सबके वन्दनीय, रथारूढ़ सूर्यदेव को संसार के कल्याण के लिए गतिमान् सप्त-हर्याश्व सारे विश्व में ले जाते हैं ॥१५ ॥

५६९२. **तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम् ॥१६ ॥**

विश्व का कल्याण करने वाले, अंधकार को दूर करने वाले, सबके नेत्र स्वरूप ये सूर्यदेव हमारे सामने उदित हो रहे हैं । हे देव ! हम सौ वर्षों तक देखें, सौ वर्षों तक जिएँ ॥१६ ॥

५६९३. **काव्येभिरदाभ्या यातं वरुण द्युमत् । मित्रश्च सोमपीतये ॥१७ ॥**

हे मित्र और वरुणदेव ! आप तेजस्वी और निडर हैं । आप स्तोता के पास सोमपान के लिए पधारें ॥१७ ॥

५६९४. **दिवो धामभिर्वरुण मित्रश्चा यातमद्रुहा । पिबतं सोममातुजी ॥१८ ॥**

हे सत्य की वृद्धि करने वाले मित्र और वरुणदेव ! आप द्रोह रहित हैं । आप अपने लोक से सोमपान के निमित्त पधारें ॥१८ ॥

५६९५. **आ यातं मित्रावरुणा जुषाणावाहुतिं नरा । पातं सोममृतावृधा ॥१९ ॥**

सत्यव्रती, नेतृत्व की क्षमता से सम्पन्न हे मित्रावरुणदेव !आप हमारी आहुति ग्रहण करके सोमरस का पान करें ॥१९ ॥

[सूक्त - ६७]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अश्विनीकुमार । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५६९६. **प्रति वां रथं नृपती जरध्यै हविष्मता मनसा यज्ञियेन ।**
यो वां दूतो न धिष्ण्यावजीगरच्छा सूनुर्न पितरा विवक्मि ॥१ ॥

हे बुद्धिसम्पन्न स्वामी दोनों अश्विनीकुमारो ! हम उदार एवं पवित्र मन से आपके रथ का आवाहन करते हैं । पिता जैसे पुत्र को जगाता है, आपका रथ उसी तरह सबको सतर्क रखे ॥१ ॥



५६९७. **अशोच्यग्निः समिधानो अस्मे उपो अदृश्रन्तमसश्चिदन्ताः ।**
अचेति केतुरुषसः पुरस्ताच्छ्रिये दिवो दुहितुर्जायमानः ॥२ ॥

हमारे लिए अग्निदेव प्रदीप्त हो रहे हैं, अंधकार का अन्त दिख रहा है । द्युलोक की पुत्री (उषा) के सम्मुख प्रकट होने वाले ये सूर्यदेव शोभा का बोध कराने वाले हैं ॥२ ॥

५६९८. **अभि वां नूनमश्विना सुहोता स्तोमैः सिषक्ति नासत्या विवक्वान् ।**
पूर्वीभिर्यातं पथ्याभिरर्वाक्स्वर्विदा वसुमता रथेन ॥३ ॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! सुन्दर अभिव्यक्ति वाले श्रेष्ठ होता स्तोत्रों के द्वारा आपकी प्रार्थना करते हैं । आप ऐश्वर्ययुक्त रथ पर आरूढ़ होकर प्राची दिशा से पधारें ॥३ ॥

५६९९. **अवोर्वां नूनमश्विना युवाकुर्हुवे यद्वां सुते माध्वी वसूयुः ।**
आ वां वहन्तु स्थविरासो अश्वाः पिबाथो अस्मे सुषुता मधूनि ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप रक्षक और मृदुभाषी हैं । हम ऐश्वर्य की कामना से इस सोमयाग में आपका आवाहन करते हैं । अपने प्रौढ़ अश्वों से आप सोमपान के लिए पधारें ॥४ ॥

५७००. **प्राचीमु देवाश्विना धियं मेऽमृध्रां सातये कृतं वसूयुम् ।**
विश्वा अविष्टं वाज आ पुरन्धीस्ता नः शक्तं शचीपती शचीभिः ॥५ ॥

हे शक्ति के स्वामी अश्विदेवो ! आप हमारी धनाभिलाषी बुद्धि को सरल एवं अहिंसक बनाएँ; उसे लाभ के योग्य बनायें । युद्ध में हमारी बुद्धि को संरक्षण दें । आप हमें शक्तियों से सम्पन्न बनाएँ ॥५ ॥

५७०१. **अविष्टं धीष्वश्विना न आसु प्रजावद्रेतो अह्रयं नो अस्तु ।**
आ वां तोके तनये तूतुजानाः सुरत्नासो देववीतिं गमेम ॥६ ॥

हे अश्विनीकुमारो । श्रेष्ठकर्म के लिए आप हमारी बुद्धि का रक्षण करें । हमारी सन्तानोत्पादन की शक्ति समाप्त न हो । आपकी कृपा से संतानों को यथेच्छ धन देकर, रत्नों (सद्‌गुणों) से अलंकृत होकर हम दिव्य पवित्रता प्राप्ति हेतु यज्ञीय जीवन जिएँ ॥६ ॥

[**सन्तान के समर्थ हो जाने पर, उन्हें अपने दायित्व सौंपकर, सद्‌गृहस्थ को यज्ञीय जीवन जीने के लिए (परमार्थ परायण जीवन जीने के लिए) तत्पर हो जाना चाहिए ।**]

५७०२. **एष स्य वां पूर्वगत्वेव सख्ये निधिर्हितो माध्वी रातो अस्मे ।**
अहेळता मनसा यातमर्वागश्नन्ता हव्यं मानुषीषु विक्षु ॥७ ॥

हे मधुरभाषी अश्विदेवो ! हमने आपके द्वारा प्रदत्त सम्पत्ति आपको समर्पित की है । प्रसन्न होकर आप हमारे सामने पधारें और प्रजाओं द्वारा दिया हुआ हव्य ग्रहण करें ॥७ ॥

५७०३. **एकस्मिन्योगे भुरणा समाने परि वां सप्त स्रवतो रथो गात् ।**
न वायन्ति सुभ्वो देवयुक्ता ये वां धूर्षु तरणयो वहन्ति ॥८ ॥

हे पोषक अश्विदेवो ! आपका रथ बहने वाली सात नदियों को लाँघ जाता है । देवों द्वारा नियोजित हुए सुजन्मा अश्व कभी नहीं थकते ॥८ ॥



५७०४. **असश्चता मघवद्भ्यो हि भूतं ये राया मघदेयं जुनन्ति ।**
प्र ये बन्धुं सूनृताभिस्तिरन्ते गव्या पृञ्चन्तो अश्व्या मघानि ॥९ ॥

जो मधुरभाषी होकर गौ-अश्वों से युक्त ऐश्वर्य दान करते हुए दूसरों को प्रेरणा देते हैं; आप ऐसे लोगों से दूर न रहें, उनके घर पधारें ॥९ ॥

५७०५. **नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।**
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१० ॥

हे युवा अश्विद्वय ! आप हमारी स्तुति सुनें । जहाँ से आपको हव्य मिलता है, वहाँ पधारें और उन्हें रत्न देकर सुखी करें तथा सदा कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥१० ॥

[सूक्त - ६८]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अश्विनीकुमार । **छन्द**- विराट्, ८-९ त्रिष्टुप् ।]

५७०६. **आ शुभ्रा यातमश्विना स्वश्वा गिरो दस्रा जुजुषाणा युवाकोः ।**
हव्यानि च प्रतिभृता वीतं नः ॥१ ॥

हे सुन्दर घोड़ों से युक्त शत्रुहन्ता अश्विदेवो ! हम स्तोताओं की प्रार्थना सुनते ही आप यहाँ पधार कर, हमारे हव्य को ग्रहण करें ॥१ ॥

५७०७. **प्र वामन्धांसि मद्यान्यस्थुररं गन्तं हविषो वीतये मे । तिरो अर्यो हवनानि श्रुतं नः॥ २ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आपके लिए यह श्रेष्ठ हवि समर्पित है । इस हव्य को ग्रहण करने के लिए हमारी प्रार्थना सुनकर आप यहाँ पधारें तथा हमारे शत्रुओं का विनाश करें ॥२ ॥

५७०८. **प्र वां रथो मनोजवा इयर्ति तिरो रजांस्यश्विना शतोतिः ।**
अस्मभ्यं सूर्यावसू इयानः ॥३ ॥

हे देवो ! आप सूर्यदेव के साथ सहस्रों साधनों से युक्त, मन के समान वेगवान् रथ पर आरूढ़ होकर, अन्य लोकों को लाँघते हुए हमारे यज्ञ में आते हैं ॥३ ॥

५७०९. **अयं ह यद्वां देवया उ अद्रिरूर्ध्वो विवक्ति सोमसुद्युवभ्याम् ।**
आ वल्गू विप्रो ववृतीत हव्यैः ॥४ ॥

हे अश्विदेवो ! जब हम यज्ञ में आपको बुलाने के लिए सोमाभिषव करते हैं, तब यह सोम निचोड़ने वाला पत्थर घोर शब्द करता है; तब ज्ञानी होतागण हविष्यान्न से आपका आवाहन करते हैं ॥४ ॥

५७१०. **चित्रं ह यद्वां भोजनं न्वस्ति न्यत्रये महिष्वन्तं युयोतम् ।**
यो वामोमानं दधते प्रियः सन् ॥५ ॥

(हे अश्विदेवो !) आपका जो विलक्षण भोजन है, वहमहिष्वन्त (सबल बनाने वाला भोज्य पदार्थ) अत्रि के लिए अलग निकाला गया था । वे (अत्रि) आपके प्रिय होने के कारण आपके आश्रय में रहते हैं ॥५ ॥

[पौराणिक सन्दर्भ में अत्रि हेतु महिष्वन्त को पृथक् किया गया था। सैद्धान्तिक सन्दर्भ में आरोग्य देने वाले अश्विनीकुमार अत्रि (तीन-दैहिक, दैविक, भौतिक तापों से मुक्ति के लिए) साधक को अपने विलक्षण शक्तिवर्धक अनुदान प्रदान करते हैं।]



५७११. **उत त्यद्वां जुरते अश्विना भूच्च्यवानाय प्रतीत्यं हविर्दे।**
अधि यद्वर्प इतऊति धत्थः ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो ! हव्य प्रदान करने वाले तथा जीर्ण हुए च्यवन ऋषि को आपके द्वारा वह मृत्यु से संरक्षित करने वाला जो रूप दिया गया, वह (कर्म) प्रसिद्ध हुआ ॥६॥

५७१२. **उत त्यं भुज्युमश्विना सखायो मध्ये जहुर्दु रेवासः समुद्रे।**
निरीं पर्षदरावा यो युवाकुः ॥७॥

हे अश्विदेवो ! राजपुत्र भुज्यु को उसके दुष्ट मित्रों ने समुद्र में छोड़ दिया था। आपकी प्रार्थना करने वाले उस भुज्यु को आपने पार लगाया था ॥७॥

५७१३. **वृकाय चिज्जसमानाय शक्तमुत श्रुतं शयवे हूयमाना।**
यावघ्न्यामपिन्वतमपो न स्तर्यं चिच्छक्त्यश्विना शचीभिः ॥८॥

हे देवो ! आपने क्षीणकाय वृक को शक्ति देकर शक्तिमान् बनाया था तथा शयु का हित करने के लिए भी आप पधारे थे। आपने दोनों की प्रार्थना सुनी थी। आप दोनों ने बन्ध्या गौ को भी दूध देने में समर्थ बनाया था ॥८॥

५७१४. **एष स्य कारुर्जरते सूक्तैरग्रे बुधान उषसां सुमन्मा।**
इषा तं वर्धदघ्न्या पयोभिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९॥

श्रेष्ठ विचारों वाले स्तोता (वसिष्ठ) उषाकाल से प्रथम उठकर प्रार्थना करते हैं। आप उन्हें अन्न दुग्ध आदि से सुखी करें तथा कल्याणकारी साधनों द्वारा उनका पालन करें ॥९॥

[सूक्त - ६९]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता-** अश्विनीकुमार। **छन्द-** त्रिष्टुप्।]

५७१५. **आ वां रथो रोदसी बद्बधानो हिरण्ययो वृषभिर्यात्वश्वैः।**
घृतवर्तनिः पविभी रुचान इषां वोळ्हा नृपतिर्वाजिनीवान् ॥१॥

बलवान् अश्वों से खींचा जाने वाला, आपका रथ पृथ्वी-आकाश में हर जगह पहुँचता है। जिसके पहिए में जल है, जो अन्नवाहक घृत आदि ओषधियों से युक्त एवं प्रजाओं का स्वामी है, वह रथ यहाँ आगमन करे ॥१॥

[अश्विनीकुमार जिस रथ (माध्यम) से ओषधियाँ एवं पोषक पदार्थ प्रजाओं तक पहुँचाते हैं, वह (प्राकृतिक) जल चक्र (नेचुरल वाटर साइकिल-पानी आकाश से वनस्पतियों एवं प्राणियों में होता हुआ घूमता रहता है, उस प्रक्रिया) पर आधारित है।]

५७१६. **स पप्रथानो अभि पञ्च भूमा त्रिवन्धुरो मनसा यातु युक्तः।**
विशो येन गच्छथो देवयन्तीः कुत्रा चिद्याममश्विना दधाना ॥२॥

(हे अश्विद्वय !) पाँचों (पंचभूतों अथवा पंचप्राणों) को व्यापक स्थान देने वाले तीन वन्धुरों (सारथी के बैठने वाले आसनों) से युक्त, मन के अनुसार चलने वाले रथ से, कहीं भी जाने के इच्छुक आप यहाँ अवश्य आएँ ॥२॥

[अश्विनीकुमारों के दिव्य रथ में सारथी के तीन आसन हैं। विश्व व्यवस्था में वे तीन स्थान द्यु, अंतरिक्ष एवं पृथ्वी पर हैं तथा काया में वे तीन ग्रन्थियों (स्थूल, सूक्ष्म, कारण देहों के नियंत्रक केन्द्रों) में हैं। वह रथ प्रकृतिगत पंचभूतों तथा शरीरगत पंच प्राणों को व्यापक क्षेत्र प्रदान करता है।]



५७१७. **स्वश्वा यशसा यातमर्वाग्दस्रा निधिं मधुमन्तं पिबाथः ।**
वि वां रथो वध्वा३ यादमानोऽन्तान्दिवो बाधते वर्तनिभ्याम् ॥३ ॥

हे शत्रुहन्ता अश्विदेवो ! आप श्रेष्ठ घोड़ों से जुते रथ पर बैठकर , अन्न के सहित यहाँ पधारें और मधुरस का पान करें । सूर्या के साथ गमन करने वाला आपका रथ गतिशील चक्रों से द्युलोक के अन्तिम छोर को भी आन्दोलित करता है ॥३ ॥

५७१८. **युवोः श्रियं परि योषावृणीत सूरो दुहिता परितक्म्यायाम् ।**
यद्देवयन्तमवथः शचीभिः परि घ्रंसमोमना वां वयो गात् ॥४ ॥

सूर्य पुत्री उषा, आपके सुन्दर रथ पर बैठ गई हैं । जब आप स्तोता की सुरक्षा करते हैं, उस समय अन्नादि साधन आपके पास आते हैं ॥४ ॥

५७१९. **यो ह स्य वां रथिरा वस्त उस्रा रथो युजानः परियाति वर्तिः ।**
तेन नः शं योरुषसो व्युष्टौ न्यश्विना वहतं यज्ञे अस्मिन् ॥५ ॥

हे रथारूढ़ वीरो । आपका वह रथ तेज से आच्छादित होकर, अश्वों से नियोजित होकर स्वमार्ग से जाता है । (इसलिए) हे अश्विनीकुमारो ! आप प्रातः काल होने पर पापों के शमन और सुख-शान्ति प्रदान करने के लिए उसी रथ से हमारे इस यज्ञ में पधारें ॥५ ॥

५७२०. **नरा गौरेव विद्युतं तृषाणास्माकमद्य सवनोप यातम् ।**
पुरुत्रा हि वां मतिभिर्हवन्ते मा वामन्ये नि यमन्देवयन्तः ॥६ ॥

हे नेतृत्व क्षमता-सम्पन्न अश्विद्वय ! गौर मृग की तरह शीघ्रतापूर्वक सोमपान की कामना वाले आप दोनों हमारे यज्ञ में पधारें ।देवत्व की कामना वाले अनेक लोग स्तुति करके आपको बुलाते हैं ।आप (अन्यत्र) न रुकें ॥६॥

५७२१. **युवं भुज्युमवविद्धं समुद्र उदूहथुरर्णसो अस्रिधानैः ।**
पतत्रिभिरश्रमैरव्यथिभिर्दंसनाभिरश्विना पारयन्ता ॥७ ॥

हे अश्विद्वय ! समुद्र में फँसे भुज्यु को आपने, पक्षी के समान गतिशील, कभी जीर्ण न होने वाले, अश्रान्त, द्रुतगामी (अश्वों या विमान द्वारा) कुशल क्रियाओं द्वारा निकाला था ॥७ ॥

५७२२. **नू मे हवमा शृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।**
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८ ॥

हे युवा अश्विद्वय ! आप हमारी प्रार्थना सुनें और जहाँ से आपको हव्य मिलता है, वहाँ पधारें । स्तोताओं को रत्न देकर सुखी करें । सदा कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥८ ॥

[सूक्त - ७०]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अश्विनीकुमार । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५७२३. **आ विश्ववाराश्विना गतं नः प्र तत्स्थानमवाचि वां पृथिव्याम् ।**
अश्वो न वाजी शुनपृष्ठो अस्थादा यत्सेदथुर्ध्रुवसे न योनिम् ॥१ ॥

हे सर्वश्रेष्ठ अश्विदेवो ! आप हमारे यहाँ आएँ और अपने बैठने के सुखकर स्थान की तरह, मजबूत घोड़े की पीठ के समान इस स्थान पर बैठें । पृथ्वी पर यह स्थान (यज्ञस्थल) प्रशंसनीय है ॥१ ॥



५७२४. **सिषक्ति सा वां सुमतिश्चनिष्ठातापि घर्मो मनुषो दुरोणे।**
यो वां समुद्रान्त्सरितः पिपर्त्येतग्वा चिन्न सुयुजा युजानः ॥२॥

हे अश्विदेवो ! बुद्धिमान् स्तोता आपकी प्रार्थना कर रहे हैं। मनुष्य के गृह (यज्ञशाला) में उष्णता देने वाला (धूप या यज्ञाग्नि) सक्रिय है। उसके प्रभाव से (जल-वृष्टि से) नदी-समुद्र भर रहे हैं। जिस प्रकार से अश्व रथ को खींचते हैं, उसी प्रकार यज्ञ आप दोनों से युक्त होता है ॥२॥

५७२५. **यानि स्थानान्यश्विना दधाथे दिवो यह्वीष्वोषधीषु विक्षु।**
नि पर्वतस्य मूर्धनि सदन्तेषं जनाय दाशुषे वहन्ता ॥३॥

हे अश्विदेवो ! द्युलोक से अवतरित होकर आप पर्वत शिखरों, सोमादि ओषधियों में विराजते हैं। वह सब अन्नादि (पोषण) आप यज्ञस्थल पर दानशील प्रजाजनों को प्रदान करें ॥३॥

५७२६. **चनिष्टं देवा ओषधीष्वप्सु यद्योग्या अश्नवैथे ऋषीणाम्।**
पुरूणि रत्ना दधतौ न्य१स्मे अनु पूर्वाणि चख्यथुर्युगानि ॥४॥

हे अश्विद्वय ! आप ऋषियों द्वारा प्रदत्त अन्न (हव्य), जल आदि प्राप्त करते हैं, इसलिए हमारे द्वारा ओषधि (चरु-पुरोडाश) और जल (सोमरस) ग्रहण करें। जैसे पहले के युग में आप दोनों ने दम्पतियों को रत्नादि से पूर्ण बनाया था; उसी प्रकार इस समय में भी बना दें ॥४॥

५७२७. **शुश्रुवांसा चिदश्विना पुरूण्यभि ब्रह्माणि चक्षाथे ऋषीणाम्।**
प्रति प्र यातं वरमा जनायास्मे वामस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥५॥

हे अश्विदेवो ! ऋषियों द्वारा स्तुत्य होकर आप सदा से सबका कल्याण करते आ रहे हैं। इस मनुष्य (यजमान) के यज्ञ में आप दोनों पधारें तथा आपकी अनुकम्पा (सुमति) हमें भी प्राप्त हो ॥५॥

५७२८. **यो वां यज्ञो नासत्या हविष्मान् कृतब्रह्मा समर्यो३ भवाति।**
उप प्र यातं वरमा वसिष्ठमिमा ब्रह्माण्यृच्यन्ते युवभ्याम् ॥६॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! स्तुति मंत्रों का निर्माण कर हविष्यान्न से विश्वकल्याणार्थ यज्ञ करने वाले वसिष्ठ के पास आप जाते हैं, क्योंकि वे आपकी ही प्रार्थना करते हैं ॥६॥

५७२९. **इयं मनीषा इयमश्विना गीरिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम्।**
इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

हे बलवान् अश्विदेवो ! हमने अपनी इच्छा से वाणी द्वारा यह स्तुति आपकी प्रसन्नता के लिए की है। आप इसे स्वीकार करें तथा कल्याणकारी साधनों से हमें सुरक्षित रखें ॥७॥

[सूक्त - ७१]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता**- अश्विनीकुमार। **छन्द**- त्रिष्टुप्।]

५७३०. **अप स्वसुरुषसो नग्जिहीते रिणक्ति कृष्णीररुषाय पन्थाम्।**
अश्वामघा गोमघा वां हुवेम दिवा नक्तं शरुमस्मद्युयोतम् ॥१॥

रात्रि अपनी भगिनी उषा से अलग होकर लाल बिम्ब वाले सूर्यदेव का रास्ता खोल देती है। गोधन-वाजिधन के रूप में ऐश्वर्य देने वाले (हे देवो !) आपका हम आवाहन करते हैं। आप दिन या रात्रि के शत्रुओं को दूर करें ॥१॥

५७३१. **उपायातं दाशुषे मर्त्याय रथेन वाममश्विना वहन्ता ।**
युयुतमस्मदनिराममीवां दिवा नक्तं माध्वी त्रासीथां नः ॥२ ॥

मधुर स्वभाव वाले अश्विदेव हविदाता के लिए अपने रथ से सुन्दर पदार्थ लेकर पधारें और हमारे रोग तथा दारिद्र्य को दूर करते हुए दिन-रात हमारी सुरक्षा करें ॥२ ॥

५७३२. **आ वां रथमवमस्यां व्युष्टौ सुम्नायवो वृषणो वर्तयन्तु ।**
स्यूमगभस्तिमृतयुग्भिरश्वैराश्विना वसुमन्तं वहेथाम् ॥३ ॥

हे अश्विदेवो ! उषाकाल होने पर बलिष्ठ और स्वेच्छा से चलने वाले अश्व आपको लेकर हमारे पास आएँ तथा हमें तेजस्विता एवं उत्तम सम्पत्ति प्रदान करें ॥३ ॥

५७३३. **यो वां रथो नृपती अस्ति वोळहा त्रिवन्धुरो वसुमाँ उस्रयामा ।**
आ न एना नासत्योप यातमभि यद्वां विश्वप्स्न्यो जिगाति ॥४ ॥

हे याजकों के रक्षक देवो ! आपका शीघ्रगामी रथ ऐश्वर्य-सम्पन्न, तीन वन्धुरों (बैठने के स्थान) वाला, दिन के लिए व्यापक होकर चलने वाला है । आप रथ से हमारी ओर बढ़ें ॥४ ॥

५७३४. **युवं च्यवानं जरसोऽमुमुक्तं नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम् ।**
निरंहसस्तमसः स्पर्तमत्रिं नि जाहुषं शिथिरे धातमन्तः ॥५ ॥

हे देवो ! आपने च्यवन ऋषि को जरा मुक्त किया था । (युद्ध में) राजा पेदु के पास द्रुतगामी अश्व भेजा था, अत्रि को पापान्धकार से मुक्त किया था और राज्य-च्युत हुए "जाहुष" को पुनः राज्य दिलाया था ॥५ ॥

५७३५. **इयं मनीषा इयमश्विना गीरिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् ।**
इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे बलशाली अश्विदेवो ! हमने अपनी इच्छा से, वाणी के द्वारा यह स्तुति आपकी प्रसन्नता के लिए की है । आप इसे स्वीकार करें तथा कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥६ ॥

[सूक्त - ७२]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- अश्विनीकुमार । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५७३६. **आ गोमता नासत्या रथेनाश्वावता पुरुश्चन्द्रेण यातम् ।**
अभि वां विश्वा नियुतः सचन्ते स्पार्हया श्रिया तन्वा शुभाना ॥१ ॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! गौ और अश्वादि ऐश्वर्य से सम्पन्न रथ से आप यहाँ पधारें । आप श्रेष्ठ तेज से शोभायमान हों । स्तोता अनेक स्तुतियों से आपकी स्तुति कर रहे हैं ॥१ ॥

५७३७. **आ नो देवेभिरुप यातमर्वाक् सजोषसा नासत्या रथेन ।**
युवोर्हि नः सख्या पित्र्याणि समानो बन्धुरुत तस्य वित्तम् ॥२ ॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! आप दोनों देवों के साथ प्रेमपूर्वक रथारूढ़ होकर हमारे यहाँ आएँ । आपके साथ हमारे पूर्वजों का सम्बन्ध भी था । हमारे और आपके पूर्वज तथा उनका धन एक ही है ॥२ ॥



५७३८. **उदु स्तोमासो अश्विनोरबुध्रञ्जामि ब्रह्माण्युषसश्च देवीः ।**
आविवासन्रोदसी धिष्ण्येमे अच्छा विप्रो नासत्या विवक्ति ॥३ ॥

अश्विनीकुमारों को (ये) स्तुतियाँ जगाती हैं । सब लोग उत्तम कर्म से उषाकाल को चैतन्य करते हैं । वसिष्ठ, द्यु और पृथ्वी लोकों की सेवा करते हुए अश्विद्वय की स्तुति करते हैं ॥३ ॥

५७३९. **वि चेदुच्छन्त्यश्विना उषासः प्र वां ब्रह्माणि कारवो भरन्ते ।**
ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद्बृहदग्नयः समिधा जरन्ते ॥४ ॥

हे अश्विद्वय ! उषा के द्वारा अन्धकार हटाने पर स्तोता आपकी प्रार्थना करते हैं । सूर्यदेवता ऊर्ध्वगामी होते हुए तेजस्विता धारण कर रहे हैं । यज्ञ में समिधाओं के द्वारा अग्नि प्रज्वलित हो रही है ॥४ ॥

५७४०. **आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात् ।**
आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! पंचजनों (सभी) का हित करने के लिए ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, चारों तरफ से धन लेकर आएँ । आप सदैव कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें ॥५ ॥

[सूक्त - ७३]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अश्विनीकुमार । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५७४१. **अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति स्तोमं देवयन्तो दधानाः ।**
पुरुदंससा पुरुतमा पुराजामर्त्या हवते अश्विना गीः ॥१ ॥

हे अश्विद्वय ! हम देवत्व प्राप्ति की इच्छा से प्रार्थना करते हुए अज्ञानान्धकार से पार हो जायें । बहुकर्मा, पूर्वकाल से अमर कीर्ति वाले हे अश्विदेवो ! स्तोतागण आपका आवाहन करते हैं ॥१ ॥

५७४२. **न्यु प्रियो मनुषः सादि होता नासत्या यो यजते वन्दते च ।**
अश्नीतं मध्वो अश्विना उपाक आ वां वोचे विदथेषु प्रयस्वान् ॥२ ॥

हे सत्यपालक अश्विदेवो ! यज्ञ और प्रणाम करने वाला याजक यज्ञशाला में बैठ गया है; आप उसके पास जाकर मधुर सोमरस का पान करें । यज्ञ में हव्य समर्पित करके हम आपकी प्रार्थना करते हैं ॥२ ॥

५७४३. **अहेम यज्ञं पथामुराणा इमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् ।**
श्रुष्टीवेव प्रेषितो वामबोधि प्रति स्तोमैर्जरमाणो वसिष्ठः ॥३ ॥

हे बलशाली (अश्विदेवो) ! स्तोता वसिष्ठ आपको जाग्रत् करने के लिए शीघ्रगामी दूतों की तरह स्तोत्र संप्रेषित कर रहे हैं । आप स्तुतियों से प्रसन्न हों । हम आपके मार्गों का अनुसरण करने के लिए यज्ञ सम्पन्न करते हैं ॥३ ॥

५७४४. **उप त्या वह्नी गमतो विशं नो रक्षोहणा सम्भृता वीळुपाणी ।**
समन्धांस्यग्मत मत्सराणि मा नो मर्धिष्टमा गतं शिवेन ॥४ ॥

दोनों राक्षस हन्ता, दृढ़पाणि (अश्विनीकुमार) हमारी संतानों के पास आएँ । आप हमारा कष्ट न बढ़ाएँ, आनन्द देने वाले सोमपान के लिए मंगलपूर्वक यहाँ पधारें ॥४ ॥



५७४५. **आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात्।**
आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! पंचजनों (सभी) का हित करने के लिए ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, चारों तरफ से धन लेकर आएँ । आप सदैव कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें ॥५ ॥

[सूक्त - ७४]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** अश्विनीकुमार । **छन्द-** प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

५७४६. **इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना ।**
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः ॥१ ॥

हे सम्पूर्ण प्राणियों के आश्रय-स्थल अश्विन् देवो ! प्रकाश की कामना करने वाले प्रजाजन आपका आवाहन करते हैं । सम्पूर्ण मानवों के निकट जाने वाले तथा पराक्रम से धनार्जन करने वाले अपने संरक्षण के निमित्त आपका आवाहन करते हैं ॥१ ॥

५७४७. **युवं चित्रं ददथुर्भोजनं नरा चोदेथां सूनृतावते ।**
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ॥२ ॥

हे नेतृत्व प्रदान करने वाले अश्विनीकुमारो ! आप दिव्य आहार देने वाले हैं । स्तुति करने वालों के प्रेरक हे देव ! आप रथ रोककर मनोयोगपूर्वक यहाँ मधुर रस का पान करें ॥२ ॥

५७४८. **आ यातमुप भूषतं मध्वः पिबतमश्विना ।**
दुग्धं पयो वृषणा जेन्यावसू मा नो मर्धिष्टमा गतम् ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारे यज्ञ में आएँ और शोभा बढ़ाएँ । यहाँ आकर मधुर रसों का पान करें । हे वर्षणशील देवो और धन के स्वामियो ! आप हमें दुग्धादि पेयों से अभिपूरित करते हुए आगमन करें । हमें पीड़ित न करें ॥३ ॥

५७४९. **अश्वासो ये वामुप दाशुषो गृहं युवां दीयन्ति बिभ्रतः ।**
मक्षूयुभिर्नरा हयेभिरश्विना देवा यातमस्मयू ॥४ ॥

हे नेतृत्व-क्षमता-सम्पन्न अश्विदेवो ! आपको धारण करके अश्व हव्यदाता के घर तक पहुँचाते हैं । आप शीघ्रगामी घोड़ों से यहाँ पधारें ॥४ ॥

५७५०. **अधा ह यन्तो अश्विना पृक्षः सचन्त सूरयः ।**
ता यंसतो मघवद्भ्यो ध्रुवं यशश्छर्दिरस्मभ्यं नासत्या ॥५ ॥

हे सत्यव्रती अश्विदेवो ! स्तोतागण (आप से) अन्नादि प्राप्त करते हैं । आप हमें अविचल यश और उत्तम घर प्राप्त कराएँ । हम आपकी कृपा से मघवान् (धन-सम्पन्न) हैं ॥५ ॥

५७५१. **प्र ये ययुरवृकासो रथा इव नृपातारो जनानाम् ।**
उत स्वेन शवसा शूशुवुर्नर उत क्षियन्ति सुक्षितिम् ॥६ ॥

जो प्रजा का पालक और अहिंसक होकर रथ की तरह (गतिशील होकर) आपके पास आते हैं, वे नेतृत्व कर्ता अपनी शक्ति से आगे बढ़ते और रहने के अच्छे स्थान प्राप्त करते हैं ॥६ ॥



[सूक्त - ७५]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- उषा । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५७५२. **व्यु१षा आवो दिविजा ऋतेनाऽऽविष्कृण्वाना महिमानमागात् ।**
अप द्रुहस्तम आवरजुष्टमङ्गिरस्तमा पथ्या अजीगः ॥१ ॥

देवी उषा अंतरिक्ष से प्रादुर्भूत होकर, प्रकाश फैलाती हुई, तेज से अपनी महत्ता प्रकट करती हुई आ रही हैं । उनने शत्रुओं और अन्धकार को दूर कर गंतव्य पथ को प्रकाशित किया है ॥१ ॥

५७५३. **महे नो अद्य सुविताय बोध्युषो महे सौभगाय प्र यन्धि ।**
चित्रं रयिं यशसं धेह्यस्मे देवि मर्तेषु मानुषि श्रवस्युम् ॥२ ॥

हे उषा देवि ! आज आप हमारे सुख-संवर्धन के लिए चैतन्य होकर सौभाग्य प्रदान करें तथा हमारे लिए विशेष यश युक्त धन धारण करें । मनुष्यों का हित करने वाली देवी उषा अन्न सहित पुत्र प्रदान करें ॥२ ॥

५७५४. **एते त्ये भानवो दर्शतायाश्चित्रा उषसो अमृतास आगुः ।**
जनयन्तो दैव्यानि व्रतान्यापृणन्तो अन्तरिक्षा व्यस्थुः ॥३ ॥

देवी उषा की ये किरणें, दर्शनीय, विचित्र और अविनाशी हैं । ये दिव्य व्रतों (कर्मों) का उत्पादन कर, समस्त अंतरिक्ष को पूर्ण करके, सब तरफ फैल जाती हैं ॥३ ॥

५७५५. **एषा स्या युजाना पराकात्पञ्च क्षितीः परि सद्यो जिगाति ।**
अभिपश्यन्ती वयुना जनानां दिवो दुहिता भुवनस्य पत्नी ॥४ ॥

ये वही द्युलोक की पुत्री उषा हैं, जो पंच मानवों (सभी वर्णों) को उद्योग (कर्म) में लगाती हुई, उनके पास पहुँचकर भुवनों का पालन करती हैं ॥४ ॥

५७५६. **वाजिनीवती सूर्यस्य योषा चित्रामघा राय ईशे वसूनाम् ।**
ऋषिष्टुता जरयन्ती मघोन्युषा उच्छति वह्निभिर्गृणाना ॥५ ॥

सूर्यगृहिणी उषा अन्नवती विचित्र धन और वैभवों की स्वामिनी हैं । ऋषियों द्वारा स्तुत्य, (रात्रि एवं अंधकार को) जर्जरित करने वाली, धन देने वाली देवी उषा स्तोता द्वारा प्रशंसित होकर सबेरा (उषः काल प्रकट) करती हैं ॥५ ॥

५७५७. **प्रति द्युतानामरुषासो अश्वाश्चित्रा अदृश्रन्नुषसं वहन्तः ।**
याति शुभ्रा विश्वपिशा रथेन दधाति रत्नं विधते जनाय ॥६ ॥

दीप्तिमती उषा को ले जाने वाले विलक्षण, सुशोभित अश्व दिखाई पड़ रहे हैं । शुभ्रवर्णा उषा सुन्दर रथ से सर्वत्र गमन करती हैं तथा कर्मठ लोगों को ऐश्वर्य प्रदान करती हैं ॥६ ॥

५७५८. **सत्या सत्येभिर्महती महद्भिर्देवी देवेभिर्यजता यजत्रैः ।**
रुजद् दृळ्हानि दददुस्रियाणां प्रति गाव उषसं वावशन्त ॥७ ॥

सत्यस्वरूपा, पूज्या देवी उषा सत्यपालक महान् देवों के साथ घने अन्धकार को समाप्त करती हैं तथा गौओं को प्रकाश देती हैं, इसलिए गौएँ उषा को चाहती हैं ॥७ ॥



५७५९. नू नो गोमद्वीरवद्धेहि रत्नमुषो अश्वावत्पुरुभोजो अस्मे ।
मा नो बर्हिः पुरुषता निदे कर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८ ॥

हे उषादेवि ! हम सबके लिए गौ, अश्व और वीर पुत्र से युक्त धन प्रदान करें । मनुष्यों के समाज में हमारा यज्ञ निन्दित न हो । हमें सदा कल्याणकारी साधनों से सुरक्षित रखें ॥८ ॥

[सूक्त - ७६]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** उषा । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५७६०. उदु ज्योतिरमृतं विश्वजन्यं विश्वानरः सविता देवो अश्रेत् ।
क्रत्वा देवानामजनिष्ट चक्षुराविरकर्भुवनं विश्वमुषाः ॥१ ॥

विश्व नेता (मार्गदर्शन करने वाले) सविता देवता ने अमृत सदृश सर्वहितैषी ज्योति (प्रकाश) को धारण किया है । देव- नेत्र स्वरूप सूर्य देवकार्य के लिए प्रकट हुए हैं । देवी उषा सभी भुवनों को प्रकाश से भर देती हैं ॥१ ॥

५७६१. प्र मे पन्था देवयाना अदृश्रन्नमर्धन्तो वसुभिरिष्कृतासः ।
अभूदु केतुरुषसः पुरस्तात्प्रतीच्यागादधि हर्म्येभ्यः ॥२ ॥

हमने संस्कारित किये हुए स्थिर तेज और बिना कष्ट वाले देवों के आने-जाने के मार्ग को देख लिया है । उषा का केतु (तेज रूपी ध्वज) पूर्व दिशा में फहरने लगा है एवं उषा हमारे सामने ऊर्ध्वलोक से आती हैं ॥२ ॥

५७६२. तानीदहानि बहुलान्यासन्या प्राचीनमुदिता सूर्यस्य ।
यतः परि जारइवाचरन्त्युषो ददृक्षे न पुनर्यतीव ॥३ ॥

हे उषादेवि ! सूर्योदय से पहले ही आपका तेज प्रकाशित होता है, क्योंकि आप पतिव्रता स्त्री की तरह सूर्यदेव की सेवा करती हैं, कुलटा की तरह नहीं ॥३ ॥

५७६३. त इद्देवानां सधमाद आसन्नृतावानः कवयः पूर्व्यासः ।
गूळ्हं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन्त्सत्यमन्त्रा अजनयन्नुषासम् ॥४ ॥

प्राचीन काल के अंगिरागण सत्यव्रती, कवि, मन्त्रों को सिद्ध करने वाले और पालक थे ।उन्होंने गुप्त तेज प्राप्त किया था एवं देवताओं के साथ सोमरस ग्रहण किया था ।उन्होंने ही मंत्रों के बल से उषा को प्रादुर्भूत किया ॥४॥

५७६४. समान ऊर्वे अधि सङ्गतासः सं जानते न यतन्ते मिथस्ते ।
ते देवानां न मिनन्ति व्रतान्यमर्धन्तो वसुभिर्यादमानाः ॥५ ॥

वे ऋषि गौ, यज्ञ आदि कार्यों के लिए संगठित होकर, एक विचार वाले हुए हैं । वे सदैव देवों की मर्यादा का पालन करते हुए आपस में हिंसा और कलह कभी भी नहीं करते; इसीलिए वे धन-ऐश्वर्य के स्वामी हुए ॥५ ॥

५७६५. प्रति त्वा स्तोमैरीळते वसिष्ठा उषर्बुधः सुभगे तुष्टुवांसः ।
गवां नेत्री वाजपत्नी न उच्छोषः सुजाते प्रथमा जरस्व ॥६ ॥

हे सुभगा उषादेवि ! उषःकाल में जाग कर वसिष्ठगण स्तोत्रों से आपकी प्रार्थना करते हैं । आप गौओं को प्राप्त करने वाली और अन्नों की सुरक्षा करने वाली हैं । सुजाता उषा, सबको प्रकाश देने के कारण देवों में प्रशंसित हैं ॥६ ॥



५७६६. **एषा नेत्री राधसः सूनृतानामुषा उच्छन्ती रिभ्यते वसिष्ठैः ।**
दीर्घश्रुतं रयिमस्मे दधाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

अंधकार को मिटाने वाली एवं वसिष्ठों द्वारा प्रशंसित होने वाली ये देवी उषा स्तुतियों की प्रेरक हैं । ऐसी हे उषादेवि ! आप हमें प्रसिद्ध, श्रेष्ठ धन प्रदान करके हमारा पालन एवं कल्याण करें ॥७ ॥

[सूक्त - ७७]

[**ऋषि**- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता**- उषा । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

५७६७. **उपो रुरुचे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै ।**
अभूदग्निः समिधे मानुषाणामकर्ज्योतिर्बाधमाना तमांसि ॥१ ॥

उषादेवी तरुण पत्नी की तरह सूर्यदेव रूपी पति के प्रकट होने के पहले ही जगत् के जीवों में कर्म करने की प्रेरणा भरने की शक्ति सूर्यदेव से ही पाती हैं । ऐसे समय में मनुष्य अग्निदेव को प्रदीप्त (प्रसन्न) करें । अग्निदेव प्रसन्न होकर तम को नष्ट करने वाली ज्योति प्रकट करते हैं ॥१ ॥

५७६८. **विश्वं प्रतीची सप्रथा उदस्थाद्रुशद्वासो बिभ्रती शुक्रमश्वैत् ।**
हिरण्यवर्णा सुदृशीकसन्दृग्गवां माता नेत्र्यह्नामरोचि ॥२ ॥

सर्व प्रसिद्ध देवी उषा जगत् के सम्मुख उदित होकर, तेजपूरित श्वेत वस्त्रों को धारण करके बढ़ रही हैं । स्वर्ण के रंग के तेज वाली, सुन्दर किरणों की माता एवं दिन की नेतृत्वकर्त्री देवी उषा अत्यधिक सुशोभित हो रही हैं ॥२ ॥

५७६९. **देवानां चक्षुः सुभगा वहन्ती श्वेतं नयन्ती सुदृशीकमश्वम् ।**
उषा अदर्शि रश्मिभिर्व्यक्ता चित्रामघा विश्वमनु प्रभूता ॥३ ॥

देवताओं की नेत्र-ज्योति को धारण करने वाली, सौभाग्यशालिनी, विलक्षण धनवाली, सुन्दर श्वेत वर्ण-किरणों द्वारा बढ़ती हुई (देवी उषा) विश्व में और अधिक प्रभापूर्ण हो रही हैं ॥३ ॥

५७७०. **अन्तिवामा दूरे अमित्रमुच्छोर्वीं गव्यूतिमभयं कृधी नः ।**
यावय द्वेष आ भरा वसूनि चोदय राधो गृणते मघोनि ॥४ ॥

हे उषादेवि ! आप प्रकाशित होकर, हमसे द्वेष करने वाले शत्रुओं को दूर करें । आप हमारी गो (इन्द्रियों) के उपयोग के क्षेत्र को भयरहित बनाएँ । हे धन-सम्पन्न उषादेवि ! आप धन लाकर स्तोताओं को प्रदान करें ॥४ ॥

५७७१. **अस्मे श्रेष्ठेभिर्भानुभिर्वि भाह्युषो देवि प्रतिरन्ती न आयुः ।**
इषं च नो दधती विश्ववारे गोमदश्वावद्रथवच्च राधः ॥५ ॥

हे उषादेवि ! आप हमारे लिए हितकारी सूर्य-रश्मियों सहित प्रकाशित होकर, हमारी आयु को बढ़ाएँ । हम सबको गौ, अश्व एवं रथों सहित पर्याप्त धन प्रदान करें ॥५ ॥

५७७२. **यां त्वा दिवो दुहितर्वर्धयन्त्युषः सुजाते मतिभिर्वसिष्ठाः ।**
सास्मासु धा रयिमृष्वं बृहन्तं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

हे उषादेवि ! आप द्युलोक की कुलीन पुत्री हैं । आपकी, वसिष्ठ ऋषिगण स्तुति करते हैं । आप हमें उपयोगी और महत्वपूर्ण धन प्रदान करें । आप हमारा पालन करें, कल्याण करें ॥६ ॥



[सूक्त - ७८]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- उषा । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५७७३. **प्रति केतवः प्रथमा अदृश्रन्नूर्ध्वा अस्या अञ्जयो वि श्रयन्ते ।**
उषो अर्वाचा बृहता रथेन ज्योतिष्मता वाममस्मभ्यं वक्षि ॥१ ॥

इन (देवी उषा) के प्रथम केतु (किरण पुंज) दिख रहे हैं । उनकी वे गतिशील (किरणें) ऊँचे भागों का आश्रय लेती हैं । हे उषादेवि ! आप हमारे लिए तेजोयुक्त रथ पर धन लेकर पधारें ॥१ ॥

५७७४. **प्रति षीमग्निर्जरते समिद्धः प्रति विप्रासो मतिभिर्गृणन्तः ।**
उषा याति ज्योतिषा बाधमाना विश्वा तमांसि दुरिताप देवी ॥२ ॥

(उषाकाल में) सर्वत्र अग्निदेव समिधाओं द्वारा प्रदीप्त होते हैं । ज्ञानी जन स्तोत्रों से स्तुति करते हुए देवत्व (की ओर) प्रगति करते हैं । देवी उषा सब अन्धकारों एवं पापों को क्षीण करती हुई जाती हैं ॥२ ॥

५७७५. **एता उ त्याः प्रत्यदृश्रन् पुरस्ताज्ज्योतिर्यच्छन्तीरुषसो विभातीः ।**
अजीजनन्त्सूर्यं यज्ञमग्निमपाचीनं तमो अगादजुष्टम् ॥३ ॥

आभामयी एवं तेजोमयी इन समस्त उषाओं का प्रथम दर्शन पूर्व में ही होता है । उषा काल में ही सूर्यदेव, अग्निदेव एवं यज्ञदेव प्रकट होते हैं । इनके तेज से निम्नगामी (गहरे स्थानों में परिव्याप्त) एवं अप्रिय अन्धकार नष्ट होता है ॥३ ॥

५७७६. **अचेति दिवो दुहिता मघोनी विश्वे पश्यन्त्युषसं विभातीम् ।**
आस्थाद्रथं स्वधया युज्यमानमा यमश्वासः सुयुजो वहन्ति ॥४ ॥

हे धनवती उषादेवि ! आप द्युलोक की पुत्री के रूप में प्रसिद्ध हैं । अन्न से भरपूर रथ पर आरूढ़ देवी उषा को समस्त लोग देखते हैं । नियोजित-सुशिक्षित घोड़े उस रथ को ले जाते हैं ॥४ ॥

५७७७. **प्रति त्वाद्य सुमनसो बुधन्तास्माकासो मघवानो वयं च ।**
तिल्विलायध्वमुषसो विभातीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे उषादेवि ! धनी एवं बुद्धिमान् जन तथा हम सब आपको जानते हैं । हे उषादेवि ! आप प्रकाशित होकर जगत् को स्नेहयुक्त करें । आप कल्याणकारी साधनों से सदैव हमारी रक्षा करें ॥५ ॥

[सूक्त - ७९]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- उषा । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५७७८. **व्यु१षा आवः पथ्या३ जनानां पञ्च क्षितीर्मानुषीर्बोधयन्ती ।**
सुसन्दृग्भिरुक्षभिर्भानुमश्रेद्वि सूर्यो रोदसी चक्षसावः ॥१ ॥

मानवों की हितैषी देवी उषा अन्धकार को नष्ट करती हुई पाँचों जनों को, सूर्याश्रित, उत्तम, तेजस्वी रश्मियों द्वारा जगाती हैं । सूर्य देव भी अपने तेज से द्यावा-पृथिवी को भर देते हैं ॥१ ॥

५७७९. **व्यञ्जते दिवो अन्तेष्वक्तून्विशो न युक्ता उषसो यतन्ते ।**
सं ते गावस्तम आ वर्तयन्ति ज्योतिर्यच्छन्ति सवितेव बाहू ॥२ ॥



उषा देवियाँ अपने तेज को अन्तरिक्ष में फैलाती हैं एवं प्रजाओं की तरह परस्पर मिलकर, अन्धकार को विनष्ट करने का यत्न करती हैं। सूर्यदेव की भाँति ही वे (देवी उषा) ज्योतित बाहुओं (किरणों) को फैलाती हैं ॥२ ॥

५७८०. **अभूदुषा इन्द्रतमा मघोन्यजीजनत् सुविताय श्रवांसि ।**
वि दिवो देवी दुहिता दधात्यङ्गिरस्तमा सुकृते वसूनि ॥३ ॥

धन-ऐश्वर्य-सम्पन्न श्रेष्ठ स्वामिनी देवी उषा प्रकट हुईं एवं सबके निमित्त हितकारी अन्न को उत्पन्न किया । द्युलोक की पुत्री देवी उषा तेजस्विनी होकर श्रेष्ठ कर्म करने वालों के लिए धन प्रदान करती हैं ॥३ ॥

५७८१. **तावदुषो राधो अस्मभ्यं रास्व यावत्स्तोतृभ्यो अरदो गृणाना ।**
यां त्वा जज्ञुर्वृषभस्या रवेण वि दृळहस्य दुरो अद्रेरौर्णोः ॥४ ॥

हे उषादेवि ! आपने जो धन पहले भी स्तोताओं को प्रदान किये हैं, प्रसन्न होकर वैसे ही धन हमें भी दें । वृषभ (प्रवृद्ध स्तोत्र) के रव (शब्द) को सुनकर हम सब आपको (आपकी उपस्थिति को) जानते हैं । आपने सुदृढ़ पर्वत के किले का द्वार (जिसमें पणियों द्वारा गौएँ बँधी थीं) खोल दिया है ॥४ ॥

५७८२. **देवंदेवं राधसे चोदयन्त्यस्मद्र्यक्सूनृता ईरयन्ती ।**
व्युच्छन्ती नः सनये धियो धा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे उषादेवि ! आप स्तोताओं को धन के लिए एवं हमें सत्यभाषण के लिए प्रेरित करती हैं । आप अन्धकार का नाश करती हैं । हमें धन प्रदान करने के लिए आप स्थिरमति हों । कल्याणकारी साधनों द्वारा आप हमारा पालन करें ॥५ ॥

[सूक्त - ८०]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** उषा । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५७८३. **प्रति स्तोमेभिरुषसं वसिष्ठा गीर्भिर्विप्रासः प्रथमा अबुध्रन् ।**
विवर्तयन्तीं रजसी समन्ते आविष्कृण्वतीं भुवनानि विश्वा ॥१ ॥

वसिष्ठ गोत्र के ज्ञानी ऋषिगण सर्वप्रथम अपने स्तोत्रों द्वारा स्तुति करके, देवी उषा को जगाते हैं । देवी उषा समान क्षेत्रवाली द्यावा-पृथिवी और सब प्राणियों को प्रकाश से भर देती हैं ॥१ ॥

५७८४. **एषा स्या नव्यमायुर्दधाना गूढ्वी तमो ज्योतिषोषा अबोधि ।**
अग्र एति युवतिरह्रयाणा प्राचिकितत्सूर्यं यज्ञमग्निम् ॥२ ॥

ये वही देवी उषा हैं, जो तरुण होती हुई अपने तेज से गहन अन्धकार को दूर करती हैं । संकोच न करने वाली नव युवती (पत्नी) की तरह देवी उषा अपने (पति) सूर्य के पहले ही आगमन करती हैं । वे , सूर्य, यज्ञ एवं अग्नि को प्रज्ञापित (सूचित) करती हैं ॥२ ॥

५७८५. **अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।**
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३ ॥

अनेकों घोड़ों और गौओं वाली देवी उषा घृत एवं दुग्ध को सर्वत्र बढ़ाती हैं । हे उषादेवि ! आप हमारा कल्याणकारी साधनों से पालन करें ॥३ ॥



[सूक्त - ८१]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- उषा । छन्द- प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

५७८६. **प्रत्यु अदर्श्यायत्यु१च्छन्ती दुहिता दिवः ।**
अपो महि व्ययति चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ॥१ ॥

द्युलोक की पुत्री, अन्धकार को नष्ट करने वाली देवी उषा दिखाई दे रही हैं। वे अन्धकार को दूर करके प्रकाश फैलाती हैं, ताकि सब लोग सब कुछ देख सकें ॥१ ॥

५७८७. **उदुस्रियाः सृजते सूर्यः सचाँ उद्यन्नक्षत्रमर्चिवत् ।**
तवेदुषो व्युषि सूर्यस्य च सं भक्तेन गमेमहि ॥२ ॥

सूर्यदेव उदित होने के पूर्व नक्षत्रों को प्रकाशित करते हैं। सूर्यदेव रश्मियों को एक साथ विकीर्ण करते हैं। हे उषादेवि ! आपके एवं सूर्यदेव के प्रकाशित होने पर हमें श्रेष्ठ अन्न प्राप्त हो ॥२॥

५७८८. **प्रति त्वा दुहितर्दिव उषो जीरा अभुत्स्महि ।**
या वहसि पुरु स्पार्हं वनन्वति रत्नं न दाशुषे मयः ॥३ ॥

द्युलोक की पुत्री हे उषादेवि ! हम शीघ्रतापूर्वक कर्म करके आपको जगायेंगे । हे धनवती देवि ! आप यजमान के सुख के लिए बहुत-सा श्रेष्ठ धन प्रदान करती हैं ॥३ ॥

५७८९. **उच्छन्ती या कृणोषि मंहना महि प्रख्यै देवि स्वर्दृशे ।**
तस्यास्ते रत्नभाज ईमहे वयं स्याम मातुर्न सूनवः ॥४ ॥

हे उषा देवि ! आप अन्धकार को नष्ट कर, अपना महत्त्व प्रकट करती हैं। रत्नों वाली आप जगत् के दर्शन के लिए प्रकाश करती हैं। जैसे माता , पुत्रों को पोषित करती है, उसी प्रकार आप हमें भी पोषित करें ॥४ ॥

५७९०. **तच्चित्रं राध आ भरोषो यद्दीर्घश्रुत्तमम् ।**
यत्ते दिवो दुहितर्मर्तभोजनं तद्रास्व भुनजामहै ॥५ ॥

हे उषादेवि ! आप हमें वह धन प्रदान करें, जिससे यश बढ़े । हे स्वर्गलोक की पुत्री उषा देवि ! आप अपने पास के मानवोचित भोग्य अन्नों को हमें प्रदान करें ॥५ ॥

५७९१. **श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनं वाजाँ अस्मभ्यं गोमतः ।**
चोदयित्री मघोनः सूनृतावत्युषा उच्छदप स्रिधः ॥६ ॥

हे उषादेवि ! आप अपने स्तुतिकर्त्ताओं को यश और अक्षय धन प्रदान करें । हम सबको गौओं के सहित अन्न प्रदान करें । सत्य भाषण एवं यज्ञीय कर्म करने की प्रेरिका हे उषादेवि ! आप शत्रुओं का नाश करें ॥६ ॥

[सूक्त - ८२]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- इन्द्रावरुण । छन्द- जगती ।]

५७९२. **इन्द्रावरुणा युवमध्वराय नो विशे जनाय महि शर्म यच्छतम् ।**
दीर्घप्रयज्युमति यो वनुष्यति वयं जयेम पृतनासु दूढ्यः ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव और वरुणदेव ! आप दोनों हमारे प्रजाजनों को यज्ञ कर्म करने के लिए विशाल गृह प्रदान करें ।



महान् यज्ञकर्त्ताओं को कष्ट देने वाले बलिष्ठ शत्रुओं को हम युद्ध में आपकी कृपा से जीत लें ॥१ ॥

५७९३. **सम्राळन्यः स्वराळन्य उच्यते वां महान्ताविन्द्रावरुणा महावसू ।**
विश्वे देवासः परमे व्योमनि सं वामोजो वृषणा सं बलं दधुः ॥२ ॥

महत्त्वपूर्ण धन के स्वामी हे महान् इन्द्र और वरुणदेव ! आप में से एक स्वराट् तथा दूसरा सम्राट् है । कामनाओं की पूर्ति करने वाले आप दोनों को परमोच्च आकाश में विश्वेदेवों ने तेज और बल प्रदान किया है ॥२ ॥

५७९४. **अन्वपां खान्यतृन्तमोजसा सूर्यमैरयतं दिवि प्रभुम् ।**
इन्द्रावरुणा मदे अस्य मायिनोऽपिन्वतमपितः पिन्वतं धियः ॥३ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप दोनों ने सर्वप्रेरक सवितादेव को आकाश में गमन के लिए प्रेरित किया । आपने अपनी सामर्थ्य से जल वृष्टि कराई । शक्तिवर्धक सोमपान करके आपने नदियों को जल से पूरित किया एवं हमारे सत्कर्मों को पूर्ण किया ॥३ ॥

५७९५. **युवामिद्युत्सु पृतनासु वह्नयो युवां क्षेमस्य प्रसवे मितज्ञवः ।**
ईशाना वस्व उभयस्य कारव इन्द्रावरुणा सुहवा हवामहे ॥४ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! ज्ञानीजन घुटने टेक कर एवं योद्धा संग्राम के समय सुरक्षा की आशा से आपको पुकारते हैं । दिव्यलोक एवं पृथ्वीलोक के धन के स्वामी , सरलता से पुकार सुनने वाले आपको हम स्तोतागण सहायता के लिए पुकारते है ॥४ ॥

५७९६. **इन्द्रावरुणा यदिमानि चक्रथुर्विश्वा जातानि भुवनस्य मज्मना ।**
क्षेमेण मित्रो वरुणं दुवस्यति मरुद्भिरुग्रः शुभमन्य ईयते ॥५ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आपने जगत् के समस्त प्राणियों का सृजन किया है । लोक कल्याण के लिए सक्रिय वरुणदेव का सहयोग मित्रदेव करते हैं । दूसरे (इन्द्रदेव) मरुद्‌देवों के साथ तेजस्वी होकर सुशोभित होते हैं ॥५ ॥

५७९७. **महे शुल्काय वरुणस्य नु त्विष ओजो मिमाते ध्रुवमस्य यत्स्वम् ।**
अजामिमन्यः श्नथयन्तमातिरद्दभ्रेभिरन्यः प्र वृणोति भूयसः ॥६ ॥

इन्द्र और वरुणदेव, महान् सम्पत्ति एवं स्वयं के स्थायी बल को बढ़ाते हुए तेजस्वी होते हैं । इनका यह बल नित्य और असामान्य है । वरुणदेव हिंसक शत्रुओं को भी पार कर जाते हैं एवं दूसरे (इन्द्रदेव) थोड़े साधनों के द्वारा ही अनेकानेक शत्रुओं को बाधित कर देते हैं ॥६ ॥

५७९८. **न तमंहो न दुरितानि मर्त्यमिन्द्रावरुणा न तपः कुतश्चन ।**
यस्य देवा गच्छथो वीथो अध्वरं न तं मर्तस्य नशते परिह्वृतिः ॥७ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप जिसके यज्ञ में पहुँचते हैं एवं जिसका आप कल्याण करना चाहते हैं, उस मानव को पाप, संताप एवं दुष्टकर्म कष्ट नहीं पहुँचा सकते । वह आपकी कृपा से सुरक्षित रहता है ॥७ ॥

५७९९. **अर्वाङ्नरा दैव्येनावसा गतं शृणुतं हवं यदि मे जुजोषथः ।**
युवोर्हि सख्यमुत वा यदाप्यं मार्डीकमिन्द्रावरुणा नि यच्छतम् ॥८ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप हमारे स्तोत्रों को सुनें और यदि प्रसन्न हों, तो हमारे पास आकर हमें दिव्य संरक्षण प्रदान करें । आप दोनों मित्रता, बन्धुत्व एवं सुख के साधन, हमें प्रदान करें ॥८ ॥



५८००. **अस्माकमिन्द्रावरुणा भरेभरे पुरोयोधा भवतं कृष्ट्योजसा ।**
यद्वां हवन्त उभये अध स्पृधि नरस्तोकस्य तनयस्य सातिषु ॥९ ॥

अपने बल से शत्रुओं को घसीटने वाले हे इन्द्रदेव और वरुणदेव ! आप संग्राम-भूमि में हमारा नेतृत्व करें । प्राचीन एवं अर्वाचीन दोनों समय के मनुष्य युद्ध में विजय, पुत्र-पौत्रादि एवं सुख प्राप्ति की कामना से आपका आवाहन करते हैं ॥९ ॥

५८०१. **अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्नं यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः ।**
अवध्रं ज्योतिरदितेर्ऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे ॥१० ॥

इन्द्रदेव, वरुणदेव, मित्रदेव और अर्यमादेव हमें विशाल तेजस्वी निवास, धन एवं सुख प्रदान करें । यज्ञ को बढ़ाने वाली देवी अदिति का तेज हमारा पालन करे । हम सब सविता देवता की स्तुति करते हैं ॥१० ॥

[सूक्त - ८३]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** इन्द्रावरुण । **छन्द-** जगती ।]

५८०२. **युवां नरा पश्यमानास आप्यं प्राचा गव्यन्तः पृथुपर्शवो ययुः ।**
दासा च वृत्रा हतमार्याणि च सुदासमिन्द्रावरुणावसावतम् ॥१ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! जो गौओं को पाने की इच्छा से परशु को धारण करते हों एवं आपकी ओर बन्धुभाव से देखते हों, उन्हें आप उन्नति की ओर ले चलें । आप दास, वृत्र और सुदास के शत्रुओं का संहार करके अपने भक्तों का रक्षण करें ॥१ ॥

५८०३. **यत्रा नरः समयन्ते कृतध्वजो यस्मिन्नाजा भवति किं चन प्रियम् ।**
यत्रा भयन्ते भुवना स्वर्दृशस्तत्रा न इन्द्रावरुणाधि वोचतम् ॥२ ॥

जहाँ मनुष्य अपनी-अपनी ध्वजाएँ उठाये युद्ध-संग्राम के निमित्त एकत्रित होते हैं, ऐसे युद्धों से मानवों का अहित ही होता है । हे इन्द्रदेव और वरुणदेव ! आप सुख-शान्ति जैसी स्वर्गीय स्थिति के पक्षधर हम सबको संग्राम में संरक्षण प्रदान करें ॥२ ॥

५८०४. **सं भूम्या अन्ता ध्वसिरा अदृक्षतेन्द्रावरुणा दिवि घोष आरुहत् ।**
अस्थुर्जनानामुप मामरातयोऽर्वागवसा हवनश्रुता गतम् ॥३ ॥

युद्ध में पृथ्वी के सारे अन्न, सेना द्वारा नष्ट किये जाते हैं और संग्राम के लिए तत्पर सैनिकों का कोलाहल आकाश में गूँजता है । मानवों के शत्रु हमारे सम्मुख आ गये हैं, अतः आवाहन सुनने वाले हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप हमारे पास आयें और सुरक्षा प्रदान करें ॥३ ॥

५८०५. **इन्द्रावरुणा वधनाभिरप्रति भेदं वन्वन्ता प्र सुदासमावतम् ।**
ब्रह्माण्येषां शृणुतं हवीमनि सत्या तृत्सूनामभवत्पुरोहितिः ॥४ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आपने अपने आयुधों के द्वारा 'भेद' (शत्रु) को मार डाला (विघटन दूर करके संगठित किया) तथा अपने भक्त 'सुदास' राजा की रक्षा की । युद्धकाल में 'तृत्सुओं' का पौरोहित्य सफल रहा; क्योंकि आपने उनके स्तोत्रों को सुना ॥४ ॥



५८०६. इन्द्रावरुणावभ्या तपन्ति माघान्यर्यो वनुषामरातयः ।
युवं हि वस्व उभयस्य राजथोऽध स्मा नोऽवतं पार्ये दिवि ॥५ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! शत्रुओं के हथियार एवं हिंसक शत्रु हमें अति कष्ट दे रहे हैं । दिव्य एवं पार्थिव दोनों धन के स्वामी हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप संग्राम के समय हमारी रक्षा करें ॥५॥

५८०७. युवां हवन्त उभयास आजिष्विन्द्रं च वस्वो वरुणं च सातये ।
यत्र राजभिर्दशभिर्निबाधितं प्र सुदासमावतं तृत्सुभिः सह ॥६ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! युद्ध के समय दोनों (सुदास और तृत्सु) लोग धन - प्राप्ति की कामना से आप दोनों का आवाहन करते हैं । इस युद्ध में दस राजाओं द्वारा पीड़ित 'सुदास' की 'तृत्सुओं' सहित आपने रक्षा की ॥६ ॥

५८०८. दश राजानः समिता अयज्यवः सुदासमिन्द्रावरुणा न युयुधुः ।
सत्या नृणामद्मसदामुपस्तुतिर्देवा एषामभवन्देवहूतिषु ॥७ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप दोनों के संरक्षण में रहने वाले 'सुदास' राजा को यज्ञ विहीन दस राजा मिलकर भी परास्त नहीं कर सके । हविर्दान कर्त्ताओं के स्तोत्र-पाठ सफल हुए । इनके यज्ञ में सभी देवता उपस्थित थे ॥७ ॥

५८०९. दाशराज्ञे परियत्ताय विश्वतः सुदास इन्द्रावरुणावशिक्षतम् ।
श्वित्यञ्चो यत्र नमसा कपर्दिनो धिया धीवन्तो असपन्त तृत्सवः ॥८ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! दस राजाओं ने मिलकर 'सुदास' को चारों ओर से घेर लिया था, तब आपने बल प्रदान करके उनकी सुरक्षा की थी; क्योंकि उस देश में निर्मल जटाधारी, ज्ञानी तृत्सुजन, नमस्कारपूर्वक यज्ञकर्म में सेवा करते हैं ॥८ ॥

५८१०. वृत्राण्यन्यः समिथेषु जिघ्नते व्रतान्यन्यो अभि रक्षते सदा ।
हवामहे वां वृषणा सुवृक्तिभिरस्मे इन्द्रावरुणा शर्म यच्छतम् ॥९ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आपमें से इन्द्रदेव संग्राम में शत्रुओं के संहारक हैं एवं दूसरे वरुणदेव सदैव सत्कर्मों के रक्षक हैं । अभीष्ट कामनाओं की वर्षा करने वाले आप दोनों का हम स्तुति द्वारा आवाहन करते हैं । आप हमें सुखी बनाएँ ॥९ ॥

५८११. अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्नं यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः ।
अवध्रं ज्योतिरदितेर्ऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे ॥१० ॥

इन्द्रदेव, वरुणदेव, मित्रदेव एवं अर्यमादेव हमें विशाल निवास, तेजस्वी धन एवं सुख प्रदान करें । यज्ञ को बढ़ाने वाली देवी अदिति का तेज हमारा पालन करे । हम सब सवितादेव की स्तुति करते हैं ॥१० ॥

[सूक्त - ८४]

[ऋषि- वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता- इन्द्रावरुण । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

५८१२. आ वां राजानावध्वरे ववृत्यां हव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः ।
प्र वां घृताची बाह्वोर्दधाना परि त्मना विषुरूपा जिगाति ॥१ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! हम स्तुति एवं आहुतियों द्वारा इस यज्ञ में आपको बुलाते हैं । हाथों में धारण की गई विविध हवि एवं घृत से आपूरित जुहू (पात्र) स्वयं आपकी ओर आती है ॥१ ॥



५८१३. **युवो राष्ट्रं बृहदिन्वति द्यौर्यौ सेतृभिररज्जुभिः सिनीथः ।**
परि नो हेळो वरुणस्य वृज्या उरुं न इन्द्रः कृणवदु लोकम् ॥२ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आपका द्युलोकरूपी विशाल राष्ट्र सबको प्रसन्न करता है । आप रज्जुरहित बन्धनों (रोगादि-मोहादि) के द्वारा पापियों को बाँध लें । वरुणदेव हमें सुरक्षित रखते हुए अन्यों (दुष्टों) पर क्रोध करें । इन्द्रदेव हमारे लिए क्षेत्र का विस्तार करें ॥२ ॥

५८१४. **कृतं नो यज्ञं विदथेषु चारुं कृतं ब्रह्माणि सूरिषु प्रशस्ता ।**
उपो रयिर्देवजूतो न एतु प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेतम् ॥३ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप हमारे गृहों के यज्ञों को उत्तम बनाएँ एवं स्तोताओं के स्तोत्रों को प्रशंसित बनाएँ । देवताओं द्वारा प्रेरित धन हमें प्राप्त हो ; प्रशंसनीय रक्षण-साधनों से वे हमें संवर्धित करें ॥३ ॥

५८१५. **अस्मे इन्द्रावरुणा विश्ववारं रयिं धत्तं वसुमन्तं पुरुक्षुम्**
प्र य आदित्यो अनृता मिनात्यमिता शूरो दयते वसूनि ॥४ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! हम सबके लिए श्रेष्ठ घर, अन्न एवं धन प्रदान करें । जो आदित्य असत्य को नष्ट करते हैं, वे देव ही पराक्रमी जनों को धनवान् बनाते हैं ॥४ ॥

५८१६. **इयमिन्द्रं वरुणमष्ट मे गीः प्रावत्तोके तनये तूतुजाना ।**
सुरत्नासो देववीतिं गमेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

इन्द्र और वरुणदेव तक हमारी स्तुतियाँ पहुँचें , जो पुत्र-पौत्रादि सहित हमारी रक्षा करें । हम श्रेष्ठ रत्न वाले होकर सप्त कर्मरूप यज्ञ करें । आप अपनी कल्याणकारी संरक्षक शक्तियों से हमारा पालन करें ॥५ ॥

[सूक्त - ८५]

[**ऋषि-** वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता-** इन्द्रावरुण । **छन्द-** त्रिष्टुप् ।]

५८१७. **पुनीषे वामरक्षसं मनीषां सोममिन्द्राय वरुणाय जुह्वत् ।**
घृतप्रतीकामुषसं न देवीं ता नो यामन्नुरुष्यतामभीके ॥१ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप दोनों की अराक्षस मनीषा (दैवी विचार-प्रवाह) को हम (वसिष्ठ ऋषि) , देवी उषा की भाँति पवित्र करते हैं । तेजस्वी स्तुति एवं सोम की आहुतियों से आप दोनों को प्रसन्न करते हैं, आप संग्राम के समय हमारी रक्षा करें ॥१ ॥

५८१८. **स्पर्धन्ते वा उ देवहूये अत्र येषु ध्वजेषु दिद्यवः पतन्ति ।**
युवं ताँ इन्द्रावरुणावमित्रान्हतं पराचः शर्वा विषूचः ॥२ ॥

शत्रु पक्ष एवं हमारे पक्ष के वीरों के परस्पर स्पर्द्धा वाले युद्ध में ध्वजाओं पर भी शस्त्र प्रहार होते हैं । हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप दोनों हिंसक आयुधों द्वारा शत्रुओं का नाश करें ॥२ ॥

५८१९. **आपश्चिद्धि स्वयशसः सदःसु देवीरिन्द्रं वरुणं देवता धुः ।**
कृष्टीरन्यो धारयति प्रविक्ता वृत्राण्यन्यो अप्रतीनि हन्ति ॥३ ॥

दिव्य सोम, यज्ञ-गृहों में तेजस्वी होकर इन्द्र और वरुण आदि देवताओं को धारण किए हुए हैं । वरुणदेव प्रजाजनों को पृथक्-पृथक् धारण करते हैं एवं इन्द्रदेव दुर्धर्ष शत्रुओं का भी नाश करते हैं ॥३ ॥



५८२०. **स सुक्रतुर्ऋतचिदस्तु होता य आदित्य शवसा वां नमस्वान्।**
आववर्तदवसे वां हविष्मानसदित्स सुविताय प्रयस्वान् ॥४ ॥

हे अदिति पुत्रो ! आप यज्ञ विधि के परम ज्ञाता हैं। जो नमस्कारपूर्वक आपकी सेवा करते हैं, जो हविष्यान्न से आहुति प्रदान करने के निमित्त आपका आवाहन करते हैं, वे अन्नसहित उत्तम फलों को प्राप्त करते हैं ॥४ ॥

५८२१. **इयमिन्द्रं वरुणमष्ट मे गीः प्रावत्तोके तनये तूतुजाना।**
सुरत्नासो देववीतिं गमेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

इन्द्र और वरुणदेव तक हमारी स्तुतियाँ पहुँचें। वे हमारी एवं हमारे पुत्र-पौत्रों की रक्षा करें। हम उत्तम रत्नयुक्त होकर सत्कर्मरूप यज्ञ सम्पन्न करें। आप अपनी कल्याणकारी संरक्षक शक्तियों से हमारा पालन करें ॥५॥

[सूक्त - ८६]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता** - वरुण। **छन्द** - त्रिष्टुप्]

५८२२. **धीरा त्वस्य महिना जनूंषि वि यस्तस्तम्भ रोदसी चिदुर्वी।**
प्र नाकमृष्वं नुनुदे बृहन्तं द्विता नक्षत्रं पप्रथच्च भूम ॥१ ॥

इन धैर्यवान् वरुणदेव का जन्म महिमायुक्त है। इन्हीं देव ने विस्तृत द्यावा-पृथिवी को स्थिर किया है। ये दोनों समय में (दिन में) विशाल सूर्य एवं (रात्रि में) नक्षत्रों को प्रेरित करते हैं। इन्हीं देव ने भूमि को विस्तृत किया है ॥१॥

५८२३. **उत स्वया तन्वा३ सं वदे तत्कदा न्व१न्तर्वरुणे भुवानि।**
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृळीकं सुमना अभि ख्यम् ॥२ ॥

क्या हम अपने इस शरीर के साथ वरुणदेव से बात करेंगे ? कब वरुणदेव के साथ रहेंगे ? क्या हमारी आहुति वरुणदेव शान्तिपूर्वक स्वीकार करेंगे ? हम कब श्रेष्ठ विचारवान् होकर वरुणदेव के दर्शन करेंगे ? ॥२ ॥

५८२४. **पृच्छे तदेनो वरुण दिदृक्षूपो एमि चिकितुषो विपृच्छम्।**
समानमिन्मे कवयश्चिदाहुरयं ह तुभ्यं वरुणो हृणीते ॥३ ॥

हे वरुणदेव ! हमने विभिन्न विद्वानों से पूछा है, सभी ने हमें बताया कि "वरुणदेव क्रोधित हैं।" वह बात (क्रोध का कारण) हम आप से ही पूछते हैं ॥३ ॥

५८२५. **किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत्स्तोतारं जिघांससि सखायम्।**
प्र तन्मे वोचो दूळभ स्वधावोऽव त्वानेना नमसा तुर इयाम् ॥४ ॥

हे वरुणदेव ! हमने ऐसा कौन-सा अपराध किया है, जिसके कारण आप हमारे मित्र स्तोता को मारते हैं। हे दुर्धर्ष तेजस्वी वरुणदेव ! आप हमारे द्वारा किया गया वह पाप बतायें, जिसका प्रायश्चित्त करके हम आपको (आपकी कृपा दृष्टि) प्राप्त करें ॥४ ॥

५८२६. **वि द्रुग्धानि पित्र्या सृजा नोऽव या वयं चकृमा तनूभिः।**
अव राजन्पशुतृपं न तायुं सृजा वत्सं न दाम्नो वसिष्ठम् ॥५ ॥

हे वरुणदेव ! आप हमारे स्वकृत एवं वंशानुगत पापों का शमन करें। हे राजन् ! हे वरुणदेव ! चोर प्रायश्चित्त स्वरूप पशुओं को घासादि खिलाकर उन्हें तृप्त करके, चोरी के पाप से उसी तरह मुक्त हो जाते हैं, जैसे बँधा हुआ बछड़ा मुक्त हो जाता है। आप हमें भी इसी तरह पापों से मुक्त करें ॥५ ॥



५८२७. **न स स्वो दक्षो वरुण ध्रुतिः सा सुरा मन्युर्विभीदको अचित्तिः ।**
अस्ति ज्यायान्कनीयस उपारे स्वप्नश्चनेदनृतस्य प्रयोता ॥६ ॥

वह पाप स्वयं के दोष से नहीं होता है, बल्कि मद्यपान, क्रोध, जुआ (द्यूत-क्रीड़ा) और अज्ञान आदि से उत्पन्न होता है । पाप के क्षेत्र में जो ज्येष्ठ (कुशल) हैं, वे कनिष्ठ (अल्पज्ञ) को पाप में लगाते हैं । ऐसे लोग वृत्ति बिगड़ जाने के कारण स्वप्न में भी पाप में प्रवृत्त रहते हैं (तो जाग्रत् अवस्था का क्या कहना ? जाग्रत् अवस्था में तो निरन्तर पाप में ही निरत रहते हैं ।) ॥६ ॥

५८२८. **अरं दासो न मीळ्हुषे कराण्यहं देवाय भूर्णयेऽनागाः ।**
अचेतयदचितो देवो अर्यो गृत्सं राये कवितरो जुनाति ॥७ ॥

हे कामनाओं की पूर्ति करने वाले, पालक वरुणदेव ! हम निष्पाप होकर आपकी भक्ति करते हैं । आप हम अज्ञानियों को ज्ञान प्रदान करें । हे ज्ञानी वरुणदेव ! आप स्तोताओं को धन की ओर प्रेरित करें ॥७ ॥

५८२९. **अयं सु तुभ्यं वरुण स्वधावो हृदि स्तोम उपश्रितश्चिदस्तु ।**
शं नः क्षेमे शमु योगे नो अस्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८ ॥

हे अन्नवान् वरुणदेव ! हमारा यह स्तोत्र आपके हृदय में स्थान पाये । आप प्रसन्न होकर हमारे क्षेत्र और उपलब्धियों को कल्याणकारी बनाएँ । आप अपने कल्याणकारी रक्षण-साधनों द्वारा सदैव हमारा पालन करें ॥८ ॥

[सूक्त - ८७]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वरुण । **छन्द** - त्रिष्टुप्]

५८३०. **रदत्पथो वरुणः सूर्याय प्रार्णांसि समुद्रिया नदीनाम् ।**
सर्गो न सृष्टो अर्वतीर्ऋतायञ्चकार महीरवनीरहभ्यः ॥१ ॥

वरुणदेव ने सूर्यदेव के लिए पथ निर्धारित कर दिया है । समुद्र को प्राप्त होने वाली नदियों को जल से भर दिया है । गतिशील (अश्व या प्रवाहित जल) चञ्चला (अश्वा अथवा प्रवहमान नदियों) की ओर जाता है । द्रुतगामी (सूर्य) ने महती रात्रि को दिन से पृथक् कर दिया है ॥१ ॥

५८३१. **आत्मा ते वातो रज आ नवीनोत्पशुर्न भूर्णिर्यवसे ससवान् ।**
अन्तर्मही बृहती रोदसीमे विश्वा ते धाम वरुण प्रियाणि ॥२ ॥

हे वरुणदेव ! वायु आपकी आत्मा है । यह वायु जल को चारों ओर भेजता है । जैसे पशु घासादि (आहार) से अन्नोत्पादक होता है, वैसे ही जगत् का पोषक वायु भी (अन्नोत्पादक) है । हे वरुणदेव ! महान् और विस्तृत द्यावा-पृथिवी के मध्य आपके समस्त स्थान लोकप्रिय हैं ॥२ ॥

[यह वैज्ञानिक तथ्य है कि पानी हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन का रासायनिक यौगिक है, इस आधार पर वायु को जल की आत्मा कहना उचित ही है । वायु ही जल को (वाष्प या मेघों के रूप में) सभी स्थानों पर पहुँचाता है । यह तथ्य सर्वमान्य है ।]

५८३२. **परि स्पशो वरुणस्य स्मदिष्टा उभे पश्यन्ति रोदसी सुमेके ।**
ऋतावानः कवयो यज्ञधीराः प्रचेतसो य इषयन्त मन्म ॥३ ॥

वरुणदेव के सभी अनुचरगण प्रशंसनीय गति वाले हैं । वे सुन्दर द्यावा-पृथिवी के रूप में निरीक्षण करते हैं । वे सत्कर्म करने वालों , यज्ञ करने वालों एवं प्रज्ञावान् ऋषियों के स्तोत्रों का निरीक्षण करते तथा इष्ट तक पहुँचाते हैं ॥३ ॥



५८३३. **उवाच मे वरुणो मेधिराय त्रिः सप्त नामाघ्न्या बिभर्ति ।**
विद्वान्पदस्य गुह्या न वोचद्युगाय विप्र उपराय शिक्षन् ॥४ ॥

वरुणदेव ने मुझ मेधावी (शिष्य या ऋत्विक्) से कहा "गौ (गाय, किरण, वाणी या पृथ्वी) के त्रि-सप्त (तीन X सात) नाम (भेद) हैं । पास आए (जिज्ञासु) शिष्य को शिक्षण देते हुए उन्होंने गुप्त पद प्रकट कर दिया ॥४ ॥

[किरणों के तीन मुख्य वर्ग हैं, दृश्य किरणें (विज़िबल), अवरक्त (इन्फ्रारैड) तथा पराबैंगनी (अल्ट्रावॉयलेट) । दृश्य किरणों के पुनः सात वर्ग हैं। इन्फ्रारैड एवं अल्ट्रावॉयलेट के भी सात-सात ही होना युक्तिसंगत है। वाणी (संगीत) में भी तीन (मंद्र, मध्य एवं तार) सप्तक तथा प्रत्येक में सात स्वर सर्वमान्य है। इसीप्रकार अन्यों के सन्दर्भ में भी शोध की जा सकती है]

५८३४. **तिस्रो द्यावो निहिता अन्तरस्मिन्तिस्रो भूमीरुपराः षड्विधानाः ।**
गृत्सो राजा वरुणश्चक्र एतं दिवि प्रेङ्खं हिरण्ययं शुभे कम् ॥५ ॥

वरुणदेव के अन्तर्गत (अधिकार क्षेत्र मे) द्युलोक के तीन विभाग एवं भूलोक के तीन प्रकार के विभाग हैं । छः प्रकार के विभाग अर्थात् छः ऋतुएँ भी हैं । वरुण राजा ने स्वर्ण के समान वर्ण वाले सूर्यदेव को द्युलोक में सबके हितों की रक्षा के लिए दीप्तिमान् बनाया है ॥५ ॥

५८३५. **अव सिन्धुं वरुणो द्यौरिव स्थाद् द्रप्सो न श्वेतो मृगस्तुविष्मान् ।**
गम्भीरशंसो रजसो विमानः सुपारक्षत्रः सतो अस्य राजा ॥६ ॥

वरुणदेव ने आकाश के समान ही समुद्र की स्थापना की है । वरुणदेव सोमरस के समान शुभ्रवर्ण, गौर मृग की तरह बलवान् हैं । वे अपने अति प्रशंसनीय बल के द्वारा अन्तरिक्ष का निर्माण करने वाले, दु:खों से पार ले जाने वाले एक मात्र राजा हैं ॥६ ॥

५८३६. **यो मृळयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे अनागाः ।**
अनु व्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

जो वरुणदेव पापियों को भी प्रायश्चित्त करने पर, क्षमा करके सुख प्रदान करते हैं; उन्हीं धनवान् वरुणदेव के व्रतों का यथाक्रम संवर्धन करके, निष्पाप होकर हम उनके पास निवास करेंगे । आप (वरुणदेव) सदैव ही कल्याणकारी साधनों से हमारा पालन करें ॥७ ॥

[सूक्त - ८८]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वरुण । **छन्द** - त्रिष्टुप्]

५८३७. **प्र शुन्ध्युवं वरुणाय प्रेष्ठां मतिं वसिष्ठ मीळहुषे भरस्व ।**
य ईमर्वाञ्चं करते यजत्रं सहस्रामघं वृषणं बृहन्तम् ॥१ ॥

हे वसिष्ठ ! आप कामनाओं की पूर्ति करने वाले वरुणदेव के निमित्त शुद्ध एवं प्रिय स्तुतियाँ करें । वरुणदेव महान्, धनवान्, बलवान् एवं यजन करने योग्य हैं । वरुणदेव की कृपा से सूर्यदेव हमारे लिए प्रकट होते हैं ॥१ ॥

५८३८. **अधा न्वस्य सन्दृशं जगन्वानग्नेरनीकं वरुणस्य मंसि ।**
स्व१र्यदश्मन्नधिपा उ अन्धोऽभि मा वपुर्दृशये निनीयात् ॥२ ॥

वरुणदेव जब सुन्दर पत्थर से निकले सोमरस का पान प्रचुर मात्रा में कर लेते हैं, तब वे अपने सुन्दर स्वरूप का हमें दर्शन कराते हैं । हम इन वरुणदेव के सुन्दर स्वरूप का दर्शन करके अग्निदेव की ज्वालाओं की स्तुति करते हैं ॥२ ॥

५८३९. **आ यद्रुहाव वरुणश्च नावं प्र यत्समुद्रमीरयाव मध्यम् ।**
अधि यदपां स्नुभिश्चराव प्र प्रेङ्ख ईङ्खयावहै शुभे कम् ॥३ ॥

जब हम नौका में वरुणदेव के साथ बैठे, नौका को समुद्र में चलाया एवं सागर में अन्य नौकाओं के साथ विचरण किया, तब हमने हितकारी झूले पर (मानों बैठे हुए) क्रीड़ा का आनन्द लिया ॥३ ॥

५८४०. **वसिष्ठं ह वरुणो नाव्याधादृषिं चकार स्वपा महोभिः ।**
स्तोतारं विप्रः सुदिनत्वे अह्नां यान्नु द्यावस्ततनन्यादुषासः ॥४ ॥

मेधावी वरुणदेव ने अपनी सामर्थ्यों से वसिष्ठ को नौका पर चढ़ाया । दिन और रात्रि का विस्तार करके स्तोता विप्र वसिष्ठ को शुभ दिन में ऋषि (द्रष्टा, श्रेष्ठकर्मा) बनाया ॥४ ॥

५८४१. **क्व१ त्यानि नौ सख्या बभूवुः सचावहे यदवृकं पुरा चित् ।**
बृहन्तं मानं वरुण स्वधावः सहस्रद्वारं जगमा गृहं ते ॥५ ॥

हे वरुणदेव ! आपकी और हमारी मित्रता कहाँ हुई थी ? पूर्व समय की हिंसारहित मित्रता का हम निर्वाह करते चले आ रहे हैं । हे अन्नवान् वरुणदेव ! हम आपके विशाल परिमाण वाले और सहस्र द्वार वाले घर में जायेंगे ॥५ ॥

५८४२. **य आपिर्नित्यो वरुण प्रियः सन्त्वामागांसि कृणवत्सखा ते ।**
मा त एनस्वन्तो यक्षिन् भुजेम यन्धि ष्मा विप्रः स्तुवते वरूथम् ॥६ ॥

हे वरुणदेव ! आपके नित्य प्रिय बन्धु होकर भी जिन वसिष्ठ ने पूर्व समय में आपके प्रति अपराध किया था, वे (भी) आपके मित्र हों । हे पूजनीय वरुणदेव ! हम आपके हैं, इसलिए हमें पाप-मुक्त कर उत्तम सुखदायी आवास प्रदान करें ॥६ ॥

५८४३. **ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्य१स्मत् पाशं वरुणो मुमोचत् ।**
अवो वन्वाना अदितेरुपस्थाद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे वरुणदेव ! स्थायी भू-प्रदेश में रहते हुए हम आपकी स्तुति करते हैं । आप हमें बन्धन से छुड़ाएँ । हम अखण्ड सामर्थ्ययुक्त वरुण से रक्षा की कामना करते हैं । आप कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥७ ॥

[सूक्त - ८९]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वरुण । **छन्द** - गायत्री, ५ जगती]

५८४४. **मो षु वरुण मृन्मयं गृहं राजन्नहं गमम् । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥१ ॥**

हे राजा वरुणदेव ! मुझे सुन्दर घर रहने को मिले, मिट्टी का नहीं । शोभन धन वाले वरुणदेव हमें सुखी बनाएँ ॥१ ॥

५८४५. **यदेमि प्रस्फुरन्निव दृतिर्न ध्मातो अद्रिवः । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥२ ॥**

हे सुदृढ किले में रहने वाले देव ! हम वायु से भरी हुई चमड़े की थैली की तरह चलते हैं, इसलिए हे शोभन धनवाले देव ! हमें सुखी बनाएँ ॥२ ॥

[पदार्थ रूप में मनुष्य वायु भरी चमड़े की थैली जैसा ही है, मनुष्य के लिए शोभनीय गुणों की याचना वरुण से की जा रही है, ताकि मानवीय गरिमा के साथ जीवन जिया जा सके ।]



५८४६. **क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥३ ॥**

हे धनवान् और पवित्र वरुणदेव ! हमने दीनता और असमर्थता के कारण श्रौत-स्मार्त कर्मों की अवहेलना की है, इसलिए हम दु:खी हैं । हे श्रेष्ठ क्षात्र स्वभाव वाले वरुणदेव ! आप हमें आनन्दित करें ॥३ ॥

५८४७. **अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाविदज्जरितारम् । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥४ ॥**

जल के सागर में रहकर भी हम (आपके भक्त) प्यासे हैं । हे क्षात्र तेज वाले देव ! आप हमें सुखी करें, आनन्दित करें ॥४ ॥

५८४८. **यत्किं चेदं वरुण दैव्ये जनेऽभिद्रोहं मनुष्या३श्चरामसि ।**
अचित्ती यत्तव धर्मा युयोपिम मा नस्तस्मादेनसो देव रीरिषः ॥५ ॥

हे वरुणदेव ! हम मनुष्यों द्वारा देव समूह के प्रति, जो अपकार, अज्ञानता के कारण अथवा असावधानी से हो गया है, उन पापों से आप हमें क्षीण न होने दें ॥५ ॥

[सूक्त - ९०]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वायु ; ५-७ इन्द्रवायू । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

५८४९. **प्र वीरया शुचयो दद्रिरे वामध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः ।**
वह वायो नियुतो याह्यच्छा पिबा सुतस्यान्धसो मदाय ॥१ ॥

हे वायुदेव ! आप वीर हैं, इसलिए आपको शुद्ध, मधुरतापूर्ण सोमरस अध्वर्युगण प्रदान करते हैं । आप रथ में अश्वों को नियोजित करें, हमारे पास आएँ और इस अन्न रूप सोमरस का पान करें ॥१ ॥

५८५०. **ईशानाय प्रहुतिं यस्त आनट् शुचिं सोमं शुचिपास्तुभ्यं वायो ।**
कृणोषि तं मर्त्येषु प्रशस्तं जातोजातो जायते वाज्यस्य ॥२ ॥

हे वायो ! ईश्वररूप आपको जो आहुति देता है, शुद्ध सोम पीने वाले आपको जो शुद्ध सोमरस देता है, उसे मनुष्यों में श्रेष्ठ बनाएँ । वह सर्वत्र ऐश्वर्य प्राप्त करे, कीर्ति प्राप्त करे ॥२ ॥

५८५१. **राये नु यं जज्ञतू रोदसीमे राये देवी धिषणा धाति देवम् ।**
अध वायुं नियुतः सश्चत स्वा उत श्वेतं वसुधितिं निरेके ॥३ ॥

जिन वायुदेव को द्यावा-पृथिवी ने ऐश्वर्य के लिए उत्पन्न किया, उन देव को प्रकाश स्वरूपिणी स्तुतियाँ धन के लिए धारण करती हैं । वे (वायुदेव) अश्वों द्वारा अपने धनहीन भक्त के पास तेजस्वी धन देने के लिए जाते हैं ॥३ ॥

५८५२. **उच्छन्नुषसः सुदिना अरिप्रा उरु ज्योतिर्विविदुर्दीध्यानाः ।**
गव्यं चिदूर्वमुशिजो वि वव्रुस्तेषामनु प्रदिवः सस्रुरापः ॥४ ॥

(उन देवों के लिए) पापरहित उषाएँ प्रकाशित हो गई हैं । उन्होंने देदीप्यमान होकर विशिष्ट ज्योति को प्राप्त किया है । अंगिराओं ने गो-धन प्राप्त किया तथा जल-प्रवाह ने उनका अनुसरण किया ॥४ ॥

५८५३. **ते सत्येन मनसा दीध्यानाः स्वेन युक्तासः क्रतुना वहन्ति ।**
इन्द्रवायू वीरवाहं रथं वामीशानयोरभि पृक्षः सचन्ते ॥५ ॥

हे इन्द्रवायो ! आप ईश्वर हैं । यजमान लोग निष्पाप मन से, अपनी स्तुति के प्रभाव से यज्ञ में (रथ द्वारा) आपको बुलाते हैं । सभी अन्न आपकी सेवा में प्रस्तुत हैं ॥५ ॥



५८५४. **ईशानासो ये दधते स्वर्णो गोभिरश्वेभिर्वसुभिर्हिरण्यैः ।**
इन्द्रवायू सूरयो विश्वमायुरर्वद्भिर्वीरैः पृतनासु सह्युः ॥६ ॥

हे इन्द्रवायो ! जो सामर्थ्यवान् लोग हमें गौ, अश्व एवं निवासादि ऐश्वर्य के साथ सुखी करते हैं; वे दातागण हमारे सम्पूर्ण जीवन को अश्व और वीरों के द्वारा शत्रुओं के बीच में विजयी बनाते हैं ॥६ ॥

५८५५. **अर्वन्तो न श्रवसो भिक्षमाणा इन्द्रवायू सुष्टुतिभिर्वसिष्ठाः ।**
वाजयन्तः स्ववसे हुवेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

अश्व के समान हवि वहन करने वाले, बल की इच्छा वाले वसिष्ठगण उत्तम स्तुतियों के द्वारा हमारे संरक्षण के लिए इन्द्र और वायुदेव को बुलाते हैं । आप सदा कल्याणकारी साधनों द्वारा हमारी रक्षा करें ॥७ ॥

[सूक्त - ९१]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वायु; २, ४-७ इन्द्रवायू । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

५८५६. **कुविदङ्ग नमसा ये वृधासः पुरा देवा अनवद्यास आसन् ।**
ते वायवे मनवे बाधितायावासयन्नुषसं सूर्येण ॥१ ॥

प्राचीनकाल में जो वृद्ध स्तोताजन वायुदेव की प्रिय स्तुति करने के कारण प्रशंसित हुए थे, वे कष्ट-पीड़ित मानवों के कल्याण के लिए, वायुदेव को हवि प्रदान करने के समय, सूर्यदेव के साथ उषा की प्रार्थना करते रहें ॥१ ॥

५८५७. **उशन्ता दूता न दभाय गोपा मासश्च पाथः शरदश्च पूर्वीः ।**
इन्द्रवायू सुष्टुतिर्वामियाना मार्डीकमीट्टे सुवितं च नव्यम् ॥२ ॥

हे इन्द्रवायो ! आप हमारी रक्षा करने वाले है, हमें कष्ट मत देना । आप महीनों और वर्षों तक हमें संरक्षण प्रदान करना । आप हमारी प्रार्थना सुनें और सुखदायक एवं सुविधाजनक धन प्रदान करें ॥२ ॥

५८५८. **पीवोअन्नाँ रयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुतामभिश्रीः ।**
ते वायवे समनसो वि तस्थुर्विश्वेन्नरः स्वपत्यानि चक्रुः ॥३ ॥

उत्तम मेधा वाले, अपने घोड़ों के आश्रयदाता, श्वेतवर्ण वायुदेव प्रचुर अन्न वाले समृद्ध जनों को तुष्ट करते हैं । वे नेतृत्व क्षमता वाले लोग भी समान मन होकर वायुदेव की यज्ञ के द्वारा उपासना करते हैं । उन (वायुदेव) ने सुन्दर प्रजाओं का निर्माण किया ॥३ ॥

५८५९. **यावत्तरस्तन्वो३ यावदोजो यावन्नरश्चक्षसा दीध्यानाः ।**
शुचिं सोमं शुचिपा पातमस्मे इन्द्रवायू सदतं बर्हिरिदम् ॥४ ॥

हे इन्द्रवायो ! आपके शरीर में जितना वेग एवं बल है, (उसके प्रभाव से) जितने नेतृत्व क्षमता-सम्पन्न लोग (ज्ञान-बल से) प्रकाशित होते हैं; (उसी प्रमाण से) सोमपान करने वाले हे देव ! आप हमारे आसन पर बैठें और सोमपान करें ॥४ ॥

५८६०. **नियुवाना नियुतः स्पार्हवीरा इन्द्रवायू सरथं यातमर्वाक् ।**
इदं हि वां प्रभृतं मध्वो अग्रमध प्रीणाना वि मुमुक्तमस्मे ॥५ ॥

हे स्पृहणीय वीर इन्द्रवायो ! आप अपने अश्वों को एक रथ में नियोजित करके हमारे पास आएँ । यह मधुर सोम का मुख्य भाग आपके लिए है । इसे ग्रहण कर, हमें पापमुक्त करें ॥५ ॥



५८६१. **या वां शतं नियुतो याः सहस्रमिन्द्रवायू विश्ववाराः सचन्ते ।**
आभिर्यातं सुविदत्राभिरर्वाक्पातं नरा प्रतिभृतस्य मध्वः ॥६ ॥

हे इन्द्रवायो ! जो शत संख्यक अश्व आपकी सेवा में हैं एवं जो सबके द्वारा वरण किये गए सहस्र संख्यक अश्व आपकी सेवा करते हैं, श्रेष्ठ धन देने वाले उन्हीं अश्वों के साथ आप हमारे पास आएँ । हे नेतृत्व प्रदान करने वाले (इन्द्र-वायुदेव) ! भर कर रखे हुए इस सोमरस का आप पान करें ॥६ ॥

५८६२. **अर्वन्तो न श्रवसो भिक्षमाणा इन्द्रवायू सुष्टुतिभिर्वसिष्ठाः ।**
वाजयन्तः स्ववसे हुवेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

अश्व के समान हवि वहन करने वाले, बल की इच्छा वाले वसिष्ठगण उत्तम स्तुतियों के द्वारा हमारे संरक्षण के लिए इन्द्र और वायु को बुलाते हैं । (हे इन्द्रवायो !) आप सदा कल्याणकारी साधनों द्वारा हमारी रक्षा करें ॥७ ॥

[सूक्त - ९२]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - वायु; २ इन्द्रवायू । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

५८६३. **आ वायो भूष शुचिपा उप नः सहस्रं ते नियुतो विश्ववार ।**
उपो ते अन्धो मद्यमयामि यस्य देव दधिषे पूर्वपेयम् ॥१ ॥

हे पवित्र सोमपानकर्त्ता वायुदेव ! आप सबके वरणीय हैं, आपके पास हजार घोड़े हैं, (उन्हीं से) आप हमारे पास आएँ । जिस रस का आप प्रथम पान करते हैं, हम आपके लिए प्रसन्नतादायक वह सोमरस पात्र में लाते हैं ॥१॥

५८६४. **प्र सोता जीरो अध्वरेष्वस्थात् सोममिन्द्राय वायवे पिबध्यै ।**
प्र यद्वां मध्वो अग्रियं भरन्त्यध्वर्यवो देवयन्तः शचीभिः ॥२ ॥

सोम का रस निकालने वाले श्रेष्ठ कर्मा अध्वर्युओं ने यज्ञ में इन्द्र और वायुदेव के पीने के लिए सोमरस रखा है । हे इन्द्रवायो ! देवत्व प्राप्ति की कामना से इस यज्ञ में कर्म द्वारा आपके लिए अध्वर्युओं ने सोम का अग्र भाग रखा है ॥२ ॥

५८६५. **प्र याभिर्यासि दाश्वांसमच्छा नियुद्भिर्वायविष्टये दुरोणे ।**
नि नो रयिं सुभोजसं युवस्व नि वीरं गव्यमश्व्यं च राधः ॥३ ॥

हे वायो ! आप यज्ञ स्थान में हव्यदाता के सम्मुख यज्ञ के लिए जिन अश्वों से जाते हैं, उसी तरह हमारे पास आएँ और हमें श्रेष्ठ अन्नयुक्त धन दें । वीरपुत्र, गौ, अश्व आदि हर तरह का ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३ ॥

५८६६. **ये वायव इन्द्रमादनास आदेवासो नितोशनासो अर्यः ।**
घ्नन्तो वृत्राणि सूरिभिः ष्याम सासह्वांसो युधा नृभिरमित्रान् ॥४ ॥

जो स्तोता इन्द्र और वायु की उपासना करते हैं, वे देवानुग्रह प्राप्त कर शत्रुविनाशक होते हैं । उनके सहयोग से हम भी शत्रुदमन में समर्थ हों ॥४ ॥

५८६७. **आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् ।**
वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५ ॥

हे वायो ! हमारे इस अहिंसित यज्ञ में आप अपने शत-सहस्र अश्वों के साथ आएँ और सोमरस पीकर प्रमुदित हों । आप कल्याणकारी साधनों से हमारी रक्षा करें ॥५ ॥



[सूक्त - ९३]

[ऋषि - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता - इन्द्राग्नी । छन्द - त्रिष्टुप् ।]

५८६८. **शुचिं नु स्तोमं नवजातमद्येन्द्राग्नी वृत्रहणा जुषेथाम्।**
उभा हि वां सुहवा जोहवीमि ता वाजं सद्य उशते धेष्ठा ॥१ ॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्र और अग्निदेव ! आज आप अपना शुद्ध और नवीन स्तोत्र सुनें । श्रेष्ठ, प्रशंसा-योग्य आप देवों को हम यज्ञ में बार-बार बुलाते हैं । उन्नति की इच्छा करने वाले यजमान के लिए आप अन्न एवं बल-सामर्थ्य प्रदान करें ॥१ ॥

५८६९. **ता सानसी शवसाना हि भूतं साकंवृधा शवसा शूशुवांसा।**
क्षयन्तौ रायो यवसस्य भूरेः पृङ्क्तं वाजस्य स्थविरस्य घृष्वेः ॥२ ॥

हे इन्द्र और अग्निदेव ! आप दोनों बलशाली और यजन करने योग्य हैं । आप एक साथ प्रवृद्ध होकर शत्रुनाशक और प्रभावी बनें । आप अन्नाधिपति हैं; इसलिए हमें बहुत - सा अन्न एवं शत्रु - भंजक बल प्रदान करें ॥२ ॥

५८७०. **उपो ह यद्विदथं वाजिनो गुर्धीभिर्विप्राः प्रमतिमिच्छमानाः ।**
अर्वन्तो न काष्ठां नक्षमाणा इन्द्राग्नी जोहुवतो नरस्ते ॥३ ॥

श्रेष्ठ बुद्धि प्राप्ति की इच्छावाले, अन्नवान् (आहुतियुक्त) विप्रगण जब यज्ञ के निमित्त जाते हैं, तो वे नेतृत्व क्षमता-सम्पन्न लोग काष्ठों (समिधाओं अथवा युद्धक्षेत्र) में प्रविष्ट चंचल (ज्वालाओं अथवा अश्वों की भाँति) इन्द्राग्नी का आवाहन करते हैं ॥३ ॥

[यज्ञीय अनुष्ठान से श्रेष्ठ बुद्धि - परमार्थ बुद्धि जाग्रत् होती है, यज्ञ से मानसोपचार की प्रक्रिया संचालित की जा सकती है । विभिन्न आचार्यों ने 'अर्वन्तो न काष्ठां' का अर्थ 'अश्व जिस प्रकार युद्धक्षेत्र में ' किया है । अर्वन् का मूल अर्थ चंचल, थिरकता हुआ है । इसी सन्दर्भ में उसे अश्व संज्ञक मान लिया जाता है; किन्तु अर्वन् का संबोधन अग्नि ज्वालाओं के लिए भी प्रयुक्त होता है 'काष्ठ में चंचल ज्वालाओं की तरह' अर्थ ही यहाँ अधिक युक्ति संगत है ।]

५८७१. **गीर्भिर्विप्रः प्रमतिमिच्छमान ईट्टे रयिं यशसं पूर्वभाजम्।**
इन्द्राग्नी वृत्रहणा सुवज्रा प्र नो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः ॥४ ॥

हे इन्द्र और अग्निदेव ! उत्तम बुद्धि की इच्छा वाले ज्ञानी पुरुष प्रथम उपभोग्य धन के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं । शोभायमान आयुध वाले वृत्रहन्ता इन्द्र और अग्निदेव नवीन और देने योग्य धन हमें प्रदान करें ॥४ ॥

५८७२. **सं यन्मही मिथती स्पर्धमाने तनूरुचा शूरसाता यतैते ।**
अदेवयुं विदथे देवयुभिः सत्रा हतं सोमसुता जनेन ॥५ ॥

परस्पर युद्ध में स्पर्धा करने वाली विशाल शत्रु सेनाओं के मध्य में वीर अपने तेज द्वारा यश के लिए युद्ध करते हैं । यज्ञ करने वाले और देवाभिलाषी स्तोता की सहायता से देव विरोधी व्यक्तियों को नष्ट करें ॥५ ॥

५८७३. **इमामु षु सोमसुतिमुप न एन्द्राग्नी सौमनसाय यातम्।**
नू चिद्धि परिमम्नाथे अस्माना वां शश्वद्भिर्ववृतीय वाजैः ॥६ ॥

हे इन्द्र और अग्निदेव ! मन के उत्तम भाव बढ़ाने के लिए इस सोम याग में पधारें । आप हमारे त्याग की बात सोचते भी नहीं, इसलिए बार-बार अन्न के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥६ ॥



५८७४. **सो अग्न एना नमसा समिद्धोऽच्छा मित्रं वरुणमिन्द्रं वोचेः ।**
यत्सीमागश्चकृमा तत्सु मृळ तदर्यमादितिः शिश्रथन्तु ॥७ ॥

हे अग्निदेव ! हविद्वारा प्रवृद्ध होकर इन्द्र, मित्र और वरुणदेव से हमारे अपराधों के क्षमा करने के लिए कहें । अर्यमा और अदिति से कहें कि हमें पापों से मुक्तकर सुखी करें ॥७ ॥

५८७५. **एता अग्न आशुषाणास इष्टीर्युवोः सचाभ्यश्याम वाजान् ।**
मेन्द्रो नो विष्णुर्मरुतः परि ख्यन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८ ॥

हे अग्ने ! हम शीघ्र ही इन यज्ञों का आश्रय लेते हुए आपके द्वारा साथ-साथ अन्न-धन प्राप्त करें । विष्णु, इन्द्र और मरुद्गण हमें सुरक्षा प्रदान करें तथा कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥८ ॥

[सूक्त - ९४]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - इन्द्राग्नी । **छन्द** - गायत्री, १२ अनुष्टुप् ।]

५८७६. **इयं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः । अभ्राद्वृष्टिरिवाजनि ॥१ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! जैसे मेघ जलवृष्टि करते हैं, उसी तरह इस मनन करने वाले स्तोता की यह प्रथम स्तुति सुनें ॥१ ॥

५८७७. **शृणुतं जरितुर्हवमिन्द्राग्नी वनतं गिरः । ईशाना पिप्यतं धियः ॥२ ॥**

हे इन्द्र और अग्निदेव ! उपासक की प्रार्थना सुनें तथा उसकी वाणी को ध्यान में रखें । आप ईश्वर हैं, इसलिए अनुष्ठान किये हुए कार्य को सफल करें ॥२ ॥

५८७८. **मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये । मा नो रीरधतं निदे ॥३ ॥**

हे नेतृत्व क्षमता वाले इन्द्र और अग्निदेव ! पापकर्म के लिए, अभिशप्त होने के लिए अथवा निन्दा के लिए कभी पराधीन मत करना ॥३ ॥

[भाव यह है कि किसी की अधीनता में हीन कार्य करने के लिए हमें कभी बाध्य न होना पड़े । अच्छे कार्य किसी के अधीन रहकर भी करने में बुराई नहीं है ।]

५८७९. **इन्द्रे अग्ना नमो बृहत्सुवृक्तिमेरयामहे । धिया धेना अवस्यवः ॥४ ॥**

हम अपनी सुरक्षा के लिए इन्द्र और अग्निदेव के पास प्रचुर हव्य तथा बुद्धिपूर्वक उत्तम वचनों से सुन्दर स्तुति-गान करते हैं ॥४ ॥

५८८०. **ता हि शश्वन्त ईळत इत्था विप्रास ऊतये । सबाधो वाजसातये ॥५ ॥**

रक्षण के इच्छुक उन इन्द्र और अग्निदेव की विद्वान् पुरुष प्रार्थना करते हैं । समान रूप से पीड़ित जन, धन-धान्य प्राप्ति के लिए उनकी प्रशंसा करते हैं ॥५ ॥

५८८१. **ता वां गीर्भिर्विपन्यवः प्रयस्वन्तो हवामहे । मेधसाता सनिष्यवः ॥६ ॥**

विशिष्ट ज्ञानसम्पन्न, प्रयासरत, धनाभिलाषी होकर हम लोग यज्ञ में आप दोनों की प्रार्थना करते हुए आपका आवाहन करते हैं ॥६ ॥

५८८२. **इन्द्राग्नी अवसा गतमस्मभ्यं चर्षणीसहा । मा नो दुःशंस ईशत ॥७ ॥**

हे शत्रु सैन्य-घातक इन्द्र और अग्निदेव ! आप अन्नादि संरक्षण के साधनों के साथ हमारे यहाँ आएँ । हम दुष्टों द्वारा शासित न हों ॥७ ॥



५८८३. **मा कस्य नो अररुषो धूर्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य। इन्द्राग्नी शर्म यच्छतम् ॥८ ॥**

हे इन्द्राग्निदेव ! हम शत्रुरूप मानव से पीड़ित न हों। हमें सुख मिले, हम सुखी हों ॥८ ॥

५८८४. **गोमद्धिरण्यवद्वसु यद्वामश्वावदीमहे। इन्द्राग्नी तद्वनेमहि ॥९ ॥**

हे इन्द्र और अग्निदेव ! हम आपसे जो गौ, अश्व, स्वर्णयुक्त धन माँगते हैं; उसे हम प्राप्त कर सकें ॥९ ॥

५८८५. **यत्सोम आ सुते नर इन्द्राग्नी अजोहवुः । सप्तीवन्ता सपर्यवः ॥१० ॥**

सोमाभिषव होने पर याजक उत्तम अश्वों वाले इन्द्र और अग्निदेव की सेवा की कामना से बार-बार उनका आवाहन करते हैं ॥१० ॥

५८८६. **उक्थेभिर्वृत्रहन्तमा या मन्दाना चिदा गिरा। आङ्गूषैराविवासतः ॥११ ॥**

वृत्रासुर का हनन करने वाले, आनन्ददायी स्वभाव वाले इन्द्र और अग्निदेव की उत्तम स्तोत्रों द्वारा सम्यक् रूप से हम वन्दना करते हैं ॥११ ॥

५८८७. **ताविद्दुःशंसं मर्त्यं दुर्विद्वांसं रक्षस्विनम्।**
आभोगं हन्मना हतमुदधिं हन्मना हतम् ॥१२ ॥

वे दोनों (इन्द्र और अग्नि) दुष्टों, दुर्गुणी विद्वानों, राक्षसी स्वभाव वाले अपहरणकर्त्ताओं को घातक शस्त्रों से मारें, उन्हें जल रोक कर रखने वालों (वृत्रादि) की तरह मारें ॥१२ ॥

[सूक्त - ९५]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता - सरस्वती, ३ सरस्वान् । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

सूक्त ९५ तथा ९६ के देवता 'सरस्वती' एवं 'सरस्वान्' हैं। सरस्वती नदी विशेष का भी नाम है तथा दिव्यानुभूति जन्य वाग्धारा को भी सरस्वती कहा गया है। ऋषियों-सिद्धपुरुषों के मुख से, किसी विशिष्ट भाव स्थिति में अनायास ही सरस्वती प्रवाहित हो उठती है। सरस्वती को लक्ष्य करके कहे गये मन्त्र 'सूक्ष्म-प्रवाह' पर एवं (विशेषरूप से सूक्त ९५ के प्रथम तीन मंत्र) नदी सरस्वती पर भी घटित होते हैं। सरस्वान् का अर्थ 'बलवान्' की ही भाँति 'सारस्वत प्रवाहयुक्त' होता है। वायु एवं वाक् प्रवाह विशेष के साथ भी इनकी संगति बैठती है -

५८८८. **प्र क्षोदसा धायसा सस्र एषा सरस्वती धरुणमायसी पूः।**
प्रबाबधाना रथ्येव याति विश्वा अपो महिना सिन्धुरन्याः ॥१ ॥

यह सरस्वती लोहे के परकोटे की तरह (रक्षा करती हुई) रक्षा करने वाली होकर जल (पोषक-प्रवाहों) के साथ बह रही है। यह (सरस्वती) रथ-वाहक सारथी की तरह अन्य (जल प्रवाहों, शब्द प्रवाहों) को बाधित करती हुई गतिशील है ॥१ ॥

५८८९. **एकाचेतत्सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आ समुद्रात्।**
रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेर्घृतं पयो दुदुहे नाहुषाय ॥२ ॥

पवित्र चेतनायुक्त प्रवाहों में एक यह सरस्वती गिरि (पर्वतों अथवा वाक् स्रोतों) से समुद्र (सागर या अन्तरिक्ष) तक जाती है। (यह) इस लोक के बहुत श्रेष्ठ ऐश्वर्यों को सन्नेष्ट करती हुई नाहुष (राजा नहुष की प्रजा अथवा सम्बन्ध बनाने वाले व्यक्तियों) को दुग्ध-घृत (पोषक शक्ति वर्धक तत्त्व) देती रही है ॥२ ॥

५८९०. **स वावृधे नर्यो योषणासु वृषा शिशुर्वृषभो यज्ञियासु।**
स वाजिनं मघवद्भ्यो दधाति वि सातये तन्वं मामृजीत ॥३ ॥



मनुष्यों के हितार्थ वर्षण सामर्थ्ययुक्त यह बलवान् शिशु (सरस्वान्) यज्ञीय योषित् (सहधर्मिणी जल या छंद धाराओं) के मध्य वृद्धि प्राप्त करता है। यह यज्ञ कर्त्ताओं को वाजिन्-बलवान् (पुत्र अथवा उत्पाद) प्रदान करता है। सभी के लाभार्थ शरीर का विशेष शोधन भी करता है ॥३ ॥

५८९१. उत स्या नः सरस्वती जुषाणोप श्रवत् सुभगा यज्ञे अस्मिन्।
मितज्ञुभिर्नमस्यैरियाना राया युजा चिदुत्तरा सखिभ्यः ॥४ ॥

ये सौभाग्य प्रदायिनी सरस्वती इस यज्ञ में हमारी स्तुति सुनकर प्रसन्न हों। घुटने टेककर नमनकर्त्ता (देव या साधक) इनके पास जाते हैं। ये सरस्वती श्रेष्ठ धन वाली हैं और मित्रता की भावना वालों के लिए दयालु हैं ॥४ ॥

५८९२. इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः प्रति स्तोमं सरस्वति जुषस्व।
तव शर्मन्प्रियतमे दधाना उपस्थेयाम शरणं न वृक्षम् ॥५ ॥

हे सरस्वती देवि ! हम हव्य द्वारा यजन करके नमनपूर्वक आपसे अधिक धन-अन्न प्राप्त करते हैं। आप हमारी प्रार्थना सुनें। हम आपके अत्यन्त प्रिय आवास में आश्रयभूत वृक्ष की तरह (विकासमान तथा परोपकारी बनकर) रहें ॥५ ॥

५८९३. अयमु ते सरस्वति वसिष्ठो द्वारावृतस्य सुभगे व्यावः।
वर्ध शुभ्रे स्तुवते रासि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

उत्तम भाग्यशाली हे सरस्वती देवि ! स्तोता वसिष्ठ ऋषि यज्ञ का द्वार आपके लिए खोलते हैं। हे शुभ्रवर्णा देवि ! आप आगे बढ़ें और स्तोता को धन प्रदान करें। आप कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥६ ॥

[सूक्त - ९६]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता** - सरस्वती, ४-६ सरस्वान्। **छन्द** - १-२ प्रगाथ (१ विषमाबृहती, २ समासतोबृहती), ३ प्रस्तारपंक्ति, ४-६ गायत्री।]

५८९४. बृहदु गायिषे वचोऽसुर्या नदीनाम्।
सरस्वतीमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी ॥१ ॥

हे वसिष्ठ ! आप प्रवाहों में शक्तिशाली सरस्वती के लिए महान् स्तोत्रों का गान करें। द्युलोक एवं पृथ्वी में निवास करने वाली सरस्वती की श्रेष्ठ स्तोत्रों से वन्दना करें ॥१ ॥

५८९५. उभे यत्ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पूरवः।
सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघोनाम् ॥२ ॥

हे शुभ्रवर्णा सरस्वती देवि ! आपकी कृपा से मनुष्य दिव्य एवं पार्थिव दोनों प्रकार के अन्न प्राप्त करता है। आप हमारी रक्षा करें। मरुतों से मैत्री करने वाली नदी, हविदाताओं को धन से परिपूर्ण करें ॥२ ॥

५८९६. भद्रमिद्भद्रा कृणवत्सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती।
गृणाना जमदग्निवत्स्तुवाना च वसिष्ठवत् ॥३ ॥

हितकारिणी सरस्वती निश्चितरूप से कल्याण करने वाली हैं। सुन्दर प्रवहमान और अन्न देने वाली सरस्वती देवी हमें चैतन्य बनाएँ। आप जिस प्रकार जमदग्नि ऋषि द्वारा पूजित हुई हैं, उसी तरह आप वसिष्ठ से भी स्तुत्य हैं ॥३ ॥



५८९७. **जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्तः सुदानवः । सरस्वन्तं हवामहे ॥४ ॥**

स्त्री और पुत्र की प्राप्ति की इच्छा वाले हम लोग श्रेष्ठ दान दाताओं में अग्रसर होकर सरस्वान् का आवाहन करते हैं ॥४ ॥

५८९८. **ये ते सरस्व ऊर्मयो मधुमन्तो घृतश्चुतः । तेभिर्नोऽविता भव ॥५ ॥**

हे सरस्वान् ! आप मधुर एवं घृत सदृश तरंगों के द्वारा हमारी रक्षा करें ॥५ ॥

५८९९. **पीपिवांसं सरस्वतः स्तनं यो विश्वदर्शतः । भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥६ ॥**

विश्वदर्शी सरस्वान् देव के स्तनवत् रस धार का हम पान करें और श्रेष्ठ संतति एवं धन-धान्य प्राप्त करें ॥६ ॥

[सूक्त - ९७]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - बृहस्पति; १ इन्द्र, ३, ९ इन्द्राब्रह्मणस्पती, १० इन्द्राबृहस्पती । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

५९००. **यज्ञे दिवो नृषदने पृथिव्या नरो यत्र देवयवो मदन्ति ।**
इन्द्राय यत्र सवनानि सुन्वे गमन्मदाय प्रथमं वयश्च ॥१ ॥

देवत्व की कामना वाले, नेतृत्व क्षमता से युक्त लोग जहाँ आनन्दित होते हैं, जिस यज्ञ में सोमरस इन्द्रदेव के लिए अभिषुत करते हैं; मानव मात्र का कल्याण करने वाले उस यज्ञ में सर्वप्रथम इन्द्रदेव शीघ्रगामी अश्वों के साथ अन्तरिक्ष से पधारें ॥१ ॥

५९०१. **आ दैव्या वृणीमहेऽवांसि बृहस्पतिर्नो मह आ सखायः ।**
यथा भवेम मीळ्हुषे अनागा यो नो दाता परावतः पितेव ॥२ ॥

हे मित्रो ! हम देवों से संरक्षण के लिए स्तुति करते हैं । बृहस्पतिदेव हमारे हव्य को स्वीकारें । बृहस्पतिदेव हमें उसी प्रकार धन देते हैं ; जैसे दूर देश से पिता धन लाकर पुत्र को देता है, इसलिए उन (बृहस्पतिदेव) के समक्ष निष्पाप होकर श्रेष्ठ आचरणपूर्वक जाएँ ॥२ ॥

५९०२. **तमु ज्येष्ठं नमसा हविर्भिः सुशेवं ब्रह्मणस्पतिं गृणीषे ।**
इन्द्रं श्लोको महि दैव्यः सिषक्तु यो ब्रह्मणो देवकृतस्य राजा ॥३ ॥

हम हव्य के साथ नमन करते हुए श्रेष्ठ एवं सेवनीय ब्रह्मणस्पतिदेव की प्रार्थना करते हैं । यह दिव्य मन्त्र महान् इन्द्रदेव की स्तुति करे । यह देवकृत स्तोत्र, स्तोत्रों का राजा है ॥३ ॥

५९०३. **स आ नो योनिं सदतु प्रेष्ठो बृहस्पतिर्विश्ववारो यो अस्ति ।**
कामो रायः सुवीर्यस्य तं दात्पर्षन्नो अति सश्चतो अरिष्टान् ॥४ ॥

सबके वरण करने योग्य बृहस्पतिदेव ! इस यज्ञ में पधारें । हमारे श्रेष्ठ धन और शक्ति की इच्छा को पूर्ण करें । हमें बाधाओं से मुक्त करें, हमारे शत्रुओं को विनष्ट करें ॥४ ॥

५९०४. **तमा नो अर्कममृताय जुष्टमिमे धासुरमृतासः पुराजाः ।**
शुचिक्रन्दं यजतं पस्त्यानां बृहस्पतिमनर्वाणं हुवेम ॥५ ॥

गृहस्थों के पूज्य, परम पवित्र, सदैव अग्रगामी बृहस्पतिदेव की हम प्रार्थना करते हैं । पूर्वकाल में उत्पन्न हुए अमर देवगण हमें अमरता प्राप्त करने योग्य अन्न प्रदान करें ॥५ ॥



५९०५. तं शग्मासो अरुषासो अश्वा बृहस्पतिं सहवाहो वहन्ति ।
सहश्चिद्यस्य नीलवत्सधस्थं नभो न रूपमरुषं वसानाः ॥६ ॥

सुखकर देदीप्यमान, साथ लेकर चलने वाले, सूर्य की तरह तेजस्वी घोड़े उन्हीं (बृहस्पतिदेव) को वहन करें, जिनका बल अनन्त तथा निवास उत्तम है ॥६ ॥

५९०६. स हि शुचिः शतपत्रः स शुन्ध्युर्हिरण्यवाशीरिषिरः स्वर्षाः ।
बृहस्पतिः स स्वावेश ऋष्वः पुरू सखिभ्य आसुतिं करिष्ठः ॥७ ॥

वे बृहस्पतिदेव पवित्र, बहुत वाहन वाले, सभी को शुद्धता प्रदान करने वाले तथा स्वर्ण सदृश आयुधों वाले हैं । उनका आवास उत्तम और दर्शनीय है । वे अपने भक्तों को सर्वाधिक अन्न प्रदान करते हैं ॥७ ॥

५९०७. देवी देवस्य रोदसी जनित्री बृहस्पतिं वावृधतुर्महित्वा ।
दक्षाय्याय दक्षता सखायः करद् ब्रह्मणे सुतरा सुगाधा ॥८ ॥

बृहस्पतिदेव की जननी देवी (दानादिगुणयुक्त) द्यावा-पृथिवी अपनी सामर्थ्य से उन्हें संवर्धित करती हैं । हे मित्रो ! कुशल बृहस्पतिदेव को कुशलता के साथ प्रवर्द्धित करें । वे ब्रह्मवृत्तियों के विकास के लिए 'सुतरा' (जल अथवा तर जाने योग्य) श्रेष्ठ जीवन को 'सुगाधा' (स्नान योग्य अथवा श्रेष्ठ गान-वेदवाणी) को उत्पन्न करते हैं ॥८ ॥

५९०८. इयं वां ब्रह्मणस्पते सुवृक्तिर्ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे अकारि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरन्धीर्जजस्तमर्यो वनुषामरातीः ॥९ ॥

हे ब्रह्मणस्पतिदेव ! हमने आपके लिए और वज्रधारी इन्द्रदेव के लिए यह स्तोत्र-पाठ किया है । आप हमारे बौद्धिक (बुद्धिवर्धक) अनुष्ठानों को संरक्षण दें, अनेक प्रार्थनाओं को सुनें और अपने भक्तों पर आक्रमण करने वाली सेनाओं का संहार करें ॥९ ॥

५९०९. बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य ।
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१० ॥

हे बृहस्पति और इन्द्रदेव ! आप दोनों पृथ्वी और द्युलोक के ऐश्वर्य के स्वामी हैं, इसलिए स्तोताओं को ऐश्वर्य प्रदान करें तथा कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥१० ॥

[सूक्त - ९८]

[ऋषि - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । देवता - इन्द्र, ७ इन्द्राबृहस्पती । छन्द - त्रिष्टुप् ।]

५९१०. अध्वर्यवोऽरुणं दुग्धमंशुं जुहोतन वृषभाय क्षितीनाम् ।
गौराद्वेदीयाँ अवपानमिन्द्रो विश्वाहेद्याति सुतसोममिच्छन् ॥१ ॥

हे अध्वर्युगण ! मानवों में श्रेष्ठ इन्द्रदेव के लिए निचोड़े हुए रक्ताभ सोमरस का हवन करें । दूर स्थित, पीने योग्य सोम को दूर से जानकर वे गौर मृग सदृश तीव्रगति से सोमयाग करने वाले यजमान के पास सतत जाते हैं ॥ १

५९११. यद्दधिषे प्रदिवि चार्वन्नं दिवेदिवे पीतिमिदस्य वक्षि ।
उत हृदोत मनसा जुषाण उशन्निन्द्र प्रस्थितान् पाहि सोमान् ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीनकाल में आप जिस सुन्दर अन्न (सोम) को उदर में धारण करते थे, वही सोम आप प्रतिदिन पीने की इच्छा करें । हृदय और मन से हमारे कल्याण की इच्छा करते हुए सोमरस का पान करें ॥२ ॥



५९१२. **जज्ञानः सोमं सहसे पपाथ प्र ते माता महिमानमुवाच ।**
एन्द्र पप्राथोर्व१न्तरिक्षं युधा देवेभ्यो वरिवश्चकर्थ ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! जन्म के समय से ही आपने शक्ति प्राप्ति के लिए सोमपान किया था । आपकी महिमा का वर्णन आपकी माता अदिति ने किया । आपने अपने वर्चस् से विस्तृत अंतरिक्ष को पूर्ण किया और युद्ध के माध्यम से देवों या स्तोताओं के लिए धन एकत्र किया ॥३ ॥

५९१३. **यद्योधया महतो मन्यमानान्त्साक्षाम तान् बाहुभिः शाशदानान् ।**
यद्वा नृभिर्वृत इन्द्राभियुध्यास्तं त्वयाजिं सौश्रवसं जयेम ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! अहंकारपूर्ण, अपने को बड़ा मानने वाले शत्रुओं से जब हमारा युद्ध हो, तब उस युद्ध में हम अपनी बाहुओं से ही हिंसक शत्रुओं का दमन कर सकें । आप यदि स्वयं अन्न अथवा यश के लिए युद्ध करें, तब हम आपके साथ रहकर उस युद्ध को जीतें ॥४ ॥

५९१४. **प्रेन्द्रस्य वोचं प्रथमा कृतानि प्र नूतना मघवा या चकार ।**
यदेददेवीरसहिष्ट माया अथाभवत्केवलः सोमो अस्य ॥५ ॥

प्राचीन और अर्वाचीन काल में इन्द्रदेव द्वारा किये हुए पराक्रमों का हम वर्णन करते हैं । इन्द्रदेव ने जब से कुटिल-कपटी असुरों को परास्त किया, तब से सोम केवल इन्द्रदेव के लिए ही (सुरक्षित) है ॥५ ॥

५९१५. **तवेदं विश्वमभितः पशव्यं१ यत्पश्यसि चक्षसा सूर्यस्य ।**
गवामसि गोपतिरेक इन्द्र भक्षीमहि ते प्रयतस्य वस्वः ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! सूर्य के तेज (प्रकाश) से जिसे देखते हैं, वह पशुओं (प्राणियों) से युक्त विश्व आपका ही है । सभी गौओं (किरणों-इन्द्रियों) के स्वामी आप ही हैं । आप के द्वारा दिये धन का हम भोग करते हैं ॥६ ॥

५९१६. **बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य ।**
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे इन्द्र और बृहस्पतिदेव ! आप दोनों द्युलोक और पृथ्वी पर उत्पन्न धन के स्वामी हैं । आप दोनों स्तुति करने वाले स्तोता को धन प्रदान करें तथा कल्याणकारी साधनों से सदैव हमारी रक्षा करें ॥७ ॥

[सूक्त - ९९]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - विष्णु , ४-६ इन्द्राविष्णू । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

यह ऋचा विष्णु के वामन अवतार तथा विश्व के पोषण चक्र के सूक्ष्म संचालन दोनों पर घटित होती है-

५९१७. **परो मात्रया तन्वा वृधान न ते महित्वमन्वश्नुवन्ति ।**
उभे ते विद्म रजसी पृथिव्या विष्णो देव त्वं परमस्य वित्से ॥१ ॥

परा मात्राओं से शरीर को बढ़ाने वाले (तीनों लोकों की सीमा से अधिक अपनी काया बढ़ाने वाले अथवा इस विश्व की पकड़ से परे मात्राओं-पोषक इकाइयों द्वारा शरीरों का विकास करने वाले) हे विष्णुदेव ! आपकी महानता को कोई नहीं समझ सकता । (हम तो) आपके द्युलोक एवं पृथ्वी लोक को ही जानते हैं, आप तो (इनसे) परे (लोकों या तत्त्वों) को भी जानते हैं ॥१ ॥



५९१८. न ते विष्णो जायमानो न जातो देव महिम्नः परमन्तमाप।
उदस्तभ्ना नाकमृष्वं बृहन्तं दाधर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः ॥२ ॥

हे विष्णुदेव ! जो जन्म ले चुके तथा जो जन्म लेने वाले हैं, वे दोनों ही आपकी महिमा का अन्त नहीं जानते। दर्शन के योग्य विराट् द्युलोक को आपने ही अपने ऊपर धारण किया है। पृथ्वी की पूर्व दिशा को भी आपने ही धारण कर रखा है ॥२ ॥

५९१९. इरावती धेनुमती हि भूतं सूयवसिनी मनुषे दशस्या।
व्यस्तभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः ॥३ ॥

हे द्यावा-पृथिवि !मनुष्यों के कल्याण की आकांक्षा से आप दोनों गौओं तथा अन्नों से परिपूर्ण हुई हैं। हे विष्णुदेव !आपने इन द्युलोक और पृथ्वीलोक को स्थिरता प्रदान की है तथा पर्वतों से पृथ्वी को स्थिर किया है ॥३ ॥

५९२०. उरुं यज्ञाय चक्रथुरु लोकं जनयन्ता सूर्यमुषासमग्निम्।
दासस्य चिद्वृषशिप्रस्य माया जघ्नथुर्नरा पृतनाज्येषु ॥४ ॥

सृष्टिरूपी यज्ञ को संचालित करने के लिए द्युलोक और पृथ्वीलोक ने विस्तृत स्थान विनिर्मित किया। सूर्य, उषा और अग्नि को आप (विष्णु) उत्पन्न करते हैं। हे नेतृत्व करने वाले इन्द्र और विष्णुदेव ! आपने वृषशिप्र (नाम के शत्रु अथवा वर्षणशील जल को संगृहीत करने वाले) की कुटिल और कपटपूर्ण आक्रामक योजनाओं को युद्धों में विनष्ट किया ॥४ ॥

५९२१. इन्द्राविष्णू दृंहिताः शम्बरस्य नव पुरो नवतिं च श्नथिष्टम्।
शतं वर्चिनः सहस्रं च साकं हथो अप्रत्यसुरस्य वीरान् ॥५ ॥

हे इन्द्र और विष्णुदेव ! आपने शंबर असुर की निन्यानवे सुदृढ़ नगरियों को विध्वंस किया। आपने 'वर्चि' नाम के सैकड़ों और हजारों वीरों को असाधारण ढंग से विनष्ट किया ॥५ ॥

५९२२. इयं मनीषा बृहती बृहन्तोरुक्रमा तवसा वर्धयन्ती।
ररे वां स्तोमं विदथेषु विष्णो पिन्वतमिषो वृजनेष्विन्द्र ॥६ ॥

यह महती स्तुति महापराक्रमशाली और बलशाली इन्द्र एवं विष्णुदेव के यश को बढ़ाती है। हे इन्द्र और विष्णुदेवो ! यज्ञों में हम आपके निमित्त स्तोत्र प्रेषित करते हैं। युद्धों में आप हमारे अन्न की वृद्धि करें ॥६ ॥

५९२३. वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम्।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे विष्णुदेव ! हमने स्तुतिगान करते हुए आपके निमित्त यह अन्न समर्पित किया है। हे तेजस्वी विष्णो ! आप हमारे द्वारा प्रदत्त हविष्यान्न को स्वीकार करें। हमारी श्रेष्ठ स्तुतियाँ-प्रार्थनाएँ आपके यश को संवर्द्धित करें। आप सभी देवों के साथ मिलकर हमारा संरक्षण करें ॥७ ॥

[सूक्त -१००]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि। **देवता** - विष्णु । **छन्द** - त्रिष्टुप्।]

५९२४. नू मर्तो दयते सनिष्यन्यो विष्णव उरुगायाय दाशत्।
प्र यः सत्राचा मनसा यजात एतावन्तं नर्यमाविवासात् ॥१ ॥



जो मनुष्य अनेकों द्वारा प्रशंसनीय विष्णुदेव को हविष्यान्न प्रदान करते हैं, वही मनुष्य धन की अभिलाषा होने पर शीघ्रता से उसे उपलब्ध करते हैं। जो मनुष्यों के हितैषी विष्णुदेव की अर्चना करते हैं तथा साथ-साथ कहे जाने वाले मन्त्रों से विचारपूर्वक विष्णुदेव के लिएयज्ञ सम्पादित करते हैं, वे शीघ्र ही ऐश्वर्यशाली बनते हैं ॥१ ॥

५९२५. **त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्यामप्रयुतामेवयावो मतिं दाः ।**
पर्चो यथा नः सुवितस्य भूरेरश्वावतः पुरुश्चन्द्रस्य रायः ॥२ ॥

मनोरथपूर्ण करने वाले हे देव विष्णो ! आप हमें विश्वहितकारी, दोषहीन, सद्विचारयुक्त बुद्धि प्रदान करें। आप ऐसा करें, जिससे हमें सुख से प्राप्त होने योग्य अश्व की तरह (लक्ष्य तक पहुँचाने वाला) आनन्ददायक, श्रेष्ठ पर्याप्त धन प्राप्त हो ॥२ ॥

५९२६. **त्रिर्देवः पृथिवीमेष एतां वि चक्रमे शतर्चसं महित्वा ।**
प्र विष्णुरस्तु तवसस्तवीयान्त्वेषं ह्यस्य स्थविरस्य नाम ॥३ ॥

इन विष्णुदेव ने सहस्रों तेजों से युक्त इस पृथ्वी को अपनी महिमा से (वामन अवतार के समय) तीन चरणों में नापा अथवा तीन विशिष्ट प्रक्रियाओं से पोषित किया। सबसे विराट् भगवान् विष्णु हमारे सहायक हों। इन विराट् देव का नाम बहुत ही तेजस्वी है ॥३ ॥

५९२७. **वि चक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन् ।**
ध्रुवासो अस्य कीरयो जनास उरुक्षितिं सुजनिमा चकार ॥४ ॥

मनुष्यों को आवास देने की इच्छा करके, इन विष्णुदेव ने पृथ्वी पर विचक्रमण (पराक्रम) किया था। इन विष्णुदेव के भक्तगण यहाँ स्थिर होकर रहते हैं। श्रेष्ठ जन्म धारण करने वाले विष्णुदेव ने विस्तृत निवास (स्थान) बनाया है ॥४ ॥

५९२८. **प्र तत्ते अद्य शिपिविष्ट नामार्यः शंसामि वयुनानि विद्वान् ।**
तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान्क्षयन्तमस्य रजसः पराके ॥५ ॥

हे तेजस्वी विष्णो ! हम आपकी महानता और सब कर्मों को जानकर, आपके उस श्रेष्ठ नाम का कीर्तन करके श्रेष्ठ बनते हैं। हे देव !आप महान् हैं, हम छोटे हैं।इस कारण आपकी प्रार्थना करते हैं।आप इस लोक से परे हैं ॥५ ॥

५९२९. **किमित्ते विष्णो परिचक्ष्यं भूत्प्र यद्ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि ।**
मा वर्पो अस्मदप गूह एतद्यदन्यरूपः समिथे बभूथ ॥६ ॥

हे विष्णो ! आपने अपना जो शिपिविष्ट (प्रकाशरूप) नाम बताया है, क्या यह त्याग करने योग्य है ? समय-समय पर आपने अनेक रूप धारण किये हैं, इसलिए आपका यह दिव्यरूप हमसे दूर न रहे ॥६ ॥

५९३०. **वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम् ।**
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७ ॥

हे विष्णुदेव ! आपके लिए हमने वषट्कार (मंत्रादि) बोलकर अन्न अर्पित किया है। हे तेजस्वी विष्णो ! हमारे द्वारा समर्पित हविष्य को ग्रहण करें, हमारे द्वारा की हुई स्तुति आपके यश को बढ़ाए। आप सदैव कल्याणकारी साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥७ ॥



[सूक्त - १०१]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि अथवा कुमार आग्नेय । **देवता** - पर्जन्य । **छन्द** - त्रिष्टुप् ।]

सूक्त क्र० १०१ एवं १०२ पर्जन्य सूक्त हैं । ऋषि शौनक के मतानुसार इन सूक्तों का विधि-विधान (ऋग् विधान २.२२६-२७) के अनुसार जप करने से पाँच रात्रियों के उपरान्त निश्चित रूप से अच्छी वर्षा होती है । इसके देवता पर्जन्य हैं । पर्जन्य को स्थूल एवं सूक्ष्म पोषक तत्त्वों की वृष्टि का चेतनायुक्त चक्र (इकॉलॉजिकल साइकिल) कह सकते हैं । वैसे इसका प्रचलित अर्थ वर्षा के संदर्भ में ही लिया जाता है -

५९३१. **तिस्रो वाचः प्र वद ज्योतिरग्रा या एतद्दुह्रे मधुदोघमूधः ।**
स वत्सं कृण्वन् गर्भमोषधीनां सद्यो जातो वृषभो रोरवीति ॥१ ॥

जो वाणियाँ इस मधुर रस के स्रोत को दुहने में समर्थ हैं, ऐसी अग्रभाग में ज्योति धारण करने वाली तीनों वाणियों को उच्चारित करें । वह तुरंत उत्पन्न हुआ बलशाली-वर्षणशील (मेघ) वत्सों का एवं ओषधियों के गर्भ का सृजन करता हुआ गर्जन करता है ॥१ ॥

[वाणी के तीन प्रभाग हैं - स्थूल वायु-कम्पन उत्पन्न करने वाली, विचार जाग्रत् करने वाली तथा भाव संचार करने वाली । तीनों वाणियाँ (ज्योतिरग्रः) " अग्रभाग में ज्योतियुक्त हों " यह कहा गया है । घन गर्जन के पूर्व बिजली की चमक आती है, उसे भी 'ज्योतिरग्र' कहते हैं । विद्युत् विभवों के संचरण से ही गर्जन ध्वनि उत्पन्न होती है, यह विज्ञानसम्मत है । वाणी ज्योतिरग्र तब कही जा सकती है, जब वह तप-साधना से युक्त हो । तप शक्ति युक्त मंत्र पाठ ही प्रकृति को प्रभावित करते हैं । उत्पन्न हुआ बलशाली मेघ गरजता है । उसके विद्युत् विभवों के संचरण से उर्वरक अयन बनते हैं, इसी से ओषधियों-वनस्पतियों में गर्भ (उनके गुणों) की स्थापना होती है । यह पर्जन्य चक्र का ही आलंकारिक विवेचन है ।]

५९३२. **यो वर्धन ओषधीनां यो अपां यो विश्वस्य जगतो देव ईशे ।**
स त्रिधातु शरणं शर्म यंसत्त्रिवर्तु ज्योतिः स्वभिष्ट्य१स्मे ॥२ ॥

जो देव (पर्जन्य) जगत् के नियन्ता, ओषधियों एवं जल को (उनकी मात्रा एवं गुणवत्ता दोनों को) बढ़ाने वाले हैं; वे (देव) हमें त्रिधातु (वात, पित्त, कफ आदि अथवा प्रकृतिगत ठोस, तरल एवं वायु रूपों में जीवन धारण करने योग्य शक्तियों) युक्त आश्रय तथा सुख प्रदान करें । तीनों ऋतुओं में अभीष्ट श्रेष्ठ ज्योति (प्राणशक्ति) हमें दें ॥२ ॥

[पर्जन्य के चक्र से ही सृष्टि का अस्तित्व बना हुआ है, इसलिए उसे सारे जगत् का ईश कहा गया है ।]

५९३३. **स्तरीरु त्वद्भवति सूत उ त्वद्यथावशं तन्वं चक्र एषः ।**
पितुः पयः प्रति गृभ्णाति माता तेन पिता वर्धते तेन पुत्रः ॥३ ॥

अपनी इच्छानुसार शरीर धारण करने वाले पर्जन्यदेव का एक रूप प्रसव न करने वाली गौ के समान, दूसरा रूप प्रसूता गौ जैसा (वर्षण करने वाला) होता है । पिता (पर्जन्य) के पय (पोषक दूध या जल) को पृथ्वी माता प्राप्त करती हैं । उसी से पिता (पर्जन्य) तथा पुत्र (जड़-जंगम प्राणी) दोनों बढ़ते (पुष्ट होते) हैं ॥३ ॥

[पर्जन्य (इकालॉजिकल) चक्र का एक स्वरूप, जो केवल सूक्ष्म प्रकृति में ऊर्जा भरता रहता है, वह प्रसव न करने वाली गौ जैसा है । दूसरा , जो उस ऊर्जा के आधार पर पोषक-प्रवाहों को विकसित करके बरसाता है, यह स्वरूप प्रसूता गौ जैसा है ।]

५९३४. **यस्मिन् विश्वानि भुवनानि तस्थुस्तिस्रो द्यावस्त्रेधा सस्रुरापः ।**
त्रयः कोशास उपसेचनासो मध्वः श्चोतन्त्यभितो विरप्शम् ॥४ ॥

सभी भुवन (समस्त प्राणी) जिनमें निवास करते हैं, सभी लोक जिनमें अवस्थित हैं, जिनसे तीन तरह का जल वर्षण होता है, तीन प्रकार के कोशों द्वारा सिंचन करने वाले, मधुर रसों की सब तरफ से वर्षा करने वाले देवता, पर्जन्य देव ही हैं ॥४ ॥



५९३५. **इदं वचः पर्जन्याय स्वराजे हृदो अस्त्वन्तरं तज्जुजोषत् ।**
मयोभुवो वृष्टयः सन्त्वस्मे सुपिप्पला ओषधीर्देवगोपाः ॥५ ॥

यह स्तुति स्वप्रकाशित पर्जन्य देव के लिये की जाती है । वे प्रार्थना स्वीकार करें । ये (स्तुतियाँ) उन्हें हृदयोल्लास प्रदान करें । देवों (पर्जन्य) द्वारा सुखदायी वृष्टि हम सबके लिए हो और वृष्टि-जल प्राप्त कर ओषधियाँ सुरक्षित होकर फलें-फूलें ॥५ ॥

५९३६. **स रेतोधा वृषभः शश्वतीनां तस्मिन्नात्मा जगतस्तस्थुषश्च ।**
तन्म ऋतं पातु शतशारदाय यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६ ॥

अनन्त ओषधियों के लिए पर्जन्य देव, वृषभ की तरह (रेतस्) बल, वीर्य धारण करते हैं, इसलिये स्थावर-जंगम जगत् की आत्मा पर्जन्य में निवास करती है । पर्जन्य द्वारा प्रदत्त जल सौ वर्षों तक हमारे जीवन का कल्याण करे । हे पर्जन्यदेव ! आप सदा कल्याणकारी साधनों से हमारा पालन करें ॥६ ॥

[सूक्त - १०२]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि अथवा कुमार आग्नेय । **देवता** - पर्जन्य । **छन्द** -गायत्री ।]

५९३७. **पर्जन्याय प्र गायत दिवस्पुत्राय मीळ्हुषे । स नो यवसमिच्छतु ॥१ ॥**

हे स्तोताओ ! अन्तरिक्ष के पुत्र और वृष्टि करने वाले पर्जन्य के लिए प्रार्थना करें, वे हमें अन्न, ओषधियाँ तथा वनस्पतियाँ प्रदान करें ॥१ ॥

५९३८. **यो गर्भमोषधीनां गवां कृणोत्यर्वताम् । पर्जन्यः पुरुषीणाम् ॥२ ॥**

जो ओषधियों (आरोग्यदायकों) , गौओं (पोषण प्रदायकों) तथा अश्वों (शक्तिमानों) में गर्भ (प्राण) स्थापित करते हैं, वे पर्जन्यदेव ही मानवी स्त्रियों के लिए भी (उपयोगी) हैं ॥२ ॥

५९३९. **तस्मा इदास्ये हविर्जुहोता मधुमत्तमम् । इळां नः संयतं करत् ॥३ ॥**

उन्हीं पर्जन्यदेव के लिए देवमुख यज्ञ में सुमधुर हविष्यान्न का हवन करें । वे हमें भरपूर अन्न प्रदान करें ॥३ ॥

[सूक्त - १०३]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - मण्डूक । **छन्द** - त्रिष्टुप् ,१ अनुष्टुप् ।]

यह सूक्त भी पर्जन्य से सम्बन्धित है । इसके देवता 'मण्डूक' हैं । मण्डूक मेढक को भी कहते हैं । निरुक्त के अनुसार यह शब्द मण्ड (मज्जन) , मुद (प्रसन्नता) एवं मद (मस्ती) आदि धातुओं से बना है । इसका अर्थ डूबा रहने वाला, प्रसन्न रहने वाला या मस्त रहने वाला; अथवा इन विशेषताओं से युक्त (डूबकर प्रसन्न एवं मस्त रहने वाला) भी होता है । यह गुण तपस्वी व्रतधारियों में भी होते हैं । प्रथम मंत्र में मण्डूक की उपमा व्रतधारी ब्राह्मणों से ही दी गई है । अन्य मंत्रों में भी इनकी संगति बैठती है । वैसे मेढकों का वर्षा से सम्बन्ध है भी । गाँवों में मेढकों की विशेष ध्वनि से वर्षा का अनुमान लगाने का क्रम आज भी प्रचलित है । अधिक प्रामाणिक संदर्भों के लिए शोध प्रयोगों की अपेक्षा की जाती है -

५९४०. **संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः ।**
वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः ॥१ ॥

वर्ष भर गुप्त स्थिति में बने रहने वाले, व्रतपालक ब्राह्मणों (तपस्वियों) की भाँति रहने वाले मण्डूकगण, पर्जन्य को प्रसन्न (जीवन्त) करने वाली वाणी बोलने लगे हैं ॥१ ॥

[मेढक सर्दियों में सुप्तावस्था (हाइबरनेशन) की स्थिति में रहते हैं । ग्रीष्मकाल में तपन सहन करते हुए शान्त रहते हैं ।



तपस्वी ब्राह्मण भी अपनी तप-शक्ति बढ़ाते हुए वर्ष भर साधनारत रहते थे। उस तप के आधार पर ही प्रकृति से वाञ्छित पाने के लिए वे प्राणवान् मंत्रों का प्रभावी प्रयोग कर पाते थे। उसी तथ्य का यहाँ आलंकारिक वर्णन है।]

५९४१. **दिव्या आपो अभि यदेनमायन्दृतिं न शुष्कं सरसी शयानम्।**
गवामह न मायुर्वत्सिनीनां मण्डूकानां वग्नुरत्रा समेति ॥२॥

सूखे सरोवर में, सूखे चमड़े के समान सुप्त मेढकों के पास जैसे ही अंतरिक्ष का जल पहुँचता है, वैसे ही सवत्सा धेनु की तरह वे कल-कल शब्द करने लगते हैं ॥२॥

५९४२. **यदीमेनाँ उशतो अभ्यवर्षीत्तृष्यावतः प्रावृष्यागतायाम्।**
अख्खलीकृत्या पितरं न पुत्रो अन्यो अन्यमुप वदन्तमेति ॥३॥

वर्षाकाल आने पर जब प्यासे मेढकों पर पर्जन्य (जल) बरसने लगता है, तब पिता जैसे पुत्र से बात करता है, उसी तरह "अक्खल" ऐसा शब्द करके (अथवा विनम्रतापूर्वक) मेढक एक दूसरों के पास जाते हैं ॥३॥

५९४३. **अन्यो अन्यमनु गृभ्णात्येनोरपां प्रसर्गे यदमन्दिषाताम्।**
मण्डूको यदभिवृष्टः कनिष्कन्पृश्निः सम्पृङ्क्ते हरितेन वाचम् ॥४॥

पानी बरसने पर जब ये मेढक आनन्दित होकर उछलते हैं, तब चितकबरा मेढक हरित रंग के मेढक से बातें करने जैसा शब्द बोलता है। उस समय वे एक दूसरे पर अनुग्रह करते हैं ॥४॥

५९४४. **यदेषामन्यो अन्यस्य वाचं शाक्तस्येव वदति शिक्षमाणः।**
सर्वं तदेषां समृधेव पर्व यत्सुवाचो वदथनाध्यप्सु ॥५॥

जिस प्रकार शिष्य-गुरु के शब्दों का अनुसरण करके बोलता है, उसी तरह एक मेढक दूसरे के शब्द का अनुसरण करता है। हे मण्डूको ! जब पानी पर छलाँग लगाते हुए उत्तम शब्द बोलते हो, उस समय तुम्हारा शरीर पुष्ट हुआ सा दीखता है ॥५॥

५९४५. **गोमायुरेको अजमायुरेकः पृश्निरेको हरित एक एषाम्।**
समानं नाम बिभ्रतो विरूपाः पुरुत्रा वाचं पिपिशुर्वदन्तः ॥६॥

एक मेढक गौ जैसा बोलता है, दूसरा बकरे जैसा बोलता है। एक भूरे रंग का है, दूसरा हरित वर्ण का है। इस प्रकार अनेक रूपों वाले "मेढक" एक ही नाम से जाने जाते हैं तथा विभिन्न प्रकार के शब्द अनेक देशों (स्थानों) में करते हुए दिखाई देते हैं ॥६॥

५९४६. **ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे सरो न पूर्णमभितो वदन्तः।**
संवत्सरस्य तदहः परि ष्ठ यन्मण्डूकाः प्रावृषीणं बभूव ॥७॥

हे मण्डूको ! अतिरात्र नामक सोमयज्ञ के याजकों की तरह, शब्द करते हुए इस भरे हुए सरोवर में (जब खूब वर्षा होती है) प्रसन्नतापूर्वक विचरण करो। चारों ओर तुम्हारे घूमने के लिए पर्याप्त स्थान है ॥७॥

५९४७. **ब्राह्मणासः सोमिनो वाचमक्रत ब्रह्म कृण्वन्तः परिवत्सरीणम्।**
अध्वर्यवो घर्मिणः सिष्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न के चित् ॥८॥

वर्ष पर्यन्त चलने वाले सोमयुक्त यज्ञ में जैसे स्तोता मंत्र-ध्वनि करते हैं, वैसे ही शब्द मेढक भी करते हैं। जैसे याज्ञिक- अध्वर्यु गुप्त स्थान में रहकर पसीने में भीगे रहते हैं, बाहर नहीं निकलते, उसी तरह मेढक भी (वर्षा आने तक) बिल से बाहर नहीं निकलते ॥८॥



५९४८. **देवहितिं जुगुपुर्द्वादशस्य ऋतुं नरो न प्र मिनन्त्येते ।**
संवत्सरे प्रावृष्यागतायां तप्ता घर्मा अश्नुवते विसर्गम् ॥९ ॥

ये मण्डूक (साधना में डूबें रहने वाले) नेतृत्व-क्षमता सम्पन्न लोगों की तरह ईश्वरीय अनुशासन का संरक्षण करते हैं। ये बारह महीने की ऋतुओं का उल्लंघन नहीं करते । वर्षाकाल आने पर वर्षभर तपे हुए मेढक अपने बिलों से बाहर आ जाते हैं ॥९ ॥

५९४९. **गोमायुरदादजमायुरदात्पृश्निरदाद्धरितो नो वसूनि ।**
गवां मण्डूका ददतः शतानि सहस्रसावे प्र तिरन्त आयुः ॥१० ॥

गौ और बकरे के समान ध्वनि करने वाले मेढक हमें धन दें । हरे और चितकबरे रंग वाले मेढक हमें धन दें । हजारों ओषधियों की वृद्धि करने वाले, वर्षा ऋतु में सैकड़ों गौएँ (पोषक-प्रवाह) देने वाले ये मण्डूक (तपस्वी) हमारी आयु को बढ़ाते हैं ॥१० ॥

[सूक्त - १०४]

[**ऋषि** - वसिष्ठ मैत्रावरुणि । **देवता** - इन्द्रासोम (रक्षोघ्न); ८, १६, १९ - २२, २४ इन्द्र; ९,१२-१३ सोम;१०,१४ अग्नि; ११ देवगण; १७ ग्रावा; १८ मरुद्गण; २३ (पूर्वार्द्ध ऋचा के) वसिष्ठ (उत्तरार्ध ऋचा के) पृथिवी - अन्तरिक्ष । **छन्द** - त्रिष्टुप्; १ - ६, १८, २१, २३ जगती; ७ जगती या त्रिष्टुप्, २५ अनुष्टुप् ।]

५९५०. **इन्द्रासोमा तपतं रक्ष उब्जतं न्यर्पयतं वृषणा तमोवृधः ।**
परा शृणीतमचितो न्योषतं हतं नुदेथां नि शिशीतमत्रिणः ॥१ ॥

हे इन्द्र और सोमदेव ! आप राक्षसों को जलाकर मारें । हे अभीष्टवर्षक ! आप अज्ञानरूपी अंधकार में विकसित हुए राक्षसों का विनाश करें । ज्ञानहीन राक्षसों को तप्त करके मारकर फेंक दें, हमसे दूर कर दें । दूसरों का भक्षण करने वालों को जर्जरित करें ॥१ ॥

५९५१. **इन्द्रासोमा समघशंसमभ्य१घं तपुर्ययस्तु चरुरग्निवाँ इव ।**
ब्रह्मद्विषे क्रव्यादे घोरचक्षसे द्वेषो धत्तमनवायं किमीदिने ॥२ ॥

हे इन्द्र और सोमदेव ! आप महापापी, प्रसिद्ध दुष्टों को नष्ट करें । (वे) आपके तेज से आग में डाले गये चरु के समान, तापित होकर विनष्ट हो जाएँ । ज्ञान से द्वेष रखने वाले, कच्चा मांस भक्षण करनेवाले, भयानक रूपधारी, सर्वभक्षी (दुष्टों) के लिए निरन्तर द्वेष (वैर) भाव रखें ॥२ ॥

५९५२. **इन्द्रासोमा दुष्कृतो वव्रे अन्तरनारम्भणे तमसि प्र विध्यतम् ।**
यथा नातः पुनरेकश्चनोदयत्तद्वामस्तु सहसे मन्युमच्छवः ॥३ ॥

हे इन्द्र और सोमदेव ! दुष्कर्मा राक्षसों को गहन अंधकार में दबा दें, जिससे वे पुनः निकल न सकें । आप दोनों का शत्रु-भंजक बल, शत्रुओं को जीतने में समर्थ हो ॥३ ॥

५९५३. **इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवो वधं सं पृथिव्या अघशंसाय तर्हणम् ।**
उत्तक्षतं स्वर्यं१ पर्वतेभ्यो येन रक्षो वावृधानं निजूर्वथः ॥४ ॥

हे इन्द्र और सोमदेव ! आप अन्तरिक्ष से मारक हथियार उत्पन्न करें । राक्षसों के विनाश के लिए पृथ्वी से आयुध प्रकट करें । मेघ से राक्षसों का विध्वंसक, वज्र उत्पन्न करके बढ़ने वाले राक्षसों को मारें ॥४ ॥



५९५४. **इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवस्पर्यग्नितप्तेभिर्युवमश्महन्मभिः ।
तपुर्वधेभिरजरेभिरत्रिणो नि पर्शाने विध्यतं यन्तु निस्वरम् ॥५ ॥**

हे इन्द्र और सोमदेव ! आप अन्तरिक्ष से चारों ओर आयुध फेंकें । आप दोनों अग्नि की तरह तप्त करने वाले, पत्थरों जैसे मारक, तापक प्रहार वाले, अजर आयुधों से लूट-लूटकर खाने वाले राक्षसों को फाड़ डालें, जिससे वे चुप-चाप पलायन कर जाएँ ॥५ ॥

५९५५. **इन्द्रासोमा परि वां भूतु विश्वत इयं मतिः कक्ष्याश्वेव वाजिना ।
यां वां होत्रां परिहिनोमि मेधयेमा ब्रह्माणि नृपतीव जिन्वतम् ॥६ ॥**

हे इन्द्र और सोमदेव ! रस्सी जिस प्रकार से बगल में होकर घोड़े को चारों तरफ से बाँधती है, उसी तरह यह स्तुति आपको परिव्याप्त करे । आप बली हैं, अपनी मेधा शक्ति के बल से यह प्रार्थना हम आपके पास प्रेषित करते हैं । राजाओं की भाँति आप इन स्तुतियों को फलीभूत करें ॥६ ॥

५९५६. **प्रति स्मरेथां तुजयद्भिरेवैर्हतं द्रुहो रक्षसो भङ्गुरावतः ।
इन्द्रासोमा दुष्कृते मा सुगं भूद्यो नः कदा चिदभिदासति द्रुहा ॥७ ॥**

हे इन्द्र और सोमदेव ! आप शीघ्रगामी अश्वों के द्वारा शत्रुओं पर आक्रमण करें । द्रोह करने वाले, विनाशकारी राक्षसों का विनाश करें । दुष्कर्मी को (अपने कुकृत्य करने की) सुगमता न मिले । द्रोह करने वाला किसी भी समय हमें विनष्ट कर सकता है ॥७ ॥

५९५७. **यो मा पाकेन मनसा चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभिः ।
आपइव काशिना सङ्गृभीता असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता ॥८ ॥**

पवित्र मन से रहकर आचरण करने वाले मुझको , जो राक्षस असत्य वचनों द्वारा दोषी सिद्ध करता है, हे इन्द्रदेव ! वह असत्यभाषी (राक्षस) मुट्ठी में बँधे हुए जल के सदृश पूर्णरूपेण नष्ट हो जाए ॥८ ॥

५९५८. **ये पाकशंसं विहरन्त एवैर्ये वा भद्रं दूषयन्ति स्वधाभिः ।
अहये वा तान् प्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरुपस्थे ॥९ ॥**

जो मुझ (वसिष्ठ) विशुद्ध मन से रहने वाले को, अपने स्वार्थ के लिए कष्ट देते हैं या अपने धन-साधनों से मुझ जैसे कल्याणवृत्ति वाले को दोषपूर्ण बनाते हैं, हे सोम ! आप उन्हें सर्प (विषैले जीव) के ऊपर फेंक दें अथवा दरिद्र बना दें ॥९ ॥

५९५९. **यो नो रसं दिप्सति पित्वो अग्ने यो अश्वानां यो गवां यस्तनूनाम् ।
रिपुः स्तेनः स्तेयकृद्दभ्रमेतु नि ष हीयतां तन्वा३ तना च ॥१० ॥**

हे अग्निदेव ! जो हमारे अन्न के सार तत्त्व को नष्ट करने की इच्छा करता है, जो गौओं, अश्वों और सन्ततियों का विनाश करता है; वह चोर, समाज का शत्रु विनष्ट हो ।वह अपने शरीर और संततियों के साथ समाप्त हो जाए ॥१०॥

५९६०. **परः सो अस्तु तन्वा३ तना च तिस्रः पृथिवीरधो अस्तु विश्वाः ।
प्रति शुष्यतु यशो अस्य देवा यो नो दिवा दिप्सति यश्च नक्तम् ॥११ ॥**

वह दुष्ट-पातकी शरीर और संतानों के साथ विनष्ट हो । पृथ्वी आदि तीनों लोकों से उसका पतन हो जाए । हे देवो ! उसकी कीर्ति शुष्क होकर विनष्ट हो जाए । जो दुष्ट राक्षस हमें दिन-रात सताता है, उसका विनाश हो जाए ॥११ ॥



५९६१. **सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते ।**
तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत् ॥१२ ॥

विद्वान् मनुष्य यह जानता है कि सत्य और असत्य वचन परस्पर स्पर्धा करते हैं । उसमें जो सत्य और सरल होता है, सोमदेव उसकी सुरक्षा करते हैं तथा जो असत् होता है, उसका हनन करते हैं ॥१२ ॥

५९६२. **न वा उ सोमो वृजिनं हिनोति न क्षत्रियं मिथुया धारयन्तम् ।**
हन्ति रक्षो हन्त्यासद्वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते ॥१३ ॥

सोम देवता पाप करने वाले, मिथ्याचारी और बलवान् को भी मारते हैं । वे राक्षसों का हनन करते और असत्य बोलने वाले को भी मारते हैं । वे मारे जाकर इन्द्रदेव के द्वारा बाँधे जाते हैं ॥१३ ॥

५९६३. **यदि वाहमनृतदेव आस मोघं वा देवाँ अप्यूहे अग्ने ।**
किमस्मभ्यं जातवेदो हृणीषे द्रोघवाचस्ते निर्ऋथं सचन्ताम् ॥१४ ॥

यदि हम (भूलवश) अनृतदेव के उपासक हैं, (अथवा) यदि हम बेकार में ही देवताओं के पास जाते हैं, तो भी हे अग्ने ! आप हम पर क्रोध न करें । द्रोही, मिथ्याभाषी ही आपके द्वारा हिंसित हों ॥१४ ॥

५९६४. **अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि यदि वायुस्ततप पूरुषस्य ।**
अधा स वीरैर्दशभिर्वि यूया यो मा मोघं यातुधानेत्याह ॥१५ ॥

यदि हम (वसिष्ठ) राक्षस हैं , यदि हम किसी सज्जन पुरुष को हिंसित करें, तो आज ही मर जाएँ, (अन्यथा) हमें जो व्यर्थ ही राक्षस कहकर सम्बोधित करते हैं, वे अपने दस वीरों (परिवारी जनों) के साथ नष्ट हो जाएँ ॥१५ ॥

५९६५. **यो मायातुं यातुधानेत्याह यो वा रक्षाः शुचिरस्मीत्याह ।**
इन्द्रस्तं हन्तु महता वधेन विश्वस्य जन्तोरधमस्पदीष्ट ॥१६ ॥

जो राक्षस मुझ दैवी स्वभाव वाले (वसिष्ठ) को राक्षस कहता है तथा जो राक्षस अपने को "शुद्ध" कहता है, उसे इन्द्रदेव महान् आयुधों से नष्ट करें । वह सभी से पतित होकर गिरे ॥१६ ॥

५९६६. **प्र या जिगाति खर्गलेव नक्तमप द्रुहा तन्वं१ गूहमाना ।**
वव्राँ अनन्ताँ अव सा पदीष्ट ग्रावाणो घ्नन्तु रक्षस उपब्दैः ॥१७ ॥

जो राक्षसी निशाकाल में अपने शरीर को उल्लू की तरह छिपाकर चलती है, वह अधोमुखी होकर अनन्त गर्त में गिरे । पाषाण-खण्ड घोर शब्द करते हुए उन राक्षसों को विनष्ट करें ॥१७ ॥

५९६७. **वि तिष्ठध्वं मरुतो विक्ष्वि१च्छत गृभायत रक्षसः सं पिनष्टन ।**
वयो ये भूत्वी पतयन्ति नक्तभिर्ये वा रिपो दधिरे देवे अध्वरे ॥१८ ॥

हे मरुत् वीरो ! आप प्रजाओं के बीच रहकर राक्षसों को ढूँढ़ने की इच्छा करें । जो राक्षस रात्रि समय में पक्षी बन कर आते हैं, जो यज्ञ में हिंसा करते हैं, उन्हें पकड़कर विनष्ट करें ॥१८ ॥

५९६८. **प्र वर्तय दिवो अश्मानमिन्द्र सोमशितं मघवन्त्सं शिशाधि ।**
प्राक्तादपाक्तादधरादुदक्तादभि जहि रक्षसः पर्वतेन ॥१९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अन्तरिक्ष मार्ग से वज्र प्रहार करें । हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप अपने यजमान को सोम द्वारा संस्कारित करें । राक्षसों का पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण चारों ओर से पर्ववान् (वज्र) द्वारा विनाश करें ॥१९ ॥



५९६९. एत उ त्ये पतयन्ति श्वयातव इन्द्रं दिप्सन्ति दिप्सवोऽदाभ्यम् ।
शिशीते शक्रः पिशुनेभ्यो वधं नूनं सृजदशनिं यातुमद्भ्यः ॥२० ॥

जो राक्षस कुत्तों की तरह काटने दौड़ते हैं, जो राक्षस अहिंसनीय इन्द्रदेव की हिंसा करना चाहते हैं; इन्द्रदेव उन कपटियों को मारने के लिए वज्र को तेज करते हैं । इन्द्रदेव दुष्ट राक्षसों का वज्र से शीघ्र विनाश करें ॥२० ॥

५९७०. इन्द्रो यातूनामभवत् पराशरो हविर्मथीनामभ्या३ विवासताम् ।
अभीदु शक्रः परशुर्यथा वनं पात्रेव भिन्दन्त्सत एति रक्षसः ॥२१ ॥

इन्द्रदेव राक्षसों का दमन करने वाले हैं ।हविष्य (यज्ञ) के विनाशकों का इन्द्रदेव पराभव करते हैं ।परशु जैसे वन काटता है, मुग्दर जैसे मिट्टी के बर्तन तोड़ता है, उसी तरह इन्द्रदेव सामने आये राक्षसों का संहार करते हैं ॥२१ ॥

५९७१. उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम् ।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र ॥२२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप उल्लू के समान (मोहवाले) को मारें । भेड़िये के समान (हिंसक), कुत्ते की भाँति (मत्सरग्रस्त) चक्रवाक पक्षी की तरह (कामी) , वाज़-गृध्र की तरह (मांसभक्षी) राक्षसों को प्रस्तर (वज्र) से मारें तथा इन सबसे हमारी रक्षा करें ॥२२ ॥

५९७२. मा नो रक्षो अभि नड्यातुमावतामपोच्छतु मिथुना या किमीदिना ।
पृथिवी नः पार्थिवात् पात्वंहसोऽन्तरिक्षं दिव्यात्पात्वस्मान् ॥२३ ॥

राक्षस हमारे लिए घातक न हों, कष्ट देने वाले स्त्री-पुरुष के युग्मों से (देवगण) हमें बचाएँ । आपस में विघटन कराने वाले घातक राक्षसों से भी हमें बचाएँ । पृथ्वी हमें भूलोक के पापों से बचाए, अन्तरिक्ष हमें आकाश के पापों से बचाए ॥२३ ॥

५९७३. इन्द्र जहि पुमांसं यातुधानमुत स्त्रियं मायया शाशदानाम् ।
विग्रीवासो मूरदेवा ऋदन्तु मा ते दृशन्त्सूर्यमुच्चरन्तम् ॥२४ ॥

इन्द्रदेव पुरुष राक्षस को विनष्ट करें और कपटी हिंसक स्त्री का भी विनाश करें । हिंसा करना जिनका खेल है, उन्हें छिन्नमस्तक करें । वे सूर्योदय से पहले ही समाप्त हो जाएँ ॥२४ ॥

५९७४. प्रति चक्ष्व वि चक्ष्वेन्द्रश्च सोम जागृतम् ।
रक्षोभ्यो वधमस्यतमशनिं यातुमद्भ्यः ॥२५ ॥

हे सोमदेव ! आप और इन्द्रदेव जाग्रत् रहकर सभी राक्षसों को देखते रहें । राक्षसों को मारने वाले अस्त्र उन पर फेंकें और कष्ट देने वालों का वज्र से संहार करें ॥२५ ॥

॥ इति सप्तमं मण्डलं समाप्तम् ॥



॥ अथाष्टमं मण्डलम् ॥

[सूक्त - १]

[**ऋषि**- १-२ प्रगाथ (घौर) काण्व, ३-२९ मेधातिथि- मेध्यातिथि काण्व, ३०-३३ आसङ्ग प्लायोगि, ३४ शश्वती आङ्गिरसी ऋषिका। **देवता** - इन्द्र, ३० - ३४ आसङ्ग। **छन्द**- १-४ प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती), ५-३२ बृहती, ३३-३४ त्रिष्टुप्।]

५९७५. **मा चिदन्यद्वि शंसत सखायो मा रिषण्यत।**
इन्द्रमित्स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत ॥१ ॥

हे मित्रो ! इन्द्रदेव को छोड़कर अन्य किसी देव की स्तुति उपादेय नहीं है। उसमें शक्ति नष्ट न करें। सोम शोधित करके, एकत्र होकर, संयुक्तरूप से बलशाली इन्द्रदेव की ही बार-बार प्रार्थना करें ॥१ ॥

५९७६. **अवक्रक्षिणं वृषभं यथाजुरं गां न चर्षणीसहम्।**
विद्वेषणं संवननोभयङ्करं मंहिष्ठमुभयाविनम् ॥२ ॥

(हे स्तोतागण ! आप) सशक्त वृषभ (साँड़) के सदृश संघर्षशील जरारहित, शत्रुओं का विरोध और उनका संहार करने वाले, महान् दैविक और भौतिक ऐश्वर्यों के दाता इन्द्रदेव का ही स्तवन करें ॥२ ॥

५९७७. **यच्चिद्धि त्वा जना इमे नाना हवन्त ऊतये।**
अस्माकं ब्रह्मेदमिन्द्र भूतु तेऽहा विश्वा च वर्धनम् ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! अपनी रक्षा के निमित्त यद्यपि सभी मनुष्य आपका आवाहन करते हैं, फिर भी हमारी स्तुतियाँ आपके गौरव को सतत बढ़ाती रहें ॥३ ॥

५९७८. **वि तर्तूर्यन्ते मघवन् विपश्चितोऽर्यो विपो जनानाम्।**
उप क्रमस्व पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्ठमूतये ॥४ ॥

ऐश्वर्यवान्, ज्ञानी, श्रेष्ठ तथा मनुष्यों के पालक हे इन्द्रदेव ! आपकी अनुकम्पा से स्तोतागण समस्त विपत्तियों से बचे रहते हैं। आप हमारे निकट पधारें और पोषण के निमित्त विविध प्रकार के बल प्रदान करें ॥४ ॥

५९७९. **महे चन त्वामद्रिवः परा शुल्काय देयाम्।**
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ॥५ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! अत्यधिक धन मिलने पर भी आपको नहीं त्यागा जा सकता। हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! सौ हजार-दस हजार (किसी भी) कीमत पर आपकी भक्ति नहीं त्यागी जा सकती ॥५ ॥

५९८०. **वस्याँ इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः।**
माता च मे छदयथः समा वसो वसुत्वनाय राधसे ॥६ ॥



हे इन्द्रदेव ! आप हमारे जन्मदाता पिता की अपेक्षा अधिक धनवान् हैं। पालन न करने वाले भाई से भी अधिक धनवान् हैं। सबके पालनकर्त्ता इन्द्रदेव, आप हमारी माता के समतुल्य हैं। हम धन-धान्य से परिपूर्ण जीवन की कामना करते हैं। आप हमें महान् बनाएँ ॥६ ॥

५९८१. **क्वेयथ क्वेदसि पुरुत्रा चिद्धि ते मनः ।**
अलर्षि युध्म खजकृत् पुरन्दर प्र गायत्रा अगासिषुः ॥७ ॥

विभिन्न स्थानों में मन को रमाने वाले, युद्ध कौशल में निपुण, शत्रुओं के नगरों को उजाड़ने वाले हे बलवान् इन्द्रदेव ! आप कहाँ गये थे ? अब आप कहाँ हैं ? हमारे कुशल स्तोताओं द्वारा किये जा रहे सामगान को सुनने के लिए आप यज्ञ में पधारें ॥७ ॥

५९८२. **प्रास्मै गायत्रमर्चत वावातुर्यः पुरन्दरः ।**
याभिः काण्वस्योप बर्हिरासदं यासद्वज्री भिनत्पुरः ॥८ ॥

उपासकों पर कृपा करने वाले तथा रिपुओं की पुरियों को ध्वस्त करने वाले, इन्द्रदेव की गायत्री छन्द के द्वारा प्रार्थना करें। जिन स्तुतियों से प्रसन्न होकर कण्व पुत्रों के यज्ञ में पधारकर उन्होंने रिपुओं की पुरियों को वज्र से तोड़ा था, उन्हीं ऋचाओं से उनकी प्रार्थना करें ॥८ ॥

५९८३. **ये ते सन्ति दशग्विनः शतिनो ये सहस्रिणः ।**
अश्वासो ये ते वृषणो रघुद्रुवस्तेभिर्नस्तूयमा गहि ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने सैकड़ों- हजारों योजन तक दौड़ने वाले शक्तिशाली तथा वेगवान् अश्वों द्वारा हमारे पास शीघ्र पधारें ॥९ ॥

५९८४. **आ त्व१द्य सबर्दुघां हुवे गायत्रवेपसम् ।**
इन्द्रं धेनुं सुदुघामन्यामिषमुरुधारामरङ्कृतम् ॥१० ॥

इन्द्रदेव की प्रसन्नता के लिए हम, सुगमता से दुही जाने योग्य, सबको दुग्ध (पोषण) प्रदान करने वाली गौ की तरह, अन्य प्रकार के अन्न (पोषण) प्रदान करने वाली, अनेकों धाराओं से युक्त गायत्री रूपी धेनु (वाणी-स्तुति) का आवाहन (उच्चारण) करते हैं ॥१० ॥

५९८५. **यत्तुदत् सूर एतशं वङ्कू वातस्य पर्णिना ।**
वहत् कुत्समार्जुनेयं शतक्रतुस्त्सरद् गन्धर्वमस्तृतम् ॥११ ॥

जब सूर्यदेव ने वायु की तरह वक्र (आड़ी, तिरछी किसी भी दिशा में चल पड़ने वाली) गति वाले 'एतश' को व्यथित किया, तब शतक्रतु (सैकड़ों यज्ञ कर्म करने वाले) इन्द्रदेव ने आर्जुनेय (अर्जुन, जो कुटिल नहीं है उससे उत्पन्न) कुत्स को साथ लेकर नष्ट न होने वाले गंधर्व (सूर्य) पर छद्म रूप से आक्रमण किया ॥११ ॥

[यहाँ 'गां' (पृथ्वी अथवा किरणों) को धारण करने के कारण सूर्य को गन्धर्व कहा गया है। विज्ञान सम्मत तथ्य है कि सूर्य में आणविक विखण्डन प्रक्रिया द्वारा ऊर्जा उत्पन्न होती है। इन्द्र का कार्य संगठन है, अणुओं को (सबपार्टिकल्स) उपकणों में न बिखरने देने का है। एतश ऊर्जाकण है; जिनसे अणुओं की संरचना होती है। सूर्य की प्रताड़ना से वे विखण्डित न होने पायें, इसके लिए इन्द्र ने छद्मरूप से (अप्रत्यक्ष रूप से) सूर्य के विखण्डक प्रभाव को प्रभावहीन बनाया। इन्द्र शक्ति के द्वारा पृथ्वी के चारों ओर निर्मित आयनोस्फीयर अन्तरिक्ष के विखण्डक प्रवाहों को पृथ्वी के क्षेत्र में नहीं आने देता है। इस प्रक्रिया का आलंकारिक वर्णन यहाँ प्रतीत होता है।]



५९८६. **य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।**
सन्धाता सन्धिं मघवा पुरूवसुरिष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥१२ ॥

जो इन्द्रदेव हँसुली (गले से नीचे की हड्डी) को रक्त निकलने से पूर्व संधानद्रव्य के बिना ही जोड़ देते हैं, (जो कठिनतम कार्यों को सुगमता से सम्पन्न कर देते हैं), महान् धन के स्वामी वे इन्द्रदेव छिन्न-भिन्न होने वालों को पुन: जोड़ (एकत्रकर) देते हैं ॥१२ ॥

[इन्द्र शक्ति शरीर में तथा विराट् प्रकृति में भी जो टूट-फूट होती है, उसे बिना किसी जोड़ने वाले (भिन्न) पदार्थ की सहायता के अंग-अवयवों या इकाइयों को पुनः जोड़ देने में समर्थ हैं। शरीर के रक्त स्राव अथवा प्रकृति के ऊर्जा प्रवाहों के नष्ट होने के पहले ही यह उपचार हो जाता है ।]

५९८७. **मा भूम निष्ट्याइवेन्द्र त्वदरणा इव ।**
वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दुरोषासो अमन्महि ॥१३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से हमारा पतन न हो और न ही हम दु:खी हों । पतझड़ में शाखाविहीन वृक्षों के समान हम संतानरहित न हों। हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! हम अपने घरों में सुरक्षित रहकर आपकी स्तुति करते हैं ॥१३ ॥

५९८८. **अमन्महीदनाशवोऽनुग्रासश्च वृत्रहन् ।**
सकृत्सु ते महता शूर राधसानु स्तोमं मुदीमहि ॥१४ ॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! हम हड़बड़ाहट तथा क्रोधरहित होकर आपका स्तवन करें । हे वीर इन्द्रदेव ! आपके निमित्त हम भले ही जीवन में एक बार ही यज्ञ करें, पर प्रचुर धन-धान्य से सम्पन्न होकर करें ॥१४ ॥

५९८९. **यदि स्तोमं मम श्रवदस्माकमिन्द्रमिन्दवः ।**
तिरः पवित्रं ससृवांस आशवो मन्दन्तु तुग्र्यावृधः ॥१५ ॥

यदि वे इन्द्रदेव हमारी स्तुति को सुनें, तो हम उत्साह प्रदान करने वाला, पवित्र होने वाला तथा जल से निकलकर बढ़ने वाला सोमरस समर्पित करके उन्हें हर्षित करें ॥१५ ॥

५९९०. **आ त्व१द्य सधस्तुतिं वावातुः सख्युरा गहि ।**
उपस्तुतिर्मघोनां प्र त्वावत्वधा ते वश्मि सुष्टुतिम् ॥१६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने सेवा भावी मित्र के साथ हमारी तथा दूसरे धनवानों की स्तुतियों को सुनकर आज हमारे निकट आएँ । हम आपकी विधिवत् प्रार्थना करना चाहते हैं ॥१६ ॥

५९९१. **सोता हि सोममद्रिभिरेमेनमप्सु धावत ।**
गव्या वस्त्रेव वासयन्त इन्नरो निर्धुक्षन्वक्षणाभ्यः ॥१७ ॥

हे ऋत्विजो ! पत्थरों से कूटकर छाने हुए सोमरस को (वसतीवरी नामक) जल में मिश्रित करें । पृथ्वी को बादलों से आच्छादित करते हुए वायुदेव नदियों के निमित्त पानी को बरसाते हैं ॥१७ ॥

५९९२. **अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि ।**
अया वर्धस्व तन्वा गिरा ममा जाता सुक्रतो पृण ॥१८ ॥

हे इन्द्रदेव ! उत्तम यज्ञ के आधार पृथ्वी एवं द्युलोक में आप अपनी आभा का विस्तार करें और अपनी प्रेरणा से हमारे सहयोगियों को पोषण प्रदान करें ॥१८ ॥



५९९३. **इन्द्राय सु मदिन्तमं सोमं सोता वरेण्यम्।**
शक्र एणं पीपयद्विश्वया धिया हिन्वानं न वाजयुम् ॥१९ ॥

हे स्तोताओ ! आप अत्यन्त हर्ष प्रदायक तथा महान् सोमरस इन्द्रदेव के निमित्त तैयार करें, जिससे वे (इन्द्रदेव) अपने सम्पूर्ण विवेक से स्तवन करने वाले तथा अन्न प्राप्ति की कामना करने वाले याजकों की इच्छा को पूर्ण करें ॥१९ ॥

५९९४. **मा त्वा सोमस्य गल्दया सदा याचन्नहं गिरा।**
भूर्णिं मृगं न सवनेषु चुक्रुधं क ईशानं न याचिषत् ॥२० ॥

सिंह के समान महान् पराक्रमी भरण-पोषण करने में समर्थ हे इन्द्रदेव ! यज्ञ में सोमरस प्रदान करते हुए, विजयिनी स्तुतियों द्वारा हम निरन्तर आपसे याचना करते हैं। हम क्रोध के पात्र कदापि नहीं हैं; क्योंकि कौन ऐसा व्यक्ति है, जो अपने अधिपति से याचना नहीं करता ॥२० ॥

५९९५. **मदेनेषितं मदमुग्रमुग्रेण शवसा।**
विश्वेषां तरुतारं मदच्युतं मदे हि ष्मा ददाति नः ॥२१ ॥

प्रसन्नतापूर्वक तैयार किए हुए शक्तिशाली तथा हर्ष प्रदायक इस सोमरस का पान करके इन्द्रदेव महान् शक्ति से सम्पन्न हों। वे समस्त रिपुओं के मद को चूर करके उनका विनाश करने वाली सन्तान हमें प्रदान करें ॥२१ ॥

५९९६. **शेवारे वार्या पुरु देवो मर्ताय दाशुषे।**
स सुन्वते च स्तुवते च रासते विश्वगूर्तो अरिष्टुतः ॥२२ ॥

समस्त विश्व के पालक इन्द्रदेव रिपुओं द्वारा भी प्रशंसित होते हैं। वे सत्कर्म करने वाले, दान करने वाले, सोम अभिषव करने वाले तथा स्तुति करने वाले मनुष्यों को प्रचुर सम्पत्ति प्रदान करते हैं ॥२२ ॥

५९९७. **एन्द्र याहि मत्स्व चित्रेण देव राधसा।**
सरो न प्रास्युदरं सपीतिभिरा सोमेभिरुरु स्फिरम् ॥२३ ॥

महान् तेजस्वी हे इन्द्रदेव ! आप यहाँ पधारें और हमें इच्छित धन प्रदान करके हर्षित करें। मरुद्गणों के साथ सोमरस पीकर अपने उदर को पूर्णरूपेण भर लें ॥२३ ॥

५९९८. **आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये।**
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥२४ ॥

हे इन्द्रदेव ! स्वर्णिम रथ में जुड़ने वाले, स्तुति योग्य, लम्बे बालों वाले सैकड़ों- हजारों घोड़े (वाला स्वर्णिम रथ) आपको सोमपान करने के लिए यहाँ (यज्ञस्थल पर) ले आएँ ॥२४ ॥

५९९९. **आ त्वा रथे हिरण्यये हरी मयूरशेप्या।**
शितिपृष्ठा वहतां मध्वो अन्धसो विवक्षणस्य पीतये ॥२५ ॥

हे इन्द्रदेव ! हर्षदायी सोमरस का पान करने के लिए मयूरवर्ण तथा सफेद पीठ वाले घोड़े आपको स्वर्ण रथ पर बैठाकर यहाँ (यज्ञस्थल पर) ले आएँ ॥२५ ॥

६०००. **पिबा त्व१स्य गिर्वणः सुतस्य पूर्वपा इव।**
परिष्कृतस्य रसिन इयमासुतिश्चारुर्मदाय पत्यते ॥२६ ॥



हे स्तुत्य इन्द्रदेव ! आप सर्वप्रथम इस शोधित-निष्पन्न सोमरस का पान करें । यह सोमरस अत्यधिक आह्लादवर्धक है ॥२६ ॥

६००१. **य एको अस्ति दंसना महाँ उग्रो अभि व्रतैः ।**
गमत्स शिप्री न स योषदा गमद्धवं न परि वर्जति ॥२७ ॥

अपने महान् पराक्रम से अकेले ही शत्रुओं को परास्त करने वाले, अति उग्र तथा व्रत पालन के कारण सर्वश्रेष्ठ इन्द्रदेव हमारे पास पधारें । वे हमसे कभी भी दूर न हों, हमारे यज्ञ में आकर सदैव विद्यमान रहें ॥२७ ॥

६००२. **त्वं पुरं चरिष्ण्वं वधैः शुष्णस्य सं पिणक् ।**
त्वं भा अनु चरो अध द्विता यदिन्द्र हव्यो भुवः ॥२८ ॥

हे प्रकाशमान इन्द्रदेव ! दूर तक पीछा करते हुए आपने शुष्ण (शोषक असुर) के चलते-फिरते आवास को अपने वज्र से ध्वस्त कर दिया । उसके बाद होताओं द्वारा आवाहन-योग्य आप दोनों (स्तोताओं एवं याजकों) से प्रशंसनीय हुए ॥२८ ॥

६००३. **मम त्वा सूर उदिते मम मध्यन्दिने दिवः ।**
मम प्रपित्वे अपिशर्वरे वसवा स्तोमासो अवृत्सत ॥२९ ॥

सबके पालक हे इन्द्रदेव ! सूर्योदय के समय, मध्याह्नकाल में दिन के अन्त में तथा रात्रि के प्रारम्भ में हमारे स्तवन आपको प्राप्त हों ॥२९ ॥

६००४. **स्तुहि स्तुहीदेते घा ते मंहिष्ठासो मघोनाम् ।**
निन्दिताश्वः प्रपथी परमज्या मघस्य मेध्यातिथे ॥३० ॥

(राजर्षि आसङ्ग का कथन) हे मेधातिथे ! हम आपको सबसे ज्यादा सम्पत्ति प्रदान करते हैं । हमारे बल से ही दूसरों को नीचा दिखाने वाले, अश्व तथा श्रेष्ठ आयुध आपको प्राप्त हुए हैं । अत: आप बार-बार स्तुति करें ॥३०

६००५. **आ यदश्वान्वनन्वतः श्रद्धयाहं रथे रुहम् ।**
उत वामस्य वसुनश्चिकेतति यो अस्ति याद्वः पशुः ॥३१ ॥

(राजर्षि आसंग का कथन) हे मेधातिथे ! नम्रतापूर्वक श्रद्धा के साथ हमने आपके रथ को अश्वों के साथ नियोजित किया है । पशुधन से सम्पन्न यदुवंश में उत्पन्न हमने आपको बहुत-सा धन प्रदान किया है , इसलिए (हमारी) स्तुति करो ॥३१ ॥

६००६. **य ऋज्रा मह्यं मामहे सह त्वचा हिरण्यया ।**
एष विश्वान्यभ्यस्तु सौभगासङ्गस्य स्वनद्रथः ॥३२ ॥

(मेधातिथि का कथन) जिन आसङ्ग ने मुझे सुवर्णमय आवरण सहित बहुत-सा धन प्रदान किया है, वे शब्दायमान रथ से युक्त होकर शत्रुओं के व्यापक धन-वैभव पर विजय प्राप्त करें ॥३२ ॥

६००७. **अध प्लायोगिरति दासदन्यानासङ्गो अग्ने दशभिः सहस्रैः ।**
अधोक्षणो दश मह्यं रुशन्तो नळाइव सरसो निरतिष्ठन् ॥३३ ॥

हे अग्निदेव ! दस हजार गौओं की प्रयोग के पुत्र आसंग ने दान कर दिया, जिससे वे अन्य दानियों में सर्वोच्च हो गये । इसके अलावा हमें प्रदान किए गए दस हजार परिपुष्ट गोधन, सरोवर के तट से प्रादुर्भूत वेंत के पौधे की भाँति प्रचुर मात्रा में वृद्धि को प्रात हों ॥३३ ॥



६००८. **अन्वस्य स्थूरं ददृशे पुरस्तादनस्थ ऊरुरवरम्बमाणः ।**
शश्वती नार्यभिचक्ष्याह सुभद्रमर्य भोजनं बिभर्षि ॥३४ ॥

(अङ्गिरस की पुत्री आसङ्ग की पत्नी शश्वती कहती है) हे स्वामिन् आपका शरीर हृष्ट-पुष्ट है । आपका शक्तिशाली विशाल शरीर अति सुन्दर है, आप परम सौभाग्यशाली और सर्वश्रेष्ठ हैं ॥३४ ॥

[ऋचा ३० से ३४ तक आसंग एवं मेधातिथि का प्रसंग है । पौराणिक संदर्भ से आसङ्ग राजर्षि तथा मेधातिथि तत्वज्ञ ऋषि हैं । मेधातिथि के तप से लाभान्वित आसंग ने उन्हें विपुल दान दिया था । भावपरक अर्थों में मेधातिथि का अर्थ है, मेधावी दिशा में सतत प्रगतिशील । आसंग का अर्थ है, सबको साथ लेकर चलने वाले प्रवाह । यह सम्बोधन यज्ञीय संगतिकरण या क्षमता का पर्याय है । आसंग वीर्यहीन हुए । मेधातिथि ने तप प्रयोगों से उन्हें वीर्यवान् बनाया । प्रयोग के पुत्र (प्रयोगों से विकसित) आसंग ने मेधातिथियों (विचारपूर्वक यज्ञीय कर्म करने वालों) को धन-धान्य से पूर्ण किया । आसंग की पत्नी शश्वती (सदा रहने वाली-टिकाऊ प्रक्रिया) है । यह प्रकरण मेधावियों द्वारा यज्ञीय संगतिकरण शक्ति प्रवाहों को जाग्रत् करके स्वयं भी लाभान्वित होने की सनातन प्रक्रिया का आलंकारिक वर्णन प्रतीत होता है ।]

[सूक्त - २]

[**ऋषि-** १-४० मेधातिथि काण्व और प्रियमेध आङ्गिरस, ४१-४२ मेधातिथि काण्व । **देवता-** इन्द्र, ४१-४२ विभिन्दु । **छन्द-** गायत्री, २८ अनुष्टुप् ।]

६००९. **इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम् । अनाभयिन्नरिमा ते ॥१ ॥**

भयभीत न होने वाले ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! आप अभिषुत सोमरस को ग्रहण करके पूर्णरूपेण तृप्त हों । आपको आनन्दित करने के लिए यह सोमरस अर्पित है ॥१ ॥

६०१०. **नृभिर्धूतः सुतो अश्नैरव्यो वारैः परिपूतः । अश्वो न निक्तो नदीषु ॥२ ॥**

जिस प्रकार घोड़े को जलाशय में धोकर स्वच्छ किया जाता है, उसी प्रकार याजकों द्वारा सोम (सोमलता को) स्वच्छ करके पत्थरों से कूटकर, छलनी से छानकर यह सोमरस तैयार किया गया है ॥२ ॥

६०११. **तं ते यवं यथा गोभिः स्वादुमकर्म श्रीणन्तः । इन्द्र त्वास्मिन्त्सधमादे ॥३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! पुरोडाश की भाँति, गाय के दूध में मिलाकर शोधित यह मधुर सोमरस आपके लिए तैयार किया गया है । इस आनन्ददायी सोमपान के लिए हम आपका आवाहन करते हैं ॥३ ॥

६०१२. **इन्द्र इत्सोमपा एक इन्द्रः सुतपा विश्वायुः । अन्तर्देवान् मर्त्यांश्च ॥४ ॥**

देवों और मनुष्यों में केवल इन्द्रदेव ही सोमरस को पीने के अधिकारी हैं । सोमरस को पीने वाले इन्द्रदेव दीर्घजीवी हैं ॥४ ॥

६०१३. **न यं शुक्रो न दुराशीर्न तृप्रा उरुव्यचसम् । अपस्पृण्वते सुहार्दम् ॥५ ॥**

जिन इन्द्रदेव को सामान्य सोमरस, क्षीर से युक्त सोमरस तथा तृप्तकारी सोमरस रुष्ट नहीं करता (सन्तुष्ट करता है) , उन विशाल तथा श्रेष्ठ हृदय वाले इन्द्रदेव की हम प्रार्थना करते हैं ॥५ ॥

६०१४. **गोभिर्यदीमन्ये अस्मन्मृगं न व्रा मृगयन्ते । अभित्सरन्ति धेनुभिः ॥६ ॥**

(जाल एवं वाद्ययंत्र लेकर) मृगों को जिस प्रकार शिकारी ढूँढ़ते-फिरते हैं, उसी प्रकार हम ऋत्विक् और यजमान गौ दुग्ध और श्रेष्ठ स्तुतियों के साथ इन्द्रदेव को खोजते हैं ॥६ ॥

६०१५. **त्रय इन्द्रस्य सोमाः सुतासः सन्तु देवस्य । स्वे क्षये सुतपाव्नः ॥७ ॥**



यज्ञ मण्डप में इन्द्रदेव की तृप्ति (पीने) के लिए याजकगण तीनों समय (प्रातः , मध्याह्न, सायं) निचोड़े हुए सोमरस को तैयार रखें ॥७ ॥

६०१६. **त्रयः कोशासः श्चोतन्ति तिस्रश्चम्वः सुपूर्णाः । समाने अधि भार्मन् ॥८ ॥**

समान रूप से पोषण करने वाले अधिष्ठानों वाले यज्ञों में तीन कलशों से सोमरस टपकाया जाता है तथा तीन भरी हुई स्रुचियों (चमचा) से आहुति दी जाती है ॥८ ॥

[**यहाँ द्यु , अन्तरिक्ष एवं पृथ्वी तीनों लोकों में पोषण चक्र चलने वाली प्रक्रिया का आलंकारिक वर्णन है ।**]

६०१७. **शुचिरसि पुरुनिः ष्ठाः क्षीरैर्मध्यत आशीर्तः । दध्ना मन्दिष्ठः शूरस्य ॥९ ॥**

हे सोम ! आप पवित्र हैं तथा अनेकों के अन्तःकरण में विद्यमान रहते हैं । आप दुग्ध-दधि में मिलकर शूरवीर इन्द्रदेव को आनन्द प्रदान करते हैं ॥९ ॥

६०१८. **इमे त इन्द्र सोमास्तीव्रा अस्मे सुतासः । शुक्रा आशिरं याचन्ते ॥१० ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी तृप्ति के निमित्त हमारे द्वारा अभिषुत हुए तीखे तथा कषैले स्वाद वाला सोमरस दुग्धादि मिलाये जाने की आवश्यकता अनुभव करता है ॥१० ॥

६०१९. **ताँ आशिरं पुरोळाशमिन्द्रेमं सोमं श्रीणीहि । रेवन्तं हि त्वा शृणोमि ॥११ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्यवान् हैं, अतः हमारे द्वारा प्रदान किये गये पुरोडाश तथा दूध मिले सोमरस का पान करके हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥११ ॥

६०२०. **हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम् । ऊधर्न नग्ना जरन्ते ॥१२ ॥**

जैसे सुरा पीने के बाद उन्मत्त लोग आपस में युद्ध करते हैं, वैसे ही हे इन्द्रदेव ! यह सोमरस आपके हृदय में युद्ध (मन्थन) करता है । जिस प्रकार दुग्ध से युक्त थनों वाली गाय की लोग प्रशंसा करते हैं, उसी प्रकार प्रार्थना करने वाले आपकी प्रशंसा करते हैं ॥१२ ॥

६०२१. **रेवाँ इद्रेवतः स्तोता स्यात्त्वावतो मघोनः । प्रेदु हरिवः श्रुतस्य ॥१३ ॥**

हे विभूतिवान् इन्द्रदेव ! आपकी स्तुति करने वाला निश्चय ही धन प्राप्त करता है । आपका उपासक सभी ऐश्वर्यो से युक्त होता है ॥१३ ॥

६०२२. **उक्थं चन शस्यमानमगोररिरा चिकेत । न गायत्रं गीयमानम् ॥१४ ॥**

स्तुति न करने वाले (आस्था हीनों) के इन्द्रदेव शत्रु हैं । स्तोताओं द्वारा पठित स्तोत्रों को वे भली-भाँति जानते हैं । वे सामवेद गायक (उद्गाता) के गायन को भी सुनते और समझते हैं ॥१४ ॥

६०२३. **मा न इन्द्र पीयत्नवे मा शर्धते परा दाः । शिक्षा शचीवः शचीभिः ॥१५ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हिंसक शत्रुओं और उपेक्षित करने वालों के आश्रय में हमें न छोड़ें । अपने बल से हमें अभीष्ट ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१५ ॥

६०२४. **वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः । कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते ॥१६ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपसे मित्रता करने के इच्छुक हम याजकगण (आपके स्तोता) तथा सभी कण्ववंशीय हमारे पुत्र-पौत्रादि स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं ॥१६ ॥

६०२५. **न घेमन्यदा पपन वज्रिन्नपसो नविष्टौ । तवेदु स्तोमं चिकेत ॥१७ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! यज्ञ कर्म में आपकी स्तुति करने के अतिरिक्त हम अन्य दूसरे की स्तुति नहीं करेंगे ।



हम स्तोत्रों द्वारा आपकी ही स्तुति करना जानते हैं अर्थात् आपकी ही स्तुति करते हैं ॥१७ ॥

६०२६. **इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति । यन्ति प्रमादमतन्द्राः ॥१८ ॥**

यज्ञ के निमित्त सदैव सोमरस तैयार करने वाले साधकों से देवगण प्रसन्न रहते हैं, उन्हीं की कामना करते हैं । आलस्यरहित देवगण आनन्द प्रदान करने वाले सोमरस का सदा पान करते हैं ॥१८ ॥

६०२७. **ओ षु प्र याहि वाजेभिर्मा हृणीथा अभ्य१ स्मान् । महाँ इव युवजानिः ॥१९ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार विचारशील पुरुष अपनी पत्नी पर क्रोध नहीं करते, उसी प्रकार आप भी हमारे ऊपर क्रोधित न हों । आप अपने घोड़ों के द्वारा हमारे इस यज्ञ में पधारें ॥१९ ॥

६०२८. **मो ष्व१द्य दुर्हणावान्त्सायं करदारे अस्मत् । अश्रीरइव जामाता ॥२० ॥**

शत्रुओं पर असह्य प्रहार करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारे निकट शीघ्र ही आएँ । श्रीहीन तथा बार-बार बुलाए जाने वाले, किन्तु फिर भी शीघ्र न आने वाले अहंकारी दामाद की तरह सायं आने में आप विलम्ब न करें ॥२० ॥

६०२९. **विद्मा ह्यस्य वीरस्य भूरिदावरीं सुमतिम् । त्रिषु जातस्य मनांसि ॥२१ ॥**

प्रचुर सम्पत्ति प्रदान करने वाली, शूरवीर इन्द्रदेव की बुद्धि तथा तीनों लोकों में विख्यात उनके मानस को हम भली-भाँति जानते हैं ॥२१ ॥

६०३०. **आ तू षिञ्च कण्वमन्तं न घा विद्म शवसानात् । यशस्तरं शतमूतेः ॥२२ ॥**

हे याजको ! कण्ववंशीय ऋषि इन्द्रदेव को सोमरस से अभिषिंचित करें । अत्यन्त शक्तिशाली तथा अनेकों प्रकार के रक्षण-साधनों से सम्पन्न इन्द्रदेव से अधिक कीर्तिमान् देवता के बारे में हम कुछ भी नहीं जानते हैं ॥२२ ॥

६०३१. **ज्येष्ठेन सोतरिन्द्राय सोमं वीराय शक्राय । भरा पिबन्नर्याय ॥२३ ॥**

सोमरस तैयार करने वाले हे याजको ! आप सबसे अधिक महान् , पराक्रमी, बलशाली तथा श्रेष्ठ इन्द्रदेव को सोमरस प्रदान करें, जिसका कि वे प्रसन्नतापूर्वक पान करें ॥२३ ॥

६०३२. **यो वेदिष्ठो अव्यथिष्वश्वावन्तं जरितृभ्यः । वाजं स्तोतृभ्यो गोमन्तम् ॥२४ ॥**

जिन याजकों के यज्ञ मण्डप में इन्द्रदेव पधारते हैं, वे कभी भी दुःखी नहीं होते । वे देव प्रार्थना करने वालों को अश्व, गौ आदि धन प्रदान करते हैं ॥२४ ॥

६०३३. **पन्यंपन्यमित्सोतार आ धावत मद्याय । सोमं वीराय शूराय ॥२५ ॥**

हे सोम शोधन में रत याजको ! पराक्रमी शूरवीर इन्द्रदेव के लिए आनन्ददायी सोमरस अर्पित करो ॥२५ ॥

६०३४. **पाता वृत्रहा सुतमा घा गमन्नारे अस्मत् । नि यमते शतमूतिः ॥२६ ॥**

सैकड़ों साधनों से (हर प्रकार से) हमारी रक्षा करने वाले, वृत्रासुर का हनन करने वाले सोमपायी हे इन्द्रदेव ! आप हमारे यज्ञ में अवश्य पधारें और शत्रुओं को हमसे दूर करें ॥२६ ॥

६०३५. **एह हरी ब्रह्मयुजा शग्मा वक्षतः सखायम् । गीर्भिः श्रुतं गिर्वणसम् ॥२७ ॥**

संकेतमात्र से रथ में नियोजित होने वाले,सुखवर्धक दोनों अश्व, सबको आश्रय प्रदान करने वाले, मित्ररूप इन्द्रदेव को, स्तुति गान के साथ यज्ञ मण्डप पर लेकर पहुँचें ॥२७ ॥

६०३६. **स्वादवः सोमा आ याहि श्रीताः सोमा आ याहि ।**
शिप्रिन्नृषीवः शचीवो नायमच्छा सधमादम् ॥२८ ॥



हे सौन्दर्यवान्, ज्ञानवान् तथा वीर्यवान् इन्द्रदेव ! आप यहाँ पधारें । सोमरस अभिषुत होकर तैयार हो चुका है । आपके उपासक आपको बुला रहे हैं । अत: आप यहाँ पधारें ॥२८ ॥

६०३७. **स्तुतश्च यास्त्वा वर्धन्ति महे राधसे नृम्णाय । इन्द्र कारिणं वृधन्तः ॥२९ ॥**

हे कर्मशील इन्द्रदेव ! स्तवन करने वाले समस्त साधक मन्त्रों से आपको समृद्ध करते हैं । आप स्तुतियों को ग्रहण करके हमें श्रेष्ठ तथा हितकारी धन प्रदान करें ॥२९ ॥

६०३८. **गिरश्च यास्ते गिर्वाह उक्था च तुभ्यं तानि । सत्रा दधिरे शवांसि ॥३० ॥**

उक्थ (स्तुति) मंत्रों के साथ आवाहन योग्य तथा प्रशंसनीय हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त की जाने वाली समस्त स्तुतियाँ एक साथ मिलकर आप में बल उत्पन्न करती हैं ॥३० ॥

६०३९. **एवेदेष तुविकूर्मिर्वाजाँ एको वज्रहस्तः । सनादमृक्तो दयते ॥३१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप विविध प्रकार के श्रेष्ठ कर्म करने वाले तथा अद्वितीय वज्रधारी हैं । आप रिपुओं के लिए अजेय हैं तथा यजमान को सदैव अन्नादि प्रदान करते हैं ॥३१ ॥

६०४०. **हन्ता वृत्रं दक्षिणेनेन्द्रः पुरू पुरुहूतः । महान्महीभिः शचीभिः ॥३२ ॥**

अपनी कुशलता द्वारा (दायें हाथ से) वृत्र को मारने तथा विराट् शक्तियों के कारण इन्द्रदेव महान् हैं । सर्वव्यापी इन्द्रदेव को समस्त प्राणी अपनी रक्षा के लिए बुलाते हैं ॥३२॥

६०४१. **यस्मिन् विश्वाश्चर्षणय उत च्यौत्ना ज्रयांसि च । अनु घेन्मन्दी मघोनः ॥३३ ॥**

जिन इन्द्रदेव में विश्व के समस्त प्राणी तथा सम्पूर्ण बल स्थित हैं, ऐसे ऐश्वर्यवान् देव को निश्चित रूप से प्रसन्न करना चाहिए ॥३३ ॥

६०४२. **एष एतानि चकारेन्द्रो विश्वा योऽति शृण्वे । वाजदावा मघोनाम् ॥३४ ॥**

जिन इन्द्रदेव को सभी लोग अत्यन्त बलशाली तथा शूरवीर के रूप में जानते हैं, उन्होंने ही ये सब पराक्रम-पूर्ण कर्म सम्पन्न किये हैं । सभी ऐश्वर्यवानों को अन्न प्रदान करने वाले वे ही हैं ॥३४ ॥

६०४३. **प्रभर्ता रथं गव्यन्तमपाकाच्चिद्यमवति । इनो वसु स हि वोळ्हा ॥३५ ॥**

सभी के पोषक इन्द्रदेव, वेगपूर्वक दौड़ते हुए अपने रथ की , रिपुओं से रक्षा करते हैं । वे इन्द्रदेव सबके स्वामी होकर धन को प्राप्त करते हैं ॥३५ ॥

६०४४. **सनिता विप्रो अर्वद्भिर्हन्ता वृत्रं नृभिः शूरः । सत्योऽविता विधन्तम् ॥३६ ॥**

ज्ञानी इन्द्रदेव अपने अश्वों से सभी गन्तव्य स्थलों पर पहुँच जाते हैं तथा शूरवीर नेताओं (मरुद्गणों) की सहायता से वृत्र का वध करते हैं । वे सत्यरूप इन्द्रदेव अपने सेवकों की रक्षा करते हैं ॥३६ ॥

६०४५. **यजध्वैनं प्रियमेधा इन्द्रं सत्राचा मनसा । यो भूत्सोमैः सत्यमद्वा ॥३७ ॥**

(ऋषि मेध का स्वयं के प्रति अथवा अन्त: चेतना का अपनी प्रिय मेधा से कथन) हे प्रियमेध ! सोमरस पान करके इन्द्रदेव वास्तविक शक्ति से सम्पन्न होते हैं । अत: मनोयोग से उनके निमित्त यज्ञ करो ॥३७ ॥

६०४६. **गाथश्रवसं सत्पतिं श्रवस्कामं पुरुत्मानम् । कण्वासो गात वाजिनम् ॥३८ ॥**

हे कण्वपुत्रो ! सज्जनों का पालन करने वाले, कीर्ति की कामना करने वाले, दृढ़ आत्मबल वाले तथा जिनके यश का गान सर्वत्र होता है, ऐसे इन्द्रदेव की आप स्तुति करें ॥३८ ॥

६०४७. **य ऋते चिद्गास्पदेभ्यो दात् सखा नृभ्यः शचीवान् । ये अस्मिन्काममश्रियन् ॥३९॥**



जो देवगण इन (इन्द्रदेव) पर अपनी कामनाएँ आश्रित करते हैं, उन्हें श्रेष्ठ कर्म वाले, सखारूप इन्द्रदेव ने पद चिह्न न प्राप्त होने पर भी गौएँ (दिव्य वाणियाँ) खोजकर प्रदान कीं ॥३९ ॥

६०४८. **इत्था धीवन्तमद्रिवः काण्वं मेध्यातिथिम् । मेषो भूतो३भि यन्नयः ॥४० ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपने इस प्रकार स्तुति करते हुए, ज्ञानी कण्वपुत्र मेधातिथि को मेषरूप में (अनुगमन करने वाले के रूप में) प्राप्त किया है ॥४० ॥

६०४९. **शिक्षा विभिन्दो अस्मै चत्वार्ययुता ददत् । अष्टा परः सहस्रा ॥४१ ॥**

हे विभिन्दो ! आपने इस ऋषि के लिए चालीस हजार की संख्या में धन प्रदान किया । इसके अतिरिक्त पुनः आठ सहस्र की संख्या में धन प्रदान किया ॥४१ ॥

६०५०. **उत सु त्ये पयोवृधा माकी रणस्य नप्त्या । जनित्वनाय मामहे ॥४२ ॥**

जल की वृष्टि करने वाले, सबका निर्माण करने वाले, याजकों को ऊँचा उठाने वाले, पृथ्वी तथा द्युलोक के पूर्वोक्त धन (४०००० + ८०००) प्रादुर्भूत करने के लिए हम स्तुति करते हैं ॥४२ ॥

[सूक्त - ३]

[**ऋषि**- मेध्यातिथि काण्व । **देवता**- इन्द्र, २१-२४ पाकस्थामा कौरयाण । **छन्द**- १-२० प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती), २१ अनुष्टुप्, २२-२३ गायत्री, २४ बृहती ।]

सूक्त क्र० ३ के ऋषि मेधातिथि क्र० ४ के देवातिथि तथा क्र० ५ के ब्रह्मातिथि हैं । यास्क मुनि के अनुसार ऋषि शरीरधारी व्यक्ति भी हैं तथा विशिष्ट प्राण-प्रवाह भी हैं । इस आधार पर उक्त तीन नाम साधक के अंतःकरण स्थित प्राणतत्व के क्रमिक उन्नयन के द्योतक हैं । मेधातिथि का अर्थ होता है - मेधा की ओर सतत गतिशील । जब व्यक्तित्व मेधा की ओर सतत गतिशील होता है तथा उपलब्ध मेधा का यज्ञीय उपयोग करता है, तो वह देवातिथि अर्थात् देवत्व की ओर सतत प्रगतिवान् बन जाता है । देवत्व का भी यज्ञीय सुनियोजन करते-करते व्यक्तित्व सहज ही ब्रह्मातिथि अर्थात् ब्रह्मत्व की ओर सतत बढ़ने वाला, ब्रह्मवर्चस युक्त होता चला जाता है -

६०५१. **पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः ।**
आपिर्नो बोधि सधमाद्यो वृधे३ऽस्माँअवन्तु ते धियः ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! गौ के दूध में मिश्रित रस रूप में हमारे द्वारा शोधित किए गये सोमरस का आप पान करें और प्रफुल्लित हों । संगठित रूप से किये गए कार्यों में हमारे सहचर बनकर हमें उन्नतशील मार्ग दिखाएँ । आपकी बुद्धि हमारा संरक्षण करने वाली बने ॥१ ॥

६०५२. **भूयाम ते सुमतौ वाजिनो वयं मा नः स्तरभिमातये ।**
अस्माञ्चित्राभिरवतादभिष्टिभिरा नः सुम्नेषु यामय ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी अनुकूल उत्तम बुद्धि द्वारा प्रेरित होकर हम सामर्थ्य प्राप्त करें । शत्रु हमें नष्ट न करें । अपने सामर्थ्यशाली रक्षण-साधनों से हमारी रक्षा करते हुए सुख-समृद्धि बढ़ाएँ ॥२ ॥

६०५३. **इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।**
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥३ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! हमारी स्तुतियाँ आपकी कीर्ति को बढ़ाएँ । अग्नि के समान प्रखर, पवित्रात्मा और विद्वान् साधक स्तोत्रों द्वारा आपकी प्रार्थना करते हैं ॥३ ॥



६०५४. **अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्र इव पप्रथे ।**
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥४ ॥

ये इन्द्रदेव हजारों ऋषियों के स्तुतिबल को पाकर प्रख्यात हुए हैं । इससे समुद्र की तरह विस्तृत हुए हैं । इनकी सत्यनिष्ठा और शक्ति प्रसिद्ध है । यज्ञों में स्तोत्रगान करते हुए इनका सम्मान किया जाता है ॥४ ॥

६०५५. **इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।**
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥५ ॥

दैवी प्रयोजनों के लिए किये गये यज्ञों में हम याजकगण जिस प्रकार यज्ञ के प्रारम्भ और उसकी समाप्ति के समय इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, वैसे ही धन प्राप्ति की कामना से भी इन्द्रदेव को आवाहित करते हैं ॥५ ॥

६०५६. **इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्यमरोचयत् ।**
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे सुवानास इन्दवः ॥६ ॥

इन्द्रदेव ने अपनी सामर्थ्य से द्युलोक और पृथ्वी को विस्तृत किया । इन्द्रदेव ने ही सूर्यदेव को आलोकयुक्त किया । इन्द्रदेव ने ही सभी लोकों को आश्रय प्रदान किया । ऐसे इन्द्रदेव के लिए ही यह सोमरस समर्पित है ॥६ ॥

६०५७. **अभि त्वा पूर्वपीतय इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।**
समीचीनास ऋभवः समस्वरन् रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीन काल से ही ऋभुगणों तथा रुद्रों द्वारा आपकी स्तुति की जाती रही है । याजकगण स्तुति करते हुए सोमपान के लिए सर्वप्रथम आपको ही बुलाते हैं ॥७ ॥

६०५८. **अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यं शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।**
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ॥८ ॥

वे इन्द्रदेव सोमरस का सेवन करके अत्यधिक आनन्दित होकर यजमान के वीर्य और बल को बढ़ाते हैं । अतएव स्तोतागण आज भी इन्द्रदेव की महिमा का वर्णन करते हैं ॥८ ॥

६०५९. **तत्त्वा यामि सुवीर्यं तद् ब्रह्म पूर्वचित्तये ।**
येना यतिभ्यो भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविथ ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपने जिस शक्ति से यतियों तथा भृगुऋषि को धन प्रदान किया था तथा जिस ज्ञान से ज्ञानियों (प्रस्कण्व) की रक्षा की थी, उस ज्ञान तथा बल की प्राप्ति के लिए सबसे पहले हम आपसे प्रार्थना करते हैं ॥९ ॥

६०६०. **येना समुद्रमसृजो महीरपस्तदिन्द्र वृष्णि ते शवः ।**
सद्यः सो अस्य महिमा न सन्नशे यं क्षोणीरनुचक्रदे ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस शक्ति से आपने समुद्र तथा विशाल नदियों का निर्माण किया है; वह शक्ति हमारे अभीष्ट को पूर्ण करने वाली है । आपकी जिस महिमा का अनुगमन द्यु तथा पृथ्वीलोक करते हैं, उसका कोई पारावार नहीं ॥१० ॥

६०६१. **शग्धी न इन्द्र यत्त्वा रयिं यामि सुवीर्यम् ।**
शग्धि वाजाय प्रथमं सिषासते शग्धि स्तोमाय पूर्व्य ॥११ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस श्रेष्ठ पराक्रम से युक्त ऐश्वर्य की हम आपसे याचना करते हैं, आप उसे प्रदान करें । अन्न के इच्छुक मनुष्यों को सबसे पहले अन्न प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! आप स्तुतिकर्ता को भी धन-धान्य प्रदान करें ॥११॥



६०६२. **शग्धी नो अस्य यद्ध पौरमाविथ धिय इन्द्र सिषासतः ।**
शग्धि यथा रुशमं श्यावकं कृपमिन्द्र प्रावः स्वर्णरम् ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस शक्ति से आपने पुरु के पुत्रों की रक्षा की थी, उसी शक्ति को विवेक से काम करने वाले लोग प्राप्त करें। जिस शक्ति से आपने तेजस्वी धन दाताओं तथा रुशम, श्यावक और कृप (इस नाम के व्यक्तियों अथवा रोग शामकों, विद्वानों तथा कृपालुओं) की रक्षा की थी, उसी शक्ति से हमें भी सुरक्षा प्रदान करें ॥१२ ॥

६०६३. **कन्नव्यो अतसीनां तुरो गृणीत मर्त्यः ।**
न ही न्वस्य महिमानमिन्द्रियं स्वर्गृणन्त आनशुः ॥१३ ॥

प्राचीनकाल से ही स्तुति करने वाले ऋषिगण जब उन इन्द्रदेव की महिमा-मण्डित शक्ति को नहीं जान सके, तो आज के स्तोता कौन सी नवीन स्तुति करें ? ॥१३ ॥

६०६४. **कदु स्तुवन्त ऋतयन्त देवत ऋषिः को विप्र ओहते ।**
कदा हवं मघवन्निन्द्र सुन्वतः कदु स्तुवत आ गमः ॥१४ ॥

हे इन्द्रदेव ! ऐसे कौन से देव हैं, जो आपके निमित्त यज्ञ करते हैं तथा कौन से ऋषिज्ञानी हैं, जो आपकी स्तुति करके कृपा प्राप्त करते हैं ? हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप सोमरस अभिषुत करने वालों की स्तुति सुनकर उनके पास कब जाते हैं ? ॥१४ ॥

६०६५. **उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः स्तोमास ईरते ।**
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथा इव ॥१५ ॥

(जीवन-संग्राम में) वास्तविक विजय दिलाने वाले, ऐश्वर्य प्राप्ति के माध्यम, सतत रक्षा करने वाले मधुर स्तोत्र, युद्ध के उपकरण रथ के समान कहे जाते हैं ॥१५ ॥

६०६६. **कण्वाइव भृगवः सूर्या इव विश्वमिद्धीतमानशुः ।**
इन्द्रं स्तोमेभिर्महयन्त आयवः प्रियमेधासो अस्वरन् ॥१६ ॥

कण्व गोत्रोत्पन्न ऋषियों की भाँति स्तुति करते हुए भृगुगोत्रोत्पन्न ऋषियों ने इन्द्रदेव को चारों ओर से उसी प्रकार घेर लिया, जिस प्रकार सूर्य रश्मियाँ इस संसार में चारों ओर फैल जाती हैं। ऐसे महान् इन्द्रदेव का प्रियमेध ने स्तुति करते हुए पूजन किया ॥१६ ॥

६०६७. **युक्ष्वा हि वृत्रहन्तम हरी इन्द्र परावतः ।**
अर्वाचीनो मघवन्त्सोमपीतय उग्र ऋष्वेभिरा गहि ॥१७ ॥

वृत्रासुर के विनाश में सक्षम, रथ पर आसीन, ऐश्वर्य सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप शक्ति-सम्पन्न होकर मरुद्गणों के साथ सुदूर प्रदेश (द्युलोक) से हमारे यज्ञ में पधारें ॥१७ ॥

६०६८. **इमे हि ते कारवो वावशुर्धिया विप्रासो मेधसातये ।**
स त्वं नो मघवन्निन्द्र गिर्वणो वेनो न शृणुधी हवम् ॥१८ ॥

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! मेधा जागरण के निमित्त, स्तोतागण विवेकपूर्वक आपकी साधना करते हैं। हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप आतुर व्यक्ति की भाँति हमारी स्तुतियों को स्वीकार करें ॥१८ ॥



६०६९. **निरिन्द्र बृहतीभ्यो वृत्रं धनुभ्यो अस्फुरः।**
निरर्बुदस्य मृगयस्य मायिनो निः पर्वतस्य गा आजः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अपने विशाल धनुष से वृत्र, मायावी अर्बुद तथा मृगय नामक असुरों का वध किया। इसके अलावा पर्वतों द्वारा छिपाई हुई गौओं (बादलों में छिपी जल धाराओं) को मुक्त किया ॥१९॥

६०७०. **निरग्नयो रुरुचुर्निरु सूर्यो निः सोम इन्द्रियो रसः।**
निरन्तरिक्षादधमो महामहिं कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! जब आपने आकाश से विशाल अहि को नीचे धकेलकर अपने शौर्य को प्रकट किया, तब अग्नियाँ (यज्ञादि) और सूर्य प्रकाशित होने लगे तथा आपके प्रिय सोम भी चमकने लगे ॥२०॥

[अंधकार या सूर्य अवरोधक मेघों को इन्द्रदेव ने नष्ट किया, तब सूर्य, अग्नि तथा सोम (वनस्पतियाँ) प्रकाशित हुए।]

अगली ऋचाओं में कुरयाण के पुत्र पाकस्थामा का उल्लेख है। पौराणिक संदर्भ में व्यक्तिवाचक संज्ञा के अतिरिक्त भाववाचक संज्ञा के रूप में इन्हें लेने से उपयोगी सूत्र सिद्ध होते हैं। कुरयाण का अर्थ है-कर्मरत तथा पाकस्थामा का अर्थ होता है-परिपक्व बलयुक्त। क्रियारत यज्ञीय प्रणाली से उत्पन्न परिपक्व पर्जन्य, कर्मोन्मुख आत्मचेतना से उत्पन्न परिपक्व जीवचेतना अथवा कर्मरत शरीरस्थ प्राणशक्ति से उत्पन्न परिपक्व शारीरिक ओजस् से इसकी संगति बैठती है। मंत्रार्थों की भाषा इस प्रकार बनाने का प्रयास किया गया है कि उनके अर्थ पौराणिक एवं तात्विक दोनों संदर्भों में सटीक बैठ सकें -

६०७१. **यं मे दुरिन्द्रो मरुतः पाकस्थामा कौरयाणः।**
विश्वेषां त्मना शोभिष्ठमुपेव दिवि धावमानम् ॥२१॥

कुरयाण (कर्मनिष्ठ) के पुत्र पाकस्थामा (परिपक्व बलयुक्त) ने हमको वही प्रदान किया, जो इन्द्र और मरुद्गणों ने प्रदान किया था। वह ऐश्वर्य सभी धनों में अत्यधिक सुशोभित होता हुआ, आलोकित होने वाले गतिमान् सूर्य के सदृश सुशोभित होता है ॥२१॥

[कर्मनिष्ठ के ही शरीरस्थ धातु (रसादि) तथा स्वभावगत कौशल परिपक्व होते हैं। परिपक्व धातुओं अथवा गुणों-कौशलों से श्रेष्ठतम उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं।]

६०७२. **रोहितं मे पाकस्थामा सुधुरं कक्ष्यप्राम्। अदाद्रायो विबोधनम् ॥२२॥**

पाकस्थामा (परिपक्व बलयुक्त) ने हमें श्रेष्ठ धुरी (धारण में समर्थ) से योजित, रोहित (लाल अथवा वर्धमान-गतिशील अश्व) प्रदान किया तथा ज्ञानयुक्त ऐश्वर्य भी दिया ॥२२॥

६०७३. **यस्मा अन्ये दश प्रति धुरं वहन्ति वह्नयः। अस्तं वयो न तुग्र्यम् ॥२३॥**

वय (अश्व, पक्षी या आयुष्य) ने जिस प्रकार तुग्र (तेजस्वी परमात्म चेतना) के पुत्र (भुज्यु नामक व्यक्ति अथवा योगयोग्य जीव) को उसके आवास (ठिकाने) तक पहुँचाया, उसी प्रकार अन्य दस (वहनकर्त्ता अश्व, इन्द्रियाँ या प्राण-उपप्राण) धुरे (जीव चेतना के धारक शरीर) को (उसके लक्ष्य-आवास) तक ले जाते हैं ॥२३॥

६०७४. **आत्मा पितुस्तनूर्वास ओजोदा अभ्यञ्जनम्।**
तुरीयमिद्रोहितस्य पाकस्थामानं भोजं दातारमब्रवम् ॥२४॥

आत्मरूप पिता का पुत्र पाकस्थामा श्रेष्ठ आवास देने वाला तथा शत्रुहन्ता है। ऐसे रोहित (आरोहणशील-प्रगतिशील) तेज को देने वाले की हम स्तुति करते हैं ॥२४॥



[सूक्त - ४]

[**ऋषि**- देवातिथि काण्व । **देवता**- इन्द्र, १५-१८ इन्द्र अथवा पूषा, १९-२१ कुरुङ्ग । **छन्द**- १-२० प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) , २१ पुर उष्णिक् ।]

६०७५. **यदिन्द्र प्रागपागुदङ् न्यग्वा हूयसे नृभिः ।**
सिमा पुरू नृषूतो अस्यानवेऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं द्वारा सहायता के लिए चारों ओर से आवाहित किये जाते हैं । शत्रुनाशक हे इन्द्रदेव ! 'अनु' और 'तुर्वश' के लिए आपको प्रार्थनापूर्वक बुलाया जाता है ॥१ ॥

६०७६. **यद्वा रुमे रुशमे श्यावके कृप इन्द्र मादयसे सचा ।**
कण्वासस्त्वा ब्रह्मभिः स्तोमवाहस इन्द्रा यच्छन्त्या गहि ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप रुम, रुशम, श्यावक और कृप के लिए प्रसन्न किये जाते हैं । कण्व वंशीय ऋषिगण आपको विभिन्न स्तोत्रों से प्रभावित करने का प्रयास करते हैं । हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञार्थ पधारें ॥२ ॥

६०७७. **यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।**
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्यासे गौर मृग जिस तरह पानी से भरे तालाब के निकट द्रुतगति से जाते हैं, उसी प्रकार आप हमारे सहचर बनकर यज्ञ में आयें और हम कण्वपुत्रों के यज्ञ में सोमपान कर तृप्त हों ॥३ ॥

६०७८. **मन्दन्तु त्वा मघवन्निन्द्रेन्दवो राधोदेयाय सुन्वते ।**
आमुष्या सोममपिबश्चमू सुतं ज्येष्ठं तद्दधिषे सहः ॥४ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! सोमयज्ञ सम्पन्न करने वाले साधकों को वैभव प्रदान करने के लिए सोमरस आपको आनन्दित करे । पात्र में रखे शोधित सोमरस को पीकर आप श्रेष्ठ बल से युक्त होते हैं ॥४ ॥

६०७९. **प्र चक्रे सहसा सहो बभञ्ज मन्युमोजसा ।**
विश्वे त इन्द्र पृतनायवो यहो नि वृक्षाइव येमिरे ॥५ ॥

अपनी शक्ति और तेज से इन्द्रदेव ने रिपुओं को वशीभूत करके उनके क्रोध और अहंकार को नष्ट किया । उसके पश्चात् उन्होंने सबको वृक्ष के सदृश जडवत् निष्क्रिय बना दिया ॥५ ॥

६०८०. **सहस्रेणेव सचते यवीयुधा यस्त आनळुपस्तुतिम् ।**
पुत्रं प्रावर्गं कृणुते सुवीर्ये दाश्नोति नम उक्तिभिः ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो व्यक्ति आपकी प्रार्थना करता है, उसे आप हजारों अस्त्र-शस्त्र प्रदान करते हैं । जो विनम्र भाव से आपको आहुति प्रदान करता है, वह व्यक्ति पराक्रमी तथा शत्रु-विध्वंसक पुत्र को प्राप्त करता है ॥६ ॥

६०८१. **मा भेम मा श्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।**
महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥७ ॥

महान् बलशाली हे इन्द्रदेव ! आपकी मित्रता के प्रभाव से हम किसी से भयभीत न हों और न कभी थकें । उपासकों की कामना पूर्ति करने वाले हे देव ! आपके सत्कार्य प्रशंसनीय हैं । हम तुर्वश और यदु को भी प्रसन्नता की स्थिति में देखें ॥७ ॥



६०८२. **सव्यामनु स्फिग्यं वावसे वृषा न दानो अस्य रोषति।**

मध्वा सम्पृक्ताः सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब ॥८ ॥

सर्वशक्तिमान् हे इन्द्रदेव ! आप अपने बाँयें हाथ से (सरलता से) सबको आश्रय देते हैं । नष्ट-भ्रष्ट करने वाले क्रूर शत्रु आपको कष्ट देने में सक्षम नहीं हैं । शहद की तरह मधुर दूध से युक्त सुखदायी सोम आपके लिए प्रस्तुत है । शीघ्रता से यज्ञवेदी के समीप पधारें और सोमपान करें ॥८ ॥

६०८३. **अश्वी रथी सुरूप इद् गोमाँ इदिन्द्र ते सखा।**

श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रो याति सभामुप ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! मनुष्य जब आपको अपना मित्र बना लेता है, तब वह रथों से युक्त सौन्दर्यवान् , ऐश्वर्यवान् तथा धन-धान्य से सदैव पूर्ण रहता है । वह सदा श्रेष्ठ आभूषणों से सुसज्जित तथा सबको प्रसन्नता देने वाला होकर सभा गृह आदि में जाता है ॥९ ॥

६०८४. **ऋश्यो न तृष्यन्नवपानमा गहि पिबा सोमं वशाँ अनु।**

निमेघमानो मघवन्दिवेदिव ओजिष्ठं दधिषे सहः ॥१० ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! ऋश्य (दिखाई देने में सुन्दर) तृषित हिरण के सदृश आप सोमपात्र के सन्निकट आकर इच्छानुसार सोमपान करें । आप नित्य वर्षा करते हुए ओज से सम्पन्न हों ॥१० ॥

६०८५. **अध्वर्यो द्रावया त्वं सोममिन्द्रः पिपासति।**

उप नूनं युयुजे वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥११ ॥

बलवान् अश्वों वाले रथ पर आरूढ़, वृत्र-संहारक इन्द्रदेव का आगमन हो गया है । हे अध्वर्यो ! आप सोमरस पान के इच्छुक इन्द्रदेव के लिए शीघ्र ही सोमरस तैयार करें ॥११ ॥

६०८६. **स्वयं चित्स मन्यते दाशुरिर्जनो यत्रा सोमस्य तृम्पसि।**

इदं ते अन्नं युज्यं समुक्षितं तस्येहि प्र द्रवा पिब ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिसके घर पर पधारकर आप सोमरस पान करके सन्तुष्ट होते हैं, वह दानी व्यक्ति अपने को श्रेष्ठ समझता है । हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त सोमरस रूप श्रेष्ठ आहार तैयार है, आप पधारकर उसका पान करें ॥१२ ॥

६०८७. **रथेष्ठायाध्वर्यवः सोममिन्द्राय सोतन।**

अधि ब्रध्नस्याद्रयो वि चक्षते सुन्वन्तो दाश्वध्वरम् ॥१३ ॥

हे अध्वर्यो ! रथ पर आरूढ़ होने वाले इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस को निचोड़ें । सोमरस अभिषुत करने वाले ऊँचे स्थान पर विद्यमान पत्थरों से ज्ञात होता है कि याजकों द्वारा यज्ञ सम्पन्न किया जा रहा है ॥१३ ॥

६०८८. **उप ब्रध्नं वावाता वृषणा हरी इन्द्रमपसु वक्षतः।**

अर्वाञ्चं त्वा सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप ॥१४ ॥

अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले दो शक्तिशाली घोड़े हमारे इस यज्ञ में इन्द्रदेव को ले आएँ । हे इन्द्रदेव ! यज्ञ की सेवा करने वाले एवं सदैव गतिशील रहने वाले घोड़े आपको इस यज्ञ में लाएँ ॥१४ ॥

६०८९. **प्र पूषणं वृणीमहे युज्याय पुरूवसुम्।**

स शक्र शिक्ष पुरुहूत नो धिया तुजे राये विमोचन ॥१५ ॥



अनेकों द्वारा आहूत होने वाले हे पूषादेव ! आप बहुत ऐश्वर्यवान् तथा सबके पोषक हैं । हम श्रेष्ठ मित्रभाव से आपका आवाहन करते हैं । आप धन देकर तथा शत्रुओं को नष्ट करके विपत्ति से हमें मुक्ति प्रदान करें ॥१५ ॥

६०९०. **सं नः शिशीहि भुरिजोरिव क्षुरं रास्व रायो विमोचन ।**
त्वे तन्नः सुवेदमुस्रियं वसु यं त्वं हिनोषि मर्त्यम् ॥१६ ॥

संकट से छुड़ाने वाले हे पूषादेव ! आप हमारी मेधा को (नाई के) हाथ के छुरे के समान तीक्ष्ण करें तथा हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! जिस ऐश्वर्य को आप अन्य मनुष्यों के लिए प्रदान करते हैं, उस गौ रूप धन को हमें भी प्रदान करें ॥१६ ॥

६०९१. **वेमि त्वा पूषन्नृञ्जसे वेमि स्तोतव आघृणे ।**
न तस्य वेम्यरणं हि तद्वसो स्तुषे पज्राय साम्ने ॥१७ ॥

सभी के पालक हे पूषादेव ! आप रिपुओं के विनाशक तथा सज्जनों के हर्ष प्रदायक हैं । हम आपको प्रसन्न करना चाहते हैं । हे तेजस्वी इन्द्रदेव ! हम केवल आपकी उपासना करना चाहते हैं , क्योंकि आपके अतिरिक्त किसी अन्य देव की उपासना हितकारी नहीं है । हे वास प्रदान करने वाले इन्द्रदेव ! आप स्तुतिकर्त्ता पज्र (कक्षीवान्) की तरह हमें भी धन प्रदान करें ॥१७ ॥

६०९२. **परा गावो यवसं कच्चिदाघृणे नित्यं रेक्णो अमर्त्य ।**
अस्माकं पूषन्नविता शिवो भव मंहिष्ठो वाजसातये ॥१८ ॥

हे तेजस्वी इन्द्रदेव ! जब कभी हमारी गौएँ चरती हुई दूर चली जाएँ, तो वहाँ आप उन्हें सुरक्षित रखें । हे पूषन् ! आप हमारे रक्षक तथा कल्याणकारी हैं । आप हमें प्रचुर अन्न तथा धन प्रदान करें ॥१८ ॥

६०९३. **स्थूरं राधः शताश्वं कुरुङ्गस्य दिविष्टिषु ।**
राज्ञस्त्वेषस्य सुभगस्य रातिषु तुर्वशेष्वमन्महि ॥१९ ॥

प्रखरता सम्पन्न, श्रेष्ठ धन वाले कुरुङ्ग (नामक राजा अथवा कर्मशील) के द्वारा दिव्यदान देते समय हमें सैकड़ों अश्वों से युक्त प्रचुर धन मिला ॥१९ ॥

६०९४. **धीभिः सातानि काण्वस्य वाजिनः प्रियमेधैरभिद्युभिः ।**
षष्टिं सहस्रानु निर्मजामजे निर्यूथानि गवामृषिः ॥२० ॥

हमने (देवातिथि ऋषि ने) साठ हजार पवित्र गौओं को कण्व पुत्र मेधातिथि, उनके स्तोताओं तथा प्रिय मेध के द्वारा प्राप्त किया था ॥२० ॥

६०९५. **वृक्षाश्चिन्मे अभिपित्वे अरारणुः । गां भजन्तमेहनाऽश्वं भजन्त मेहना ॥२१ ॥**

हमने (देवातिथि ऋषि ने) जो पूर्वोक्त (साठ हजार गौ रूप) धन प्राप्त किया, उसे देखकर वृक्षों ने हर्षध्वनि पूर्वक कहा कि इस (ऋषि) को स्तुति योग्य श्रेष्ठ गौएँ एवं श्रेष्ठ अश्व प्राप्त हुए ॥२१ ॥

[सूक्त - ५]

[**ऋषि**- ब्रह्मातिथि काण्व । **देवता**- अश्विनीकुमार, ३७ उत्तरार्द्ध से ३९ चैद्य कशु । **छन्द**- गायत्री, ३७-३८ बृहती, ३९ अनुष्टुप् ।]

६०९६. **दूरादिहेव यत्सत्यरुणप्सुरशिश्वितत् । वि भानुं विश्वधातनत् ॥१ ॥**



बहुत दूर होते हुए भी अति समीप दिखाई देने वाली अरुणाभा उषा जब अपनी स्वर्णिम रश्मियों को फैलाती हैं, तब उसके प्रकाश से समूचा विश्व प्रकाशित हो जाता है ॥१ ॥

६०९७. **नृवद्दस्रा मनोयुजा रथेन पृथुपाजसा । सचेथे अश्विनोषसम् ॥२ ॥**

हे शत्रुनाशक अश्विनीकुमारो ! आप नेतृत्व करने वाले हैं । इच्छा मात्र से ही आप अति विशाल ऐश्वर्यवान् रथ द्वारा उषा के पास पहुँच जाते हैं ॥२ ॥

६०९८. **युवाभ्यां वाजिनीवसू प्रति स्तोमा अदृक्षत । वाचं दूतो यथोहिषे ॥३ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप धन प्रदाता हैं; इसलिए आपके निमित्त स्तवन गाये जाते हैं । हम दूत के समान अपनी वाणी से आपका वर्णन करते हैं (आपकी स्तुति करते हैं) ॥३ ॥

६०९९. **पुरुप्रिया ण ऊतये पुरुमन्द्रा पुरूवसू । स्तुषे कण्वासो अश्विना ॥४ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप सभी को प्रिय लगने वाले, सबको आनन्दित करने वाले तथा प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । हम कण्ववंशीय (स्तोतागण) अपनी रक्षा के लिए आपकी स्तुति करते हैं ॥४ ॥

६१००. **मंहिष्ठा वाजसातमेषयन्ता शुभस्पती । गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों अत्यन्त पूजनीय, बल प्रदान करने वाले, श्रेष्ठ कर्म करने वाले तथा अन्न उत्पन्न करने वाले हैं । आप यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करने वाले दानियों के घर जाकर उनका कल्याण करते हैं ॥५ ॥

६१०१. **ता सुदेवाय दाशुषे सुमेधामवितारिणीम् । घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ॥६ ॥**

श्रेष्ठ देवों के लिए देने वाले (हव्यदाता) को आप नष्ट न होने वाली बुद्धि (स्थिर प्रज्ञा) तथा (उनकी) गौओं (गौ, वाणी या इन्द्रियों) के पोषण क्षेत्र को घृत (तेजस् अथवा जल) से सिंचित करें ॥६ ॥

६१०२. **आ नः स्तोममुप द्रवत्तूयं श्येनेभिराशुभिः । यातमश्वेभिरश्विना ॥७ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों श्येन पक्षी की तरह द्रुतगामी अश्वों के द्वारा हमारे इस यज्ञ में शीघ्र ही पधारें ॥७ ॥

६१०३. **येभिस्तिस्रः परावतो दिवो विश्वानि रोचना । त्रीँरक्तून्परिदीयथः ॥८ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों जिस यान की सहायता से तीन दिन और तीन रात्रि (लगातार) दिव्य लोकों में भ्रमण करते हैं, उसी (यान) से हमारे इस यज्ञ स्थल पर पधारें ॥८ ॥

६१०४. **उत नो गोमतीरिष उत सातीरहर्विदा । वि पथः सातये सितम् ॥९ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमें गौओं से सम्पन्न प्रचुर अन्न तथा वितरित करने योग्य धन प्रदान करें, साथ ही यह भी निर्देश करें कि उस धन का सदुपयोग हम कैसे करें ॥९ ॥

६१०५. **आ नो गोमन्तमश्विना सुवीरं सुरथंरयिम् । वोळहमश्वावतीरिषः ॥१० ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमें गौ, अश्व, श्रेष्ठ रथ तथा साहसी पुत्रों से युक्त महान् ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१० ॥

६१०६. **वावृधाना शुभस्पती दस्रा हिरण्यवर्तनी । पिबतं सोम्यं मधु ॥११ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों श्रेष्ठ कार्य करने वाले तथा रिपुओं को नष्ट करने वाले हैं । आप अपने स्वर्णिम रथ से यज्ञस्थल की ओर बढ़ते हुए मधु मिश्रित सोमरस का पान करें ॥११ ॥

६१०७. **अस्मभ्यं वाजिनीवसू मघवद्भ्यश्च सप्रथः । छर्दिर्यन्तमदाभ्यम् ॥१२ ॥**



हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्यवान् हैं । आप हम धन-सम्पन्नों को सुरक्षित विशाल आवास प्रदान करें ॥१२ ॥

६१०८. **नि षु ब्रह्म जनानां याविष्टं तूयमा गतम् । मोष्व१न्याँ उपारतम् ॥१३ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! मनुष्यों की मेधा तथा ज्ञान को आप सुरक्षित रखते हैं । आप अन्य किसी के पास न जाकर हमारे निकट आएँ ॥१३ ॥

६१०९. **अस्य पिबतमश्विना युवं मदस्य चारुणः । मध्वो रातस्य धिष्ण्या ॥१४ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारे द्वारा समर्पित किए गये मधुर तथा आनन्ददायक सोमरस का पान करें ॥१४ ॥

६११०. **अस्मे आ वहतं रयिं शतवन्तं सहस्रिणम् । पुरुक्षुं विश्वधायसम् ॥१५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप, सबका पालन करने वाले तथा सबके जीवन को धारण करने वाले हैं । हमें सैकड़ों एवं हजारों प्रकार का धन-वैभव प्रदान करें ॥१५ ॥

६१११. **पुरुत्रा चिद्धि वां नरा विह्वयन्ते मनीषिणः । वाघद्भिरश्विना गतम् ॥१६ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों को मनीषीगण अनेकों स्थानों पर निश्चित रूप से बुलाते हैं, अतः आप अपने वाहन द्वारा यज्ञस्थल पर पधारें ॥१६ ॥

६११२. **जनासो वृक्तबर्हिषो हविष्मन्तो अरङ्कृतः । युवां हवन्ते अश्विना ॥१७ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! याजकगण अलंकारयुक्त कुशा का आसन बिछाकर आप दोनों का आवाहन करते हैं ॥१७ ॥

६११३. **अस्माकमद्य वामयं स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः । युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१८ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! इस समय हम स्तोताओं द्वारा उच्चरित ये स्तोत्र आप दोनों के अति निकट पहुँचें ॥१८ ॥

६११४. **यो ह वां मधुनो दृतिराहितो रथचर्षणे । ततः पिबतमश्विना ॥१९ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आपके रथ के दर्शनीय भाग पर यजमानों द्वारा स्थापित किये गये मधुपात्र से मुधर रस ग्रहण कर उसका पान करें ॥१९ ॥

६११५. **तेन नो वाजिनीवसू पश्वे तोकाय शं गवे । वहतं पीवरीरिषः ॥२० ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों अन्न तथा धन से सम्पन्न हैं । आप हमारी सन्तानों तथा गौ आदि पशुओं के निमित्त प्रचुर अन्न लेकर अपने रथ से यहाँ आएँ ॥२० ॥

६११६. **उत नो दिव्या इष उत सिन्धूँरहर्विदा । अप द्वारेव वर्षथः ॥२१ ॥**

नित्य प्रातःकाल दर्शनीय एवं स्तुत्य हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों कृपापूर्वक समयानुसार जल की वर्षा करते रहें, जिससे हमें प्रचुर अन्न मिलता रहे ॥२१ ॥

६११७. **कदा वां तौग्र्यो विधत्समुद्रे जहितो नरा । यद्वां रथो विभिष्पतात् ॥२२ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! समुद्र में फेंके हुए तुग्र पुत्र भुज्यु ने आपकी प्रार्थना कब की थी ? जिससे आपने अपने रथ से वहाँ पहुँचकर उसे बचाया था ॥२२ ॥

६११८. **युवं कण्वाय नासत्यापिरिप्ताय हर्म्ये । शश्वदूतीर्दशस्यथः ॥२३ ॥**

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! पीड़ित कण्व ऋषि को आपने सदा ऊँचे आवास देकर सुरक्षा प्रदान की थी ॥२३ ॥

६११९. **ताभिरा यातमूतिभिर्नव्यसीभिः सुशस्तिभिः । यद्वां वृषण्वसू हुवे ॥२४ ॥**



हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों धन की वर्षा करने वाले हैं । हमारे द्वारा आवाहन किये जाने पर आप अपने रक्षण-साधनों से युक्त होकर यहाँ पधारें ॥२४ ॥

६१२०. **यथा चित्कण्वमावतं प्रियमेधमुपस्तुतम् । अत्रिं शिञ्जारमश्विना ॥२५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार आपने प्रार्थना करने वाले अत्रि, प्रियमेध, कण्व तथा उपस्तुत को सुरक्षा प्रदान की थी, उसी प्रकार हमें भी सुरक्षा प्रदान करें ॥२५ ॥

६१२१. **यथोत कृत्व्ये धनेंऽशुं गोष्वगस्त्यम् । यथा वाजेषु सोभरिम् ॥२६ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आपने जिस प्रकार प्राप्त करने योग्य ऐश्वर्य को पाने के लिए 'अंशु' की रक्षा की थी, गौओं की प्राप्ति के निमित्त 'अगस्त्य' की रक्षा की थी तथा 'सोभरि' को युद्ध में सुरक्षा प्रदान की थी, उसी प्रकार हमें भी सुरक्षा प्रदान करें ॥२६ ॥

६१२२. **एतावद्वां वृषण्वसू अतो वा भूयो अश्विना । गृणन्तः सुम्नमीमहे ॥२७ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं । प्रार्थना करने वाले हम स्तोतागण आपसे प्रचुर धन की याचना करते हैं ॥२७ ॥

६१२३. **रथं हिरण्यवन्धुरं हिरण्याभीशुमश्विना । आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ॥२८ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सोने के दण्ड वाले, सोने की लगाम वाले तथा दिव्य लोक का स्पर्श करने वाले रथ पर आरूढ़ होकर पधारें ॥२८ ॥

६१२४. **हिरण्ययी वां रभिरीषा अक्षो हिरण्ययः । उभा चक्रा हिरण्यया ॥२९ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आपके रथ की लकड़ी स्वर्णिम आभा से युक्त है । धुरा तथा पहिया भी सुवर्ण निर्मित हैं ॥२९ ॥

६१२५. **तेन नो वाजिनीवसू परावतश्चिदा गतम् । उपेमां सुष्टुतिं मम ॥३० ॥**

बल तथा धन से सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों अपने रथ द्वारा हमारी प्रार्थना को सुनने के लिए दूर देश से भी हमारे पास आयें ॥३० ॥

६१२६. **आ वहेथे पराकात्पूर्वीरश्नन्तावश्विना । इषो दासीरमर्त्या ॥३१ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों दुष्टों की अनेकों पुरियों को विनष्ट करके अन्न लेकर यज्ञस्थल पर पधारें ॥३१ ॥

६१२७. **आ नो द्युम्नैरा श्रवोभिरा राया यातमश्विना । पुरुश्चन्द्रा नासत्या ॥३२ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सत्यनिष्ठ तथा अनेकों के मित्र हैं । आप धन, अन्न तथा दैवी सम्पत्ति से सम्पन्न होकर हमारे पास आयें ॥३२ ॥

६१२८. **एह वां प्रुषितप्सवो वयो वहन्तु पर्णिनः । अच्छा स्वध्वरं जनम् ॥३३ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! पक्षियों के सदृश तेजगति वाले घोड़े, आपको श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म करने वाले याजक के पास ले जाएँ ॥३३ ॥

६१२९. **रथं वामनुगायसं य इषा वर्तते सह । न चक्रमभि बाधते ॥३४ ॥**

स्तोता जिसके अनुगामी हैं, आपका वह अश्व अथवा अन्नयुक्त रथ चक्र (सैन्य या प्रकृति के चक्र) को बाधा नहीं पहुँचाता ॥३४ ॥

६१३०. **हिरण्ययेन रथेन द्रवत्पाणिभिरश्वैः । धीजवना नासत्या ॥३५ ॥**



बुद्धि के समान सत्य भासित होने वाले (देवो ! आप) स्वर्णिम रथ एवं दौड़ने वाले अश्वों द्वारा यहाँ पधारें ॥३५॥

६१३१. युवं मृगं जागृवांसं स्वदथो वा वृषण्वसू । ता नः पृङ्क्तमिषा रयिम् ॥३६ ॥

वर्षणशील सम्पत्ति वाले (हे अश्विदेवो !) जाग्रत् और शोधित सोम का पान करने वाले आप दोनों हमें पोषक अन्न से युक्त करें ॥३६ ॥

अगले तीन मंत्रों में चेदिवंशीय 'कशु' का उल्लेख है। व्यक्तिरूप में उन्होंने ब्रह्मातिथि आदि ऋषियों को प्रचुर दान दिया था। तात्विक रूप से 'चित्' ज्ञान से उत्पन्न ज्ञानियों के वंश में 'कशु' का जन्म हुआ है। कशा-चाबुक अश्व को प्रेरित करने के लिए प्रयुक्त होती है। 'कश' के गुणवाली इन्द्रियादि अश्वों को सही दिशा में गतिशील बनाने वाली ज्ञान जन्य प्रेरणा को 'कशु' कहा गया प्रतीत होता है। सारे वैभव बुद्धियुक्त इन्द्रिय - सामर्थ्य से ही उत्पन्न या उपलब्ध होते हैं। इस दृष्टि से चेदिवंशीय 'कशु' ब्रह्मातिथि-ब्रह्मनिष्ठ ऋषिगणों के लिए सर्वश्रेष्ठ दानदाता कहे जाने योग्य हैं -

६१३२. ता मे अश्विना सनीनां विद्यातं नवानाम् ।
यथा चिच्चैद्यः कशुः शतमुष्ट्रानां ददत्सहस्रा दश गोनाम् ॥३७ ॥

वे (दोनों) अश्विनीकुमार हमारे लिए उपयोगी ऐश्वर्यो-विभूतियों को जानें। चेदि (ज्ञानियों के) वंशज 'कशु' (नामक पात्र अथवा प्रेरक बल) ने हमें जिस प्रकार सैकड़ों ऊँट, दासियाँ एवं सहस्र गौएँ प्रदान कीं, यह भी वे जानें ॥३७ ॥

[अश्विनीकुमार इन्द्रियादि के प्रेरक दानी 'कशु' को समर्थ बनाये रखें-ऐसा भाव है।]

६१३३. यो मे हिरण्यसन्दृशो दश राज्ञो अमंहत ।
अधस्पदा इच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्मम्ना अभितो जनाः ॥३८ ॥

जिन (कशु) ने हमें दस राजाओं (इन्द्रियों) के स्वर्णाभ (चमकीले) पुरुषार्थ (हमारी सेवार्थ) प्रदान किये, ऐसे चेदिवंशीय के चरणों में सारी प्रजाएँ रहती हैं ॥३८ ॥

६१३४. माकिरेना पथा गाद्येनेमे यन्ति चेदयः । अन्यो नेत्सूरिरोहते भूरिदावत्तरो जनः ॥३९ ॥

जिस रास्ते से चेदिवंशीय (ज्ञानजन्य प्रेरक - प्रवाह) जाते हैं, उस रास्ते से दूसरे नहीं जाते। सभी याजकों को 'कशु' से अधिक धन कोई नहीं प्रदान करता ॥३९ ॥

[सूक्त - ६]

[**ऋषि-** वत्स काण्व । **देवता-** इन्द्र, ४६-४८ तिरिन्दिर पार्शव्य । **छन्द-** गायत्री ।]

६१३५. महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव । स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे ॥१ ॥

जल की वृष्टि करने वाले मेघों के सदृश महान् और तेजस्वी वे यशस्वी इन्द्रदेव अपने प्रिय पात्रों की स्तुतियों से समृद्ध होकर व्यापक रूप ग्रहण करते हैं ॥१ ॥

६१३६. प्रजामृतस्य पिप्रतः प्र यद्भरन्त वह्नयः । विप्रा ऋतस्य वाहसा ॥२ ॥

जब आकाश मार्ग से गमन करने में सक्षम अश्व यज्ञ के लिए तत्पर इन्द्रदेव को वेगपूर्वक (यज्ञस्थल पर) ले जाते हैं, तब उद्गातागण यज्ञ में प्रयुक्त होने वाले मंत्रों से उन इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं ॥२ ॥

६१३७. कण्वा इन्द्रं यदक्रत स्तोमैर्यज्ञस्य साधनम् । जामि ब्रुवत आयुधम् ॥३ ॥

जब कण्ववंशीय ऋषिगण स्तुतियों के माध्यम से इन्द्रदेव को यज्ञ साधक (यज्ञरक्षक) बना लेते हैं, तब (यज्ञ रक्षार्थ) शस्त्रों की आवश्यकता नहीं रह जाती, ऐसा कहा गया है ॥३ ॥



६१३८. **समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः। समुद्रायेव सिन्धवः ॥४ ॥**

समस्त प्रजाएँ उग्र इन्द्रदेव के प्रति नमनपूर्वक उसी प्रकार आकर्षित होती हैं, जैसे कि सभी नदियाँ समुद्र में मिलने के लिए वेग से जाती हैं ॥४ ॥

६१३९. **ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत्समवर्तयत्। इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ॥५ ॥**

इन्द्रदेव का वह ओजस् (बल) अत्यन्त तेजस्वी है, जिससे वे द्युलोक से पृथ्वीलोक तक आवरण के समान फैलकर सुरक्षा करते हैं ॥५ ॥

६१४०. **वि चिद्वृत्रस्य दोधतो वज्रेण शतपर्वणा। शिरो बिभेद वृष्णिना ॥६ ॥**

संसार को भयभीत करने वाले (कम्पित करने वाले) वृत्रासुर के शीश को शक्ति - सम्पन्न इन्द्रदेव ने अपने तीक्ष्ण प्रहार वाले वज्र से अलग कर दिया ॥६ ॥

६१४१. **इमा अभि प्र णोनुमो विपामग्रेषु धीतयः। अग्नेः शोचिर्न दिद्युतः ॥७ ॥**

अग्नि की ज्वालाओं के सदृश तेजयुक्त स्तोत्रों का स्तोताओं के समक्ष हम बार-बार उच्चारण करते हैं ॥७ ॥

६१४२. **गुहा सतीरुप त्मना प्र यच्छोचन्त धीतयः। कण्वा ऋतस्य धारया ॥८ ॥**

गुफा में रहने वाली गौएँ (अन्तःकरण में विद्यमान स्तुतियाँ) इन्द्रदेव के निकट पहुँचकर निश्चिन्त होती हैं, उनको कण्ववंश के ऋषि सोमरस से सिंचित करते हैं ॥८ ॥

६१४३. **प्र तमिन्द्र नशीमहि रयिं गोमन्तमश्विनम्। प्र ब्रह्म पूर्वचित्तये ॥९ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हम गौओं और अश्वों से युक्त धन को प्राप्त करें। सबसे पहले हम अपने ज्ञान के बल पर अन्न को प्राप्त करें ॥९ ॥

६१४४. **अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रभ। अहं सूर्य इवाजनि ॥१० ॥**

हम (याजकों) ने पालनकर्ता यज्ञरूप इन्द्रदेव की बुद्धि (कृपा) को अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। इससे हम सूर्य के सदृश तेज से युक्त हो गये हैं ॥१० ॥

६१४५. **अहं प्रत्नेन मन्मना गिरः शुम्भामि कण्ववत्। येनेन्द्रः शुष्ममिद्दधे ॥११ ॥**

कण्व ऋषि के सदृश हमने इन्द्रदेव को उन प्राचीन स्तोत्रों से सुशोभित किया है, जिनके प्रभाव से वे शक्ति-सम्पन्न बनते हैं ॥११ ॥

६१४६. **ये त्वामिन्द्र न तुष्टुवुर्ऋषयो ये च तुष्टुवुः। ममेद्वर्धस्व सुष्टुतः ॥१२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी स्तुति न करने वाले तथा आपके निमित्त स्तुति करने वाले ऋषिगणों के मध्य मेरे स्तोत्र ही प्रशंसनीय हैं। आप उन स्तोत्रों के प्रभाव से भली प्रकार परिपुष्ट हों ॥१२ ॥

६१४७. **यदस्य मन्युरध्वनीद्वि वृत्रं पर्वशो रुजन्। अपः समुद्रमैरयत् ॥१३ ॥**

इन्द्रदेव के क्रोध से टुकड़े - टुकड़े होकर जब वृत्र ने गर्जना की, तब इन्द्रदेव ने पानी को समुद्र की ओर भेज दिया ॥१३ ॥

६१४८. **नि शुष्ण इन्द्र धर्णसिं वज्रं जघन्थ दस्यवि। वृषा ह्युग्र शृण्विषे ॥१४ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपने अपने वज्र से शुष्ण नामक राक्षस पर प्रहार किया और उसका वध करके यशस्वी हो गये ॥१४ ॥



६१४९. **न द्याव इन्द्रमोजसा नान्तरिक्षाणि वज्रिणम् । न विव्यचन्त भूमयः ॥१५ ॥**

उन वज्रधारी इन्द्रदेव को द्युलोक , अन्तरिक्षलोक तथा पृथ्वीलोक अपनी शक्ति से घेर नहीं सकते ॥१५ ॥

६१५०. **यस्त इन्द्र महीरपः स्तभूयमान आशयत् । नि तं पद्यासु शिश्नथः ॥१६ ॥**

हे इन्द्रदेव ! बृहत् जल-प्रवाहों को रोककर बैठे हुए वृत्रासुर को आपने जल के मध्य में ही मार दिया ॥१६ ॥

६१५१. **य इमे रोदसी मही समीची समजग्रभीत् । तमोभिरिन्द्र तं गुहः ॥१७ ॥**

जब वृत्रासुर ने महान् द्युलोक तथा पृथ्वीलोक को ढक लिया, तब सभी जगह अंधकार छा गया ॥१७ ॥

६१५२. **य इन्द्र यतयस्त्वा भृगवो ये च तुष्टुवुः । ममेदुग्र श्रुधी हवम् ॥१८ ॥**

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आपकी प्रार्थना सभी यतियों और भृगुओं ने की। आप हमारी भी प्रार्थना को सुनें ॥१८ ॥

अगली दो ऋचाओं में 'पृश्नयः' एवं 'प्रस्वः' विशेषणों का प्रयोग है । अधिकांश भाष्यकारों, अनुवादकों ने उनका अर्थ गौएँ ही किया है । 'पृश्नि' के अर्थ गाय, किरण और पृथ्वी भी होते हैं । इन सभी पर ऋचा का अर्थ भली प्रकार घटित होता है । इसी प्रकार 'प्रस्व' का अर्थ प्रसव करने वाली, जन्म देने वाली होता है । यह सम्बोधन भी गाय के अतिरिक्त किरणें, पृथ्वी आदि पर भी सही बैठता है । मंत्रार्थ इसी ढंग से किए गये हैं कि वे इन सभी संदर्भों में सटीक बैठें -

६१५३. **इमास्त इन्द्र पृश्नयो घृतं दुहत आशिरम् । एनामृतस्य पिप्युषीः ॥१९ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी ये यज्ञ प्रक्रिया को आगे बढ़ाने-पोषित करने वाली पृश्नियाँ (गौएँ, किरणें, पृथ्वी आदि) यह (यज्ञ पोषक) आशिर (दूध या पोषक रस) एवं घृत (ऊर्जावर्धक या स्निग्ध हव्य) प्रदान करती हैं ॥१९ ॥

६१५४. **या इन्द्र प्रस्वस्त्वासा गर्भमचक्रिरन् । परि धर्मेव सूर्यम् ॥२० ॥**

हे इन्द्रदेव ! ये जो (ऊपर वर्णित) प्रसवशील (वांछित उत्पादन देने वाली) हैं, वे अपने मुख से आपके द्वारा (प्रदत्त अन्न या ओज को ग्रहण कर) गर्भवती होती हैं (और) सूर्य के चारों ओर धारक किरणों की तरह रहती या घूमती हैं ॥२० ॥

६१५५. **त्वामिच्छवसस्पते कण्वा उक्थेन वावृधुः । त्वां सुतास इन्दवः ॥२१ ॥**

हे बलों के स्वामी इन्द्रदेव ! कण्ववंशीय ऋषि अपने स्तवन से आपको समृद्ध करते हैं । वे सोमरस समर्पित करके आपको हर्षित करते हैं ॥२१ ॥

६१५६. **तवेदिन्द्र प्रणीतिषूत प्रशस्तिरद्रिवः । यज्ञो वितन्तसाय्यः ॥२२ ॥**

पर्वतों के दुर्ग में निवास करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से जो यज्ञ सम्पन्न होते हैं , उनमें आपकी ही स्तुति की जाती है ॥२२ ॥

६१५७. **आ न इन्द्र महीमिषं पुरं न दर्षि गोमतीम् । उत प्रजां सुवीर्यम् ॥२३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौओं से सम्पन्न विशाल नगर, अन्न, श्रेष्ठ बल तथा उत्तम सन्तानें प्रदान करें ॥२३ ॥

६१५८. **उत त्यदाश्वश्व्यं यदिन्द्र नाहुषीष्वा । अग्रे विक्षु प्रदीदयत् ॥२४ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपने जिस प्रकार अनेक द्रुतगामी अश्व, नहुष नामक राजा को प्रदान किया, उसी प्रकार हमें भी प्रदान करें ॥२४ ॥

६१५९. **अभि व्रजं न तत्निषे सूर उपाकचक्षसम् । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२५ ॥**

हे ज्ञान-सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप हमारी गौशाला को गौओं से समृद्ध करके हमें हर्ष प्रदान करें ॥२५ ॥



६१६०. **यदङ्ग तविषीयस इन्द्र प्राजसि क्षितीः । महाँ अपार ओजसा ॥२६ ॥**

हे आत्मस्वरूप इन्द्रदेव !आप अपने महान् ओज तथा शौर्य को प्रदर्शित करके प्रजाओं पर शासन करते हैं ॥२६ ॥

६१६१. **तं त्वा हविष्मतीर्विश उप ब्रुवत ऊतये । उरुज्रयसमिन्दुभिः ॥२७ ॥**

हे इन्द्रदेव !आहुति प्रदान करने वाले सभी मनुष्य अपनी सुरक्षा हेतु आपको ही सोमपान के लिए बुलाते हैं ॥२७ ॥

६१६२. **उपह्वरे गिरीणां सङ्गथे च नदीनाम् । धिया विप्रो अजायत ॥२८ ॥**

पर्वत की गुफाओं-घाटियों एवं नदियों के संगम (पवित्र स्थलों) पर (किये गये प्रयोगों से) विप्र (इन्द्र, श्रेष्ठतम मेधावी या ज्ञानी) उत्पन्न होते हैं ॥२८ ॥

६१६३. **अतः समुद्रमुद्वतश्चिकित्वाँ अव पश्यति । यतो विपान एजति ॥२९ ॥**

जहाँ से व्यापक (जीवन तत्त्व) गतिशील (प्रवाहित) होता है, ऊपर वाले उस स्थान से प्रखर दृष्टि वाले (इन्द्र, विद्वान् या सूर्यदेव) समुद्र जल, सागर अथवा जीवन प्रवाह को देखते हैं ॥२९ ॥

[देखने का भाव यहाँ सर्वेक्षण करते हुए आवश्यकता की पूर्ति करते रहने से है ।]

६१६४. **आदित्प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् । परो यदिध्यते दिवा ॥३० ॥**

द्युलोक से भी परे स्वप्रकाशित (सविता) तथा दिन में दृश्यमान सूर्य एवं इन सभी प्राचीनतम तेजस्वी स्वरूपों में इन्द्रदेव का ही तेज देखते हैं ॥३० ॥

६१६५. **कण्वास इन्द्र ते मतिं विश्वे वर्धन्ति पौंस्यम् । उतो शविष्ठ वृष्ण्यम् ॥३१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! सभी कण्ववंशीय ऋषि आपकी मेधा तथा ओज को बढ़ाते हैं एवं आपके शौर्य को भी समृद्ध करते हैं ॥३१ ॥

६१६६. **इमां म इन्द्र सुष्टुतिं जुषस्व प्र सु मामव । उत प्र वर्धया मतिम् ॥३२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके हमें भली प्रकार सुरक्षित करें तथा हमारी मेधा को बढ़ायें ॥३२ ॥

६१६७. **उत ब्रह्मण्या वयं तुभ्यं प्रवृद्ध वज्रिवः । विप्रा अतक्ष्म जीवसे ॥३३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप विशाल वज्र धारण करने वाले हैं । अपने दीर्घायुष्य के निमित्त हम स्तोतागण आपकी प्रार्थना करते हैं ॥३३ ॥

६१६८. **अभि कण्वा अनूषतापो न प्रवता यतीः । इन्द्रं वनन्वती मतिः ॥३४ ॥**

जिस प्रकार प्रवहमान जल नीचे की ओर बहता है, उसी प्रकार कण्ववंशीय ऋषि द्वारा की हुई स्तुति इन्द्रदेव के पास पहुँचती है ॥३४ ॥

६१६९. **इन्द्रमुक्थानि वावृधुः समुद्रमिव सिन्धवः । अनुत्तमन्युमजरम् ॥३५ ॥**

जिस प्रकार नदियों का पानी समुद्र को समृद्ध करता है, उसी प्रकार हमारी स्तुतियाँ उत्साही तथा अविनाशी इन्द्रदेव को बढ़ाएँ ॥३५ ॥

६१७०. **आ नो याहि परावतो हरिभ्यां हर्यताभ्याम् । इममिन्द्र सुतं पिब ॥३६ ॥**

हे इन्द्रदेव !आप अपने बलवान् अश्वों द्वारा सुदूर स्थानों से भी पधार कर अभिषुत सोम का पान करते हैं ॥३६ ॥

६१७१. **त्वामिद्वृत्रहन्तम जनासो वृक्तबर्हिषः । हवन्ते वाजसातये ॥३७ ॥**



वृत्रासुर का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! अन्न तथा ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हम याजकगण आपका आवाहन करते हैं ॥३७ ॥

६१७२. अनु त्वा रोदसी उभे चक्रं न वर्त्येतशम्। अनु सुवानास इन्दवः ॥३८ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार रथ के पहिए घोड़ों के पीछे चलते हैं, उसी प्रकार द्युलोक, पृथ्वीलोक तथा सोम आपका अनुगमन करते हैं ॥३८ ॥

६१७३. मन्दस्वा सु स्वर्णर उतेन्द्र शर्यणावति। मत्स्वा विवस्वतो मती ॥३९ ॥

हे इन्द्रदेव !शर्यणावत् प्रदेश में सम्पन्न होने वाले यज्ञ में आप याजकों द्वारा की गई प्रार्थनाओं से प्रसन्न हों ॥३९

६१७४. वावृधान उप द्यवि वृषा वज्र्यरोरवीत्। वृत्रहा सोमपातमः ॥४० ॥

सर्वश्रेष्ठ, शक्ति-सम्पन्न, वज्रधारी, वृत्रहन्ता तथा अत्यधिक सोमपान करने वाले इन्द्रदेव दिव्यलोक के निकट से गर्जना करते हैं ॥४० ॥

६१७५. ऋषिर्हि पूर्वजा अस्येक ईशान ओजसा। इन्द्र चोष्कूयसे वसु ॥४१ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप सबसे पहले उत्पन्न होने वाले ऋषि हैं तथा अपनी ही शक्ति से सबको संचालित करते हैं। आप हमें प्रचुर धन प्रदान करें ॥४१ ॥

६१७६. अस्माकं त्वा सुताँ उप वीतपृष्ठा अभि प्रयः। शतं वहन्तु हरयः ॥४२ ॥

हे इन्द्रदेव ! मजबूत तथा श्रेष्ठ पृष्ठ भाग वाले, सैकड़ों अश्व हमारे द्वारा निचोड़े गये सोमरस का पान करने के लिए आपको यज्ञस्थल पर लायें ॥४२ ॥

६१७७. इमां सु पूर्व्यां धियं मधोर्घृतस्य पिप्युषीम्। कण्वा उक्थेन वावृधुः ॥४३ ॥

कण्व वंशीय पूर्वज मंत्रों द्वारा यज्ञ करके मधुर जल की वृष्टि करते हैं ॥४३ ॥

[यज्ञ से उत्पन्न वायुमण्डल के उर्वर कण वर्षा के साथ बरसकर उसे प्रभावशाली बनाते हैं।]

६१७८. इन्द्रमिद्विमहीनां मेधे वृणीत मर्त्यः। इन्द्रं सनिष्युरूतये ॥४४ ॥

अपनी सुरक्षा तथा यज्ञों के लिए सभी मनुष्य महान् देवताओं के बीच इन्द्रदेव का ही वरण करते हैं ॥४४ ॥

६१७९. अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी। सोमपेयाय वक्षतः ॥४५ ॥

प्रियमेध तथा अनेकों द्वारा प्रशंसित अश्व आपको सोमपान के लिए हमारे पास लायें ॥४५ ॥

६१८०. शतमहं तिरिन्दिरे सहस्रं पर्शावा ददे। राधांसि याद्वानाम् ॥४६ ॥

यदुवंशियों में सर्वश्रेष्ठ, हमने 'परशु' के पुत्र 'तिरिन्दिर' से हजारों की संख्या में विभिन्न प्रकार का धन-वैभव ग्रहण किया ॥४६ ॥

६१८१. त्रीणि शतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम्। ददुष्पज्राय साम्ने ॥४७ ॥

इस यज्ञ में 'तिरिन्दिर' ने 'पज्र' को तीन सौ अर्वा (अश्व अथवा गतिशील जीवन के वर्ष) तथा दस हजार गौएँ (अथवा वेद वाणियाँ) प्रदान कीं ॥४७ ॥

६१८२. उदानट् ककुहो दिवमुष्ट्राञ्चतुर्युजो ददत्। श्रवसा याद्वं जनम् ॥४८ ॥

तिरिन्दिर नामक राजा ने चार सोने के बोरों से युक्त ऊँटों को दान करके अपने यज्ञ के पुण्य से उन्नत होकर दिव्यलोक की प्राप्ति की ॥४८ ॥



[सूक्त - ७]

[ऋषि- पुनर्वत्स काण्व । देवता- मरुद्गण । छन्द- गायत्री ।]

६१८३. प्र यद्वस्त्रिष्टुभमिषं मरुतो विप्रो अक्षरत्। वि पर्वतेषु राजथ ॥१ ॥

हे मरुद्गण ! जब विद्वान् याजकगण तीनों सवनों में (त्रिष्टुभ् छन्द के द्वारा)आपकी स्तुति करके अन्न (आहुतियाँ) समर्पित करते हैं , तब आप पर्वत शृंखलाओं (उच्च-शिखरों) परसुशोभित होते हैं ॥१ ॥

६१८४. यदङ्ग तविषीयवो यामं शुभ्रा अचिध्वम्। नि पर्वता अहासत ॥२ ॥

सौंदर्ययुक्त, प्रिय तथा बलवान् हे मरुद्गण ! जब आप जाने के लिए अपने रथ को सुसज्जित करके यात्रा करते हैं , तब पर्वत भी प्रकम्पित होने लगते हैं ॥२ ॥

६१८५. उदीरयन्त वायुभिर्वाश्रासः पृश्निमातरः । धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ॥३ ॥

शब्द करने वाले तथा पृथ्वी को माता सदृश मानने वाले मरुद्गण, अपने वायु के झकोरों से बादलों को विदीर्ण करके जल वृष्टि करते हैं । इस प्रकार वे प्राणिमात्र के लिए पोषक अन्न प्रदान करते हैं ॥३ ॥

६१८६. वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान्। यद्यामं यान्ति वायुभिः ॥४ ॥

वीर मरुद्गण जब वायु प्रवाहों के साथ चलते हैं, तब वर्षा करते हुए पर्वतों को कम्पायमान कर देते हैं ॥४ ॥

६१८७. नि यद्यामाय वो गिरिर्नि सिन्धवो विधर्मणे । महे शुष्माय येमिरे ॥५ ॥

हे मरुद्गण ! आपके वेग तथा महान् बल से पर्वत डर जाते हैं तथा नदियाँ भयभीत होकर मन्दगति से प्रवाहित होने लगती हैं ॥५ ॥

६१८८. युष्माँ उ नक्तमूतये युष्मान्दिवा हवामहे । युष्मान्प्रयत्यध्वरे ॥६ ॥

हे मरुतो ! अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपको रात्रि के समय, दिन के समय तथा यज्ञ करते समय आरम्भ में ही बुलाते हैं ॥६ ॥

६१८९. उदु त्ये अरुणप्सवश्चित्रा यामेभिरीरते । वाश्रा अधि ष्णुना दिवः ॥७ ॥

लाल रंगे तथा अद्भुत गर्जना करने वाले मरुद्गण अपने रथ पर बैठकर दिव्यलोक से आगमन करते हैं ॥७॥

६१९०. सृजन्ति रश्मिमोजसा पन्थां सूर्याय यातवे । ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥८ ॥

वे मरुद्गण सूर्यदेव की किरणों के लिए भी आगे बढ़ने का पथ - प्रशस्त करते हैं तथा उनकी तेजस्वी किरणों को सर्वत्र बिखेरते हैं ॥८ ॥

६१९१. इमां मे मरुतो गिरमिमं स्तोममृभुक्षणः । इमं मे वनता हवम् ॥९ ॥

अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हे वीर मरुतो ! हमारे द्वारा उच्चरित स्तोत्रों को तथा स्तुतियों को आप ग्रहण करें ॥९ ॥

६१९२. त्रीणि सरांसि पृश्नयो दुदुह्रे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धमुद्रिणम् ॥१० ॥

पृश्नियों (मरुद्गणों की माताओं अथवा वर्षणशील किरणों) ने इन्द्रदेव के निमित्त तीनों सवनों में पीने योग्य मधु-दुग्ध तथा जल मिश्रित सोमरस के तीन बड़े पात्र (पृथ्वी, अन्तरिक्ष एवं आकाश) भरकर तैयार कर दिए हैं ॥१० ॥

६१९३. मरुतो यद्ध वो दिवः सुम्नायन्तो हवामहे । आ तू न उप गन्तन ॥११ ॥

हे वीर मरुतो ! सुख की कामना करने वाले हम याजकगण जब आपका आवाहन करें, तब आप दिव्यलोक



६१९४. यूयं हि ष्ठा सुदानवो रुद्रा ऋभुक्षणो दमे । उत प्रचेतसो मदे ॥१२ ॥

श्रेष्ठ, दानशील, रिपुओं को रुलाने वाले तथा अस्त्र-शस्त्र धारण करने वाले हे तेजस्वी मरुतो ! जब आप यज्ञ मण्डप में रहकर हर्ष प्रदान करने वाले सोमरस को पीते हैं, तब आपकी मेधा निश्चित रूप से चेतना - सम्पन्न हो जाती है ॥१२ ॥

६१९५. आ नो रयिं मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसम् । इयर्ता मरुतो दिवः ॥१३ ॥

हे मरुद्‌गण ! आप रिपुओं के मद को चूर करने वाली तथा पोषक सम्पत्ति प्रचुर मात्रा में दिव्य लोक से हमारे लिए लाएँ ॥१३ ॥

६१९६. अधीव यद् गिरीणां यामं शुभ्रा अचिध्वम् । सुवानैर्मन्दध्व इन्दुभिः ॥१४ ॥

हे तेजस्वी मरुतो ! जब आप पहाड़ों पर चढ़ने के लिए अपने रथ को सुसज्जित करके अभिषुत सोमरस को पीते हैं, तब आप आनन्दित होते हैं ॥१४ ॥

६१९७. एतावतश्चिदेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । अदाभ्यस्य मन्मभिः ॥१५ ॥

स्तवन करने वाले यजमान अपने स्तोत्रों के द्वारा शक्ति-सम्पन्न मरुतों से श्रेष्ठ सुख की याचना करते हैं ॥१५ ॥

६१९८. ये द्रप्साइव रोदसी धमन्त्यनु वृष्टिभिः । उत्सं दुहन्तो अक्षितम् ॥१६ ॥

वे मरुद्‌गण अनवरत स्रोतों का दोहन करते हैं । समस्त भू-भाग तथा अंतरिक्ष को वर्षा द्वारा जल की बूँदों से ढक देते हैं ॥१६ ॥

[वायु द्वारा ही सभी स्रोतों से जल का शोषण करके वर्षा की संभावना उत्पन्न की जाती है ।]

६१९९. उदु स्वानेभिरीरत उद्रथैरुदु वायुभिः । उत्स्तोमैः पृश्निमातरः ॥१७ ॥

पृश्नि (धरती अथवा किरणें) जिनकी माता हैं, वे मरुद्‌गण ध्वनि करते हुए अपने रथ द्वारा मन्त्रशक्ति तथा वायु द्वारा ऊर्ध्वगति प्राप्त करते हैं ॥१७ ॥

६२००. येनाव तुर्वशं यदुं येन कण्वं धनस्पृतम् । राये सु तस्य धीमहि ॥१८ ॥

हे वीर मरुतो ! जिस शक्ति के माध्यम से आपने यदु नरेश तुर्वश को सुरक्षित किया तथा ऐश्वर्य की कामना करने वाले कण्व को सुरक्षित किया । ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हम उसी बल को पाने के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं ॥१८ ॥

६२०१. इमा उ वः सुदानवो घृतं न पिप्युषीरिषः । वर्धान्काण्वस्य मन्मभिः ॥१९ ॥

हे श्रेष्ठ दानी मरुतो ! घृत के सदृश पौष्टिक अन्न (सोमरूप हव्य) तथा कण्वपुत्रों के मननीय स्तोत्रों द्वारा आप समृद्ध हों ॥१९ ॥

६२०२. क्व नूनं सुदानवो मदथा वृक्तबर्हिषः । ब्रह्मा को वः सपर्यति ॥२० ॥

कुश-आसन पर आरूढ़ होने वाले श्रेष्ठ दानी हे मरुतो ! आप कहाँ आनन्दित हो रहे थे ? वह कौन ब्राह्मण है, जो आपकी सराहना करता है ? ॥२० ॥

६२०३. नहि ष्म यद्ध वः पुरा स्तोमेभिर्वृक्तबर्हिषः । शर्धाँ ऋतस्य जिन्वथ ॥२१ ॥

हे मरुतो ! पूर्व में अन्य स्तोताओं द्वारा किये गये स्तोत्रगान द्वारा आप अपने यज्ञ (सत्य) सम्बन्धी बल में वृद्धि करें, यह सम्भव नहीं । हमारे द्वारा किये गये स्तुतिगान से आप समृद्ध हों ॥२१ ॥

६२०४. समु त्ये महतीरपः सं क्षोणी समु सूर्यम् । सं वज्रं पर्वशो दधुः ॥२२ ॥



उन मरुद्गणों ने वृष्टि रूप जल को ओषधियों में स्थापित्त किया, दिव्यलोक, पृथ्वीलोक तथा सूर्यलोक को उचित स्थान पर स्थापित किया ।वृत्र का समूल नाश करने के लिए उन्होंने अपने कठोर वज्र को धारण किया ॥२२॥

६२०५. **वि वृत्रं पर्वशो ययुर्वि पर्वताँ अराजिनः । चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ॥२३ ॥**

शक्तिशाली तथा पुरुषार्थ की वृद्धि करने वाले शासक मरुतों ने पर्वत के सदृश वृत्र को छिन्न-भिन्न कर दिया ॥२३ ॥

६२०६. **अनु त्रितस्य युध्यतः शुष्ममावन्नुत क्रतुम् । अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ॥२४ ॥**

उन मरुद्गणों ने संघर्षरत वीरों की तथा त्रित की कार्यशक्ति को सुरक्षा प्रदान की । उन्होंने वृत्र के मारने में इन्द्रदेव की सहायता की थी ॥२४ ॥

६२०७. **विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन्हिरण्ययीः । शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥२५ ॥**

सुन्दरवर्ण से सुशोभित मरुद्गणों ने सौंदर्य बढ़ाने के लिए अपने सिर पर सोने के बने शिप्र (शिरस्त्राण)को धारण किया । वे विद्युत् के समान तेजस्वी हथियारों को अपने हाथ में धारण करते हैं ॥२५ ॥

६२०८. **उशना यत्परावत उक्ष्णो रन्ध्रमयातन । द्यौर्न चक्रदद्भिया ॥२६ ॥**

हे मरुद्गण ! आप दूसरों के कल्याण की कामना करते हैं । जब आप इस देश में बादलों के साथ आते हैं, तब दिव्यलोक वासियों की तरह मृत्युलोक के प्राणी भी भय से काँपने लगते हैं ॥२६ ॥

६२०९. **आ नो मखस्य दावनेऽश्वैर्हिरण्यपाणिभिः । देवास उप गन्तन ॥२७ ॥**

हे मरुतो ! आप हम याज्ञिकों को दिव्य अनुदान प्रदान करने के निमित्त सोने के आभूषणों से युक्त अपने घोड़ों के द्वारा यज्ञस्थल पर पधारें ॥२७ ॥

६२१०. **यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः । यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः ॥२८ ॥**

उन मरुतों के रथ को श्वेत धब्बेदार रंग वाले मृग तेजगति से खींचते हैं । गौरवर्ण के मरुद्गण जिस समय यज्ञस्थल पर पहुँचते हैं उस समय जल की वर्षा होती है ॥२८ ॥

६२११. **सुषोमे शर्यणावत्यार्जीके पस्त्यावति । ययुर्निचक्रया नरः ॥२९ ॥**

वीर मरुद्गण ऋजीका प्रदेश में शर्यणावत् सरोवर के निकट यज्ञगृह में निवास करते हैं । वे वेगवान् पहियों से युक्त रथ पर आसीन होकर गमन करते हैं ॥२९ ॥

६२१२. **कदा गच्छाथ मरुत इत्था विप्रं हवमानम् । मार्डीकेभिर्नाधमानम् ॥३० ॥**

हे मरुद्गण ! जो विद्वान् याजक ऐश्वर्य की कामना से आपकी स्तुति करते हैं, उनके पास ऐश्वर्य साधनों सहित आप कब पहुँचेंगे ? ॥३० ॥

६२१३. **कद्ध नूनं कधप्रियो यदिन्द्रमजहातन । को वः सखित्व ओहते ॥३१ ॥**

हे स्तुति प्रिय मरुतो ! क्या कभी आपने इन्द्र का साथ छोड़ा है ? (ऐसा कभी नहीं हुआ यह जानकर भी) आपकी मित्रता प्राप्त करने के लिए किसने याचना की ? ॥३१ ॥

६२१४. **सहो षु णो वज्रहस्तैः कण्वासो अग्निं मरुद्भिः । स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ॥३२ ॥**

हे कण्ववंशियो ! स्वर्णिम कुल्हाड़ियों का प्रयोग करने वाले तथा हाथों में वज्र धारण करने वाले मरुतों के साथ आप अग्निदेव की विधिवत् प्रार्थना करें ॥३२ ॥

६२१५. **ओ षु वृष्णः प्रयज्यूना नव्यसे सुविताय । ववृत्यां चित्रवाजान् ॥३३ ॥**



अत्यन्त प्रार्थनीय तथा अद्‌भुत शक्ति -सम्पन्न मरुद्‌गणों को नवीन ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए हम अपने पास बुलाते हैं ॥३३ ॥

६२१६. गिरयश्चिन्नि जिहते पर्शानासो मन्यमानाः । पर्वताश्चिन्नि येमिरे ॥३४ ॥

उन वीर मरुतों के आवागमन से उच्च चोटियों वाले पर्वत अपनी जगह से हिल जाते हैं । विशाल पर्वत सदृश मेघ भी अपनी मर्यादा में (एक स्थान पर) स्थिर नहीं रह पाते हैं ॥३४ ॥

६२१७. आक्ष्णयावानो वहन्त्यन्तरिक्षेण पततः । धातारः स्तुवते वयः ॥३५ ॥

आँखों की पलकों के समान वेग वाले घोड़े अपने भक्तों को अन्न प्रदान करने वाले मरुद्‌गणों को आकाश मार्ग से ले जाते हैं ॥३५ ॥

६२१८. अग्निर्हि जानि पूर्व्यश्छन्दो न सूरो अर्चिषा । ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥३६ ॥

अग्निदेव अपने तेजोबल से सूर्य के सदृश सर्वश्रेष्ठ होकर उत्पन्न हुए । इसी प्रकार वे मरुद्‌गण भी अपने तेजोबल से सर्वव्यापी होकर निवास करते हैं ॥३६ ॥

[सूक्त - ८]

[ऋषि- सध्वंस काण्व । देवता- अश्विनीकुमार । छन्द- अनुष्टुप् ।]

६२१९. आ नो विश्वाभिरूतिभिरश्विना गच्छतं युवम् ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी पिबतं सोम्यं मधु ॥१ ॥

हे शत्रुहन्ता अश्विनीकुमारो ! आप अपने रक्षण- साधनों के साथ स्वर्णिम रथ पर आसीन होकर हमारे निकट पधारें और मधुर सोमरस का पान करें ॥१ ॥

६२२०. आ नूनं यातमश्विना रथेन सूर्यत्वचा ।
भुजी हिरण्यपेशसा कवी गम्भीरचेतसा ॥२ ॥

स्वर्णिम शरीर से सुशोभित होने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप श्रेष्ठ कर्मशील तथा महान् क्रांतदर्शी हैं । आप सूर्य के समान कान्तिवाले रथ पर आरूढ़ होकर हमारे निकट पधारें ॥२ ॥

६२२१. आ यातं नहुषस्पर्यान्तरिक्षात् सुवृक्तिभिः ।
पिबाथो अश्विना मधु कण्वानां सवने सुतम् ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारी प्रार्थना से प्रसन्न होकर अन्तरिक्ष से पधारें । कण्ववंशीय ऋषियों द्वारा आयोजित यज्ञ में पहुँचकर आप निचोड़कर तैयार किये गये मधुर सोमरस का पान करें ॥३ ॥

६२२२. आ नो यातं दिवस्पर्यान्तरिक्षादधप्रिया ।
पुत्रः कण्वस्य वामिह सुषाव सोम्यं मधु ॥४ ॥

भूलोक वासियों द्वारा निष्पन्न सोमरस को पसन्द करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप दिव्यलोक तथा अन्तरिक्ष लोक से हमारे निकट पधारें । आपके निमित्त शहद मिश्रित सोमरस को कण्ववंशियों ने तैयार किया है ॥४ ॥

६२२३. आ नो यातमुपश्रुत्यश्विना सोमपीतये ।
स्वाहा स्तोमस्य वर्धना प्र कवी धीतिभिर्नरा ॥५ ॥



हे ज्ञानी अश्विनीकुमारो ! आप हमारे द्वारा प्रार्थना किये जाने पर हमें समृद्धशाली बनाते हैं । अत: इस यज्ञ में सोमपान करने के निमित्त अवश्य पधारें ॥५ ॥

६२२४. **यच्चिद्धि वां पुर ऋषयो जुहूरेऽवसे नरा । आ यातमश्विना गतमुपेमां सुष्टुतिं मम ॥६ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! प्राचीन काल में अपनी सुरक्षा के लिए जब ऋषियों ने आपका आवाहन किया था, तब आप उपस्थित हुए, अत: हमारे द्वारा भावनापूर्वक प्रार्थना करने पर आप पुन: पधारें ॥६ ॥

६२२५. **दिवश्चिद्रोचनादध्या नो गन्तं स्वर्विदा । धीभिर्वत्सप्रचेतसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ॥७॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप आत्मज्ञानी हैं तथा अपने भक्तों की पुकार को सुनने वाले और पुत्रवत् प्रेम करने वाले हैं । आप हमारी स्तुतियों को सुनकर दिव्यान्तरिक्ष लोक से अवश्य पधारें ॥७ ॥

६२२६. **किमन्ये पर्यासतेऽस्मत्स्तोमेभिरश्विना ।**
पुत्रः कण्वस्य वामृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ॥८ ॥

हमारे अतिरिक्त अन्य कौन उपासक भली प्रकार से आपकी प्रार्थना करते हैं ? हे अश्विनीकुमारो ! हम कण्व ऋषि के पुत्र 'वत्सऋषि' अपने स्तोत्रों से आपको समृद्ध करते हैं ॥८ ॥

६२२७. **आ वां विप्र इहावसेऽह्वत्स्तोमेभिरश्विना ।**
अरिप्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं मयोभुवा ॥९ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप पापरहित तथा वृत्रासुर को मारने वाले हैं । अपनी रक्षा के निमित्त याजकगण आपका आवाहन करते हैं । हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे लिए कल्याणप्रद सिद्ध हों ॥९ ॥

६२२८. **आ यद्वां योषणा रथमतिष्ठद्वाजिनीवसू ।**
विश्वान्यश्विना युवं प्र धीतान्यगच्छतम् ॥१० ॥

शक्तिशाली तथा धनवान् हे अश्विनीकुमारो ! जब आपके रथ पर (आकाश मंडल में) देवी उषा पूर्णरूपेण सुशोभित होती हैं, तब आप दोनों ध्यान की पराकाष्ठा में पहुँच जाते हैं ॥१० ॥

६२२९. **अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ।**
वत्सो वां मधुमद्वचोऽशंसीत्काव्यः कविः ॥११ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों के निमित्त विद्वान् क्रान्तदर्शी ऋषि वत्स ने मधुर वाणी में स्तोत्रगान किया । अत: आप हजारों प्रकार से सुशोभित रथ पर आरूढ़ होकर पधारें ॥११ ॥

६२३०. **पुरुमन्द्रा पुरूवसू मनोतरा रयीणाम् ।**
स्तोमं मे अश्विनाविममभि वह्नी अनूषाताम् ॥१२ ॥

हे धनवान् अश्विनीकुमारो ! आप दोनों मनोवांछित ऐश्वर्य तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाले हैं । आप जगत् के वहनकर्त्ता है, अत: हमारे स्तवन को सुनकर हर्षित हों ॥१२ ॥

६२३१. **आ नो विश्वान्यश्विना धत्तं राधांस्यह्रया ।**
कृतं न ऋत्वियावतो मा नो रीरधतं निदे ॥१३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमें पवित्र ऐश्वर्य प्रदान करें तथा सृजनात्मक कार्य करने में समर्थ बनाएँ । आप हमें निन्दक लोगों के अधीन न करें ॥१३ ॥



६२३२. यन्नासत्या परावति यद्वा स्थो अध्यम्बरे ।

अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ॥१४ ॥

सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न तथा सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों चाहे दिव्यलोक में हों अथवा किसी अन्य लोक में; अपने रथ के द्वारा यहाँ अवश्य पधारें ॥१४ ॥

६२३३. यो वां नासत्यावृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ।

तस्मै सहस्रनिर्णिजमिषं धत्तं घृतश्चुतम् ॥१५ ॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा जिन वत्स ऋषि ने आपको समृद्ध किया था, उनको सहस्रों रूपों में ऐश्वर्यवान् बनाएँ ॥१५ ॥

६२३४. प्रास्मा ऊर्जं घृतश्चुतमश्विना यच्छतं युवम् ।

यो वां सुम्नाय तुष्टवद्वसूयाद्दानुनस्पती ॥१६ ॥

हे दानदाता अश्विनीकुमारो ! सुख की कामना करने वाले साधक आपकी प्रार्थना करते हैं । ऐश्वर्य की कामना करने वाले तथा यज्ञ के निमित्त घृत की धार समर्पित करने वाले याजकों को शक्तिदायक अन्न प्रदान करें ॥१६ ॥

६२३५. आ नो गन्तं रिशादसेमं स्तोमं पुरुभुजा ।

कृतं नः सुश्रियो नरेमा दातमभिष्टये ॥१७ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों, रिपुओं के विनाशक तथा सज्जनों का पालन करने वाले हैं । आप हमारी प्रार्थनाओं को ग्रहण करके श्रेष्ठ सौंदर्य युक्त सुखकारक पदार्थों को प्रदान करने के लिए पधारें ॥१७ ॥

६२३६. आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।

राजन्तावध्वराणामश्विना यामहूतिषु ॥१८ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! प्रियमेध ऋषि ने देवताओं का आवाहन करते समय आप दोनों को भी रक्षा - साधनों के साथ बुलाया है । आप इस श्रेष्ठ यज्ञ में पधारकर विराजमान हों ॥१८ ॥

६२३७. आ नो गन्तं मयोभुवाश्विना शम्भुवा युवम् ।

यो वां विपन्यू धीतिभिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ॥१९ ॥

प्रशंसा के योग्य हे अश्विनीकुमारो ! उन वत्स ऋषि के आनन्दवर्धक तथा शान्तिप्रदायक यज्ञादि कार्यों तथा वचनों से प्रसन्न होकर आप दोनों हमारे निकट पधारें ॥१९ ॥

६२३८. याभिः कण्वं मेधातिथिं याभिर्वशं दशव्रजम् ।

याभिर्गोशर्यमावतं ताभिर्नोऽवतं नरा ॥२० ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिन रक्षण-साधनों से आपने 'कण्व', मेधातिथि, वश, दशव्रज, गोशर्य (शयु) की रक्षा की थी, उन्हीं साधनों से हमारी भी रक्षा करें ॥२० ॥

६२३९. याभिर्नरा त्रसदस्युमावतं कृत्व्ये धने ।

ताभिः ष्व१स्माँ अश्विना प्रावतं वाजसातये ॥२१ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! प्राप्त करने योग्य ऐश्वर्य के सम्बन्ध में जिन रक्षण-साधनों से आपने त्रसदस्यु को रक्षित किया था, उन्हीं साधनों से ऐश्वर्य वितरण करने के निमित्त हमारी भी रक्षा करें ॥२१ ॥



६२४०. **प्र वां स्तोमाः सुवृक्तयो गिरो वर्धन्त्वश्विना ।**
पुरुत्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं पुरुस्पृहा ॥२२ ॥

अनेकों के रक्षक तथा वृत्रहन्ता हे अश्विनीकुमारो ! भली-भाँति उच्चरित स्तोत्र आप दोनों को समृद्ध करें । आप हमारे लिए वांछनीय धन प्रदान करने वाले हों ॥२२ ॥

६२४१. **त्रीणि पदान्यश्विनोराविः सान्ति गुहा परः ।**
कवी ऋतस्य पत्मभिरर्वाग्जीवेभ्यस्परि ॥२३ ॥

अश्विनीकुमारों के तीन चक्र गुह्य क्षेत्र से परे (दृश्य जगत् से अलग) रहते हैं । वे दोनों प्रत्यक्ष यज्ञरूप रथ से प्राणियों के सामने प्रकट होते हैं ॥२३ ॥

[पुरुष सूक्त में विश्व सृजन एवं पोषण रूप यज्ञ के तीन चरण ऊर्ध्व लोकों में अदृश्य तथा एक चरण भूमि पर प्रकट कहा गया है, अश्विनीकुमार भी उसी दिव्य प्रक्रिया के अंग हैं, वही तथ्य उन पर भी लागू होता है ।]

[सूक्त - ९]

[**ऋषि-** शशकर्ण काण्व । **देवता-** अश्विनीकुमार । **छन्द-** अनुष्टुप्, १, ४, ६, १४-१५ बृहती, २, ३, २०, २१ गायत्री, ५ ककुप्, १० त्रिष्टुप्, ११ विराट्, १२ जगती]

६२४२. **आ नूनमश्विना युवं वत्सस्य गन्तमवसे ।**
प्रास्मै यच्छतमवृकं पृथु च्छर्दिर्युयुतं या अरातयः ॥१ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों वत्स ऋषि की सुरक्षा के निमित्त निश्चित रूप से पधारें । उन्हें क्रोधी मनुष्यों से सुरक्षित विशाल आवास प्रदान करें । तत्पश्चात् आप दोनों उनके रिपुओं को दूर भगाएँ ॥१ ॥

६२४३. **यदन्तरिक्षे यद्दिवि यत्पञ्च मानुषाँ अनु । नृम्णं तद्धत्तमश्विना ॥२ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जो ऐश्वर्य अन्तरिक्ष, दिव्यलोक तथा (पृथ्वी पर) पाँच प्रकार के मनुष्यों के पास उपलब्ध रहता है, वही ऐश्वर्य हमें भी प्रदान करें ॥२ ॥

६२४४. **ये वां दंसांस्यश्विना विप्रासः परिमामृशुः । एवेत्काण्वस्य बोधतम् ॥३ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! कण्व पुत्रों ने तथा जिन विद्वान् पुरुषों ने अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा आपके कर्मों को ज्ञात कर लिया है, आप उनकी जानकारी रखें अर्थात् उनकी रक्षा करें ॥३ ॥

६२४५. **अयं वां घर्मो अश्विना स्तोमेन परि षिच्यते ।**
अयं सोमो मधुमान्वाजिनीवसू येन वृत्रं चिकेतथः ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपके निमित्त यह धर्म (गर्मी या ऊर्जा उत्पादक-यज्ञ अथवा सोम) स्तोत्रों (मंत्रशक्ति) द्वारा सिंचित (परिपुष्ट) किया जा रहा है । हे बल - सम्पन्न देवो ! यही वह मधुर सोम है, जिससे आप वृत्र को देख (पहचान) लेते हैं ॥४ ॥

[प्रकृति एवं शरीर में छद्मरूप से छिपे वृत्र रूप घातक जीवों तक अश्विनीकुमारों (आरोग्यदायक प्रवाहों) को प्रभावपूर्ण ढंग से पहुँचाने में मंत्रशक्ति का प्रयोग किया जाता रहा है ।]

६२४६. **यदप्सु यद्वनस्पतौ यदोषधीषु पुरुदंससा कृतम् । तेन माविष्टमश्विना ॥५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जिस शक्ति से आप दोनों ने ओषधियों, विशाल वृक्षों तथा जल को रक्षित किया, उसी बल से हमारी भी रक्षा करें ॥५ ॥



६२४७. **यन्नासत्या भुरण्यथो यद्वा देव भिषज्यथः ।**
अयं वां वत्सो मतिभिर्न विन्धते हविष्मन्तं हि गच्छथः ॥६ ॥

श्रेष्ठ दान दाता हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों जगत् के पालन करने वाले तथा सभी को स्वस्थ रखने वाले हैं । केवल ज्ञान के द्वारा ये स्तोतागण आपको नहीं प्राप्त कर सकते; क्योंकि आप तो हवि प्रदान करने वाले याजकों के निकट जाते हैं ॥६ ॥

[केवल ज्ञान पर्याप्त नहीं, ज्ञान के अनुरूप यज्ञीय-कर्मप्रयोगों से वाञ्छित लाभ मिलते हैं ।]

६२४८. **आ नूनमश्विनोर्ऋषिः स्तोमं चिकेत वामया ।**
आ सोमं मधुमत्तमं घर्मं सिञ्चादथर्वणि ॥७ ॥

अश्विनीकुमारों की स्तुतियों को स्तोताओं ने अपनी श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न किया । मधुर सोमरस तथा घृत सिंचित हवि को उन्होंने समर्पित किया ॥७ ॥

६२४९. **आ नूनं रघुवर्तनिं रथं तिष्ठाथो अश्विना ।**
आ वां स्तोमा इमे मम नभो न चुच्यवीरत ॥८ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों तेज चलने वाले रथ पर आरूढ़ होते हैं । नभ की तरह विस्तृत हमारी स्तुतियाँ आपको प्राप्त हों ॥८ ॥

६२५०. **यदद्य वां नासत्योक्थैराचुच्युवीमहि ।**
यद्वा वाणीभिरश्विनेवेत्काण्वस्य बोधतम् ॥९ ॥

हे सत्यनिष्ठ अश्विनीकुमारो ! आज जिस प्रकार शास्त्र वचनों के द्वारा आपको बुलाया गया है, जिस प्रकार स्तुतियों द्वारा आपको बुलाया गया है, उसी प्रकार मुझ कण्व ऋषि द्वारा स्तोत्रों के माध्यम से आपका आवाहन किया जाता है ॥९ ॥

६२५१. **यद्वां कक्षीवाँ उत यद्व्यश्व ऋषिर्यद्वां दीर्घतमा जुहाव ।**
पृथी यद्वां वैन्यः सादनेष्वेवेदतो अश्विना चेतयेथाम् ॥१० ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार आप दोनों का कक्षीवान् , व्यश्व, दीर्घतमा ने आवाहन किया । जिस प्रकार यज्ञ स्थल पर वेनपुत्र पृथी ने आवाहित किया था, उसी प्रकार हम आपका इस समय आवाहन करते हैं , आप इसे (हृदगत भाव को) जानें ॥१० ॥

६२५२. **यातं छर्दिष्पा उत नः परस्पा भूतं जगत्पा उत नस्तनूपा ।**
वर्तिस्तोकाय तनयाय यातम् ॥११ ॥

सबके घरों की रक्षा करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे तथा हमारे घर और समस्त संसार के पालक बनें । आप हमारे पुत्र-पौत्रों के कल्याण के लिए घर पर पधारें ॥११ ॥

६२५३. **यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना यद्वा वायुना भवथः समोकसा ।**
यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा यद्वा विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः ॥१२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! यदि आप इन्द्रदेव के साथ उनके रथ पर आसीन होकर गमन करते हैं, वायुदेव के साथ एक जगह निवास करते हैं, अदिति पुत्रों अथवा ऋभु संज्ञक देवों के साथ प्रेमपूर्वक रहते हैं तथा विष्णु के विशिष्ट पदक्षेप के साथ तीनों लोकों में विराजते हैं, तो हमारे निकट भी पधारें ॥१२ ॥



**६२५४. यदद्याश्विनावहं हुवेय वाजसातये ।
यत्पृत्सु तुर्वणे सहस्तच्छ्रेष्ठमश्विनोरवः ॥१३ ॥**

अश्विनीकुमारों का संरक्षण उच्च कोटि का है । संग्राम में रिपुओं का विनाश करने में वे पूर्ण सक्षम हैं, अतः अपनी रक्षा के लिए यदि उन्हें हम पुकारें तो वे निश्चित रूप से पधारेंगे ॥१३ ॥

**६२५५. आ नूनं यातमश्विनेमा हव्यानि वां हिता ।
इमे सोमासो अधि तुर्वशे यदाविमे कण्वेषु वामथ ॥१४ ॥**

यह सोमरस 'तुर्वश' और 'यदु' के घर पर विद्यमान है, यह कण्व पुत्रों को प्रदान किया गया था । हे अश्विनी कुमारो ! यह सोमरस हव्य आपके लिए प्रस्तुत है, अतः आप (इसका पान करने के लिए) पधारें ॥१४ ॥

**६२५६. यन्नासत्या पराके अर्वाके अस्ति भेषजम् ।
तेन नूनं विमदाय प्रचेतसा छर्दिर्वत्साय यच्छतम् ॥१५ ॥**

सत्यनिष्ठ हे अश्विनीकुमारो ! जो ओषधियाँ निकट तथा दूर प्रदेश में उपलब्ध हैं, उनसे संयुक्त रहने हेतु श्रेष्ठ आवास, अहंकाररहित वत्स ऋषि के लिए प्रदान करें ॥१५ ॥

**६२५७. अभुत्स्यु प्र देव्या साकं वाचाहमश्विनोः ।
व्यावर्देव्या मतिं वि रातिं मर्त्येभ्यः ॥१६ ॥**

दोनों अश्विनीकुमारों की दिव्य वाणियों से हम चैतन्य हो गये हैं । हे प्रकाशमान उषा देवि ! आप अंधकार को दूर करके सभी मनुष्यों को सद्बुद्धि तथा उपयुक्त ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१६ ॥

**६२५८. प्र बोधयोषो अश्विना प्र देवि सूनृते महि ।
प्र यज्ञहोतरानुषक्प्र मदाय श्रवो बृहत् ॥१७ ॥**

हे प्रकाशमान तथा महान् उषा देवि ! आप अश्विनीकुमारों को प्रेरित करें । हे याजको ! आप अश्विनीकुमारों को आनन्द प्रदायक प्रचुर हव्य प्रदान करें ॥१७ ॥

**६२५९. यदुषो यासि भानुना सं सूर्येण रोचसे ।
आ हायमश्विनो रथो वर्तिर्याति नृपाय्यम् ॥१८ ॥**

हे उषादेवि ! जब आप स्वर्णिम किरणों से सम्पन्न होकर चलती हैं, सूर्य के तेज से प्रकाशित हो जाती हैं, उस समय अश्विनीकुमारों का रथ मनुष्यों को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने के लिए यज्ञ मण्डप में प्रवेश करता है ॥१८॥

**६२६०. यदापीतासो अंशवो गावो न दुह्र ऊधभिः ।
यद्वा वाणीरनूषत प्र देवयन्तो अश्विना ॥१९ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जिस समय पीतवर्ण की सोमलताएँ गाय के थन के दूध निकालने के समान निचोड़ी जाती हैं तथा जिस समय देवत्व की कामना करने वाले अपने स्तुति वचनों से आपकी प्रार्थना करते हैं, उस समय आप हमारे संरक्षक हों ॥१९ ॥

६२६१. प्र द्युम्नाय प्र शवसे प्र नृषाह्याय शर्मणे । प्र दक्षाय प्रचेतसा ॥२० ॥

श्रेष्ठ ज्ञान से सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! आप हमें ऐसी प्रेरणा प्रदान करें, जिससे हम शक्ति, ऐश्वर्य, सहनशीलता तथा श्रेष्ठ कार्य करने का कौशल प्राप्त कर सकें ॥२० ॥



६२६२. **यन्नूनं धीभिरश्विना पितुर्योना निषीदथः । यद्वा सुम्नेभिरुक्थ्या ॥२१ ॥**

प्रशंसा के योग्य हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे पिता तुल्य हैं । अत: जिस प्रकार पिता अपने पुत्रों के लिए प्रत्येक सुख-साधन उपलब्ध कराता है, उसी प्रकार आप हमें हर्ष प्रदान करें ॥२१ ॥

[सूक्त - १०]

[**ऋषि-** प्रगाथ काण्व । **देवता-** अश्विनीकुमार । **छन्द-** १ बृहती, २ मध्ये ज्योति (त्रिष्टुप्), ३ अनुष्टुप्, ४ आस्तार पंक्ति, ५-६ प्रगाथ (विषमा बृहती-समा सतोबृहती) ।]

६२६३. **यत्स्थो दीर्घप्रसद्मनि यद्वादो रोचने दिवः ।**
यद्वा समुद्रे अध्याकृते गृहेऽत आ यातमश्विना ॥१ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों चाहे पृथ्वी रूप विशाल यज्ञमण्डप में रहते हों या प्रकाशमान दिव्यलोक में अथवा अन्तरिक्ष-लोक में निवास करते हों, आप उस स्थान से हमारे निकट अवश्य पधारें ॥१ ॥

६२६४. **यद्वा यज्ञं मनवे संमिमिक्षथुरेवेत्काण्वस्य बोधतम् ।**
बृहस्पतिं विश्वान्देवाँ अहं हुव इन्द्राविष्णू अश्विनावाशुहेषसा ॥२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपने जिस प्रकार मनु के यज्ञ को भली प्रकार से सिंचित किया था, उसी प्रकार कण्वपुत्रों के यज्ञ को भी समझें । बृहस्पति, इन्द्र, विष्णु एवं सभी देवगणों सहित हम आपका आवाहन करते हैं ॥२ ॥

६२६५. **त्या न्व१श्विना हुवे सुदंससा गृभे कृता ।**
ययोरस्ति प्र णः सख्यं देवेष्वध्याप्यम् ॥३ ॥

जिनसे हमारी मित्रता है, वे दोनों अश्विनीकुमार श्रेष्ठ कर्म करने वाले हैं । वे हमारी आहुतियों को प्राप्त करने के लिए ही प्रकट हुए हैं । देवगणों से उनकी मित्रता उच्चकोटि की है । इसीलिए हम उनका आवाहन करते हैं ॥३ ॥

६२६६. **ययोरधि प्र यज्ञा असूरे सन्ति सूरयः ।**
ता यज्ञस्याध्वरस्य प्रचेतसा स्वधाभिर्या पिबतः सोम्यं मधु ॥४ ॥

वे दोनों अश्विनीकुमार अज्ञानियों के बीच में जाकर ज्ञान का प्रचार करके उन्हें सन्मार्गगामी बनाते हैं । वे दोनों ऐसे यज्ञ का सञ्चालन बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्वक करते हैं, जिसमें हिंसा नहीं होती । वे मधुर रस मिश्रित सोमरस का पान करें ॥४ ॥

६२६७. **यदद्याश्विनावपाग्यत्प्राक्स्थो वाजिनीवसू ।**
यद् द्रुह्यव्यनवि तुर्वशे यदौ हुवे वामथ मा गतम् ॥५ ॥

शक्ति सम्पन्न हे अश्विनीकुमार ! जब हम आपका आवाहन करें, तब आप चाहें पूर्व दिशा में विद्यमान हों या पश्चिम दिशा में अथवा द्रुह्य, अनु तथा यदु के समीप हों, वहाँ से हमारे पास अवश्य पधारें ॥५ ॥

६२६८. **यदन्तरिक्षे पतथः पुरुभुजा यद्वेमे रोदसी अनु ।**
यद्वा स्वधाभिरधितिष्ठथो रथमत आ यातमश्विना ॥६ ॥

विशाल भुजाओं वाले हे अश्विनीकुमारो ! जब आप दोनों अपने तेजोबल से रथारूढ़ होकर अन्तरिक्ष लोक, दिव्यलोक तथा पृथ्वी लोक में विचरण कर रहे हों, उस समय आप हमारे समीप भी पधारें ॥६ ॥



[सूक्त - ११]

[**ऋषि**- वत्स काण्व । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- गायत्री, १ (प्रतिष्ठा) गायत्री, २ वर्धमाना, १० त्रिष्टुप् ।]

६२६९. **त्वमग्ने व्रतपा असि देव आ मर्त्येष्वा । त्वं यज्ञेष्वीड्यः ॥१ ॥**

दिव्यगुण सम्पन्न हे अग्निदेव ! आप मनुष्यों और देवताओं के बीच में श्रेष्ठ संकल्पों के संरक्षक हैं, इसलिए समस्त यज्ञों में आपकी उपस्थिति के लिए प्रार्थना की जाती है ॥१ ॥

६२७०. **त्वमसि प्रशस्यो विदथेषु सहन्त्य । अग्ने रथीरध्वराणाम् ॥२ ॥**

रिपुओं को परास्त करने वाले हे अग्निदेव ! आप हिंसारहित श्रेष्ठ यज्ञों के नेतृत्वकर्त्ता हैं, इसलिए समस्त यज्ञों में आपकी स्तुति होती है ॥२ ॥

६२७१. **स त्वमस्मदप द्विषो युयोधि जातवेदः । अदेवीरग्ने अरातीः ॥३ ॥**

समस्त पदार्थों के ज्ञाता हे अग्निदेव ! आप शत्रुओं को तथा उनकी सेनाओं को हमसे दूर भगाएँ ॥३ ॥

६२७२. **अन्ति चित्सन्तमह यज्ञं मर्तस्य रिपोः । नोप वेषि जातवेदः ॥४ ॥**

हे ज्ञान- सम्पन्न अग्निदेव ! निकट रहने पर भी आप शत्रुओं के यज्ञ में कभी जाने की इच्छा तक नहीं करते ॥४॥

६२७३. **मर्ता अमर्त्यस्य ते भूरि नाम मनामहे । विप्रासो जातवेदसः ॥५ ॥**

हे अग्निदेव ! आप सभी पदार्थों को जानने वाले ज्ञानी हैं । आपके विराट् अविनाशी नाम का हम चिन्तन करते हैं ॥५ ॥

६२७४. **विप्रं विप्रासोऽवसे देवं मर्तास ऊतये । अग्निं गीर्भिर्हवामहे ॥६ ॥**

मेधावी अग्निदेव को प्रसन्न करने के लिए हम उनकी स्तुति करते हुए आहुतियाँ समर्पित करते हैं । अपनी रक्षा के लिए हम उनका आवाहन करते हैं ॥६ ॥

६२७५. **आ ते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात् । अग्ने त्वांकामया गिरा ॥७ ॥**

हे सर्वव्यापी प्रदीप्त अग्निदेव ! हम आपके पुत्र , हृदय से आपकी स्तुति करते हुए आपको अपनी ओर आकर्षित करना चाहते हैं ॥७ ॥

६२७६. **पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे ॥८ ॥**

हे अग्निदेव ! आप सर्वत्र समान दृष्टि रखने वाले सभी प्रजाओं के अधिपति हैं, अतः युद्ध में अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपका आवाहन करते हैं ॥८ ॥

६२७७. **समत्स्वग्निमवसे वाजयन्तो हवामहे । वाजेषु चित्रराधसम् ॥९ ॥**

हम संग्राम में बल प्राप्ति एवं संरक्षण के लिए अद्‌भुत सामर्थ्यवान् एवं धन- सम्पन्न अग्निदेव का आवाहन करते हैं ॥९ ॥

६२७८. **प्रत्नो हि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच्च होता नव्यश्च सत्सि ।**
स्वां चाग्ने तन्वं पिप्रयस्वास्मभ्यं च सौभगमा यजस्व ॥१० ॥

हे अग्निदेव ! प्राचीन काल से ही आप समस्त यज्ञों में प्रार्थनीय तथा आनन्द प्रदायक हैं । बहुत पहले से ही आप यज्ञों में होतारूप तथा प्रार्थना के योग्य होकर आसीन होते रहे हैं । आप हवियों द्वारा स्वयं प्रसन्न हों तथा हमें भी सौभाग्यवान् बनाएँ ॥१० ॥



[सूक्त - १२]

[**ऋषि**- पर्वत काण्व । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- उष्णिक् ।]

६२७९. **य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति । येना हंसि न्य१त्रिणं तमीमहे ॥१ ॥**

सोमपान करने वालों में श्रेष्ठ हे बलशाली इन्द्रदेव ! आप उल्लसित होकर कार्यों के प्रति जागरूक होते हैं। जिस बल से आप घातक असुरों (आसुरी वृत्तियों) को नष्ट करते हैं, हम आपसे वही सामर्थ्य माँगते हैं ॥१ ॥

६२८०. **येना दशग्वमध्रिगुं वेपयन्तं स्वर्णरम् । येना समुद्रमाविथा तमीमहे ॥२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जिस शक्ति से आपने 'अंगिरा वंशीय अध्रिगु' की, अँधेरे को नष्ट करने वाले सूर्य की तथा समुद्र या अन्तरिक्ष की रक्षा की थी, उसी शक्ति की हम आपसे याचना करते हैं ॥२ ॥

६२८१. **येन सिन्धुं महीरपो रथाँ इव प्रचोदयः । पन्थामृतस्य यातवे तमीमहे ॥३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपने जिस बल से विशाल जल राशियों को रथ की भाँति समुद्र की ओर प्रेरित (गतिशील) किया, उसी बल को हम यज्ञीय पथ पर गमन करने के लिए आपसे माँगते हैं ॥३॥

६२८२. **इमं स्तोममभिष्टये घृतं न पूतमद्रिवः । येना नु सद्य ओजसा ववक्षिथ ॥४ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप घृत के सदृश हमारे द्वारा की गई पुनीत स्तुतियों को ग्रहण करें । आप बल-सम्पन्न होकर हमारे लिए वांछित ऐश्वर्य शीघ्र ही प्रदान करें ॥४ ॥

६२८३. **इमं जुषस्व गिर्वणः समुद्र इव पिन्वते । इन्द्र विश्वाभिरूतिभिर्ववक्षिथ ॥५ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार नदियों के जल से समुद्र बढ़ता है, उसी प्रकार हमारी प्रार्थनाओं से समृद्ध होकर आप अपने समस्त रक्षण - साधनों से हमारी रक्षा करें ॥५ ॥

६२८४. **यो नो देवः परावतः सखित्वनाय मामहे । दिवो न वृष्टिं प्रथयन्ववक्षिथ ॥६ ॥**

दिव्यगुणों से सम्पन्न इन्द्रदेव ने सुदूर स्थान से आगमन कर हमारी मित्रता की वृद्धि के लिए ऐश्वर्य प्रदान किया । हे इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष से वर्षा होने के सदृश आप हमें प्रचुर धन प्रदान करें ॥६ ॥

६२८५. **ववक्षुरस्य केतव उत वज्रो गभस्त्योः । यत्सूर्यो न रोदसी अवर्धयत् ॥७ ॥**

सूर्य के सदृश वे इन्द्रदेव जब वृष्टि आदि श्रेष्ठ कार्यों से द्युलोक तथा पृथ्वीलोक को समृद्ध करते हैं, तब उनकी विजय पताकाएँ तथा हाथ में वज्र अत्यन्त सुशोभित होते हैं ॥७ ॥

६२८६. **यदि प्रवृद्ध सत्पते सहस्रं महिषाँ अघः । आदित्त इन्द्रियं महि प्र वावृधे ॥८ ॥**

सत्पात्रों के पालक हे महान् इन्द्रदेव ! जब आपने सहस्रों राक्षसों का वध किया, तब आपकी शक्ति और बढ़ गयी ॥८ ॥

६२८७. **इन्द्रः सूर्यस्य रश्मिभिर्न्यर्शसानमोषति । अग्निर्वनेव सासहिः प्र वावृधे ॥९ ॥**

जिस प्रकार अग्निदेव जंगलों को जलाकर राख कर देते हैं, उसी प्रकार इन्द्रदेव सूर्य की किरणों के द्वारा, दुःख देने वाले शत्रुओं को जला डालते हैं । रिपुओं का विनाश करके वे समृद्ध होते हैं ॥९ ॥

६२८८. **इयं त ऋत्वियावती धीतिरेति नवीयसी । सपर्यन्ती पुरुप्रिया मिमीत इत् ॥१० ॥**

हे इन्द्रदेव ! सबका सम्मान करने वाली, यज्ञ में प्रयुक्त होने वाली, नूतन तथा बहुप्रिय स्तुतियाँ आपका गणगान करती हुई आपके पास पहुँचती हैं ॥१० ॥



६२८९. गर्भो यज्ञस्य देवयुः क्रतुं पुनीत आनुषक्। स्तोमैरिन्द्रस्य वावृधे मिमीत इत् ॥११॥

यज्ञ को सम्पन्न करने वाले, देवताओं को प्राप्त करने की कामना करने वाले याजकगण अपने कार्यों को भली-भाँति सम्पन्न करते रहते हैं ।वे अपनी प्रार्थनाओं से इन्द्रदेव का गुणगान करके उन्हें समृद्ध करते हैं ॥११ ॥

६२९०. सनिर्मित्रस्य पप्रथ इन्द्रः सोमस्य पीतये। प्राची वाशीव सुन्वते मिमीत इत् ॥१२॥

अपने मित्रों को ऐश्वर्य प्रदान करने वाले इन्द्रदेव याजकों द्वारा स्तुतिगान करते हुए समर्पित किये गये सोमरस का पान करते हैं। इससे उनके यश की वृद्धि होती है ॥१२ ॥

६२९१. यं विप्रा उक्थवाहसोऽभिप्रमन्दुरायवः। घृतं न पिप्य आसन्यृतस्य यत् ॥१३ ॥

ज्ञानी तथा प्रार्थना करने वाले याजकगण यज्ञाग्नि में स्थापित की जाने वाली घृत आहुतियों के सदृश सोमरूप हवियों को इन्द्रदेव के मुख में समर्पित कर उन्हें प्रसन्न करते हैं ॥१३ ॥

६२९२. उत स्वराजे अदितिः स्तोममिन्द्राय जीजनत्। पुरुप्रशस्तमूतय ऋतस्य यत् ॥१४॥

यज्ञरूप सत्य की रक्षा के लिए अदिति ने स्वप्रकाशित इन्द्रदेव की प्रशंसा कराने वाले अनेकों उत्तम स्तोत्रों की रचना की ॥१४ ॥

६२९३. अभि वह्नय ऊतयेऽनूषत प्रशस्तये। न देव विव्रता हरी ऋतस्य यत् ॥१५ ॥

अपनी प्रशंसा तथा सुरक्षा के लिए याजकगण उन इन्द्रदेव की प्रार्थना करते हैं। हे इन्द्रदेव ! विभिन्न श्रेष्ठ कर्म करने वाले अश्व आपको यज्ञस्थल पर ले आएँ ॥१५ ॥

६२९४. यत्सोममिन्द्र विष्णवि यद्वा घ त्रित आप्त्ये। यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञों में विष्णु के उपस्थित होने के बाद आपने सोमपान किया था। त्रितआप्त्य एवं मरुद्‌गणों के साथ सोमरस के सेवन से आनन्दित होने वाले आप हमारे यज्ञ में भी सोमपान करके आनन्दित हों ॥१६ ॥

६२९५. यद्वा शक्र परावति समुद्रे अधि मन्दसे। अस्माकमित्सुते रणा समिन्दुभिः ॥१७ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सुदूर क्षेत्र में सोमरस पान करके आप हर्षित होते हैं, उसी प्रकार हमारे यज्ञ में भी सोमपान करके हर्षित हों ॥१७ ॥

६२९६. यद्वासि सुन्वतो वृधो यजमानस्य सत्पते। उक्थे वा यस्य रण्यसि समिन्दुभिः ॥१८ ॥

हे सत्य के पालक इन्द्रदेव ! आप जिस याजक के यज्ञ में विधिवत् सोमपान करके आनन्दित होते हैं। उस याजक को आप बढ़ाते हैं ॥१८ ॥

६२९७. देवंदेवं वोऽवस इन्द्रमिन्द्रं गृणीषणि। अधा यज्ञाय तुर्वणे व्यानशुः ॥१९ ॥

सबकी रक्षा के लिए देवाधिदेव इन्द्रदेव की हम प्रार्थना करते हैं। हमारी प्रार्थना को सुनकर वे रिपुओं का हनन करने तथा यज्ञ में भाग लेने के लिए पधारें ॥१९ ॥

६२९८. यज्ञेभिर्यज्ञवाहसं सोमेभिः सोमपातमम्। होत्राभिरिन्द्रं वावृधुर्व्यानशुः ॥२० ॥

यज्ञों में आहूत करने योग्य तथा सर्वाधिक सोमपान करने वाले इन्द्रदेव को याजकगण अपने यज्ञों, सोमों तथा प्रार्थनाओं से समृद्ध करते हैं और उनके अनुग्रह को प्राप्त करते हैं ॥२० ॥

६२९९. महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः। विश्वा वसूनि दाशुषे व्यानशुः ॥२१ ॥

इन इन्द्रदेव की अनेकों नीतियाँ हैं। वे प्राचीन काल से ही यशस्वी रहे हैं। दान दाता को वे प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥२१ ॥



६३००. इन्द्रं वृत्राय हन्तवे देवासो दधिरे पुरः । इन्द्रं वाणीरनूषता समोजसे ॥२२ ॥

देवताओं ने वृत्र का वध करने के लिए इन्द्रदेव को अग्रणी किया । अत: शक्ति के निमित्त हमारी वाणियाँ उन्हीं की प्रार्थना करती हैं ॥२२ ॥

६३०१. महान्तं महिना वयं स्तोमेभिर्हवनश्रुतम् । अर्कैरभि प्र णोनुमः समोजसे ॥२३ ॥

अपनी सामर्थ्य से ही महान् बने तथा याजकों की पुकार को सुनने वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना हम करते हैं । हम बल प्राप्ति के निमित्त यज्ञों तथा स्तवनों के द्वारा उनका सम्मान करते हैं ॥२३ ॥

६३०२. न यं विविक्तो रोदसी नान्तरिक्षाणि वज्रिणम् । अमादिदस्य तित्विषे समोजसः॥२४ ॥

वज्र धारण करने वाले जिन इन्द्रदेव को द्युलोक, पृथ्वी लोक तथा अन्तरिक्ष लोक भी अपने से अलग नहीं कर सकते, ऐसे शक्तिशाली इन्द्रदेव के तेज से ही सम्पूर्ण जगत् आलोकित हो रहा है ॥२४ ॥

६३०३. यदिन्द्र पृतनाज्ये देवास्त्वा दधिरे पुरः । आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२५ ॥

हे इन्द्रदेव ! संग्राम में जब देवताओं ने आपको सबसे अग्रणी किया, तब दो बलशाली अश्वों ने आपको वहाँ पहुँचाया ॥२५ ॥

६३०४. यदा वृत्रं नदीवृतं शवसा वज्रिन्नवधीः । आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२६ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! नदियों के जल को अवरुद्ध करने वाले वृत्र का वध करने के लिये दो बलवान् अश्वों ने आपको वहाँ पहुँचाया, तब आपने अपने बाहुबल से उसका वध किया ॥२६ ॥

६३०५. यदा ते विष्णुरोजसा त्रीणि पदा विचक्रमे । आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२७ ॥

हे इन्द्रदेव ! जब विष्णुदेव ने अपनी शक्ति से तीन कदमों के द्वारा तीनों लोकों को नापा था, तब दो बलवान् अश्वों को वाहन बनाकर आप वहाँ पहुँचे थे ॥२७ ॥

६३०६. यदा ते हर्यता हरी वावृधाते दिवेदिवे । आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२८ ॥

हे इन्द्रदेव ! जब आपके बलशाली अश्व दिनों-दिन समृद्ध हुए, तब आपने समस्त जगत् को अपने नियंत्रण में किया ॥२८ ॥

६३०७. यदा ते मारुतीर्विशस्तुभ्यमिन्द्र नियेमिरे । आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२९ ॥

हे इन्द्रदेव ! जब मरुद्गण आपके निमित्त समस्त प्राणियों को नियंत्रित करते हैं तब आप सम्पूर्ण लोकों को नियमित करते हैं ॥२९ ॥

६३०८. यदा सूर्यममुं दिवि शुक्रंज्योतिरधारयः । आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥३० ॥

हे इन्द्रदेव ! जब तेजोयुक्त तथा आलोकवान् सूर्य को आपने दिव्यलोक में स्थापित किया, तत्पश्चात् ही आपने समस्त लोकों को नियंत्रित किया ॥३० ॥

६३०९. इमां त इन्द्र सुष्टुतिं विप्र इयर्ति धीतिभिः । जामिं पदेव पिप्रतीं प्राध्वरे ॥३१ ॥

जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपने भाई को श्रेष्ठ दिशा की ओर अग्रसर करता है, उसी प्रकार ये ज्ञानी पुरुष हर्ष बढ़ाने वाली प्रार्थनाओं से इन्द्रदेव को यज्ञीय कर्मों की ओर ले जाते हैं ॥३१ ॥

६३१०. यदस्य धामनि प्रिये समीचीनासो अस्वरन् । नाभा यज्ञस्य दोहना प्राध्वरे ॥३२ ॥

स्तोतागण यज्ञ के बीच में सोमरस को अभिषुत करते समय, इन्द्रदेव के प्रिय स्थान यज्ञ मण्डप में एकत्रित होकर उनकी प्रार्थना करते हैं ॥३२ ॥



६३११. सुवीर्यं स्वश्व्यं सुगव्यमिन्द्र दद्धि नः । होतेव पूर्वचित्तये प्राध्वरे ॥३३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें श्रेष्ठ शक्ति, श्रेष्ठ अश्व तथा श्रेष्ठ गौओं से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें । हम यज्ञ में होता के सदृश ज्ञान सम्पन्न बनने के लिए आपकी प्रार्थना करते हैं ॥३३ ॥

[सूक्त - १३]

[**ऋषि**- नारद काण्व । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- उष्णिक् ।]

६३१२. इन्द्रः सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीत उक्थ्यम् । विदे वृधस्य दक्षसो महान्हि षः ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! तैयार किये गये सोमरस का पान करके आप यजमान और स्तोता को उन्नति की ओर बढ़ाने वाली शक्ति प्रदान करते हैं । आप दोनों को पवित्र कर देते हैं, क्योंकि आप महान् हैं ॥१ ॥

६३१३. स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः । सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित् ॥२ ॥

दुःखों से छुड़ाने वाले, श्रेष्ठ कीर्ति वाले तथा आकाश में स्थित शत्रुओं को जीतने वाले इन्द्रदेव, विशाल अन्तरिक्ष में विद्यमान देवताओं के सान्निध्य में रहकर सबको समृद्ध करते हैं ॥२ ॥

६३१४. तमह्वे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम् । भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥३ ॥

हम उन बलवान् इन्द्रदेव को अन्न की वृद्धि के लिए यज्ञों में बुलाते हैं । हे इन्द्रदेव ! सुख एवं उन्नति के समय मार्गदर्शक के रूप में आप हमारे पास रहें ॥३ ॥

६३१५. इयं त इन्द्र गिर्वणो रातिः क्षरति सुन्वतः । मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥४ ॥

स्तुतियोग्य हे इन्द्रदेव ! इस यज्ञ में प्रदान की हुई सोमरस की आहुतियाँ आपके लिए प्रवाहित हो रही हैं । आप प्रसन्नचित्त से इस आसन पर विराजमान हों ॥४ ॥

६३१६. नूनं तदिन्द्र दद्धि नो यत्त्वा सुन्वन्त ईमहे । रयिं नश्चित्रमा भरा स्वर्विदम् ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! सोमयज्ञ करते हुए हम आपसे याचना करते हैं कि आप हमें इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करें तथा आत्मिक सुख प्रदान कराने वाली सम्पत्ति भी प्रदान करें ॥५ ॥

६३१७. स्तोता यत्ते विचर्षणिरति प्रशर्धयद्गिरः । वया इवानु रोहते जुषन्त यत् ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! जब विद्वान् स्तोता आपके निमित्त रिपुओं को परास्त करने वाली स्तुतियाँ करते हैं । उन स्तुतियों से हर्षित होकर आपका बल, वृक्ष की शाखाओं की तरह बढ़ता है ॥६ ॥

६३१८. प्रत्नवज्जनया गिरः शृणुधी जरितुर्हवम् । मदेमदे ववक्षिथा सुकृत्वने ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! पहले की तरह आप स्तोत्र प्रकट करें तथा स्तोताओं की प्रार्थना को सुनकर हर्षित हों । जो यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करते हैं, उन्हें आप ऐश्वर्य प्रदान करें ॥७ ॥

६३१९. क्रीळन्त्यस्य सूनृता आपो न प्रवता यतीः । अया धिया य उच्यते पतिर्दिवः ॥८ ॥

इन इन्द्रदेव के निमित्त की गई प्रार्थनाएँ उनके पास उसी तरह पहुँचती हैं, जिस प्रकार नदियों का जल नीचे की ओर बहता है । दिव्यलोक के स्वामी इन्द्रदेव इन प्रार्थनाओं से प्रसन्न होते हैं ॥८ ॥

६३२०. उतो पतिर्य उच्यते कृष्टीनामेक इद्वशी । नमोवृधैरवस्युभिः सुते रण ॥९ ॥

स्तुति (गुणगान) कर्त्ता साधकों को समृद्ध करने वाले तथा सुरक्षा की कामना करने वालों को अपने वश में करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप सभी मनुष्यों के एक मात्र पालक कहलाते हैं । आप सोमयज्ञ में हर्षित हों ॥९ ॥



६३२१. स्तुहि श्रुतं विपश्चितं हरी यस्य प्रसक्षिणा । गन्तारा दाशुषो गृहं नमस्विनः ॥१० ॥

हे याजको ! आप सब, ज्ञानी तथा यशस्वी इन्द्रदेव की प्रार्थना करें । रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव को उनके अश्व, स्तुतिकर्त्ता तथा दानी याजकों के घर ले जाते हैं ॥१० ॥

६३२२. तूतुजानो महेमतेऽश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः । आ याहि यज्ञमाशुभिः शमिद्धि ते ॥११ ॥

महान् बुद्धिमान हे इन्द्रदेव ! ओजस्वी रूप वाले तथा द्रुतगामी अश्वों वाले आप हमारे यज्ञ में शीघ्र पधारें । आपका आगमन सबके लिए हितकारक है ॥११ ॥

६३२३. इन्द्र शविष्ठ सत्पते रयिं गृणत्सु धारय । श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनम् ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप शक्तिशाली तथा सत्य के पालक हैं । आप प्रार्थना करने वालों को ऐश्वर्य तथा ज्ञानियों को अक्षय धन प्रदान करें ॥१२ ॥

६३२४. हवे त्वा सूर उदिते हवे मध्यन्दिने दिवः । जुषाण इन्द्र सप्तिभिर्न आ गहि ॥१३ ॥

हे इन्द्रदेव ! सूर्योदय तथा मध्याह्न के समय हम आपका आवाहन करते हैं । आप हमारी स्तुतियों को सुनकर अपने अश्वों के द्वारा हमारे निकट पधारें ॥१३ ॥

६३२५. आ तू गहि प्र तु द्रव मत्स्वा सुतस्य गोमतः । तन्तुं तनुष्व पूर्व्यं यथा विदे ॥१४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप यथा शीघ्र पधारें और गौ दुग्ध मिलाये हुए सोमरस को पीकर हर्षित हों । आप पहले की तरह ऐश्वर्य को प्रदान करने के लिए यज्ञ को विस्तृत करें ॥१४ ॥

६३२६. यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् । यद्वा समुद्रे अन्धसोऽवितेदसि ॥१५ ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप वृत्र का वध करने वाले हैं । आप चाहे दूर हों या पास में हों अथवा आकाश में हों, (यहाँ आकर) सोमरस का पान करके आप हमारे संरक्षक बनें ॥१५ ॥

६३२७. इन्द्रं वर्धन्तु नो गिर इन्द्रं सुतास इन्दवः । इन्द्रे हविष्मतीर्विशो अराणिषुः ॥१६ ॥

हमारी प्रार्थनाएँ उन इन्द्रदेव का गुणगान करती हैं तथा निचोड़कर तैयार किया गया सोमरस उनको समृद्ध करता है । यज्ञ करने वाले साधक इन्द्रदेव के प्रति साधनारत होते हैं ॥१६ ॥

६३२८. तमिद्विप्रा अवस्यवः प्रवत्वतीभिरूतिभिः । इन्द्रं क्षोणीरवर्धयन्वया इव ॥१७ ॥

सुरक्षा की कामना वाले मेधावीजन शीघ्रकर्मी, संरक्षक इन्द्रदेव का स्तवन करते हैं । पृथ्वी पर आश्रित सभी जीव इन्द्रदेव को शाखाओं की तरह समृद्ध करते हैं ॥१७ ॥

६३२९. त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत । तमिद्वर्धन्तु नो गिरः सदावृधम् ॥१८ ॥

देवताओं ने त्रिकद्रुक नामक (अथवा तीनों लोकों में सम्पन्न होने वाले) यज्ञ से महान् तथा चैतन्यता सम्पन्न इन्द्रदेव का गुणगान किया था । हमारी प्रार्थनाएँ भी उन्हें समृद्ध करें ॥१८ ॥

६३३०. स्तोता यत्ते अनुव्रत उक्थान्यृतुथा दधे । शुचिः पावक उच्यते सो अद्भुतः ॥१९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी प्रार्थना करने वाले याजकगण जब विभिन्न ऋतुओं के अनुसार स्तोत्रों के द्वारा आपका स्तवन करते हैं, तब वे पुनीत तथा पवित्र होते हैं ॥१९ ॥

६३३१. तदिद्रुद्रस्य चेतति यह्वं प्रत्नेषु धामसु । मनो यत्रा वि तद्दधुर्विचेतसः ॥२० ॥

विद्वान् पुरुष जिनके प्रति अपने मन को एकाग्र करते हैं, वे रुद्रपुत्र मरुत अपनी पुरातन स्थली में ही स्थित हैं ॥२० ॥



६३३२. **यदि मे सख्यामावर इमस्य पाह्यन्धसः । येन विश्वा अति द्विषो अतारिम ॥२१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! यदि आप हमें अपना सखा मानते हैं, तो इस सोमरस का पान करें । आपके अनुग्रह से हम समस्त शत्रुओं को परास्त कर सकें ॥२१ ॥

६३३३. **कदा त इन्द्र गिर्वणः स्तोता भवाति शन्तमः । कदा नो गव्ये अश्व्ये वसौ दधः ॥२२ ॥**

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! आप स्तुति करने वाले स्तोताओं को कब प्रसन्न करेंगे ? आप हमें गौओं, अश्वों आदि से युक्त ऐश्वर्य कब प्रदान करेंगे ? ॥२२ ॥

६३३४. **उत ते सुष्टुता हरी वृषणा वहतो रथम् । अजुर्यस्य मदिन्तमं यमीमहे ॥२३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप जरा रहित हैं । आप अत्यधिक हर्ष प्रदान करने वाले हैं । प्रशंसनीय अश्व तथा रथ आपको भली-भाँति हमारे समीप ले आएँ ॥२३ ॥

६३३५. **तमीमहे पुरुष्टुतं यह्वं प्रत्नाभिरूतिभिः । नि बर्हिषि प्रिये सददध द्विता ॥२४ ॥**

अनेकों द्वारा स्तुत्य तथा महान् इन्द्रदेव की हम पुरातन स्तोत्रों से वन्दना करते हैं । वे हमारे यज्ञ में पुनः-पुनः पधार कर आसन ग्रहण करें ॥२४ ॥

६३३६. **वर्धस्वा सु पुरुष्टुत ऋषिष्टुताभिरूतिभिः । धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च नः ॥२५ ॥**

हे बहुप्रशंसित इन्द्रदेव ! आपकी अनेक ऋषियों द्वारा स्तुति की जाती है । आप अपने रक्षण साधनों से हमें समृद्ध करें तथा पोषक अन्न प्रदान करें ॥२५ ॥

६३३७. **इन्द्र त्वमवितेदसीत्था स्तुवतो अद्रिवः । ऋतादियर्मि ते धियं मनोयुजम् ॥२६ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप प्रार्थना करने वालों के संरक्षक हैं । हम आपके मानस को पुलकित करने वाली प्रार्थनाएँ करते हैं ॥२६ ॥

६३३८. **इह त्या सधमाद्या युजानः सोमपीतये । हरी इन्द्र प्रतद्वसू अभि स्वर ॥२७ ॥**

हर्षित होने वाले तथा ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! अपने दोनों अश्वों को रथ में जोड़कर आप हमारे यज्ञ में सोमरस पीने के लिए पधारें ॥२७ ॥

६३३९. **अभि स्वरन्तु ये तव रुद्रासः सक्षत श्रियम् । उतो मरुत्वतीर्विशो अभि प्रयः ॥२८॥**

हे इन्द्रदेव ! आप मरुद्गणों के साथ यज्ञ में पधार कर हव्य को ग्रहण करें । मरुद्गणों की प्रजाएँ भी पधारें ॥२८ ॥

६३४०. **इमा अस्य प्रतूर्तयः पदं जुषन्त यद्दिवि । नाभा यज्ञस्य सं दधुर्यथा विदे ॥२९ ॥**

इन्द्रदेव की शत्रुनाशक मरुतादि प्रजाएँ दिव्यलोक में निवास करती हैं, वे (मरुद्गण) यज्ञ के नाभि स्थल पर हमें ऐश्वर्य प्रदान कराने हेतु एकत्रित होकर रहते हैं ॥२९ ॥

६३४१. **अयं दीर्घाय चक्षसे प्राचि प्रयत्यध्वरे । मिमीते यज्ञमानुषग्विचक्ष्य ॥३० ॥**

पूर्व दिशा में सूर्यदेव के निकलने पर याजकगण यज्ञ का शुभारम्भ करते हैं । वे यज्ञों की देखभाल करते हुए दूर दृष्टि प्राप्त करने के निमित्त इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं ॥३० ॥

६३४२. **वृषायमिन्द्र ते रथ उतो ते वृषणा हरी । वृषा त्वं शतक्रतो वृषा हवः ॥३१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके अश्व एवं रथ दोनों ही शक्तिशाली हैं । आप स्वयं भी सामर्थ्यवान् हैं । हे शतक्रतो ! आपके निमित्त की जाने वाली स्तुतियाँ कामनाओं की पूर्ति करने वाली हैं ॥३१ ॥



६३४३. **वृषा ग्रावा वृषा मदो वृषा सोमो अयं सुतः । वृषा यज्ञो यमिन्वसि वृषा हवः ॥३२**

सोम को पीसने वाला पाषाण, निचोड़कर अभिषुत किया हुआ सोमरस तथा उसको पान करने से मिलने वाला आनन्द ये सभी शक्ति प्रदायक हैं । हे इन्द्रदेव ! आप जिस यज्ञ में पधारते हैं, वह यज्ञ तथा आपके निमित्त कहे गये स्तोत्र कामनाओं को पूर्ण करने वाले होते हैं ॥३२ ॥

६३४४. **वृषा त्वा वृषणं हुवे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः । वावन्थ हि प्रतिष्टुतिं वृषा हवः ॥३३**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप इच्छाओं को पूर्ण करने वाले तथा विभिन्न प्रकार के रक्षा-साधनों से सम्पन्न हैं । स्तोताओं द्वारा की गई प्रार्थनाओं को आप स्वीकार करते हैं, इसलिए आपके स्तोत्र फलित होने वाले हैं ॥३३ ॥

[सूक्त - १४]

[**ऋषि-** गोषूक्ति, अश्व सूक्ति काण्वायन । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** गायत्री ।]

६३४५. **यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत् । स्तोता मे गोषखा स्यात् ॥१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आप समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं, वैसा ही यदि मैं बन जाऊँ, तो मेरे भी स्तोता (वाणी का धनी अथवा इन्द्रियों का मित्र) हो जाएँ ॥१ ॥

[अनियन्त्रित इन्द्रियाँ या वाणी शत्रु का कार्य करती हैं । वही नियन्त्रित होने पर मित्र बन जाती हैं । इन्द्र जैसी नियंत्रण क्षमता प्राप्त करके साधक भी यह लाभ पा सकते हैं ।]

६३४६. **शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे । यदहं गोपतिः स्याम् ॥२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! यदि मैं वाणी या इन्द्रियों का स्वामी बन जाऊँ, तो मनीषियों को दान देने वाला एवं उन्हें शिक्षा, सहायता देने वाला बनूँ ॥२ ॥

६३४७. **धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते । गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी स्तुतियाँ गौ-रूप धारण करती हैं । वे सोमयज्ञ करने वाले यजमानों को पोषित करती हुई, उनके लिए इच्छित पदार्थों को उपलब्ध कराती हैं ॥३ ॥

६३४८. **न ते वर्तास्ति राधस इन्द्र देवो न मर्त्यः । यद्दित्ससि स्तुतो मघम् ॥४ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जब आप स्तुत्य होकर याजक को धन प्रदान करना चाहते हैं, तब आपको धन देने से देवता या मानव कोई रोक नहीं सकता ॥४ ॥

६३४९. **यज्ञ इन्द्रमवर्धयद्यद्भूमिं व्यवर्तयत् । चक्राण ओपशं दिवि ॥५ ॥**

जब यज्ञ ने इन्द्रदेव (की शक्ति) को बढ़ाया (तो) इन्द्रदेव ने द्युलोक में आवास बनाकर भूमि का विस्तार किया॥५ ॥

[यज्ञ से प्रकृति की, देव शक्तियों के संयोजक इन्द्र की शक्ति बढ़ती है, तो द्युलोक में से दिव्यप्रवाह उमड़कर भूमि को समृद्ध बनाता है ।]

६३५०. **वावृधानस्य ते वयं विश्वा धनानि जिग्युषः । ऊतिमिन्द्रा वृणीमहे ॥६ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हम आपके उस दिव्य संरक्षण को प्राप्त करना चाहते हैं, जिससे हम समृद्ध हों तथा शत्रुओं के समस्त ऐश्वर्यों को जीत सकें ॥६ ॥

६३५१. **व्य१न्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना । इन्द्रो यदभिनद्वलम् ॥७ ॥**

सोमपान से उत्पन्न उमंग में जब इन्द्रदेव ने बलवान् मेघों को विदीर्ण किया, तो (प्रकारान्तर से) उन्होंने प्रकाशवान् आकाश का भी विस्तार किया ॥७ ॥



६३५२. उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन्गुहा सतीः । अर्वाञ्चं नुनुदे वलम् ॥८ ॥

सूर्यरूप हे इन्द्रदेव !आप गुफा में स्थित (अप्रकट) किरणों (गौओं) को प्रकट कर उन्हें देहधारियों (अंगिराओं) तक पहुँचाया । उन्हें रोके रखने वाला असुर (बल) नीचा मुँह करके पलायन कर गया ॥८ ॥

६३५३. इन्द्रेण रोचना दिवो दृळ्हानि दृंहितानि च । स्थिराणि न पराणुदे ॥९ ॥

अन्तरिक्ष में स्थित सभी प्रकाशवान् नक्षत्रों को इन्द्रदेव ने सुदृढ़ तथा समृद्ध किया । उन नक्षत्रों को कोई भी उनके स्थान से च्युत नहीं कर सकता ॥९ ॥

६३५४. अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते । वि ते मदा अराजिषुः ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार समुद्र की लहरें उछलती चलती हैं, उसी प्रकार आपके लिए की गई प्रार्थनाएँ शीघ्रता से पहुँचकर आपके उत्साह को बढ़ाती हैं ॥१० ॥

६३५५. त्वं हि स्तोमवर्धन इन्द्रास्युक्थवर्धनः । स्तोतॄणामुत भद्रकृत् ॥११ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तोत्रों तथा स्तुतियों से सन्तुष्ट, समृद्ध होते हैं । आप स्तुतिकर्त्ताओं के लिए हितकारी हैं ॥११ ॥

६३५६. इन्द्रमित्केशिना हरी सोमपेयाय वक्षतः । उप यज्ञं सुराधसम् ॥१२ ॥

बालों से युक्त दोनों अश्व, श्रेष्ठ ऐश्वर्य सम्पन्न इन्द्रदेव को सोम पीने के लिए यज्ञ मण्डप के समीप ले जाते हैं ॥१२ ॥

६३५७. अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः । विश्वा यदजयः स्पृधः ॥१३ ॥

सभी स्पर्धा करने वाले असुरों को पराजित करने के बाद इन्द्रदेव ने नमुचि (मुक्त न करने वाले असुर या आसुरी प्रवृत्ति) के सिर को अप (जल या प्राण प्रवाह) के फेन (उफान-शक्ति) से नष्ट कर दिया ॥१३ ॥

६३५८. मायाभिरुत्सिसृप्सत इन्द्र द्यामारुरुक्षतः । अव दस्यूँरधूनुथाः ॥१४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपनी माया के द्वारा सर्वत्र विद्यमान हैं । आपने द्युलोक में बढ़ने वाले दस्युओं (वृत्र, अहि आदि) को नीचे धकेल दिया ॥४ ॥

६३५९. असुन्वामिन्द्र संसदं विषूचीं व्यनाशयः । सोमपा उत्तरो भवन् ॥१५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमपान करने वाले तथा महान् हैं । सोमयज्ञ न करने वाले (स्वार्थी) मनुष्यों के संगठन को आपस में लड़ाकर, आपने विनष्ट कर दिया ॥१५ ॥

[सूक्त - १५]

[**ऋषि**- गोषूक्ति - अश्व सूक्ति काण्वायन । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - उष्णिक् ।]

६३६०. तम्वभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम् । इन्द्रं गीर्भिस्तविषमा विवासत ॥१ ॥

हे स्तोताओ ! अनेक यजमानों द्वारा स्तुतिपूर्वक आवाहन किये जाने वाले, प्रशंसा के योग्य उन महान् इन्द्रदेव की विभिन्न स्तोत्रों से स्तुति करो ॥१ ॥

६३६१. यस्य द्विबर्हसो बृहत्सहो दाधार रोदसी । गिरीँरज्राँ अपः स्वर्वृषत्वना ॥२ ॥

वे इन्द्रदेव अपनी शक्ति से शीघ्रगामी बादलों तथा गतिमान जल को धारण करते हैं । उनके महान् बल को द्युलोक और पृथ्वीलोक ग्रहण करते हैं ॥२ ॥

६३६२. स राजसि पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि जिघ्नसे । इन्द्र जैत्रा श्रवस्या च यन्तवे ॥३ ॥



बहुप्रशंसित हे इन्द्रदेव ! आप अपनी दिव्य कान्ति से आलोकित होते हैं । ऐश्वर्य तथा कीर्ति को प्राप्त करने के निमित्त आप अकेले ही वृत्रासुर का वध करते हैं ॥३ ॥

६३६३. तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृत्सु सासहिम् । उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ॥४ ॥

हे वज्रपाणि इन्द्रदेव ! शक्तिशाली, संग्राम में शत्रु को पराजित करने वाले, कल्याणकारक तथा अश्वों के लिए सेवनीय आपके उत्साह की हम प्रशंसा करते हैं ॥४ ॥

६३६४. येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ । मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपने दीर्घजीवी मनुष्य के हित के लिए ज्योतिर्मान् (सूर्यादि नक्षत्र) प्रकाशित किये हैं । आप इस यज्ञ वेदिका पर विराजमान होते हैं ॥५ ॥

६३६५. तदद्या चित्त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा । वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! सनातन स्तुतिकर्त्ता आज भी आपके बल की स्तुति करते हैं । पर्जन्य की वर्षा करने वाले जलों को आप प्रतिदिन मुक्त करें अर्थात् समयानुसार वर्षा करते रहें ॥६ ॥

६३६६. तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव शुष्ममुत क्रतुम् । वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! हमारी प्रार्थनाएँ आपके शौर्य, सामर्थ्य, कुशलता, पराक्रम और श्रेष्ठ वज्र को तेजस्वी बनाती हैं ॥७ ॥

६३६७. तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रवः । त्वामापः पर्वतासश्च हिन्विरे ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष से आपकी शक्ति-सामर्थ्य का और पृथ्वी से आपके यशस्वी स्वरूप का विस्तार होता है । जल प्रवाह और पर्वत (मेघ)आपको अपना अधिपति मानकर आपके पास पहुँचते हैं ॥८ ॥

६३६८. त्वां विष्णुर्बृहन् क्षयो मित्रो गृणाति वरुणः । त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! महान् आश्रयदाता मान करके विष्णु, मित्र और वरुणादि देवता आपका स्तुति गान करते हैं । मरुद्गणों के बल से आप हर्षित होते हैं ॥९ ॥

६३६९. त्वं वृषा जनानां मंहिष्ठ इन्द्र जज्ञिषे । सत्रा विश्वा स्वपत्यानि दधिषे ॥१० ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप देव समुदाय के मध्य सबसे महान् माने जाते हैं । आप श्रेष्ठ संतति सहित समस्त ऐश्वर्यों को धारण करते हैं ॥१० ॥

६३७०. सत्रा त्वं पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि तोशसे । नान्य इन्द्रात् करणं भूय इन्वति ॥११ ॥

हे बहु प्रशंसित इन्द्रदेव ! आप अकेले ही रिपुओं का वध कर देते हैं । आपके अतिरिक्त कोई दूसरा व्यक्ति ऐसे महान् कार्य को नहीं कर सकता ॥११ ॥

६३७१. यदिन्द्र मन्मशस्त्वा नाना हवन्त ऊतये । अस्माकेभिर्नृभिरत्रा स्वर्जय ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस समय अपनी सुरक्षा के निमित्त मनुष्य स्तुतियों द्वारा आपका आवाहन करते हैं, उस समय युद्धक्षेत्र में राजाओं के साथ रहकर हमारे निमित्त शत्रुओं को परास्त करें ॥१२ ॥

६३७२. अरं क्षयाय नो महे विश्वा रूपाण्याविशन् । इन्द्रं जैत्राय हर्षया शचीपतिम् ॥१३ ॥

हे याजको ! हमारी विजय के लिए तथा विशाल आवास के लिए आप समस्त रूपों (प्रकारों) से शक्तिशाली इन्द्रदेव को हर्षित करें ॥१३ ॥



[सूक्त - १६]

[**ऋषि-** इरिम्बिठि काण्व । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - गायत्री ।]

६३७३. **प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः । नरं नृषाहं मंहिष्ठम् ॥१ ॥**

हे स्तोताओ ! आप, मनुष्यों में भली प्रकार प्रतिष्ठा प्राप्त, स्तुति किये जाने योग्य, शत्रुजयी नेतृत्व क्षमता सम्पन्न, इन महान् इन्द्रदेव की स्तुति करें ॥१ ॥

६३७४. **यस्मिन्नुक्थानि रण्यन्ति विश्वानि च श्रवस्या । अपामवो न समुद्रे ॥२ ॥**

जिस प्रकार समुद्र के अन्दर जल तरंगों की शोभा दिखाई पड़ती है, उसी प्रकार समस्त स्तुतियों तथा कीर्तियों से इन्द्रदेव सुशोभित होते हैं ॥२ ॥

६३७५. **तं सुष्टुत्या विवासे ज्येष्ठराजं भरे कृत्नुम् । महो वाजिनं सनिभ्यः ॥३ ॥**

हम महान् धनों की प्राप्ति के लिए , रणक्षेत्र में महान् पुरुषार्थ करने वाले, शक्तिशाली, महान् शासक उन इन्द्रदेव की श्रेष्ठ वचनों द्वारा स्तुति करते हैं ॥३ ॥

६३७६. **यस्यानूना गभीरा मदा उरवस्तरुत्राः । हर्षुमन्तः शूरसातौ ॥४ ॥**

हे इन्द्रदेव । आपके पराक्रम की हम प्रशंसा करते हैं । आप अत्यन्त विशाल तथा श्रेष्ठ हैं । रणक्षेत्र में अत्यधिक उत्साहित होकर , आप रिपुओं का हनन करते हैं ॥४ ॥

६३७७. **तमिद्धनेषु हितेष्वधिवाकाय हवन्ते । येषामिन्द्रस्ते जयन्ति ॥५ ॥**

युद्ध प्रारम्भ हो जाने पर अपने पक्ष में लड़ने के लिए याजकगण इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, क्योंकि जिस पक्ष में इन्द्रदेव रहते हैं, विजयश्री उन्हीं को मिलती है ॥५ ॥

६३७८. **तमिच्च्यौत्नैरार्यन्ति तं कृतेभिश्चर्षणयः । एष इन्द्रो वरिवस्कृत् ॥६ ॥**

अपने महान् स्तोत्रों तथा कार्यों द्वारा मनुष्य उन इन्द्रदेव के अनुग्रह को प्राप्त कर सकते हैं । वे इन्द्रदेव ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं ॥६ ॥

६३७९. **इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरिन्द्रः पुरू पुरुहूतः । महान्महीभिः शचीभिः ॥७ ॥**

आत्मज्ञानी, ऋषि तुल्य तथा महान् इन्द्रदेव अपनी बृहत् शक्तियों के कारण अनेकों साधकों के द्वारा सहायता प्राप्ति के निमित्त आवाहित किये जाते हैं ॥७ ॥

६३८०. **स स्तोम्यः स हव्यः सत्यः सत्वा तुविकूर्मिः । एकश्चित्सन्नभिभूतिः ॥८ ॥**

प्रार्थनीय, आवाहनीय, अविनाशी तथा शक्तिशाली इन्द्रदेव अतिशीघ्र कार्य करते हैं, वे अकेले होने पर भी शत्रुओं को परास्त कर देते हैं ॥८ ॥

६३८१. **तमर्केभिस्तं सामभिस्तं गायत्रैश्चर्षणयः । इन्द्रं वर्धन्ति क्षितयः ॥९ ॥**

ऋचाओं, गाने योग्य स्तोत्रों तथा गायत्री छन्द आदि मंत्रों के द्वारा विद्वान् पुरुष उन इन्द्रदेव को समृद्ध करते हैं ॥९ ॥

६३८२. **प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु । सासह्वांसं युधामित्रान् ॥१० ॥**

धनवानों से ऐश्वर्य का दान कराने वाले, संग्राम में शौर्य दिखाने वाले तथा अपने अस्त्र-शस्त्रों द्वारा रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव की सभी मनुष्यों द्वारा प्रशंसा की जाती है ॥१० ॥



६३८३. स नः पप्रिः पारयाति स्वस्ति नावा पुरुहूतः । इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ॥११ ॥

मनुष्यों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाले इन्द्रदेव सबके द्वारा आवाहित किये जाते हैं । वे रक्षण-साधनों रूपी अपनी नाव के द्वारा समस्त रिपुओं से हमें पार लगा दें ॥११ ॥

६३८४. स त्वं न इन्द्र वाजेभिर्दशस्या च गातुया च । अच्छा च नः सुम्नं नेषि ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें शक्ति और धन-धान्य से परिपूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करें । श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित करते हुए हमें पूर्ण सुखी बनाएँ ॥१२ ॥

[सूक्त - १७]

[**ऋषि-** इरिम्बिठि काण्व । **देवता -** इन्द्र । **छन्द -** गायत्री, १४, १५ प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती]

६३८५. आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् । एदं बर्हिः सदो मम ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे इस यज्ञ में पधारें । तैयार किया गया सोमरस आपके लिए समर्पित है, उसका पान करके आप श्रेष्ठ आसन पर विराजमान हों ॥१ ॥

६३८६. आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना । उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! मंत्र सुनते ही (संकेत मात्र से)रथ में जुड़ जाने वाले श्रेष्ठ अश्वों के माध्यम से, आप निकट आकर हमारी प्रार्थनाओं पर ध्यान दें ॥२ ॥

६३८७. ब्रह्माणस्त्वा वयं युजा सोमपामिन्द्र सोमिनः । सुतावन्तो हवामहे ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम ब्रह्मनिष्ठ सोमयज्ञकर्ता साधक, सोमपान के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥३ ॥

६३८८. आ नो याहि सुतावतोऽस्माकं सुष्टुतीरुप । पिबा सु शिप्रिन्नन्धसः ॥४ ॥

श्रेष्ठ मुकुट धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! सोमयज्ञ करने वाले हम याजकगण, अपनी श्रेष्ठ प्रार्थनाओं के द्वारा आपको अपने निकट बुलाते हैं । अत: आप यहाँ आकर सोमरस का पान करें ॥४ ॥

६३८९. आ ते सिञ्चामि कुक्ष्योरनु गात्रा वि धावतु । गृभाय जिह्वया मधु ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके उदर को सोमरस से पूर्ण करते हैं । वह आपके सम्पूर्ण शरीर में संचरित हो और आप इस मीठे सोमरस को जीभ के द्वारा स्वादपूर्वक सेवन करें ॥५ ॥

६३९०. स्वादुष्टे अस्तु संसुदे मधुमान्तन्वे३तव । सोमः शमस्तु ते हृदे ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं, इसलिए मधु मिला हुआ सोमरस आपको सुस्वादिष्ट लगे । आपके शरीर और हृदय के लिये यह आनन्द उत्पन्न करने वाला हो ॥६ ॥

६३९१. अयमु त्वा विचर्षणे जनीरिवाभि संवृतः । प्र सोम इन्द्र सर्पतु ॥७ ॥

हे दूरदर्शी इन्द्रदेव ! जिस प्रकार श्वेत वस्त्र धारण करने वाली स्त्री सात्विकता की अभिव्यक्ति करती है, उसी प्रकार गौ दुग्ध में मिला हुआ सोमरस तेजयुक्त होकर आपको प्राप्त हो ॥७ ॥

६३९२. तुविग्रीवो वपोदरः सुबाहुरन्धसो मदे । इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते ॥८ ॥

सुन्दर ग्रीवा वाले, विशाल उदर वाले तथा सुदृढ़ भुजाओं वाले इन्द्रदेव, सोमरस पान से प्राप्त उत्साह द्वारा शत्रुओं का वध करते हैं ॥८ ॥

६३९३. इन्द्र प्रेहि पुरस्त्वं विश्वस्येशान ओजसा । वृत्राणि वृत्रहञ्जहि ॥९ ॥



हे जगत् पर शासन करने वाले ओजस्वी इन्द्रदेव ! आप अग्रणी होकर गमन करें । हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं का संहार करने वाले हैं ॥९ ॥

६३९४. दीर्घस्ते अस्त्वङ्कुशो येना वसु प्रयच्छसि । यजमानाय सुन्वते ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! आप जिसके द्वारा सोमयाग करने वाले याजकों को ऐश्वर्य अथवा आवास प्रदान करते हैं, आपका वह अंकुश (आयुध)अत्यधिक विशाल है ॥१० ॥

[अंकुश या आयुध के द्वारा धन या आवास प्रदान करना आलंकारिक उक्ति है । अंकुश से हाथी जैसे शक्तिशाली पशु को नियंत्रित-संचालित किया जाता है । इन्द्ररूप जीव चेतना द्वारा इन्द्रियादि को नियंत्रित करके विपुल वैभव प्रदान किये जाते हैं ।.

६३९५. अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि । एहीमस्य द्रवा पिब ॥११ ॥

हे इन्द्रदेव ! वेदिका पर सुशोभित, आसन पर स्थापित, शोधित सोमरस आपके लिए प्रस्तुत है । आप शीघ्र ही आकर पान करें ॥११ ॥

६३९६. शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः । आखण्डल प्र हूयसे ॥१२ ॥

शक्तिसम्पन्न, शत्रुनाशक, सामर्थ्यवान्, तेजस्वी हे पूज्य इन्द्रदेव ! आपके आनन्दवर्धन हेतु सोमरस तैयार किया गया है, (उसके पान हेतु) हम आपका आवाहन करते हैं ॥१२ ॥

६३९७. यस्ते शृङ्गवृषो नपात् प्रणपात्कुण्डपाय्यः । न्यस्मिन्दध्र आ मनः ॥१३ ॥

हे तेजस्वी इन्द्रदेव !आप सरलता से पान करने योग्य सोम के लिए इस कुण्डपायी यज्ञ की ओर उन्मुख हों ॥१३ ॥

[कुण्डपायी एक सोमयज्ञ था, जिसमें कुण्ड या बड़े पात्र से सोमपान का विधान था अथवा कुण्ड में ही सोमरस की आहुति प्रदान करने से यह कुण्डपायी यज्ञ कहा जाता था ।]

६३९८. वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांसत्रं सोम्यानाम् ।
द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥१४ ॥

हे गृहस्वामी ! घर के स्तम्भ मजबूत हों, सोमयज्ञ करने वाले याजकों को देहरक्षक शक्ति की प्राप्ति हो । राक्षसों की अनेक नगरियों को उजाड़ने वाले सोमपायी इन्द्रदेव मुनियों के सखा हों ॥१४ ॥

६३९९. पृदाकुसानुर्यजतो गवेषण एकः सन्नभि भूयसः ।
भूर्णिमश्वं नयत्तुजा पुरो गृभेन्द्रं सोमस्य पीतये ॥१५ ॥

विशाल सिर वाले, गौओं (किरणों)की खोज करने वाले पूजनीय इन्द्रदेव अकेले ही समस्त शत्रुओं को परास्त करते हैं । सर्वव्यापी तथा पालन-पोषण करने वाले इन्द्रदेव का सोमरस पान के लिए हम आवाहन करते हैं ॥१५ ॥

[सूक्त - १८]

[**ऋषि-** इरिम्बिठि काण्व । **देवता** - आदित्यगण, ८ अश्विनीकुमार, ९ अग्नि, सूर्य, अनिल । **छन्द** - उष्णिक्]

६४००. इदं ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । आदित्यानामपूर्व्यं सवीमनि ॥१ ॥

आदित्यों के नियंत्रण में चलने वाले मनुष्य निश्चित रूप से ऐसे समस्त सुखों को प्राप्त करते हैं, जिनकी प्राप्ति पहले नहीं हो सकी थी ॥१ ॥

६४०१. अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम् । अदब्धाः सन्ति पायवः सुगेवृधः ॥२ ॥

इन आदित्यों का मार्ग हिंसा और छल-छद्म से रहित है । उनका अनुसरण करने से सभी प्राणियों का भरण-पोषण होता है । वे जीवन में हर्षोल्लास की वृद्धि करने वाले हैं ॥२ ॥



६४०२. **तत्सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा । शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ॥३ ॥**

हम जिस सुख की कामना करते हैं, उस ऐश्वर्य को सविता, वरुण, मित्र, भग तथा अर्यमादेव हमें प्रदान करें ॥३ ॥

६४०३. **देवेभिर्देव्यदितेऽरिष्टभर्मन्ना गहि । स्मत्सूरिभिः पुरुप्रिये सुशर्मभिः ॥४ ॥**

श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न अहिंसा को पोषण प्रदान करने वाली, अनेकों की प्रिय हे अदिति देवि ! आप ज्ञानियों, देवताओं तथा श्रेष्ठ सुखों सहित हमारे निकट पधारें ॥४ ॥

६४०४. **ते हि पुत्रासो अदितेर्विदुर्द्वेषांसि योतवे । अंहोश्चिदुरुचक्रयोऽनेहसः ॥५ ॥**

महान् कार्य करने वाले तथा बुराइयों से दूर रहने वाले अदिति माँ के बेटे, द्वेष करने वाले रिपुओं तथा अत्याचारियों को निश्चितरूप से भगाना जानते हैं । वे हमें पापाचारों से मुक्त करना भी जानते हैं ॥५ ॥

६४०५. **अदितिर्नो दिवा पशुमदितिर्नक्तमद्वयाः । अदितिः पात्वंहसः सदावृधा ॥६ ॥**

माता अदिति हमारे पशुओं की सुरक्षा निरन्तर करें तथा अपने समस्त रक्षण-साधनों द्वारा हमें सम्पूर्ण बुराइयों से भी बचाएँ ॥६ ॥

६४०६. **उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्या गमत् । सा शन्ताति मयस्करदप स्रिधः ॥७ ॥**

हे देवों की माता अदिति ! पूर्ण रक्षा-साधनों सहित आप हमारे निकट पधारें । शत्रुओं का हनन करें और हमें सुख-शान्ति प्रदान करें ॥७ ॥

६४०७. **उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना । युयुयातामितो रपो अप स्रिधः ॥८ ॥**

देवताओं के चिकित्सक दोनों अश्विनीकुमार हमारे पापों और शत्रुओं को हमसे दूर करके हर्ष प्रदान करें ॥८ ॥

६४०८. **शमग्निरग्निभिः करच्छं नस्तपतु सूर्यः । शं वातो वात्वरपा अप स्रिधः ॥९ ॥**

अग्निदेव अपनी लपटों की उष्णता से, सूर्य अपने प्रखर प्रकाश से तथा वायु अपने दोषमुक्त प्रवाहों से हमारे शारीरिक शत्रुओं को विनष्ट करके हमें हर्ष प्रदान करें ॥९ ॥

६४०९. **अपामीवामप स्रिधमप सेधत दुर्मतिम् । आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥१० ॥**

हे आदित्यो ! (आप हमें) रोगों, शत्रुओं, पापों एवं दुर्बुद्धि के दुष्प्रभाव से दूर रखें ॥१० ॥

६४१०. **युयोता शरुमस्मदाँ आदित्यास उतामतिम् । ऋधग् द्वेषः कृणुत विश्ववेदसः ॥११॥**

हे आदित्यो ! आप हमारी दुर्बुद्धि तथा हमारे शत्रुओं को हमसे दूर भगाएँ । हे समस्त पदार्थों के ज्ञाता देवताओ ! आप द्वेष करने वाले लोगों को भी हमसे दूर भगाएँ ॥११ ॥

६४११. **तत्सु नः शर्म यच्छतादित्या यन्मुमोचति । एनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः ॥१२ ॥**

हे श्रेष्ठ दानी आदित्यो ! आप हमें ऐसा ज्ञान प्रदान करें, जो पापियों को भी दुष्कर्म करने से बचा देता है ॥१२॥

६४१२. **यो नः कश्चिद्रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्यः । स्वैः ष एवै रिरिषीष्ट युर्जनः ॥१३ ॥**

जो मनुष्य राक्षसी प्रवृत्ति धारण करके हमारी हत्या करने का प्रयत्न करें, वे हमसे दूर जाकर अपने दुष्कर्मों द्वारा स्वयं ही नष्ट हो जाएँ ॥१३ ॥

६४१३. **समित्तमघमश्नवद्दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् । यो अस्मत्रा दुर्हणावाँ उप द्वयुः ॥१४ ॥**

जो व्यक्ति हमसे कुटिलतापूर्ण व्यवहार करें, हमारी हत्या करने का प्रयत्न करें, वे पापी और शत्रु अपने पाप से ही नष्ट हो जाएँ ॥१४ ॥



६४१४. पाकत्रा स्थन देवा हृत्सु जानीथ मर्त्यम्। उप द्वयुं चाद्वयुं च वसवः ॥१५ ॥

सबका पालन करने वाले हे आदित्यगण ! छल करने वाले तथा छल रहित व्यक्तियों को आप अपने अन्तःकरण से पहचान लें तथा पवित्रता प्रिय व्यक्तियों के समीप ही विद्यमान रहें ॥१५ ॥

६४१५. आ शर्म पर्वतानामोतापां वृणीमहे। द्यावाक्षामारे अस्मद्रपस्कृतम् ॥१६ ॥

पर्वतों (मेघों) तथा जल के बीच विद्यमान सुख को प्राप्त करने की हम कामना करते हैं । हे द्यावा-पृथिवि ! आप हमारे पापों को हमसे दूर भगाएँ ॥१६ ॥

६४१६. ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा वसवः। अति विश्वानि दुरिता पिपर्तन ॥१७॥

सबको आवास प्रदान करने वाले हे आदित्यगण ! आप अपनी हितकारी तथा सुखप्रदायक (सत्कर्म रूपी) नौकाओं के द्वारा हमें समस्त बुराइयों से पार लगा दें ॥१७ ॥

६४१७. तुचे तनाय तत्सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे। आदित्यासः सुमहसः कृणोतन ॥१८॥

हे महान् आदित्यो ! हमारे पुत्र और पौत्रों को दीर्घायुष्य प्रदान करने की कृपा करें ॥१८ ॥

६४१८. यज्ञो हीळो वो अन्तर आदित्या अस्ति मृळत। युष्मे इद्वो अपि ष्मसि सजात्ये ॥१९ ॥

हे आदित्यो ! आप जिस यज्ञ में पधारने की इच्छा कर रहे हैं, वह आपके निकट ही सम्पन्न हो रहा है । आपकी मैत्री प्राप्त करके हम सदैव आपके होकर ही रहेंगे ॥१९ ॥

६४१९. बृहद्वरूथं मरुतां देवं त्रातारमश्विना। मित्रमीमहे वरुणं स्वस्तये ॥२० ॥

हम शीत, आतप आदि से मुक्त, कल्याणकारी आवास की कामना से मरुद्गणों के संरक्षक इन्द्रदेव, अश्विनी कुमारों, मित्र, वरुण तथा गृहपति वास्तोष्पतिदेव का आवाहन करते हैं ॥२० ॥

६४२०. अनेहो मित्रार्यमन्नृवद्वरुण शंस्यम्। त्रिवरूथं मरुतो यन्त नश्छर्दिः ॥२१ ॥

हे मित्र, अर्यमा, वरुण तथा महान् मरुद्गणो ! आप हमें शीत, आतप और वर्षा रहित तीन खण्डों वाला श्रेष्ठ आवास प्रदान करें ॥२१ ॥

६४२१. ये चिद्धि मृत्युबन्धव आदित्या मनवः स्मसि। प्र सू न आयुर्जीवसे तिरेतन ॥२२॥

हे आदित्यो ! जो मनुष्य मौत के मुख में जाने वाले हैं अर्थात् अल्पायु हैं, उनके लिए आप लम्बी आयु प्रदान करें ॥२२ ॥

[सूक्त - १९]

[**ऋषि-** सोभरि काण्व । **देवता** - अग्नि, ३४-३५ आदित्यगण, ३६-३७ त्रसदस्यु पौरुकुत्स्य । **छन्द** - १-२६ प्रगाथ (विषमा ककुप्, समासतोबृहती), २७ द्विपदा विराट्, २८-३३ प्रगाथ (समा ककुप्, विषमा सतोबृहती), ३४ उष्णिक्, ३५ सतोबृहती, ३६ ककुप्, ३७ पंक्ति]

६४२२. तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे। देवत्रा हव्यमोहिरे ॥१ ॥

हे स्तोताओ ! स्वर्गस्थ देवों के लिए हवि पहुँचाने वाले अग्निदेव की स्तुति करो । याजकगण स्तुति करते हैं और देवताओं को हव्य प्रदान करते हैं ॥१ ॥

६४२३. विभूतरातिं विप्र चित्रशोचिषमग्निमीळिष्व यन्तुरम्।
अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ॥२ ॥



हे ऋषियो ! यज्ञ की सफलता के लिए हम, प्रचुर वैभव प्रदान करने वाले, अतितेजस्वी, इस श्रेष्ठ सोमयज्ञ के नियामक, चिरन्तन अग्निदेव की वन्दना करते हैं ॥२ ॥

६४२४. यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् । अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥३ ॥

हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ याज्ञिक हैं । इस यज्ञ को भली प्रकार सम्पन्न करने वाले हैं । हम आपकी स्तुति करते हैं ॥३ ॥

६४२५. ऊर्जो नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निं श्रेष्ठशोचिषम् ।
स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ॥४ ॥

ऊर्जा का पतन न होने देने वाले, श्रेष्ठ ऐश्वर्य सम्पन्न, श्रेष्ठ दीप्ति एवं कान्तियुक्त अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं । वे इस देवयज्ञ में मित्र, वरुण एवं जल देवता की तुष्टि के लिए यजन कार्य सम्पन्न करें ॥४ ॥

[अग्निदेव यज्ञ से उत्पन्न ऊर्जा का पतन नहीं होने देते । वे ऊर्जा कणों को ऊर्ध्वगति देकर पर्यावरण चक्र को पुष्ट करते हुए पोषक रसों को संवर्धित करें, ऐसी प्रार्थना की गई है ।]

६४२६. यः समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्तो अग्नये । यो नमसा स्वध्वरः ॥५ ॥

हिंसा न करने वाले जो मानव अन्न, समिधा, हविष्य तथा ज्ञान के द्वारा अग्निदेव के निमित्त हवि प्रदान करते हैं; वे मनुष्य श्रेष्ठ सुखों से सम्पन्न हो जाते हैं ॥५ ॥

६४२७. तस्येदर्वन्तो रंहयन्त आशवस्तस्य द्युम्नितमं यशः ।
न तमंहो देवकृतं कुतश्चन न मर्त्यकृतं नशत् ॥६ ॥

अग्निदेव के निमित्त यज्ञ करने वाले साधक द्रुतगामी अश्वों के मालिक एवं उज्ज्वल कीर्ति वाले बन जाते हैं । प्रमादवश देवताओं तथा मनुष्यों के प्रति हुए (भूलों) पापों के कारण वे विनष्ट नहीं होते ॥६ ॥

६४२८. स्वग्नयो वो अग्निभिः स्याम सूनो सहस ऊर्जां पते । सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥७ ॥

शौर्य के पुत्र और बल के स्वामी हे अग्निदेव ! आपके गार्हपत्यादि स्वरूप के द्वारा हम श्रेष्ठ अग्नियों से सम्पन्न हों । आप हम मानवों को श्रेष्ठ पराक्रमी पुत्र प्रदान करें ॥७ ॥

६४२९. प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः ।
त्वे क्षेमासो अपि सन्ति साधवस्त्वं राजा रयीणाम् ॥८ ॥

हे अग्निदेव ! आप अतिथि के सदृश प्रशंसनीय, रथ के सदृश गमनीय तथा अपने सखाओं का कल्याण करने वाले हैं । आपके आश्रित रहने वाले उपासकों का सम्पूर्ण रूप से हित होता है । वे समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी बनते हैं ॥८ ॥

६४३०. सो अद्धा दाश्वध्वरोऽग्ने मर्तः सुभग स प्रशंस्यः । स धीभिरस्तु सनिता ॥९ ॥

हे अग्निदेव ! जो दानी व्यक्ति श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म करते हैं, वे सत्य के परिणाम को भी प्राप्त करें । श्रेष्ठ सम्पत्ति वाले हे अग्निदेव ! आप स्तुति के योग्य हैं । आप अपने श्रेष्ठ ज्ञान द्वारा हमारी सुरक्षा करें ॥९ ॥

६४३१. यस्य त्वमूर्ध्वो अध्वराय तिष्ठसि क्षयद्वीरः स साधते ।
सो अर्वद्भिः सनिता स विपन्युभिः स शूरैः सनिता कृतम् ॥१० ॥

हे अग्निदेव ! आप जिस याजक के यज्ञ में पधारने के लिए राजी होते हैं, वह पुरुष पराक्रमी सन्तानों, अश्वों तथा ज्ञान से सम्पन्न होकर अपने कार्यों को पूर्ण करता है । वह पराक्रमी जनों द्वारा पूजनीय होता है ॥१० ॥



६४३२. **यस्याग्निर्वपुर्गृहे स्तोमं चनो दधीत विश्ववार्यः । हव्या वा वेविषद्विषः ॥११ ॥**

समस्त मनुष्यों के वरणीय अग्निदेव जिस याजक के घर में स्तोत्र और हव्य ग्रहण करते हैं, वे हवियाँ देवों को प्राप्त होती हैं ॥११ ॥

६४३३. **विप्रस्य वा स्तुवतः सहसो यहो मक्षूतमस्य रातिषु ।**
अवोदेवमुपरिमर्त्यं कृधि वसो विविदुषो वचः ॥१२ ॥

पराक्रम के पुत्र तथा सभी का पालन करने वाले हे अग्निदेव ! हव्य प्रदान करने में फुर्तीले, कुशल तथा प्रार्थना करने वाले ज्ञानी मनुष्यों की प्रार्थनाओं को देवताओं के नीचे तथा मनुष्यों से ऊपर स्थापित करें (मनुष्यों के प्रयास देवोन्मुख बनें) ॥१२ ॥

६४३४. **यो अग्निं हव्यदातिभिर्नमोभिर्वा सुदक्षमाविवासति । गिरा वाजिरशोचिषम् ॥१३ ॥**

जो हवियों और स्तुतियों के द्वारा श्रेष्ठ अग्निदेव की उपासना करते हैं तथा जो अपने स्तुति वचनों के द्वारा उनकी सेवा करते हैं, वे याजक ऐश्वर्य आदि से सम्पन्न हो जाते हैं ॥१३ ॥

६४३५. **समिधा यो निशिती दाशददितिं धामभिरस्य मर्त्यः ।**
विश्वेत्स धीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्न इव तारिषत् ॥१४ ॥

जो साधक एकाग्रचित्त होकर भक्तिपूर्वक अखण्ड अग्निदेव की आराधना करते हैं, वे जल की भाँति ओज, बल तथा श्रेष्ठ कर्मों द्वारा सम्पूर्ण मनुष्यों से ऊँचे उठ जाते हैं ॥१४ ॥

[यज्ञ कुण्ड की अखण्ड अग्नि से नियमित यजन का भाव है । काया अथवा प्रकृति में सक्रिय अखण्ड ऊर्जा-प्रवाह की आराधना का भाव भी यहाँ ग्राह्य है ।]

६४३६. **तदग्ने द्युम्नमा भर यत्सासहत्सदने कं चिदत्रिणम् । मन्युं जनस्य दूढ्यः ॥१५ ॥**

हे अग्निदेव ! आप हमें प्रखर तेज प्रदान करें, जिससे यज्ञ में आने वाले दुष्टों (व्यक्तियों या प्रवृत्तियों) को नियन्त्रित किया जा सके और दुर्बुद्धिजन्य क्रोध को भी दूर किया जा सके ॥१५ ॥

६४३७. **येन चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा येन नासत्या भगः ।**
वयं तत्ते शवसा गातुवित्तमा इन्द्रत्वोता विधेमहि ॥१६ ॥

हे अग्निदेव ! आप अपने जिस प्रकाश से वरुण, मित्र और अर्यमा देव को आलोकित करते हैं, जिससे दोनों अश्विनीकुमारों और स्तुति करने योग्य इन्द्रदेव सहित अन्य देवगणों को आलोकित करते हैं, उसी प्रकाश से हमें भी सम्पन्न करके, शक्तिशाली बनाएँ ॥१६ ॥

६४३८. **ते घेदग्ने स्वाध्यो३ ये त्वा विप्र निदधिरे नृचक्षसम् । विप्रासो देव सुक्रतुम् ॥१७ ॥**

ज्ञानी तथा तेजस्वी हे अग्निदेव ! जो विद्वान् विप्र अपने समस्त कार्यों को सम्पादित करने वाले हैं तथा जो अपने हृदय स्थल में आपका ध्यान करते हैं, वे ही सबसे महान् होते हैं ॥१७ ॥

६४३९. **त इद्वेदिं सुभग त आहुतिं ते सोतुं चक्रिरे दिवि ।**
त इद्वाजेभिर्जिग्युर्महद्धनं ये त्वे कामं न्येरिरे ॥१८ ॥

श्रेष्ठ सम्पत्तिवान् हे अग्निदेव ! जो मनुष्य आपसे अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करवाना चाहते हैं, वे ही आपके निमित्त यज्ञ वेदिका तैयार करते हैं, हवि प्रदान करते हैं तथा दिव्य सोमरस निचोड़ते हैं । ऐसे श्रेष्ठ कर्म करने वाले वे याजक अपने शौर्य से प्रचुर ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं ॥१८ ॥



६४४०. भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः । भद्रा उत प्रशस्तयः ॥१९॥

हवियों से सन्तुष्ट हुए हे अग्निदेव ! आप हमारे लिए मंगलकारी हों । हे ऐश्वर्यशाली ! हमें कल्याणकारी धन प्राप्त हो और आपकी स्तुतियाँ हमारे लिए मंगलकारी हों ॥१९॥

६४४१. भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहः ।
अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टिभिः ॥२०॥

हे अग्ने !युद्ध में जिस मनोबल से आप रिपुओं को परास्त करते हैं, उसी मंगलकारी मनोबल को हमें भी प्रदान करें ।हम रिपुओं की सेनाओं को परास्त करके इच्छित सुखों से सम्पन्न होकर आपकी उपासना कर सकें ॥२०॥

६४४२. ईळे गिरा मनुर्हितं यं देवा दूतमरतिं न्येरिरे । यजिष्ठं हव्यवाहनम् ॥२१॥

सम्माननीय, हवियों के वाहक , देवताओं के सन्देशवाहक तथा सम्पत्तिवान् अग्निदेव को ज्ञानी पुरुष अपनी प्रार्थनाओं द्वारा प्रदीप्त करते हैं । मनुष्यों के हित साधक ऐसे अग्निदेव की हम वन्दना करते हैं ॥२१॥

६४४३. तिग्मजम्भाय तरुणाय राजते प्रयो गायस्यग्नये ।
यः पिंशते सूनृताभिः सुवीर्यमग्निर्घृतेभिराहुतः ॥२२॥

हे मनुष्यो ! जब आप तीव्र ज्वालाओं वाले आलोकवान् अग्निदेव की , हर्षित होकर स्तुति करते हैं, तब वे श्रेष्ठ प्रार्थनाओं तथा घी की हवियों को प्राप्त करके आपको उत्तम पराक्रम प्रदान करते हैं ॥२२॥

६४४४. यदी घृतेभिराहुतो वाशीमग्निर्भरत उच्चाव च । असुर इव निर्णिजम् ॥२३॥

घृत की हवियों को ग्रहण करके जब अग्निदेव द्यावा-पृथिवी को अपनी ध्वनि से भर देते हैं, तब वे महाप्रतापी सूर्य के सदृश अपने ओज को प्रदर्शित करते हैं ॥२३॥

६४४५. यो हव्यान्यैरयता मनुर्हितो देव आसा सुगन्धिना ।
विवासते वार्याणि स्वध्वरो होता देवो अमर्त्यः ॥२४॥

मनुष्यों का हित साधने वाले, महान् गुणों वाले, अपने मुख द्वारा आहुतियों को देवताओं के समीप पहुँचाने वाले, अहिंसित कार्यों को करने वाले, देवताओं का आवाहन करने वाले तथा अजर-अमर अग्निदेव हमें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करते हैं ॥२४॥

६४४६. यदग्ने मर्त्यस्त्वं स्यामहं मित्रमहो अमर्त्यः । सहसः सूनवाहुत ॥२५॥

शौर्य के पुत्रों द्वारा आहूत तथा सखा की तरह पूजनीय हे अग्निदेव ! आपकी साधना करके हम मरणधर्मा मनुष्य आपके सदृश अमरता प्राप्त करें ॥२५॥

६४४७. न त्वा रासीयाभिशस्तये वसो न पापत्वाय सन्त्य ।
न मे स्तोतामतीवा न दुर्हितः स्यादग्ने न पापया ॥२६॥

सबके पालक हे अग्निदेव ! हम किसी घातक दुष्कर्म के लिए आपकी प्रार्थना न करें । हमारे प्रशंसक तथा शत्रु दुर्बुद्धिग्रस्त न हों और अपने दुष्कर्म से हमें कष्ट न दें ॥२६॥

[यज्ञीय प्रयोग बुरे लक्ष्यों के लिये नहीं किये जाएँ । शत्रु एवं मित्र सभी दुर्बुद्धि से मुक्त एवं सद्बुद्धि से युक्त हों ।]

६४४८. पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्र णो हविः ॥२७॥

जैसे पिता पुत्र का पोषण करता है, उसी प्रकार मनुष्यों द्वारा अग्निदेव पोषण करने योग्य होते हैं । वे यज्ञ में प्रदान की हुई आहुतियों को ग्रहण करके देवताओं तक पहुँचाते हैं ॥२७॥



६४४९. **तवाहमग्न ऊतिभिर्नेदिष्ठाभिः सचेय जोषमा वसो । सदा देवस्य मर्त्यः ॥२८ ॥**

समस्त प्राणियों के पालक हे अग्निदेव ! आपके रक्षण-साधनों द्वारा संरक्षित होकर हम मरणधर्मा मनुष्य आपकी कृपा प्राप्त करें ॥२८ ॥

६४५०. **तव क्रत्वा सनेयं तव रातिभिरग्ने तव प्रशस्तिभिः ।**
त्वामिदाहुः प्रमतिं वसो ममाग्ने हर्षस्व दातवे ॥२९ ॥

हे अग्निदेव ! हम आपके श्रेष्ठ कर्मों, दानों तथा प्रशस्तियों से सम्पन्न बनें । विद्वानों के द्वारा आप श्रेष्ठ ज्ञानी कहे जाते हैं । हे अग्निदेव ! आप हमें अपनी कृपा का अनुदान देने के निमित्त हर्षित हों ॥२९ ॥

६४५१. **प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तिरते वाजभर्मभिः ।**
यस्य त्वं सख्यमावरः ॥३० ॥

हे अग्निदेव ! आप जिसके मित्र बनकर सहयोग करते हैं, वे स्तोतागण श्रेष्ठ सन्तान, अन्न-बल आदि समृद्धि प्रदायक आपके संरक्षण को प्राप्त करते हैं ॥३० ॥

६४५२. **तव द्रप्सो नीलवान्वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे ।**
त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥३१ ॥

हे सोम सिंचित अग्निदेव ! प्रवहमान शकट में स्थापित, कामना योग्य, प्रकाशित, तेजस्वी सोम आपके निमित्त प्राप्त किया जाता है । महान् उषाओं के प्रियरूप आप रात्रि में अधिक प्रकाशित होते हैं ॥३१ ॥

६४५३. **तमागन्म सोभरयः सहस्रमुष्कं स्वभिष्टिमवसे । सम्राजं त्रासदस्यवम् ॥३२ ॥**

अत्यधिक तेजस्वी, श्रेष्ठ रूप वाले तथा उत्कृष्ट इच्छाशक्ति वाले हे अग्निदेव ! आप त्रसदस्यु द्वारा प्रशंसित हों । हे अग्निदेव ! अपनी सुरक्षा के लिये हम आपको ग्रहण करें ॥३२ ॥

६४५४. **यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नय उपक्षितो वयाइव ।**
विपो न द्युम्ना नि युवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन् ॥३३ ॥

जिस प्रकार अन्य अग्नियाँ वृक्ष की शाखाओं के सदृश आपके द्वारा शक्ति प्राप्त करती हैं, उसी प्रकार हम भी सामर्थ्य तथा ऐश्वर्य से आपको समृद्ध करें और स्वयं भी सम्पत्ति तथा कीर्ति को प्राप्त करें ॥३३ ॥

६४५५. **यमादित्यासो अद्रुहः पारं नयथ मर्त्यम् । मघोनां विश्वेषां सुदानवः ॥३४ ॥**

द्रोहरहित तथा श्रेष्ठ दानी हे आदित्यो ! जिस मनुष्य पर आप प्रसन्न होते हैं, उसे समस्त विपत्तियों से पार लगा देते हैं तथा अपार धन प्रदान करते हैं ॥३४ ॥

६४५६. **यूयं राजानः कं चिच्चर्षणीसहः क्षयन्तं मानुषाँ अनु ।**
वयं ते वो वरुण मित्रार्यमन्त्स्यामेदृतस्य रथ्यः ॥३५ ॥

शत्रुओं का विनाश करने वाले हे आदित्यो ! जो मनुष्य का अहित करते हैं, आप उन्हें प्राणदण्ड दें । हे वरुण, मित्र और अर्यमा देवो ! आपके यज्ञ को हम सम्पादित करते हैं ॥३५ ॥

६४५७. **अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम् । मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः ॥३६ ॥**

पुरुकुत्स (आयुधों से युक्त) के बेटे त्रसदस्यु (दुष्टों के प्रतिरोधक) श्रेष्ठ दानी तथा प्रार्थना करने वालों की रक्षा करते हैं, उन्होंने मुझे पचास वधुएँ प्रदान कीं ॥३६ ॥



६४५८. **उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधि तुग्वनि।**
तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद्वसुर्दियानां पतिः ॥३७ ॥

इसके अलावा सुवास्ता (श्रेष्ठ आवास युक्त) नदी के तट पर, दो सौ दस गौओं तथा एक श्यामवर्ण वृषभ के स्वामी ने हमें धन एवं वस्त्रादि प्रदान किये ॥३७ ॥

[सूक्त - २०]

[**ऋषि-** सोभरि काण्व । **देवता** - मरुद्गण । **छन्द** - प्रगाथ (विषमा ककुप्, समासतोबृहती) ।]

६४५९. **आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो माप स्थाता समन्यवः। स्थिरा चिन्नमयिष्णवः॥१ ॥**

गतिशील मरुद्गण हमें हानि न पहुँचाते हुए हमारे निकट आएँ। हे मन्युयुक्त वीरो ! आप स्थिर तथा बलशाली शत्रुओं (पर्वतों) को भी झुकाने वाले हैं, आप हमसे कभी दूर न हों ॥१ ॥

६४६०. **वीळुपविभिर्मरुत ऋभुक्षण आ रुद्रासः सुदीतिभिः।**
इषा नो अद्या गता पुरुस्पृहो यज्ञमा सोभरीयवः ॥२ ॥

शत्रुओं को रुलाने वाले वज्रधारी हे वीर मरुतो ! आप अपने तेजोमय कठोर वज्रों सहित यहाँ पधारें । अनेकों द्वारा स्पृहणीय तथा सोभरि ऋषि पर कृपा दृष्टि रखने वाले हे वीरो ! आप हमारे यज्ञ में अन्न सहित पधारें ॥२ ॥

६४६१. **विद्मा हि रुद्रियाणां शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम्। विष्णोरेषस्य मीळ्हुषाम् ॥३ ॥**

समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले तथा उद्यमी रुद्र पुत्र मरुतों के उग्र पराक्रम का हमें ज्ञान है ॥३ ॥

६४६२. **वि द्वीपानि पापतन्तिष्ठद्दुच्छुनोभे युजन्त रोदसी।**
प्र धन्वान्यैरत शुभ्रखादयो यदेजथ स्वभानवः ॥४ ॥

श्वेत आभूषण धारण करने वाले हे तेजस्वी मरुद्गण ! जब आप रिपुओं पर चढ़ाई करने के लिए अत्यन्त वेग से चलते हैं, तब बड़े-बड़े द्वीप धराशायी होने लगते हैं, पेड़-पौधे संकटग्रस्त हो जाते हैं, आकाश-पृथ्वी काँपने लगते हैं तथा रेगिस्तान की बालू चारों ओर उड़ने लगती है ॥४ ॥

६४६३. **अच्युता चिद्वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः। भूमिर्यामेषु रेजते ॥५ ॥**

आपके धावा बोलते समय अपने स्थान पर स्थिर रहने वाले पर्वत तथा पेड़-पौधे चीत्कार करने लगते हैं। उसी प्रकार जब आप शत्रुओं की सेना पर चढ़ाई करते हैं, तब धरती भी प्रकम्पित हो जाती है ॥५ ॥

६४६४. **अमाय वो मरुतो यातवे द्यौर्जिहीत उत्तरा बृहत्।**
यत्रा नरो देदिशते तनूष्वा त्वक्षांसि बाह्वोजसः ॥६ ॥

हे मरुद्गण ! जब आप अपने पराक्रम से नायक के रूप में प्रतिष्ठित होकर, अपनी शक्तियों को इकट्ठा करके शत्रुदल पर प्रहार करते हैं, तब ऐसा लगता है कि आकाश भी अधिक व्यापक बनता जा रहा है ॥६ ॥

६४६५. **स्वधामनु श्रियं नरो महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः। वहन्ते अह्रुतप्सवः ॥७ ॥**

ये नायक मरुद्गण अत्यन्त तेजोमय, बलिष्ठ तथा सौम्य स्वभाव वाले हैं। ये अपनी कर्मठता और ग्रहण शक्ति द्वारा श्रेय-सौभाग्य को समृद्ध करते हैं ॥७ ॥

६४६६. **गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये।**
गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥८ ॥



सोभरि ऋषि के स्वर्णिम रथ के बीच गीतों के साथ मरुतों की वीणा बज रही है। सुजन्मा, गोबन्धु (गौओं के रक्षक अथवा किरणों के सहयोगी) अत्यन्त महिमावान् ये मरुद्गण हमें अन्न तथा भोग्य-पदार्थों को प्रदान करने के लिए यत्नशील हों ॥८ ॥

६४६७. प्रति वो वृषदञ्जयो वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम्। हव्या वृषप्रयाव्णे ॥९ ॥

आदरपूर्वक सोम प्रदान करने वाले हे याजको ! शक्तिशाली मरुद्गणों के सम्वर्धन के लिए आप उन्हें हविरूप अन्न प्रदान करें, जिससे वे बलवान् तथा द्रुतगामी बन सकें ॥९ ॥

६४६८. वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना।
आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरो हव्या नो वीतये गत ॥१० ॥

हे नायक मरुद्गणो ! शक्तिशाली अश्वों से सम्पन्न मजबूत रथों पर आरूढ़ होकर, आप श्येन पक्षी की तरह तेजगति से हमारे हविरूप अन्न को ग्रहण करने के लिए यज्ञस्थल में पधारें ॥१० ॥

६४६९. समानमञ्ज्येषां वि भ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु। दविद्युतत्यृष्टयः ॥११ ॥

उन मरुद्गणों की पोशाक एक जैसी है। गले में स्वर्णिम हार विभूषित है तथा भुजदण्डों पर तीक्ष्ण हथियार चमक रहे हैं ॥११ ॥

६४७०. त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वोऽनीकेष्वधि श्रियः ॥१२ ॥

ये मरुद्गण अत्यन्त विकराल तथा बलिष्ठ भुजाओं वाले हैं। (युद्ध में) ये अपने शरीर की रक्षा का यत्न नहीं करते। हे मरुद्गणो ! आपके रथों में सुदृढ़ धनुष तथा अन्य अस्त्र-शस्त्र विद्यमान रहते हैं, इसीलिए आप रणक्षेत्र में सदैव विजयी होते हैं ॥१२ ॥

६४७१. येषामर्णो न सप्रथो नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद्भुजे। वयो न पित्र्यं सहः ॥१३ ॥

ये अनेक मरुद्गण एक ही नाम वाले हैं; (किन्तु) पैतृक सम्पत्ति की तरह (सहज प्राप्त तथा निर्वाह में समर्थ) हैं। ये तेजस्वी तथा जल के समान प्रवहमान हैं ॥१३ ॥

६४७२. तान्वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि तेषां हि धुनीनाम्।
अराणां न चरमस्तदेषां दाना मह्ना तदेषाम् ॥१४ ॥

रिपुदल को प्रकम्पित करने वाले मरुद्गणों के बीच में कोई भेद-भाव नहीं है। आप उनकी वन्दना एवं स्तुति करें; क्योंकि उनके द्वारा दिया गया दान अत्यन्त महत्त्व रखता है ॥१४ ॥

६४७३. सुभगः स व ऊतिष्वास पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु। यो वा नूनमुतासति ॥१५ ॥

हे मरुद्गणो ! प्राचीन काल में जो उपासक आपके अनुयायी बनकर चले, वे आपके रक्षण-साधनों द्वारा संरक्षित होकर निश्चित रूप से सौभाग्यशाली बन गये ॥१५ ॥

६४७४. यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नर आ हव्या वीतये गथ।
अभि ष द्युम्नैरुत वाजसातिभिः सुम्ना वो धूतयो नशत् ॥१६ ॥

शत्रुओं को प्रकम्पित करने वाले नायक हे मरुद्गणो ! आप जिस ऐश्वर्यशाली याजक के हविष्यान्न का सेवन करने के लिए जाते हैं, वह आपकी उज्ज्वल कीर्ति को प्राप्त करके भली-भाँति सुखोपभोग करता है ॥१६ ॥

६४७५. यथा रुद्रस्य सूनवो दिवो वशन्त्यसुरस्य वेधसः। युवानस्तथेदसत् ॥१७ ॥



दूसरों की रक्षा के लिए अपने जीवन का बलिदान करने वाले, युवक वीर मरुद्गण जिस समय दिव्यलोक से पधारें, उस समय हमारा व्यवहार उनकी इच्छा के अनुकूल रहे ॥१७ ॥

६४७६. **ये चार्हन्ति मरुतः सुदानवः स्मन्मीळ्हुषश्चरन्ति ये।**
अतश्चिदा न उप वस्यसा हृदा युवान आ ववृध्वम् ॥१८ ॥

जिस प्रकार अन्य याजक श्रेष्ठदानी मरुतों की उपासना करते हैं तथा उनके अनुरूप व्यवहार करते हैं; हम भी उन्हीं याजकों के समान अनुकूल व्यवहार करते हैं । हे वीर मरुतो ! आप हमारे समीप पधारकर, उदारतापूर्वक हमें समृद्धि प्रदान करें ॥१८ ॥

६४७७. **यून ऊ षु नविष्ठया वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा। गाय गा इव चर्कृषत् ॥१९ ॥**

हे सोभरि ऋषे ! जिस प्रकार कृषक कृषि कार्य करते समय, अपने वृषभों को रिझाने के लिए गीत गाते हैं, उसी प्रकार आप उन शक्तिशाली, पवित्र तथा नव (युवक) वीर मरुतों के लिए नवीन स्तोत्रों का पाठ करें ॥१९ ॥

६४७८. **साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यो विश्वासु पृत्सु होतृषु।**
वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान् गिरा वन्दस्व मरुतो अह ॥२० ॥

शत्रुओं को चुनौती देकर उन पर मुष्टि प्रहार करने वाले सैनिकों की तरह (शत्रु के) आक्रमण को सहन करने वाले बलिष्ठ, यशस्वी तथा चन्द्रमा की तरह आह्लादक वे वीर मरुद्गण ही प्रशंसा के योग्य हैं । उत्तम स्तोत्रों से उनकी वन्दना करें ॥२० ॥

६४७९. **गावश्चिद्घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः। रिहते ककुभो मिथः ॥२१ ॥**

समान उमंगों से युक्त हे मरुतो ! गौएँ (किरणें) सजातीय होने के कारण विभिन्न दिशाओं में विचरण करती हुई परस्पर (एक दूसरे को) चाटती (स्नेहपूर्वक सहलाती) रहती हैं ॥२१ ॥

[विपरीत प्रकृति के प्रवाह एक दूसरे को बाधा पहुँचाते हैं तथा समान प्रकृति के प्रवाह एक दूसरे को स्नेहपूर्वक बल प्रदान करते हैं । यह प्रक्रिया विभिन्न ऊर्जा तरंगों के बीच भी चलती रहती है ।]

६४८०. **मर्तश्चिद्वो नृतवो रुक्मवक्षस उप भ्रातृत्वमायति।**
अधि नो गात मरुतः सदा हि व आपित्वमस्ति निध्रुवि ॥२२ ॥

नर्तन करने वाले तथा आभूषणों से सुशोभित हृदय-स्थल वाले हे मरुतो ! मनुष्य आपसे मित्रता की इच्छा करते हैं । आप भ्रातृत्व-भाव से हमारे साथ रहते हुए प्रमुदित हों ॥२२ ॥

६४८१. **मरुतो मारुतस्य न आ भेषजस्य वहता सुदानवः। यूयं सखायः सप्तयः ॥२३ ॥**

श्रेष्ठ दानी तथा मित्र रूप हे मरुतो ! आप सर्पणशील (चलने वाले) हैं; अतः पंक्तिबद्ध होकर चलते हुए हवाओं के द्वारा, दिव्य ओषधियाँ लेकर हमारे पास पधारें ॥२३ ॥

६४८२. **याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ याभिर्दशस्यथा क्रिविम्।**
मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः शिवाभिरसचद्विषः ॥२४ ॥

हर्ष प्रदायक हे मरुद्गणो ! जिन रक्षण शक्तियों के द्वारा आपने समुद्र को संरक्षित किया, जिनसे कूप (जल संग्रह स्थल) तैयार किये, जिनसे आपने शत्रुओं को नष्ट किया; उन्हीं शक्तियों के द्वारा हमें सुख प्रदान करें ॥२४ ॥

६४८३. **यत्सिन्धौ यदसिक्न्यां यत्समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः।**
यत्पर्वतेषु भेषजम् ॥२५ ॥



श्रेष्ठ तेजस्वी हे मरुतो ! सिन्धु नदी, असिक्नी, समुद्र तथा पहाड़ों पर जो ओषधियाँ विद्यमान हैं, उन सबकी जानकारी आपको है ॥२५ ॥

६४८४. विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत।
क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥२६ ॥

हे मरुद्गणो ! आप हमारे शरीर को बलिष्ठ बनाएँ, हममें से रोगी व्यक्तियों के रोगों को दूर करें तथा टूटे हुए अङ्गों को पुन: ठीक करें ॥२६ ॥

[सूक्त - २१]

[**ऋषि-** सोभरि काण्व । **देवता -** इन्द्र, १७-१८ चित्र । **छन्द -** प्रगाथ (विषमा ककुप्, समासतोबृहती) ।]

६४८५. वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः । वाजे चित्रं हवामहे ॥१ ॥

वज्रधारी, अनुपम हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सांसारिक गुण-सम्पन्न, शक्तिशाली मनुष्यों को लोग बुलाते हैं; उसी प्रकार अपनी रक्षा की कामना से विशिष्ट सोमरस द्वारा तृप्त करते हुए, हम आपकी स्तुति करते हैं ॥१ ॥

६४८६. उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत्।
त्वामिद्ध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम् ॥२ ॥

हे शत्रु संहारक देवेन्द्र ! कर्मशील रहते हुए हम अपनी सहायता के लिए तरुण और शूरवीर रूप में विद्यमान आपका ही आश्रय लेते हैं । मित्रवत् सहायता के लिए हम आपका स्मरण करते हैं ॥२ ॥

६४८७. आ याहीम इन्दवोऽश्वपते गोपत उर्वरापते । सोमं सोमपते पिब ॥३ ॥

अश्वों एवं गौओं के स्वामी, भूमिपालक, सोमरस का पान करने वाले हे इन्द्रदेव ! निचोड़े गये सोमरस को ग्रहण करने के लिए हम आपका आवाहन करते हैं ॥३ ॥

६४८८. वयं हि त्वा बन्धुमन्तमबन्धवो विप्रास इन्द्र येमिम।
या ते धामानि वृषभ तेभिरा गहि विश्वेभिः सोमपीतये ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं । हम बन्धुहीन विद्वान् ब्राह्मण आपको ही भाई के रूप में मानते हैं । आप अपने सम्पूर्ण ओज के साथ सोमरस का पान करने के लिए पधारें ॥४ ॥

६४८९. सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे । अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! निचोड़ने के बाद गो-दुग्ध मिश्रित, स्फूर्तिवर्धक तथा वाणी को शक्ति देने वाले सोमरस के निकट हम सभी पक्षियों के समान एकत्रित होकर आपको नमस्कार करते हैं ॥५ ॥

६४९०. अच्छा च त्वैना नमसा वदामसि किं मुहुश्चिद्वि दीधयः ।
सन्ति कामासो हरिवो ददिष्ट्वं स्मो वयं सन्ति नो धियः ॥६ ॥

हरित अश्व वाले हे इन्द्रदेव ! हम नमनपूर्वक आपकी महिमा का गान करते हैं । आप किस सोच-विचार में हैं ? हे अश्व (पराक्रम) युक्त इन्द्रदेव ! आप दाता हैं; हमारी कामनाएँ तथा हमारी बुद्धियाँ (नीयत या विचार) सब आपके सामने हैं ॥६ ॥

[ऋषि इस तथ्य को समझते हैं कि देवगण हीन कामनाओं तथा संकीर्ण बुद्धि की माँगें पूरी नहीं करते । उनकी सहायता पाने के लिए कामनाओं एवं बुद्धि को देवोन्मुख होना चाहिए । ऋषि इसी अधार पर इन्द्रदेव से कहते हैं कि हमारी कामनाओं एवं बुद्धियों को देखकर अनुदान प्रदान करें ।]



६४९१. **नूत्ना इदिन्द्र ते वयमूती अभूम नहि नू ते अद्रिवः । विद्मा पुरा परीणसः ॥७ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपके द्वारा संरक्षित रहकर, हम सदैव नवीन बने रहते हैं । आप सर्वव्यापी हैं, आपकी इस महानता को हम नहीं जानते थे, लेकिन अब ज्ञात हो गया है, अत: हम सब आपके द्वारा रक्षणीय हैं ॥७ ॥

६४९२. **विद्मा सखित्वमुत शूर भोज्य१मा ते ता वज्रिन्नीमहे ।**
उतो समस्मिन्ना शिशीहि नो वसो वाजे सुशिप्र गोमति ॥८ ॥

हे शूरवीर तथा वज्रधारी इन्द्रदेव ! हमें आपकी मित्रता और ऐश्वर्य के बारे में ज्ञान है, इसलिए हम उसकी कामना करते हैं । सबका पालन करने वाले तथा शोभन शिरस्त्राण धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौ आदि धनों से परिपूर्ण करें ॥८ ॥

६४९३. **यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु वः स्तुषे । सखाय इन्द्रमूतये ॥९ ॥**

हे मित्रो ! पूर्वकाल से ही जो, धन - वैभव प्रदान करने वाले हैं, उन इन्द्रदेव की हम आपके कल्याण के लिए स्तुति करते हैं ॥९ ॥

६४९४. **हर्यश्वं सत्पतिं चर्षणीसहं स हि ष्मा यो अमन्दत ।**
आ तु नः स वयति गव्यमश्व्यं स्तोतृभ्यो मघवा शतम् ॥१० ॥

जो साधक, हरि अश्वों वाले, भद्रजनों का पालन करने वाले तथा रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना करते हैं, जिससे वे प्रसन्न रहते हैं- ऐसे इन्द्रदेव हम स्तुतिकर्त्ताओं को सैकड़ों गौओं तथा अश्वों से भरपूर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१० ॥

६४९५. **त्वया ह स्विद्युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि । संस्थे जनस्य गोमतः ॥११ ॥**

वृषभ के समान बलशाली हे इन्द्रदेव ! गौ आदि उपकारी पशुओं के पालक के प्रति क्रोध व्यक्त करने वालों (असुरों) को हम, आपकी सहायता से उचित प्रत्युत्तर देकर दूर हटा दें ॥११ ॥

६४९६. **जयेम कारे पुरुहूत कारिणोऽभि तिष्ठेम दूढ्यः ।**
नृभिर्वृत्रं हन्याम शूशुयाम चावेरिन्द्र प्र णो धियः ॥१२ ॥

बहुतों द्वारा आहूत किये जाने वाले हे इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में हम, हिंसक तथा दुर्बुद्धिग्रस्त शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें । हम आपके सहयोग से वृत्र (हमारे व्यक्तित्व को घेरकर विकास में बाधा पहुँचाने वाली आसुरी माया) का वध करके आपकी कीर्ति फैलाएँ । हे इन्द्रदेव ! आप हमारी बुद्धि अथवा यज्ञादि कर्मों की सुरक्षा करें ॥१२ ॥

६४९७. **अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि । युधेदापित्वमिच्छसे ॥१३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप जन्म से ही भ्रातृ - संघर्ष से मुक्त हैं । आप पर शासन करने वाला कोई नहीं है और न ही सहायता करने वाला कोई बन्धु । आप युद्ध (जन संरक्षण) द्वारा अपने सहयोगियों (बन्धुओं) और भक्तों को पाने की कामना करते हैं ॥१३ ॥

६४९८. **नकी रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः ।**
यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित्पितेव हूयसे ॥१४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप (यज्ञ, दान आदि से रहित) धनाभिमानी को मित्र नहीं बनाते । सुरा पीकर मदान्ध (अमर्यादित लोग) आपको दु:ख देते हैं । ज्ञान एवं गुणसम्पन्नों को मित्र बनाकर आप उन्नति पथ पर चलाते हैं, जिससे आप पिता तुल्य सम्मान प्राप्त करते हैं ॥१४ ॥



६४९९. मा ते अमाजुरो यथा मूरास इन्द्र सख्ये त्वावतः । नि षदाम सचा सुते ॥१५ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपकी मित्रता का लाभ प्राप्त करके अपने गृह में पुत्र-पौत्रों के साथ रहते हुए समृद्धि को प्राप्त करें । सोम का अभिषव करते समय हम एकत्र होकर बैठें ॥१५ ॥

६५००. मा ते गोदत्र निरराम राधस इन्द्र मा ते गृहामहि ।
दृळ्हा चिदर्यः प्र मृशाभ्या भर न ते दामान आदभे ॥१६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप गौओं का अनुदान प्रदान करने वाले हैं । हम भी आपकी सम्पत्ति से वंचित न रहें । हमें आपके सिवा और किसी से सम्पत्ति न लेनी पड़े । आप हमें ऐसे ऐश्वर्य से परिपूर्ण करें, जिसे कोई छीन न सके ॥१६॥

[हमें दैवी सम्पत्ति इतनी मिल जाय कि उससे अपने लिए लौकिक सम्पत्ति भी प्राप्त कर सकें, वह सम्पत्ति हमें माँगनी न पड़े । दैवी सम्पत्ति को कोई छीन भी नहीं सकता ।]

६५०१. इन्द्रो वा घेदियन्मघं सरस्वती वा सुभगा ददिर्वसु । त्वं वा चित्र दाशुषे ॥१७ ॥

हे राजन् ! आहुति प्रदान करने वाले हम याजकों को इतनी सम्पत्ति क्या इन्द्रदेव ने प्रदान की ? या सम्पत्ति की स्वामिनी सरस्वती (वाणी या मन्त्र शक्ति) ने ? अथवा आपने ही यह प्रदान की है ? ॥१७ ॥

६५०२. चित्र इद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ।
पर्जन्यइव ततनद्धि वृष्ट्या सहस्रमयुता ददत् ॥१८ ॥

पर्जन्य जिस प्रकार सर्वत्र फैल जाता है, (उसी प्रकार) सरस्वती (नदी या बुद्धि की देवी) के अनुगामी चित्र (नामक या विशिष्ट) राजा (शासक अथवा प्रकाशवान्) ने अन्य राज्याश्रितों को हजारों - लाखों प्रकार के अनुदान प्रदान किए ॥१८ ॥

[बुद्धि के अनुगामी विशिष्ट प्राणों के द्वारा प्राण-प्रक्रिया के सहयोगी अनेकों अवयवों को हजारों-लाखों प्रकार के संचार-संस्कार प्रदान किये जाते हैं । विराट् प्रकृति के संदर्भ में भी यह तथ्य लागू होता है ।]

[सूक्त - २२]

[**ऋषि-** सोभरि काण्व । **देवता -** अश्विनी कुमार । **छन्द -** १-६ प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतोबृहती) , ७ बृहती, ८ अनुष्टुप् , ११ ककुप् , १२ मध्येज्योति (त्रिष्टुप्) ९-१०, १३ १८ प्रगाथ (विषमा ककुप् , समासतो बृहती) ।]

प्रस्तुत सूक्त के सम्बन्धित देवता द्वारा अपने अनुदान संप्रेषित करने का दिव्य तंत्र ही यहाँ 'रथ' शब्द का अभिप्राय है । स्थूल रथ के साथ मंत्रों के भावों की संगति सटीक नहीं बैठती -

६५०३. ओ त्यमह्व आ रथमद्या दंसिष्ठमूतये ।
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी आ सूर्यायै तस्थथुः ॥१ ॥

हे अश्विनीकुमारो !आप दर्शनीय रथ पर सूर्या (सूर्य से उत्पन्न उषा अथवा ऊर्जा) का वरण करने के निमित्त आरूढ़ हुए हैं, आपका वह रथ आवाहित करने योग्य है ।हम अपनी रक्षा के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥१ ॥

६५०४. पूर्वापुषं सुहवं पुरुस्पृहं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ।
सचनावन्तं सुमतिभिः सोभरे विद्वेषसमनेहसम् ॥२ ॥

अश्विनीकुमारों का रथ स्तुति करने वालों का पोषक तथा सरलतापूर्वक आवाहनीय है । सबके द्वारा वांछनीय यह रथ सबको पोषण प्रदान करता है तथा समर-भूमि में सबसे आगे रहता है । जिससे शत्रु भी



ईर्ष्या करते हैं, ऐसे श्रेष्ठ रथ की हे ऋषि सोभरे ! आप अपनी प्रार्थनाओं द्वारा प्रशंसा करें ॥२ ॥

६५०५. इह त्या पुरुभूतमा देवा नमोभिरश्विना ।
अर्वाचीना स्ववसे करामहे गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हविप्रदाता याजकों के घर जाते हैं । हम अपने यज्ञ के संरक्षण के लिए आपका नमनपूर्वक आवाहन करते हैं ॥३ ॥

६५०६. युवो रथस्य परि चक्रमीयत ईर्मान्यद्वामिषण्यति ।
अस्माँ अच्छा सुमतिर्वां शुभस्पती आ धेनुरिव धावतु ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपके रथ का एक पहिया द्युलोक में रहता है तथा दूसरा आपके पास विद्यमान रहता है । हे कल्याणकारी रसधाराओं के स्वामी ! आपकी बुद्धि गौओं की तरह (उपकारी प्रवृत्तियुक्त) है । वह हमारी ओर शीघ्रता से आए ॥४ ॥

[रथ दिव्य संप्रेषण तंत्र है । उसका एक चक्र (सर्किट) संचालक (अश्विनीकुमारों) के हाथ में रहता है, दूसरा चक्र (सर्किट) सभी जगह कार्यक्षेत्र में रहता है । वैज्ञानिक प्रयोगों में रेडियो तरंगों या विद्युत् संचार की प्रणाली के चक्र (सर्किट) भी इसी प्रकार कार्य करते हैं ।]

६५०७. रथो यो वां त्रिवन्धुरो हिरण्याभीशुरश्विना ।
परि द्यावापृथिवी भूषति श्रुतस्तेन नासत्या गतम् ॥५ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सत्य के पालक हैं । तीन प्रकार की गद्दी (संचालन के आसन) तथा चाबुक (प्रेरक तंत्र) से युक्त आपका सुप्रसिद्ध स्वर्णिम रथ, द्यावा-पृथिवी को विभूषित करता है । आपका वह रथ हमारे समीप पधारें ॥५ ॥

६५०८. दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः ।
ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि ॥६ ॥

कल्याण के स्वामी हे अश्विनीकुमारो ! आपने सर्वप्रथम दिव्यलोक में स्थित सम्पत्तियाँ मनु को प्रदान कीं, तत्पश्चात् 'हल' के द्वारा कृषिकर्म किया- ऐसे सुप्रसिद्ध आप दोनों की श्रेष्ठ स्तुतियों द्वारा हम प्रशंसा करते हैं ॥६ ॥

[आकाश से उत्पन्न मौसम (पर्जन्य) तथा पृथ्वी पर कृषिकर्म - इन्हीं दो के संयोग से भूमि पर उत्पादन का क्रम चलता है ।]

६५०९. उप नो वाजिनीवसू यातमृतस्य पथिभिः ।
येभिस्तृक्षिं वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः ॥७ ॥

ऐश्वर्यवान् तथा बलवान् हे अश्विनीकुमारो ! जिन यज्ञीय मार्गों द्वारा आप त्रसदस्यु-पुत्र तृक्षि को क्षत्रियों के अनुरूप महान् शौर्य प्रकट करने के लिए प्रेरणा देने जाते हैं, उन्हीं मार्गों द्वारा हमारे निकट पधारें ॥७ ॥

६५१०. अयं वामद्रिभिः सुतः सोमो नरा वृषण्वसू ।
आ यातं सोमपीतये पिबतं दाशुषो गृहे ॥८ ॥

ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! यह सोमरस पाषाण द्वारा कूटकर आप दोनों के लिए अभिषुत किया गया है । आहुति प्रदान करने वाले हम याजकों के आवास पर पधार कर, आप सोमरस का पान करें ॥८ ॥

६५११. आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू । युञ्जाथां पीवरीरिषः ॥९ ॥



धन की वर्षा करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आपका स्वर्णिम रथ आयुधों और पौष्टिक अन्नों के भण्डार से युक्त है। आप उस रथ पर आसीन हों ॥९ ॥

६५१२. **याभिः पक्थमवथो याभिरध्रिगुं याभिर्बभ्रुं विजोषसम्।**
ताभिर्नो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं यदातुरम् ॥१० ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपने जिन (सामर्थ्यों) से विशेषरूप से सेवा-सहायता करने वाले पक्थ (परिपक्व) अध्रिगु (दृढ़ता से धारण करने वाले) एवं बभ्रु (भरण-आपूर्ति करने वाले) को रक्षित-पोषित किया, उन्हीं सामर्थ्यों से आतुरों (पीड़ितों) को औषधि - उपचार द्वारा संरक्षण प्रदान करें ॥१० ॥

[पक्थ, अध्रिगु एवं बभ्रु नामक राजाओं की व्यक्तिवाचक संज्ञा के अतिरिक्त उनके भावार्थों की संगति अधिक सटीक बैठती है। प्रकृति एवं शरीर में अश्विनीकुमारों के द्वारा परिपक्व प्रवाहों (पक्थ), धारणकर्त्ता अवयवों (अध्रिगु) तथा भरणकर्त्ता (बभ्रु) तंत्रों की रक्षा की जाती है। जिनके उक्त तन्त्र व्यवस्थित नहीं हैं, उनके उपचार की कामना भी की गई है।]

६५१३. **यदध्रिगावो अध्रिगू इदा चिदह्नो अश्विना हवामहे। वयं गीर्भिर्विपन्यवः ॥११ ॥**

शीघ्रगामी हे अश्विनीकुमारो ! काम में बाधा आने पर आपको प्रातः कालीन स्तुति वचनों द्वारा हम आहूत करते हैं। अतः आप निश्चित रूप से पधारें ॥११ ॥

६५१४. **ताभिरा यातं वृषणोप मे हवं विश्वप्सुं विश्ववार्यम्।**
इषा मंहिष्ठा पुरुभूतमा नरा याभिः क्रिविं वावृधुस्ताभिरा गतम् ॥१२ ॥

दानी तथा शक्तिशाली नायक हे अश्विनीकुमारो ! आप सबके द्वारा स्वीकार करने योग्य हमारी समस्त स्तुतियों को सुनें; अपने उन सामर्थ्यों तथा ऐश्वर्यों से सम्पन्न होकर हमारे समीप पधारें और जलकुण्डों को जल से परिपूर्ण करें ॥१२ ॥

६५१५. **ताविदा चिदहानां तावश्विना वन्दमान उप ब्रुवे। ता ऊ नमोभिरीमहे ॥१३ ॥**

प्रातः काल दोनों अश्विनीकुमारों की हम वन्दना करते हैं। हम उनके निकट बैठकर स्तुति करते हुए उन्हीं की कामना करते हैं ॥१३ ॥

६५१६. **ताविद्दोषा ता उषसि शुभस्पती ता यामन्रुद्रवर्तनी।**
मा नो मर्ताय रिपवे वाजिनीवसू परो रुद्रावति ख्यतम् ॥१४ ॥

पालक तथा बलवान् हे अश्विनीकुमारो ! हम आपको प्रातः काल तथा रात्रि के समय बुलाते हैं। आप रणक्षेत्र में वीरों के मार्ग का अनुगमन करते हैं। बलों को पुष्ट करने वाले तथा धन-धान्य से सम्पन्न आप हमें शत्रुओं के अधीन न होने दें ॥१४ ॥

६५१७. **आ सुग्म्याय सुग्म्यं प्राता रथेनाश्विना वा सक्षणी। हुवे पितेव सोभरी ॥१५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार पिता अपने पुत्रों को पुकारता है, उसी प्रकार हम (सोभरि ऋषि) आपका आवाहन करते हैं। हम सुख प्राप्त करने के योग्य हैं। अतः आप प्रातः काल रथ पर आरूढ़ होकर हमें सुख प्रदान करने के लिए पधारें ॥१५ ॥

६५१८. **मनोजवसा वृषणा मदच्युता मक्षुङ्गमाभिरूतिभिः।**
आरात्ताच्चिद्भूतमस्मे अवसे पूर्वीभिः पुरुभोजसा ॥१६ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले, मन के समान द्रुतगति से चलने वाले तथा रिपुओं के अहंकार को नष्ट करने वाले हैं। आप अपने शीघ्रगामी रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर हमारे निकट निवास करें ॥१६ ॥



६५१९. आ नो अश्वावदश्विना वर्तिर्यासिष्टं मधुपातमा नरा। गोमद्दस्रा हिरण्यवत् ॥१७ ॥

मधुर सोमरस का पान करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप यज्ञीय मार्गों को अश्व, गौ, स्वर्ण आदि धनों से सम्पन्न बनाते हुए हमारे आवास (यज्ञस्थल) पर पधारें ॥१७ ॥

६५२०. सुप्रावर्गं सुवीर्यं सुष्ठु वार्यमनाधृष्टं रक्षस्विना।
अस्मिन्ना वामायाने वाजिनीवसू विश्वा वामानि धीमहि ॥१८ ॥

शक्तिशाली हे अश्विनीकुमारो ! आपके आने पर हम ऐसी सम्पत्ति प्राप्त करते हैं, जो श्रेष्ठ पराक्रम से सम्पन्न और सरलतापूर्वक देने योग्य है । बलवान् मनुष्य भी जिस पर आक्रमण नहीं कर सकते , वे भली प्रकार वरण करने योग्य हैं ॥१८ ॥

[सूक्त - २३]

[**ऋषि-** विश्वमना वैयश्व । **देवता** - अग्नि । **छन्द** - उष्णिक् ।]

६५२१. ईळिष्वा हि प्रतीव्यं१ यजस्व जातवेदसम्। चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम् ॥१ ॥

हे स्तोताओ ! आप शत्रुजयी, अदम्य तेजोयुक्त, सर्वव्यापी, धूम्र से सुशोभित, सर्वज्ञ अग्निदेव की अर्चना करो ॥१ ॥

६५२२. दामानं विश्वचर्षणेऽग्निं विश्वमनो गिरा। उत स्तुषे विष्पर्धसो रथानाम् ॥२ ॥

सम्पूर्ण जगत् को एक दृष्टि से देखने वाले हे ऋषि विश्वमना ! स्पर्धा करने वाले (प्रगति के लिए प्रयासरत) याजकों को रथादि (प्रगति के माध्यम) देने वाले अग्निदेव की, अपने स्तुति वचनों से प्रशंसा करें ॥२ ॥

६५२३. येषामाबाध ऋग्मिय इषः पृक्षश्च निग्रभे। उपविदा वह्निर्विन्दते वसु ॥३ ॥

प्रार्थनायोग्य अग्निदेव रिपुओं को दण्डित करने वाले हैं । वे जिस हविप्रदाता के हविष्यान्न और सोमरस को स्वीकार करते हैं, उसे ही ऐश्वर्य से सम्पन्न बनाते हैं ॥३ ॥

[मर्यादा के प्रतिकूल चलने वालों को अग्नि-ऊर्जा, विद्युत् आदि नष्ट कर देते हैं। जो उनके अनुशासन के अनुरूप चलते हैं, उन्हें बढ़ाते-विकसित करते हैं, वे ऐश्वर्य - सम्पन्न बनते हैं।]

६५२४. उदस्य शोचिरस्थाद्दीदियुषो व्य१जरम्। तपुर्जम्भस्य सुद्युतो गणश्रियः ॥४ ॥

आलोकवान् अग्निदेव रिपुओं को प्रताड़ित करते हैं । वे श्रेष्ठ तथा दर्शनीय तेज से सम्पन्न हैं । उनका अविनाशी प्रकाश ऊर्ध्वमुखी होकर प्रकट हो रहा है ॥४ ॥

६५२५. उदु तिष्ठ स्वध्वर स्तवानो देव्या कृपा। अभिख्या भासा बृहता शुशुक्वनिः ॥५ ॥

श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म करने वाले हे याजको ! आप उन अग्निदेव की साधना करके यशस्वी, तेजस्वी तथा महान् हों । उनकी प्रसन्नता को प्राप्त करके आप उन्नति करें ॥५ ॥

६५२६. अग्ने याहि सुशस्तिभिर्हव्या जुह्वान आनुषक्। यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ॥६ ॥

हे अग्ने ! आप देवताओं के निमित्त आहुतियों को वहन करने वाले हैं । आप श्रेष्ठ स्तुतियों तथा आहुतियों को प्राप्त करके, उन्हें देवताओं तक पहुँचाने के लिए प्रस्थान करें ॥६ ॥

६५२७. अग्निं वः पूर्व्यं हुवे होतारं चर्षणीनाम्। तमया वाचा गृणे तमु वः स्तुषे ॥७ ॥

हम याजक उन प्राचीनतम अग्निदेव की प्रार्थना करके उनको आवाहित करते हैं । आप सब लोगों को भी उनकी प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करते हैं ॥७ ॥



६५२८. **यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत्। मित्रं न जने सुधितमृतावनि ॥८ ॥**

सखा तुल्य, सबके हितैषी वे अग्निदेव, अत्यंत ज्ञानी हैं। जो साधक यजन करते हुए उन्हें घृताहुतियाँ समर्पित करते हैं, वे उनकी अनुकम्पा प्राप्त करके समृद्ध बनते हैं ॥८ ॥

६५२९. **ऋतावानमृतायवो यज्ञस्य साधनं गिरा। उपो एनं जुजुषुर्नमसस्पदे ॥९ ॥**

यज्ञ की आकांक्षा करने वाले हे साधको ! आप उन अग्निदेव का अपने स्तुति वचनों के द्वारा पूजन करें, जो नित्यज्ञान के देने वाले तथा यज्ञ के आधार रूप हैं ॥९ ॥

६५३०. **अच्छा नो अङ्गिरस्तमं यज्ञासो यन्तु संयतः।**
होता यो अस्ति विक्ष्वा यशस्तमः ॥१० ॥

जो अग्निदेव यज्ञ के सम्पादनकर्त्ता तथा कीर्तिवान् हैं, ऐसे श्रेष्ठ आंगिरस के लिए हमारे समस्त यज्ञादि कर्म समर्पित हैं ॥१० ॥

६५३१. **अग्ने तव त्ये अजरेन्धानासो बृहद्भाः। अश्वा इव वृषणस्तविषीयवः ॥११ ॥**

हे अविनाशी अग्निदेव ! जगत् को आलोकित करने वाली आपकी महान् किरणें अश्वों की भाँति अत्यन्त शक्तिशाली हैं। वे सबकी इच्छाओं की पूर्ति करने वाली हैं ॥११ ॥

६५३२. **स त्वं न ऊर्जां पते रयिं रास्व सुवीर्यम्। प्राव नस्तोके तनये समत्स्वा ॥१२ ॥**

बलों के स्वामी हे अग्ने ! आप हमें श्रेष्ठ बल से सम्पन्न, धन प्रदान करें। रणक्षेत्र में हमारे पुत्र-पौत्रों को भलीप्रकार से संरक्षित करें ॥१२ ॥

६५३३. **यद्वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशि।**
विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ॥१३ ॥

यजमानों के रक्षक, हविष्यान्न से प्रदीप्त होने वाले ये अग्निदेव प्रसन्न होकर, याजकों के यहाँ प्रतिष्ठित होते हैं। वे सभी दुष्ट-दुराचारियों का (अपने प्रभाव से) विनाश करते हैं ॥१३ ॥

६५३४. **श्रुष्ट्यग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते। नि मायिनस्तपुषा रक्षसो दह ॥१४ ॥**

हे प्रजापालक अग्ने ! हमारे इस नूतन स्तोत्र को सुनकर उत्साही हुए आप, छली और कपटी दुष्टों को अपने प्रखर तेज से भस्म कर दें ॥१४ ॥

६५३५. **न तस्य मायया चन रिपुरीशीत मर्त्यः। यो अग्नये ददाश हव्यदातिभिः ॥१५ ॥**

अग्निदव को हविष्यान्न की आहुति प्रदान करने वाले यजमान पर किसी भी दुष्ट की माया (छल-छद्म) का प्रभाव नहीं पड़ता ॥१५ ॥

६५३६. **व्यश्वस्त्वा वसुविदमुक्षण्युरप्रीणादृषिः। महो राये तमु त्वा समिधीमहि ॥१६ ॥**

हे अग्निदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से सम्पूर्ण जगत् का पालन करते हैं तथा सुख प्रदान करते हैं। व्यश्व ऋषि ने धन प्राप्त करने की इच्छा से आपको प्रसन्न किया था। हम भी प्रचुर धन प्राप्त करने के निमित्त आपको भली प्रकार प्रदीप्त करते हैं ॥१६ ॥

६५३७. **उशना काव्यस्त्वा नि होतारमसादयत्। आयजिं त्वा मनवे जातवेदसम् ॥१७ ॥**

हे अग्ने ! आप सम्पूर्ण जगत् के ज्ञाता तथा पूजन करने योग्य हैं। उशना ऋषि ने आपको याजक के रूप में मनु के घर में प्रतिष्ठित किया था ॥१७ ॥



६५३८. विश्वे हि त्वा सजोषसो देवासो दूतमक्रत । श्रुष्टी देव प्रथमो यज्ञियो भुवः ॥१८ ॥

हे अग्निदेव ! प्यार प्रेमपूर्वक निवास करने वाले देवगणों ने आपको अपना संदेशवाहक बनाया । आप अपने द्रुतगामी गुणों के कारण यज्ञ में सबसे पहले वन्दनीय हुए ॥१८ ॥

६५३९. इमं घा वीरो अमृतं दूतं कृण्वीत मर्त्यः । पावकं कृष्णवर्तनिं विहायसम् ॥१९ ॥

हे मनुष्यो !आप ऐसे अविनाशी अग्निदेव को अपना सन्देशवाहक बनायें, जो धूम्रमार्ग से गमन करते हैं ॥१९॥

६५४०. तं हुवेम यतस्रुचः सुभासं शुक्रशोचिषम् । विशामग्निमजरं प्रत्नमीड्यम् ॥२० ॥

वे अग्निदेव श्रेष्ठ, तेजस्वी और दिव्य आलोक से सम्पन्न हैं । वे अविनाशी तथा मनुष्यों द्वारा प्रार्थनीय हैं । हम उनका आवाहन करते हैं ॥२० ॥

६५४१. यो अस्मै हव्यदातिभिराहुतिं मर्तोऽविधत् । भूरि पोषं स धत्ते वीरवद्यशः ॥२१ ॥

जो याजक उन अग्निदेव को आहुतियाँ प्रदान करते हैं, वे अत्यन्त पौष्टिक अन्न तथा पराक्रमी सन्तान से सम्पन्न होकर कीर्ति प्राप्त करते हैं ॥२१ ॥

६५४२. प्रथमं जातवेदसमग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् । प्रति स्रुगेति नमसा हविष्मती ॥२२ ॥

वे अग्निदेव सम्पूर्ण जगत् के ज्ञाता, देवताओं में प्रमुख और सबसे प्राचीन हैं । यज्ञ में हव्य से परिपूर्ण स्रुक्-पात्र समर्पित करते हुए हम विनम्रतापूर्वक उनकी सेवा करते हैं ॥२२ ॥

६५४३. आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् । मंहिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्रशोचिषे ॥२३ ॥

अश्व के सदृश शक्तिशाली तथा ज्ञानयुक्त स्तोत्रों द्वारा हम उन तेजस्वी अग्निदेव की वन्दना करते हैं ॥२३ ॥

६५४४. नूनमर्च विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् । ऋषे वैयश्व दम्यायाग्नये ॥२४ ॥

हे विश्वमना (विश्व हित की कामना वाले) ऋषे ! आप स्थूरयूप (स्थूल, प्रत्यक्ष अथवा सुदृढ़ स्तंभयुक्त) ऋषि के सदृश ही अपनी स्तुतियों द्वारा रिपुओं के दमन कर्ता उन महान् अग्निदेव की उपासना करें ॥२४ ॥

[विश्वहित की कामना वाला मन विश्वमना, केवल कामना द्वारा हित साधन नहीं कर सकता, उसे स्थूल आधार चाहने वाले की ही तरह पूरी निष्ठा से यज्ञीय कर्मों का अनुष्ठान करना आवश्यक होता है ।]

६५४५. अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम् । विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीळते ॥२५ ॥

अपनी सुरक्षा के निमित्त हम लोग ज्ञानी, याजक, मनुष्यों के अतिथि, समिधाओं से उत्पन्न तथा अत्यन्त प्राचीन अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं ॥२५ ॥

६५४६. महो विश्वाँ अभिषतो३भि हव्यानि मानुषा । अग्ने नि षत्सि नमसाधि बर्हिषि ॥२६ ॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी शक्ति से सम्पूर्ण पदार्थों में विद्यमान रहते हैं । याजकों द्वारा प्रदान की हुई आहुतियों को ग्रहण करते हैं । आप, इस यज्ञ में स्तवनों द्वारा पूजे जाने के बाद विद्यमान रहते हैं ॥२६ ॥

६५४७. वंस्वा नो वार्या पुरु वंस्व रायः पुरुस्पृहः । सुवीर्यस्य प्रजावतो यशस्वतः ॥२७ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमें ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो अनेकों द्वारा वांछित और प्राप्त करने के योग्य हो । जो सन्तान, साहस, कीर्ति तथा अन्न आदि वैभव प्रदान करने वाली हो ॥२७ ॥

६५४८. त्वं वरो सुषाम्णेऽग्ने जनाय चोदय । सदा वसो रातिं यविष्ठ शश्वते ॥२८ ॥

हे शक्तिशाली अग्ने ! आप अनेकों द्वारा वरणीय तथा निवास प्रदान करने वाले हैं । आप स्तोताओं के कल्याण के लिए सदैव सम्पत्ति प्रदान करें ॥२८ ॥



६५४९. **त्वं हि सुप्रतूरसि त्वं नो गोमतीरिषः । महो रायः सातिमग्ने अपा वृधि ॥२९ ॥**

हे अग्निदेव ! आप ही श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करने वाले दाता हैं । आप हमें गौ-अन्न आदि से सम्पन्न प्रचुर धन-वैभव प्रदान करें ॥२९ ॥

६५५०. **अग्ने त्वं यशा अस्या मित्रावरुणा वह । ऋतावाना सम्राजा पूतदक्षसा ॥३० ॥**

हे अग्निदेव ! देवगणों के मध्य आप अत्यन्त कीर्तिमान् हैं । आप उन मित्र तथा वरुण देव को भी हमारे इस यज्ञ में ले आयें, जो अत्यन्त तेजयुक्त , शक्तिशाली तथा सत्य के पालक हैं ॥

[सूक्त - २४]

[**ऋषि-** विश्वमना वैयश्व । **देवता** - इन्द्र, २८-३० वरु सौषाम्णि । **छन्द** - उष्णिक् , ३० अनुष्टुप् ।]

६५५१. **सखाय आ शिषामहि ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे । स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥१ ॥**

हे मित्रो !स्तोत्रों से वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करते हुए हम उनसे आशीर्वाद की याचना करते हैं ।श्रेष्ठ वीर तथा शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव की, आप सभी के कल्याण के लिए हम स्तुति करते हैं ॥१ ॥

६५५२. **शवसा ह्यसि श्रुतो वृत्रहत्येन वृत्रहा । मघैर्मघोनो अति शूर दाशसि ॥२ ॥**

हे मित्र याजको ! वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त हम स्तुति पाठ करते हैं । आप भी उन रिपु-संहारक तथा महान् नायक इन्द्रदेव की भलीप्रकार से प्रार्थना करें ॥२ ॥

६५५३. **स नः स्तवान आ भर रयिं चित्रश्रवस्तमम् । निरेके चिद्यो हरिवो वसुर्ददिः ॥३ ॥**

अश्वों से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप हमारे द्वारा प्रशंसित होकर हमें प्राप्त करने योग्य तथा श्रेष्ठ कीर्तिदायक धन प्रदान करें । आप सम्पत्तिवानों को ही धन प्रदान करते हैं ॥३ ॥

६५५४. **आ निरेकमुत प्रियमिन्द्र दर्षि जनानाम् । धृषता धृष्णो स्तवमान आ भर ॥४ ॥**

हे रिपु-संहारक इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा स्तुति किये जाने पर आप हमें शक्ति से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान करें । रिपुओं का वैभव भी हमको ही प्रदान करें ॥४ ॥

६५५५. **न ते सव्यं न दक्षिणं हस्तं वरन्त आमुरः । न परिबाधो हरिवो गविष्टिषु ॥५ ॥**

अश्वों से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में लड़ाई करने वाले रिपु आपके दाहिने तथा बायें हाथ को नहीं रोक सकते । आपके कार्य में विघ्न पहुँचाने का प्रयास करने वाले भी आपका अनर्थ नहीं कर सकते ॥५ ॥

६५५६. **आ त्वा गोभिरिव व्रजं गीर्भिर्ऋणोम्यद्रिवः । आ स्मा कामं जरितुरा मनः पृण ॥६ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव !जिस प्रकार गोपालक गौओं के साथ गोशाला में प्रवेश करता है, उसी प्रकार हम अपनी प्रार्थनाओं के साथ आपके समीप पहुँचते हैं । आप हमारी मनोकामनाओं को पूर्ण करके हमें शान्ति प्रदान करें ॥६ ॥

६५५७. **विश्वानि विश्वमनसो धिया नो वृत्रहन्तम । उग्र प्रणेतरधि षू वसो गहि ॥७ ॥**

हे वृत्र-संहारक वीर इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ निवास प्रदान करने वाले हैं । आप विश्वमना ऋषि के समस्त कार्यों को विवेकपूर्वक सम्पन्न करें तथा अपनी समीपता प्रदान करें ॥७ ॥

६५५८. **वयं ते अस्य वृत्रहन्विद्याम शूर नव्यसः । वसोः स्पार्हस्य पुरुहूत राधसः ॥८ ॥**

हे वृत्रहन्ता पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप अनेकों लोगों द्वारा आहूत किये जाते हैं । आप हमें , मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला, सराहनीय तथा इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करें ॥८ ॥



६५५९. **इन्द्र यथा ह्यस्ति तेऽपरीतं नृतो शवः । अमृक्ता रातिः पुरुहूत दाशुषे ॥९ ॥**

हे श्रेष्ठ नायक इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपका अपरिमित बल रिपुओं द्वारा विनष्ट नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार बहुतों द्वारा आवाहनीय हे इन्द्रदेव ! दानी के लिए प्रदत्त आपका दान भी कभी नष्ट होने वाला नहीं है ॥९ ॥

६५६०. **आ वृषस्व महामह महे नृतम राधसे । दृळ्हश्चिद् दृह्य मघवन्मघत्तये ॥१० ॥**

हे धनवान् तथा उत्तम नायक इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त पूजनीय हैं । आप मधुर सोमरस पीकर तृप्त हों तथा हमें सम्पत्ति प्रदान करने के लिए रिपुओं की मजबूत पुरियों को विनष्ट करें ॥१० ॥

६५६१. **नू अन्यत्रा चिदद्रिवस्त्वन्नो जग्मुराशसः । मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिः ॥११ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप सम्पत्ति से सम्पन्न हैं । आपके पहले भी हमने अन्य देवगणों से अभिलाषाएँ की थीं । अब आप अपने रक्षण- साधनों से सम्पन्न होकर हमें सम्पत्ति प्रदान करें ॥११ ॥

६५६२. **नह्य१ङ्ग नृतो त्वदन्यं विन्दामि राधसे । राये द्युम्नाय शवसे च गिर्वणः ॥१२ ॥**

आत्मीय, नायक तथा प्रार्थना के योग्य हे इन्द्रदेव ! यश, सम्पत्ति तथा तेजोबल को प्राप्त करने के निमित्त हम आपके अतिरिक्त किसी अन्य देव को नहीं जानते ॥१२ ॥

६५६३. **एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु । प्र राधसा चोदयाते महित्वना ॥१३ ॥**

हे ऋत्विजो ! इन्द्रदेव के निमित्त वह सोमरस समर्पित करो, जिस मुधर सोमरस का पान करके वे अपने प्रभाव से याजकों को विपुल धन प्रदान करते हैं ॥१३ ॥

६५६४. **उपो हरीणां पतिं दक्षं पृञ्चन्तमब्रवम् । नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्व्यस्य ॥१४ ॥**

अश्वों के अधिपति, स्तोताओं के धनप्रदायक इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं । हे इन्द्रदेव ! स्तुति करते हुए अश्व्य (अश्व या पराक्रम युक्त ऋषि या साधक) के स्तोत्रों को आप निश्चित रूप से सुनें ॥१४ ॥

६५६५. **नह्य१ङ्ग पुरा चन जज्ञे वीरतरस्त्वत् । नकी राया नैवथा न भन्दना ॥१५ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपसे पहले आपके समान वीर, धनदाता, युद्ध में शत्रुओं को परास्त करने वाला तथा स्तुतियोग्य अन्य कोई देवता नहीं हुआ ॥१५ ॥

६५६६. **एदु मध्वो मदिन्तरं सिञ्च वाध्वर्यो अन्धसः । एवा हि वीरः स्तवते सदावृधः ॥१६॥**

हे ऋत्विग्गण ! मधुर सोमपान से आनन्दित होने वाले इन्द्रदेव को यह रस समर्पित करो । पराक्रमी और निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होने वाले इन्द्रदेव ही स्तोताओं द्वारा सर्वदा प्रशंसित होते हैं ॥१६ ॥

६५६७. **इन्द्र स्थातर्हरीणां नकिष्टे पूर्व्यस्तुतिम् । उदानंश शवसा न भन्दना ॥१७ ॥**

हे अश्वपति इन्द्रदेव ! ऋषि प्रणीत आपकी स्तुतियों को अपनी सामर्थ्य एवं तेजस्विता से अन्य कोई भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं अर्थात् आपके समान बलवान् एवं तेजस्वी कोई दूसरा नहीं ॥१७ ॥

६५६८. **तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः । अप्रायुभिर्यज्ञेभिर्वावृधेन्यम् ॥१८ ॥**

ऐश्वर्य की कामना से हम उन वैभवशाली इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, जो प्रमादरहित होकर याजकों के यज्ञों (सत्कर्मों) से वृद्धि को (पोषण को) प्राप्त करते हैं ॥१८ ॥

६५६९. **एतोन्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम् । कृष्टीर्योविश्वा अभ्यस्त्येक इत् ॥१९ ॥**

हे मित्रो ! शीघ्र आओ; हम उन स्तुत्य, नायक इन्द्रदेव की प्रार्थना करें, जो अकेले ही सभी शत्रुओं को परास्त करने में संक्षम हैं ॥१९ ॥



६५७०. **अगोरुधाय गविषे द्युक्षाय दस्म्यं वचः । घृतात्स्वादीयो मधुनश्च वोचत ॥२० ॥**

हे याजको ! गौ (गाय, वाणी अथवा इन्द्रियों) का वध न करके उसको संरक्षित करने वाले तेजस्-सम्पन्न इन्द्रदेव के निमित्त घृत से भी अधिक मधुर तथा सुस्वादयुक्त स्तुति वचनों का पाठ करें ॥२० ॥

६५७१. **यस्यामितानि वीर्या३ न राधः पर्येतवे । ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा ॥२१ ॥**

वे इन्द्रदेव असीम शौर्य से सम्पन्न हैं । उनकी सम्पत्ति को कोई प्राप्त नहीं कर सकता । उनका दान प्रकाश के समान सबके लिए उपलब्ध है ॥२१ ॥

६५७२. **स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मिं वाजिनं यमम् । अर्यो गयं मंहमानं वि दाशुषे ॥२२ ॥**

हे स्तोताओ ! वे इन्द्रदेव अहिंसित शक्ति - सम्पन्न तथा समस्त जगत् को नियमित करने वाले हैं । आप व्यश्व ऋषि के सदृश उनकी प्रार्थना करें । वे दानियों को सराहनीय ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥२२ ॥

६५७३. **एवा नूनमुप स्तुहि वैयश्व दशमं नवम् । सुविद्वान्सं चर्कृत्यं चरणीनाम् ॥२३ ॥**

हे विश्वमना ऋषे ! वे विद्वान् इन्द्रदेव मनुष्यों के अन्दर नौ प्राणों के अतिरिक्त दसवें प्राण (मुख्य प्राण) की तरह विद्यमान रहते हैं - ऐसे पूजनीय इन्द्रदेव की आप साधना करें ॥२३ ॥

६५७४. **वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम् । अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव ॥२४ ॥**

जिस प्रकार शोधनकर्त्ता (सूर्य, अग्नि आदि) सब ओर गतिशील (प्राणियों-पक्षियों) को जानते (उन्हें शुद्ध बनाते) हैं, उसी प्रकार हे वज्रपाणि (इन्द्रदेव) !आप निर्ऋतियों (राक्षसों-सभी लोकों) को नियंत्रित करना जानते हैं ॥२४ ॥

६५७५. **तदिन्द्राव आ भर येना दंसिष्ठ कृत्वने । द्विता कुत्साय शिश्नथो नि चोदय ॥२५॥**

हे इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त कर्मशील हैं । आप जिन रक्षण-साधनों के द्वारा सत्कर्म करने वालों को रक्षित करते हैं, जिनसे कुत्स ऋषि को रक्षित करने के लिए दो रिपुओं का वध किया था, उन्ही रक्षण-साधनों से आप हमें सुरक्षा प्रदान करें ॥२५ ॥

६५७६. **तमु त्वा नूनमीमहे नव्यं दंसिष्ठ सन्यसे । स त्वं नो विश्वा अभिमातीः सक्षणिः ॥२६ ॥**

हे श्रेष्ठ कर्मशील इन्द्रदेव ! ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए हम आपकी स्तुति करते हैं । आप हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें ॥२६ ॥

६५७७. **य ऋक्षादंहसो मुचद्यो वार्यात्सप्त सिन्धुषु । वधर्दासस्य तुविनृम्ण नीनमः ॥२७ ॥**

जिन्होंने अपने भक्तों को निशाचरों और दुष्कर्मों से मुक्त किया, जिन्होंने सातों सरिताओं में पानी प्रदान किया तथा जिन्होंने उन अत्याचारियों को नष्ट किया, जो मनुष्यों को गुलाम बनाते थे, ऐसे शक्तिशाली इन्द्रदेव को हम बारम्बार प्रणाम करते हैं ॥२७ ॥

६५७८. **यथा वरो सुषाम्णे सनिभ्य आवहो रयिम् । व्यश्वेभ्यः सुभगे वाजिनीवति ॥२८ ॥**

हे वरो (श्रेष्ठ पुरुषों अथवा राज वरु) ! जिस प्रकार आपने प्राचीन काल में 'सुषाम' नामक शासक को (पितृ लोक से) मुक्ति के लिए याचकों को धन प्रदान किया था, उसी प्रकार व्यश्व ऋषि को भी ऐश्वर्य प्रदान करें । हे उषा देवि ! आप अत्यन्त सौभाग्यवती तथा सम्पत्ति से सम्पन्न हैं । आप भी हमें यथोचित ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२८ ॥

६५७९. **आ नार्यस्य दक्षिणा व्यश्वाँ एतु सोमिनः । स्थूरं च राधः शतवत्सहस्रवत् ॥२९ ॥**

मनुष्यों के हितैषी, सोम युक्त (व्यक्तियों अथवा) वरु राजा द्वारा प्रदान किया हुआ दान, हम व्यश्व (विशेष अश्व-पराक्रम सम्पन्नों की) सन्तानों को मिले, सैकड़ों-हजारों संख्या वाले ऐश्वर्य भी हमारे समीप आएँ ॥२९ ॥



६५८०. **यत्त्वा पृच्छादीजानः कुहया कुहयाकृते ।**
एषो अपश्रितो वलो गोमतीमव तिष्ठति ॥३० ॥

माया को विनष्ट करने वाली हे उषा देवि ! यदि कोई आपसे पूछे कि 'वरु' राजा कहाँ निवास करते हैं ? तो आप उनके स्थान तथा रिपु-संहारक 'वरु' के विषय में कहना कि वे गोमती (नदी अथवा वाणी एवं इन्द्रियों से युक्त चेतना) के निकट निवास करते हैं ॥३० ॥

[श्रेष्ठ पुरुष सांसारिक भ्रमों-माया के साथ (प्रभाव में) नहीं, स्वयं को वाणी एवं इन्द्रियों के माध्यम से व्यक्त करने वाली आत्म चेतना के निकट (प्रभाव में) रहते हैं ।]

[सूक्त - २५]

[**ऋषि-** विश्वमना वैयश्व । **देवता** - मित्रावरुण, १०-१२ विश्वेदेवा । **छन्द** - उष्णिक् , २३ उष्णिग्गर्भा गायत्री ।]

६५८१. **ता वां विश्वस्य गोपा देवा देवेषु यज्ञिया । ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा ॥१ ॥**

हे मित्र और वरुणदेव ! आप समस्त जगत् के पालक और समस्त देवताओं के उपास्य हैं । आप यज्ञ के संरक्षक तथा पावन शक्ति से सम्पन्न हैं । हे याजको ! आप उन दोनों देवों की उपासना करें ॥१ ॥

६५८२. **मित्रा तना न रथ्या३ वरुणो यश्च सुक्रतुः । सनात्सुजाता तनया धृतव्रता ॥२ ॥**

सत्कर्म करने वाले मित्र और वरुणदेव अदिति माता के पुत्र हैं तथा व्रतों को धारण करने वाले हैं । वे अपने रथ के द्वारा सब जगह गमन करते हैं ॥२ ॥

६५८३. **ता माता विश्ववेदसासुर्याय प्रमहसा । मही जजानादितिर्ऋतावरी ॥३ ॥**

सत्यपालक तथा महान् अदिति माता ने राक्षसों का संहार करने के लिए मित्रावरुण को उत्पन्न किया । वे दोनों समस्त विश्व के ज्ञाता तथा महान् तेज से सम्पन्न हैं ॥३ ॥

६५८४. **महान्ता मित्रावरुणा सम्राजा देवावसुरा । ऋतावानावृतमा घोषतो बृहत् ॥४ ॥**

महान् मित्र और वरुणदेव अत्यन्त तेज तथा दिव्यगुणों से सम्पन्न हैं । वे जीवनीशक्ति प्रदान करने वाले और यज्ञ की रक्षा करने वाले हैं । वे यज्ञ को शोभा प्रदान करते हैं ॥४ ॥

६५८५. **नपाता शवसो महः सूनू दक्षस्य सुक्रतू । सृप्रदानू इषो वास्त्वधि क्षितः ॥५ ॥**

मित्र और वरुण देव श्रेष्ठ सामर्थ्य को पैदा करके उसकी रक्षा करते हैं । वे सत्कर्म करते हुए श्रेष्ठ दान करने वाले हैं । वे अन्न से सम्पन्न प्रदेश में निवास करने वाले हैं ॥५ ॥

६५८६. **सं या दानूनि येमथुर्दिव्याः पार्थिवीरिषः । नभस्वतीरा वां चरन्तु वृष्टयः ॥६ ॥**

हे मित्रावरुण ! आप दिव्यलोक तथा पृथ्वीलोक को धन-धान्य से परिपूर्ण कर देते हैं । अन्तरिक्ष से प्रवाहित होने वाली वर्षा आपके अधीन है ॥६ ॥

६५८७. **अधि या बृहतो दिवो३भि यूथेव पश्यतः । ऋतावाना सम्राजा नमसे हिता ॥७ ॥**

हे मित्रावरुणदेव !आप यज्ञ-पथ पर चलने वाले हैं ।आप तेज-सम्पन्न होकर द्युलोक से हमारा उसी प्रकार पालन करते हैं, जिस प्रकार गोपाल अपनी गौओं को भलीप्रकार देखता है ।आप विनम्र मनुष्यों के हितैषी हैं ॥७ ॥

६५८८. **ऋतावाना नि षेदतुः साम्राज्याय सुक्रतू । धृतव्रता क्षत्रिया क्षत्रमाशतुः ॥८ ॥**



वे मित्र और वरुणदेव सत्य का पालन तथा सत्कर्म करते हुए, कुशलता से शासन करके स्वयमेव सर्वोच्च स्थान पर विराजते हैं । वे अपने संकल्प का पालन करते हुए , विपत्ति से मनुष्यों को बचाकर उन्हें सामर्थ्य प्रदान करते हैं ॥८ ॥

६५८९. **अक्ष्णश्चिद्गातुवित्तरानुल्बणेन चक्षसा । नि चिन्मिषन्ता निचिरा नि चिक्यतुः ॥९ ॥**

नेत्रों की परिधि में आने से पूर्व ही स्पष्ट रूप से समस्त प्राणियों को जानने वाले, मित्रावरुण सबको प्रेरित करते हैं । वे अपने असहनीय तेज के कारण प्राचीन काल से ही सबके द्वारा पूजे जाते हैं ॥९ ॥

६५९०. **उत नो देव्यदितिरुरुष्यतां नासत्या । उरुष्यन्तु मरुतो वृद्धशवसः ॥१० ॥**

सत्य के पालक दोनों अश्विनीकुमार, माता अदिति तथा शक्ति से समृद्ध मरुद्गण हमारा संरक्षण करें ॥१० ॥

६५९१. **ते नो नावमुरुष्यत दिवा नक्तं सुदानवः । अरिष्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ॥११ ॥**

हे श्रेष्ठ दानी मरुतो ! आप नौका के सदृश रात-दिन हमारा संरक्षण करें । हम अहिंसित रहकर रक्षण-साधना से सम्पन्न हों ॥११ ॥

६५९२. **अघ्नते विष्णवे वयमरिष्यन्तः सुदानवे । श्रुधि स्वयावन्त्सिन्धो पूर्वचित्तये ॥१२ ॥**

हिंसा न करते हुए हम श्रेष्ठदानी विष्णुदेव को आहुति प्रदान करते हैं । हे स्वप्रवाहित सिन्धो ! हमारी कामनाओं को समझने के लिए आप हमारी विनती को सुनें ॥१२ ॥

६५९३. **तद्वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् । मित्रो यत्पान्ति वरुणो यदर्यमा ॥१३ ॥**

जिस ऐश्वर्य का संरक्षण मित्र, वरुण और अर्यमादेव करते हैं, उस सर्वश्रेष्ठ तथा वरणीय ऐश्वर्य की हम आपसे याचना करते हैं ॥१३ ॥

६५९४. **उत नः सिन्धुरपां तन्मरुतस्तदश्विना । इन्द्रो विष्णुर्मीढ्वांसः सजोषसः ॥१४ ॥**

हमारी सम्पत्ति का संरक्षण जलयुक्त सरिताएँ, मरुद्गण तथा दोनों अश्विनीकुमार करें । इसके अतिरिक्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले तथा एक साथ निवास करने वाले देवगण भी हमारे ऐश्वर्य को संरक्षित करें ॥१४ ॥

६५९५. **ते हि ष्मा वनुषो नरोऽभिमातिं कयस्य चित् । तिग्मं न क्षोदः प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः ॥१५ ॥**

जिस प्रकार पानी की तेज धार पेड़ों को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार सम्मानीय तथा द्रुतगामी नायक (मित्रावरुण) रिपुओं के अहंकार को नष्ट कर देते हैं ॥१५ ॥

६५९६. **अयमेक इत्था पुरूरु चष्टे वि विश्पतिः । तस्य व्रतान्यनु वश्चरामसि ॥१६ ॥**

मित्र और वरुण दोनों में से एक देव, मित्र समस्त जगत् का पोषण तथा देखभाल करते हैं । हे याजको ! अपने हित के लिए हम उनके नियमों पर चलते हैं ॥१६ ॥

६५९७. **अनु पूर्वाण्योक्या साम्राज्यस्य सश्चिम । मित्रस्य व्रता वरुणस्य दीर्घश्रुत् ॥१७ ॥**

हम सम्पूर्ण जगत् का कल्याण करने वाले सम्राट् वरुणदेव के व्रतों का पालन करते हैं तथा मित्र देवता के भी व्रतों का पालन करते हैं ॥१७ ॥

६५९८. **परि यो रश्मिना दिवोऽन्तान्ममे पृथिव्याः । उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ॥१८ ॥**

मित्र देवता ने अपनी किरणों से दिव्यलोक तथा पृथिवीलोक को व्याप्त किया । वे और वरुणदेव ने दोनों लोकों को अपनी महिमा के द्वारा पूर्ण किया ॥१८ ॥

६५९९. **उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयंस्त सूर्यः । अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः ॥१९ ॥**



जब मित्र और वरुणदेव सूर्यदेव के स्थान पर अपना दिव्य प्रकाश प्रकट करते हैं, तब वे अग्निदेव के सदृश तेज-सम्पन्न होकर सभी लोगों द्वारा आहूत किये जाते हैं ॥१९ ॥

६६००. वचो दीर्घप्रसद्मनीशे वाजस्य गोमतः । ईशे हि पित्वोऽविषस्य दावने ॥२० ॥

हे याजको ! आप इस विशाल यज्ञ में स्तोत्रों का पाठ करें । वे मित्र देवता, गौ से सम्पन्न अन्न के अधिष्ठाता हैं । वे ही दोषरहित अन्न को हमें प्रदान करने में समर्थ हैं ॥२० ॥

६६०१. तत्सूर्यं रोदसी उभे दोषा वस्तोरुप ब्रुवे । भोजेष्वस्माँ अभ्युच्चरा सदा ॥२१ ॥

हम उन सूर्यदेव तथा दोनों (द्यु और पृथिवी) लोकों की प्रार्थना करते हैं । हे वरुणदेव ! आप हमें भोज्य पदार्थ प्रदान करने के लिए सदैव हमारे निकट पधारें ॥२१ ॥

६६०२. ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे । रथं युक्तमसनाम सुषामणि ॥२२ ॥

'उक्ष' वंशीय शासक 'सुषाम' के पुत्र 'वरु' नामक राजा ने हमें द्रुतगामी अश्व तथा सोने-चाँदी से विभूषित रथ प्रदान किया । वह रथ रिपुओं की आयु हरने में सक्षम है ॥२२ ॥

६६०३. ता मे अश्व्यानां हरीणां नितोशना । उतो नु कृत्व्यानां नृवाहसा ॥२३ ॥

हमें अश्वों से, रिपुओं का संहार करने वाले तथा नायकों का वहन करने वाले दो द्रुतगामी घोड़े प्राप्त हुए ॥२३॥

[अश्व (पराक्रम अथवा शक्ति) के दो रूप हैं, एक बाधाओं-शत्रुओं का निवारक तथा दूसरा लक्ष्य की ओर द्रुत गति से ले जाने वाला ।]

६६०४. स्मदभीशू कशावन्ता विप्रा नविष्ठया मती । महो वाजिनावर्वन्ता सचासनम् ॥२४ ॥

श्रेष्ठ लगाम तथा चाबुक वाले, ज्ञान - सम्पन्न दो द्रुतगामी अश्वों (पराक्रमों) को हमने अभिनव प्रार्थनाओं के द्वारा एक साथ प्राप्त किया ॥२४ ॥

[देवशक्तियों से प्रार्थना करने पर उक्त दो प्रकार के पराक्रम तो प्राप्त होते ही हैं, उन्हें नियंत्रित रखने की (लगाम जैसी) शक्ति तथा प्रेरित करने की (चाबुक) जैसी क्षमता भी साथ ही साथ प्राप्त होती है ।]

[सूक्त - २६]

[**ऋषि-** विश्वमना वैयश्व अथवा व्यश्व आङ्गिरस । **देवता** - अश्विनीकुमार,२०-२५ वायु । **छन्द** - उष्णिक्, १६-१९, २१, २५ गायत्री, २० अनुष्टुप् ।]

६६०५. युवोरु षू रथं हुवे सधस्तुत्याय सूरिषु । अतूर्तदक्षा वृषणा वृषण्वसू ॥१ ॥

बलशाली, सुख या धन वर्षक, अनश्वर बलों के धारक हे अश्विनीकुमारो ! ज्ञानियों के बीच संयुक्त रूप से स्तुति के लिए हम आपके रथ (संचार के साधन) का आवाहन करते हैं ॥१ ॥

६६०६. युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्या । अवोभिर्याथो वृषणा वृषण्वसू ॥२ ॥

सत्य के पालक, शक्तिशाली हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं । जिस प्रकार आप 'सुषाम' (नरेश या निष्पक्ष दानी) को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए पधारते थे, उसी प्रकार हमारे लिए भी रक्षण-साधनों सहित आगमन करें । हे वरु (नरेश या श्रेष्ठ साधक) ! आप ऐसी स्तुति करें ॥२ ॥

६६०७. ता वामद्य हवामहे हव्येभिर्वाजिनीवसू । पूर्वीरिष इषयन्तावति क्षपः ॥३ ॥

शक्ति- सम्पन्न, ऐश्वर्यवान् हे अश्विनीकुमारो ! प्रातः काल, प्रचुर धन-धान्य की प्राप्ति के लिए हम आपका आवाहन करते हुए, आपको आहुतियाँ समर्पित करते हैं ॥३ ॥



६६०८. आ वां वाहिष्ठो अश्विना रथो यातु श्रुतो नरा । उप स्तोमान्तुरस्य दर्शथः श्रिये ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! सर्वत्र भ्रमण करने वाला आपका प्रसिद्ध रथ इधर भी पधारे । आप स्तुति करने वालों को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए उनकी प्रार्थना को सुनें ॥४ ॥

६६०९. जुहुराणा चिदश्विना मन्येथां वृषण्वसू । युवं हि रुद्रा पर्षथो अति द्विषः ॥५ ॥

हे धनवर्षक अश्विनीकुमारो ! आप दोनों शत्रुओं को पीड़ित करने वाले हैं । आप दोनों ईर्ष्या करने वाले शत्रुओं को नष्ट करके आगे बढ़ जाते हैं ॥५ ॥

६६१०. दस्रा हि विश्वमानुषङ्मक्षूभिः परिदीयथः । धियञ्जिन्वा मधुवर्णा शुभस्पती ॥६ ॥

दर्शनीय तथा कान्तिमान् हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने कार्यों को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करते हैं तथा द्रुतगामी अश्वों द्वारा समस्त स्थानों पर पहुँचते हैं ॥६ ॥

६६११. उप नो यातमश्विना राया विश्वपुषा सह । मघवाना सुवीरावनपच्युता ॥७ ॥

धन-सम्पन्न तथा गतिशील रहने वाले हे अश्विनीकुमारो ! समस्त प्राणियों का पालन करने हेतु धन- सम्पन्न होकर आप हमारे निकट पधारें ॥७ ॥

६६१२. आ मे अस्य प्रतीव्य१मिन्द्रनासत्या गतम् । देवा देवेभिरद्य सचनस्तमा ॥८ ॥

हे इन्द्र-हे सत्यपालक दानदाता (अश्विनी कुमारो) !आप देवताओं के साथ प्रचुर धन - सम्पन्न होकर हमारे इस यज्ञ में पधारें ॥८ ॥

६६१३. वयं हि वां हवामह उक्षण्यन्तो व्यश्ववत् । सुमतिभिरुप विप्राविहा गतम् ॥९ ॥

हे विद्वान् अश्विनीकुमारो ! व्यश्व ऋषि के सदृश, हम भी ऐश्वर्य प्राप्ति की आकांक्षा से आपका आवाहन करते हैं । अतः आप श्रेष्ठ ज्ञान-सम्पन्न होकर हमारे निकट पधारें ॥९ ॥

६६१४. अश्विना स्वृषे स्तुहि कुवित्ते श्रवतो हवम् । नेदीयसः कूळयातः पणीँरुत ॥१० ॥

हे व्यश्व ऋषे ! आप उन अश्विनीकुमारों की स्तुति करें, वे आपकी प्रार्थना को अवश्य सुनेंगे । वे दोनों पास में निवास करने वाले शत्रुओं तथा लालची वणिकों (व्यापारियों) को नष्ट कर देते हैं ॥१० ॥

[व्यापार का उद्देश्य उपयोगी वस्तुओं को उपयोगकर्त्ताओं के पास समय पर पहुँचाना है । लालची व्यापारी अपने लोभ में पड़कर यह उद्देश्य भूलकर कृत्रिम अभाव पैदा करके धन-संग्रह करने लगते हैं । यह प्रवृत्ति समाज को रोगग्रस्त बना देती है । रोगनाशक अश्विनीकुमार रोग के इस मूल कारण को नष्ट करते हैं, ताकि स्वस्थ समाज बन सके ।]

६६१५. वैयश्वस्य श्रुतं नरोतो मे अस्य वेदथः । सजोषसा वरुणो मित्रो अर्यमा ॥११ ॥

सबके नायक हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों व्यश्व ऋषि की प्रार्थना का श्रवण करें और हमारे भी स्तुति-वचनों पर ध्यान दें । आप दोनों, मित्र-वरुण तथा अर्यमादेव आदि सभी के साथ यहाँ यज्ञस्थल पर पधारें ॥११ ॥

६६१६. युवादत्तस्य धिष्ण्या युवानीतस्य सूरिभिः । अहरहर्वृषणा मह्यं शिक्षतम् ॥१२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों स्तुति के योग्य तथा कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं । जो ऐश्वर्य आप ज्ञानियों को प्रदान कर चुके हैं, वही ऐश्वर्य हमें भी प्रतिदिन प्रदान करें ॥१२ ॥

६६१७. यो वां यज्ञेभिरावृतोऽधिवस्त्रा वधूरिव । सपर्यन्ता शुभे चक्राते अश्विना ॥१३ ॥

जिस प्रकार कोई नववधू सुन्दर आवरण में लिपटी रहती है, उसी प्रकार जो मनुष्य यज्ञों (श्रेष्ठकर्मों) से आवृत रहते हैं, उनकी निगरानी करने वाले दोनों अश्विनीकुमार सदैव उन्हें प्रसन्न रखते हैं ॥१३ ॥



६६१८. यो वामुरुव्यचस्तमं चिकेतति नृपाय्यम्। वर्तिरश्विना परि यातमस्मयू ॥१४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जो मनुष्य आप दोनों को अत्यन्त विशाल तथा श्रेष्ठ सुरक्षित आसन (आवास) प्रदान कर रहा है, आप उस याजक के घर सदैव जाने की आकांक्षा रखते हैं ॥१४ ॥

६६१९. अस्मभ्यं सु वृषण्वसू यातं वर्तिर्नृपाय्यम्। विषुद्रुहेव यज्ञमूहथुर्गिरा ॥१५ ॥

वसु (सुख या धन) वर्षक हे अश्विनीकुमारो ! आप नेतृत्व प्रदान करने वालों (हितपालकों) द्वारा बरतने योग्य (गुण या सुविधाएँ) हमारे लिए लाएँ। व्याधि के बाण के समान (पशु या रोगनाशक) वाणी (मंत्रयुक्त) यज्ञ को ऊर्ध्वगति प्रदान करे ॥१५ ॥

६६२०. वाहिष्ठो वां हवानां स्तोमोदूतो हुवन्नरा। युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१६ ॥

हे नायक (अश्विदेवो) ! आपके आवाहन के लिए बड़ी मात्रा में भेजे गये स्तोत्रों में यह स्तोत्र आपको दूत की तरह बुलाए और वे आपको प्रिय लगे ॥१६ ॥

६६२१. यददो दिवो अर्णव इषो वा मदथो गृहे। श्रुतमिन्मे अमर्त्या ॥१७ ॥

हे अविनाशी अश्विनीकुमारो ! आप दोनों चाहे दिव्यलोक में हों या समुद्र में अथवा अपने उपासक के गृह में विद्यमान होकर आनन्दित हो रहे हों, हमारी पुकार पर निश्चित रूप से ध्यान देकर शीघ्र ही पधारें ॥१७ ॥

६६२२. उत स्या श्वेतयावरी वाहिष्ठा वां नदीनाम्। सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः ॥१८ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! स्वर्ण के समान कान्तिमान्, पवित्र जल वाली 'श्वेतयावरी' (शुभ्र प्रवाह वाले) प्रवाहों, प्रार्थनाओं के द्वारा हम आपका आवाहन करते हैं ॥१८ ॥

६६२३. स्मदेतया सुकीर्त्याश्विना श्वेतया धिया। वहेथे शुभ्रयावाना ॥१९ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! शुभ्रवर्ण वाली (उत्तम भावनायुक्त), श्रेष्ठ कीर्तिवाली, कल्याण प्रदायिनी श्वेतयावरी नामक धारा को आप प्रवहमान बनाएँ ॥१९ ॥

[सबके कल्याण की भावना, विचारणा एवं क्रियाशीलतायुक्त यज्ञीय पुरुषार्थ की धारा को श्वेतयावरी संबोधन दिया जाना युक्तिसंगत प्रतीत होता है।]

६६२४. युक्ष्वा हि त्वं रथासहा युवस्व पोष्या वसो।
आन्नो वायो मधु पिबास्माकं सवना गहि ॥२० ॥

सबका पालन करने वाले हे वायो ! रथ को खींचने वाले दो बलिष्ठ अश्वों को नियोजित करके आप हमारे इस यज्ञ में पधारें तथा मधुर सोमरस का पान करें ॥२० ॥

६६२५. तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत। अवांस्या वृणीमहे ॥२१ ॥

सत्कर्मों के पालक हे वायो !आप त्वष्टा के जामाता हैं। हम आपके रक्षण-साधनों की कामना करते हैं ॥२१ ॥

६६२६. त्वष्टुर्जामातरं वयमीशानं राय ईमहे। सुतावन्तो वायुं द्युम्ना जनासः ॥२२ ॥

त्वष्टा देवता के जामाता, धन से सम्पन्न वायु देवता की, हम धन प्राप्ति के निमित्त स्तुति करते हैं। उनकी कृपा से हम धन-धान्य सम्पन्न बनें ॥२२ ॥

६६२७. वायो याहि शिवा दिवो वहस्वा सुस्वश्व्यम्। वहस्व महः पृथुपक्षसा रथे ॥२३ ॥

हे वायुदेवता ! आप विशाल अश्व समूह में से (चुनकर) दो बलिष्ठ अश्वों को अपने रथ में नियोजित करें। हे महान् वायो ! आप हितकारी साधनों के साथ हमारे निकट पधारें ॥२३ ॥



६६२८. त्वां हि सुप्सरस्तमं नृषदनेषु हूमहे । ग्रावाणं नाश्वपृष्ठं मंहना ॥२४ ॥

सौन्दर्य से सम्पन्न हे वायुदेव ! आप अपनी महानता से सब जगह विद्यमान रहते हैं । हम अपने यज्ञ में आपको ग्रावा (सोमरस निचोड़ने में प्रयुक्त पत्थर) के समान आवाहित करते हैं ॥२४ ॥

[वायु ही शोषणकर्त्ता हैं । जल आदि विभिन्न द्रवों को वे विभिन्न पदार्थों में से निचोड़ लेने में सक्षम हैं, इसीलिए उन्हें ग्रावा के समान कहा है ।]

६६२९. स त्वं नो देव मनसा वायो मन्दानो अग्रियः । कृधि वाजाँ अपो धियः ॥२५ ॥

देवताओं में अग्रगामी हे वायो ! आप अन्तःकरण से प्रसन्न होकर हमें अन्न, जल तथा सद्बुद्धि प्रदान करें ॥२५ ॥

[सूक्त - २७]

[**ऋषि**- मनु वैवस्वत । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द** - प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती ।]

६६३०. अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे ।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पतिं देवाँ अवो वरेण्यम् ॥१ ॥

उक्थ (स्तुतिपरक) यज्ञ में पुरोहित अग्नि, ग्रावा (सोम निष्पादक पत्थर) तथा कुश (आसन) आदि स्थापित हैं । हे मरुतो ! हे ब्रह्मणस्पते ! हे देव ! वेदमंत्रों के द्वारा हम आपसे श्रेष्ठ रक्षण की कामना करते हैं ॥१ ॥

६६३१. आ पशुं गासि पृथिवीं वनस्पतीनुषासा नक्तमोषधीः ।
विश्वे च नो वसवो विश्ववेदसो धीनां भूत प्रावितारः ॥२ ॥

हे अग्निदेव ! आप हमें उषा एवं रात्रि के समय पशु , जमीन, पेड़-पौधे तथा श्रेष्ठ ओषधियाँ प्रदान करें । समस्त जगत् के ज्ञाता हे वसुओ ! आप हमारी (हितकारिणी) बुद्धियों के संरक्षक हों ॥२ ॥

६६३२. प्र सू न एत्वध्वरो३ ग्ना देवेषु पूर्व्यः ।
आदित्येषु प्र वरुणे धृतव्रते मरुत्सु विश्वभानुषु ॥३ ॥

हमारा यह प्राचीन यज्ञ अग्निदेव, व्रतशील वरुणदेव, सर्वव्यापी प्रकाशवान् मरुद्गण तथा अन्य देवताओं के समीप कुशलतापूर्वक पहुँचे ॥३ ॥

६६३३. विश्वे हि ष्मा मनवे विश्ववेदसो भुवन्वृधे रिशादसः ।
अरिष्टेभिः पायुभिर्विश्ववेदसो यन्ता नोऽवृकं छर्दिः ॥४ ॥

समस्त विश्व को जानने वाले तथा रिपुओं का विनाश करने वाले सभी देवगण मानव मात्र को समृद्ध करें । चिरस्थायी रक्षण-साधनों से हमारा संरक्षण करें तथा हमें सुरक्षित आवास प्रदान करें ॥४ ॥

६६३४. आ नो अद्य समनसो गन्ता विश्वे सजोषसः ।
ऋचा गिरा मरुतो देव्यदिते सदने पस्त्ये महि ॥५ ॥

समान विचारवाले हे विश्वेदेवो ! हमारी वाणी से प्रकट ऋचाओं से प्रसन्न होकर आप संगठित रूप से हमारे समीप पधारें । हे महान् अदिति देवी तथा मरुद्गण ! आप हमारे यज्ञ में पधार कर आसीन हों ॥५ ॥

६६३५. अभि प्रिया मरुतो या वो अश्व्या हव्या मित्र प्रयाथन ।
आ बर्हिरिन्द्रो वरुणस्तुरा नर आदित्यासः सदन्त नः ॥६ ॥



शत्रुओं का वध करने में शीघ्रता बरतने वाले हे ऋभुगण, मरुत्, इन्द्र, वरुण, आदित्यादि देवो ! आप सभी अपने प्रिय अश्वों के द्वारा आहुति ग्रहण करने के निमित्त हमारे इस यज्ञ - मण्डप में पधारें ॥६ ॥

६६३६. **वयं वो वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आनुषक्।**
सुतसोमासो वरुण हवामहे मनुष्वदिद्धाग्नयः ॥७ ॥

हे वरुणदेव ! हम मनु की तरह सोमरस अभिषुत करके यज्ञाग्नि को प्रज्वलित कर आहुतियाँ प्रदान करते हैं। आपके निमित्त आसन बिछाकर बारम्बार आपका आवाहन करते हैं ॥७ ॥

६६३७. **आ प्र यात मरुतो विष्णो अश्विना पूषन्माकीनया धिया।**
इन्द्र आ यातु प्रथमः सनिष्युभिर्वृषा यो वृत्रहा गृणे ॥८ ॥

हे मरुद्‌गण, विष्णु, पूषा तथा दोनों अश्विनीकुमारो ! आप हमारी प्रार्थनाओं से प्रभावित होकर हमारे समीप पधारें। शक्तिशाली, वृत्रहन्ता हे इन्द्रदेव ! आप भी अपने सहचरों सहित हमारे यज्ञ में सर्वप्रथम पधारें ॥८ ॥

६६३८. **वि नो देवासो अद्रुहोऽच्छिद्रं शर्म यच्छत।**
न यद्दूराद्वसवो नू चिदन्तितो वरूथमादधर्षति ॥९ ॥

किसी से भी शत्रुता न करने वाले हे देवताओ ! आप सभी मनुष्यों को बसाने वाले हैं। अतः आप हमें त्रुटिरहित, नष्ट न होने वाला आवास प्रदान करें ॥९ ॥

६६३९. **अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्याप्यम्।**
प्र णः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुम्नाय नव्यसे ॥१० ॥

हे देवताओ ! आप हिंसक प्रवृत्ति वालों के लिए शत्रु के समान हैं। आपके बीच छोटे-बड़े का कोई भेद-भाव नहीं हैं। आप हमारी उन्नति तथा अभिनव सुख के लिए यथाशीघ्र हमें उपदिष्ट करें ॥१० ॥

६६४०. **इदा हि व उपस्तुतिमिदा वामस्य भक्तये।**
उप वो विश्ववेदसो नमस्युराँ असृक्ष्यन्यामिव ॥११ ॥

समस्त पदार्थों के ज्ञाता हे देवताओ ! हम अन्नादि श्रेष्ठ ऐश्वर्यों की कामना करते हुए आपसे भावपूर्ण प्रार्थना करते हैं ॥११ ॥

६६४१. **उदु ष्य वः सविता सुप्रणीतयोऽस्थादूर्ध्वो वरेण्यः।**
नि द्विपादश्चतुष्पादो अर्थिनोऽविश्रन्पतयिष्णवः ॥१२ ॥

हे देवताओ ! वरण करने योग्य, महान् सूर्यदेव जब आपके मध्य उदित होते हैं, तब सभी मनुष्य और पशु-पक्षी अपने कर्मों में निरत होकर अपनी कामनाओं की पूर्ति करते हैं ॥१२ ॥

६६४२. **देवन्देवं वोऽवसे देवन्देवमभिष्टये।**
देवन्देवं हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ॥१३ ॥

हम दिव्य स्तोत्रों (बुद्धियों) के माध्यम से अपनी सुरक्षा के लिए, अभीष्ट प्राप्ति के लिए तथा अन्न या बल की प्राप्ति के लिए दिव्य देवों अथवा देवों ही देवों को आवाहित करते हैं ॥१३ ॥

६६४३. **देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं सरातयः।**
ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः ॥१४ ॥



शत्रुओं पर मन्यु प्रदर्शित करने वाले हे देवताओ ! आप सभी मुझ मनु को एक साथ मिलकर ऐश्वर्य प्रदान करें । आप हमें और हमारी सन्तानों को प्रतिदिन श्रेष्ठ मार्गदर्शन प्रदान करें ॥१४ ॥

६६४४. प्र वः शंसाम्यद्रुहः संस्थ उपस्तुतीनाम् ।
न तं धूर्तिर्वरुण मित्र मर्त्यं यो वो धामभ्योऽविधत् ॥१५ ॥

मित्रता करने वाले हे देवताओ ! इस यज्ञस्थल पर हम आपकी प्रार्थना करते हैं । हे मित्र और वरुणदेव ! जो मनुष्य आप जैसी तेजस्विता धारण करते हैं, उन्हें कोई भी विनष्ट नहीं कर सकता ॥१५ ॥

६६४५. प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ॥१६ ॥

हे देवताओ ! जो व्यक्ति वरिष्ठता को ग्रहण करने के लिए आपको हवि प्रदान करता है, वह अपने गृह को पौष्टिक अन्न सामग्री से समृद्ध करता है । इसके अतिरिक्त वह धर्म का आचरण करके प्रजाओं (सन्तानों) से सम्पन्न होता है । उसे कोई हताहत नहीं कर सकता ॥१६ ॥

६६४६. ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः ।
अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते सजोषसः ॥१७ ॥

श्रेष्ठ दानी मित्र, वरुण और अर्यमा देवता जिनका संरक्षण करते हैं, ऐसे व्यक्ति झगड़े के बिना भी ऐश्वर्य प्राप्त कर लेते हैं । वे प्रगति करते हुए सन्मार्गगामी बनते हैं ॥१७ ॥

६६४७. अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यञ्चनं दुर्गे चिदा सुसरणम् ।
एषा चिदस्मादशनिः परो नु सास्रेधन्ती वि नश्यतु ॥१८ ॥

हे देवताओ ! शत्रु के अजेय एवं दुर्गम दुर्ग को (हमारे लिए) सुगमता से प्रवेश करने तथा जीतने योग्य बना दें । रिपुओं के वज्र (अस्त्र-शस्त्र) हमारे वीरों को क्षतिग्रस्त न करके स्वयं विनष्ट हो जाएँ ॥१८ ॥

६६४८. यदद्य सूर्य उद्यति प्रियक्षत्रा ऋतं दध ।
यन्निम्रुचि प्रबुधि विश्ववेदसो यद्वा मध्यन्दिने दिवः ॥१९ ॥

शौर्य से प्रेम करने वाले सर्वज्ञाता हे देवताओ ! आप सूर्योदय, सूर्यास्त तथा मध्याह्न काल में-हर समय हमारे लिए हितकारी हों ॥१९ ॥

६६४९. यद्वाभिपित्वे असुरा ऋतं यते छर्दिर्येम वि दाशुषे ।
वयं तद्वो वसवो विश्ववेदस उप स्थेयाम मध्य आ ॥२० ॥

सज्जनों को जीवनी शक्ति प्रदान करने वाले हे देवताओ ! आपके निमित्त आहुति प्रदान करने वाले ज्ञाता को आप श्रेष्ठ आवास प्रदान करें । हे सर्वज्ञाता वसुओ ! हम आपके समीप आसीन हों ॥२० ॥

६६५०. यदद्य सूर उदिते यन्मध्यन्दिन आतुचि ।
वामं धत्थ मनवे विश्ववेदसो जुह्वानाय प्रचेतसे ॥२१ ॥

हे सर्वज्ञाता देवताओ ! सूर्योदय, सूर्यास्त तथा दोपहर के समय यजन करने वाले विद्वान् मनु को आप श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२१ ॥



६६५१. **वयं तद्वः सम्राज आ वृणीमहे पुत्रो न बहुपाय्यम् ।**
अश्याम तदादित्या जुह्वतो हविर्येन वस्योऽनशामहै ॥२२ ॥

हे ओजस्वी देवताओ ! जिस प्रकार पुत्र अपने पिता से याचना करता है, उसी प्रकार हम आपसे ऐसी सम्पत्ति की याचना करते हैं; जो अनेकों का पोषण करने वाली हो । हे आदित्यो ! हवि प्रदाता हम याजक उसी सम्पत्ति से हर्ष प्राप्त करें ॥२२ ॥

[सत्पुरुष दूसरों का भी पोषण करने वाली-परमार्थ के संस्कारों से युक्त सम्पत्ति पाकर ही हर्षित होते हैं । केवल स्वार्थ सिद्ध करने वाली सम्पत्ति वरण योग्य नहीं होती ।]

[सूक्त - २८]

[**ऋषि**- मनु वैवस्वत । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द** - गायत्री, ४ पुर उष्णिक् ।]

६६५२. **ये त्रिंशति त्रयस्परो देवासो बर्हिरासदन् । विदन्नह द्वितासनन् ॥१ ॥**

हमारे द्वारा प्रदत्त आहुतियों को स्वीकार करने के लिए कुश के आसन पर विराजित तैंतीस देवताओं ने हमारी भावना को जाना । उन्होंने हमें दो प्रकार के धन प्रदान किये ॥१ ॥

६६५३. **वरुणो मित्रो अर्यमा स्मद्रातिषाचो अग्नयः । पत्नीवन्तो वषट्कृताः ॥२ ॥**

वरुण, मित्र, अर्यमा तथा अग्निदेव हमारी हवियों को ग्रहण करने के लिए अपनी शक्तियों सहित उपस्थित होकर हमारा आतिथ्य स्वीकार करें ॥२ ॥

६६५४. **ते नो गोपा अपाच्यास्त उदक्त इत्था न्यक् । पुरस्तात्सर्वया विशा ॥३ ॥**

वे देवगण सहचरों सहित पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊपर और नीचे सभी दिशाओं से हमारी सुरक्षा करें ॥३ ॥

६६५५. **यथा वशन्ति देवास्तथेदसत्तदेषां नकिरा मिनत् । अरावा च न मर्त्यः ॥४ ॥**

वे देवगण जिस वस्तु की कामना करते हैं, उसे प्राप्त कर लेते हैं । उनकी इच्छाओं को रोकने में कोई भी मनुष्य समर्थ नहीं हो सकता ॥४ ॥

६६५६. **सप्तानां सप्त ऋष्टयः सप्त द्युम्नान्येषाम् । सप्तो अधि श्रियो धिरे ॥५ ॥**

उन सप्त मरुतों के सात प्रकार के हथियार एवं सात प्रकार के कवच भिन्न-भिन्न हैं । वे सभी तेजस्वी स्वरूप वाले हैं ॥५ ॥

[सूक्त - २९]

[**ऋषि**- मनु वैवस्वत अथवा कश्यप-मारीच । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द** - द्विपदा विराट् ।]

६६५७. **बभ्रुरेको विषुणः सूनरो युवाञ्ज्यङ्क्ते हिरण्ययम् ॥१ ॥**

ओजस्वी, सर्वत्र गमन करने वाले, श्रेष्ठ, नित्य नवीन शोभा वाले, रात्रि के नायक (सोम) स्वर्णिम रूप में उत्पन्न हुए ॥१ ॥

६६५८. **योनिमेक आ ससाद द्योतनोऽन्तर्देवेषु मेधिरः ॥२ ॥**

अग्निदेवता आलोकयुक्त और विद्वान् हैं, वे अपने मध्यस्थान पर विराजते हैं ॥२ ॥

६६५९. **वाशीमेको बिभर्ति हस्त आयसीमन्तर्देवेषु निध्रुविः ॥३ ॥**

त्वष्टा देवता सभी देवों के मध्य में बैठकर अपने हाथ में लौह-निर्मित हथियार धारण किए हुए हैं ॥३ ॥



६६६०. **वज्रमेको बिभर्ति हस्त आहितं तेन वृत्राणि जिघ्नते ॥४ ॥**

इन्द्रदेवता अपने हाथ में वज्र धारण करते हैं तथा उसके प्रहार से शत्रुओं का संहार करते हैं ॥४ ॥

६६६१. **तिग्ममेको बिभर्ति हस्त आयुधं शुचिरुग्रो जलाषभेषजः ॥५ ॥**

जल द्वारा रोगों का निवारण करने वाले पुनीत तथा भीषण रुद्रदेव अपने हाथों में नुकीले हथियार ग्रहण करते हैं ॥५ ॥

६६६२. **पथ एकः पीपाय तस्करो यथाँ एष वेद निधीनाम् ॥६ ॥**

पूषा देवता पथ को सुरक्षित करने वाले तथा चोर के सदृश सबके छिपे हुए ऐश्वर्य को जानने वाले हैं ॥६ ॥

६६६३. **त्रीण्येक उरुगायो वि चक्रमे यत्र देवासो मदन्ति ॥७ ॥**

अपने तीन कदमों से, तीनों लोकों को नापने वाले विष्णुदेव स्तुति के योग्य हैं । इनके कार्य को देखकर सभी देवता हर्षित होते हैं ॥७ ॥

६६६४. **विभिर्द्वा चरत एकया सह प्र प्रवासेव वसतः ॥८ ॥**

दोनों अश्विनीकुमार, उषा के साथ एक ही रथ पर विराजमान होकर सभी जगह विचरण करते हैं, जैसे प्रवासी व्यक्ति (एक रथ या वाहन पर) गमन करते हैं ॥८ ॥

६६६५. **सदो द्वा चक्राते उपमा दिवि सम्राजा सर्पिरासुती ॥९ ॥**

अत्यन्त तेज-सम्पन्न देवता द्वय (मित्र और वरुण) घृत की आहुतियों से युक्त या प्रकाशित हैं । वे दिव्यलोक में निवास करते हैं ॥९ ॥

६६६६. **अर्चन्त एके महि साम मन्वत तेन सूर्यमरोचयन् ॥१० ॥**

प्रार्थना करने वाले स्तोतागण सामगान करते हैं और अपनी उपासना द्वारा सूर्यदेव को आलोकित करते हैं ॥१० ॥

[सूक्त - ३०]

[**ऋषि**- मनु वैवस्वत । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द** - १ गायत्री , २ पुर उष्णिक् , ३ बृहती, ४ अनुष्टुप् ।]

६६६७. **नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः । विश्वे सतोमहान्त इत् ॥१ ॥**

हे देवताओ ! आप में से न तो कोई बालक है और न किशोर; आप सभी देवता महान् (परिपक्व) हैं ॥१ ॥

६६६८. **इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थ त्रयश्च त्रिंशच्च । मनोर्देवा यज्ञियासः ॥२॥**

हे देवताओ ! आप हिंसक प्रवृत्ति के व्यक्तियों के विनाशक हैं और विद्वानों के द्वारा पूजनीय हैं । आप तैंतीस देवताओं के रूप में सम्मानित किये जाते हैं ॥२ ॥

६६६९. **ते नस्त्राध्वं तेऽवत त उ नो अधि वोचत ।**
मा नः पथः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः ॥३ ॥

हे देवताओ ! आप सभी हमारा संरक्षण करें तथा पोषण प्रदान करते हुए हमें उपदेशित करें । हमें पितरों के अनुरूप मनुष्योचित मार्ग पर आगे बढ़ायें, उससे विपरीत या दूर न जाने दें ॥३ ॥

६६७०. **ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत ।**
अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत ॥४ ॥



सभी को सन्मार्ग की ओर ले जाने वाले हे देवताओ ! आप हमारे पास उपस्थित होकर हमें गौओं, अश्वों सहित विविध ऐश्वर्य प्रदान करें ॥४ ॥

[सूक्त - ३१]

[**ऋषि**- मनुवैवस्वत । **देवता** - १-४ यज्ञ स्तुति तथा यजमान प्रशंसा, ५-९ दम्पती, १०-१८ दम्पती-आशीष । **छन्द** - गायत्री ९-१४ अनुष्टुप्, १० पादनिचृत्, १५-१८ पंक्ति]

६६७१. **यो यजाति यजात इत्सुनवच्च पचाति च । ब्रह्मेदिन्द्रस्य चाकनत् ॥१ ॥**

जो ब्राह्मण अपने आप यज्ञ करते और अन्यों से करवाते हैं तथा सोमरस अभिषुत करते हैं और दूसरों से करवाते हैं, वे इन्द्रदेव द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥

६६७२. **पुरोळाशं यो अस्मै सोमं ररत आशिरम् । पादित्तं शक्रो अंहसः ॥२ ॥**

जो याजक पुरोडाश और गो दुग्ध मिला हुआ सोमरस इन्द्रदेव को प्रदान करते हैं, उन्हें वे देव दुष्कर्मों से बचाते हैं ॥२ ॥

६६७३. **तस्य द्युमाँ असद्रथो देवजूतः स शूशुवत् । विश्वा वन्वन्नमित्रिया ॥३ ॥**

याजकगण देवों के द्वारा प्रदान किया हुआ तेजस्वी रथ प्राप्त करते हैं । वे अपने शत्रुओं को परास्त करके भली प्रकार समृद्धिशाली बनते हैं ॥३ ॥

६६७४. **अस्य प्रजावती गृहेऽसश्चन्ती दिवेदिवे । इळा धेनुमती दुहे ॥४ ॥**

इस (याजक) के घर में प्रजायुक्त, स्थिरतापूर्वक विद्यमान रहने वाली, नियमित रूप से धेनु रूपी मति प्रतिदिन ऐश्वर्य दुहती है ॥४ ॥

६६७५. **या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः । देवासो नित्ययाशिरा ॥५ ॥**

हे देवो ! समान विचार वाले जो पति-पत्नी सोमरस अभिषुत करके उसे शुद्ध करते हैं, जो प्रतिदिन देवों को गो-दुग्ध मिश्रित सोम समर्पित करते हैं ॥५ ॥

६६७६. **प्रति प्राशव्याँ इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते । न ता वाजेषु वायतः ॥६ ॥**

वे समान विचार वाले दम्पति यज्ञ करते हैं, सदैव पोषक आहार प्राप्त करते हैं । उन्हें कभी भी अन्न से विमुख नहीं होना पड़ता ॥६ ॥

६६७७. **न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः । श्रवो बृहद्विवासतः ॥७ ॥**

वे दम्पति देवों की उपेक्षा नहीं करते और न ही अपने विवेक को खोते हैं । अतः वे महान् कीर्ति को वरण करते हैं ॥७ ॥

६६७८. **पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः । उभा हिरण्यपेशसा ॥८ ॥**

वे दोनों सोने के आभूषणों से युक्त होकर सन्तानों के साथ हर्षित होते हुए, पूर्ण आयुष्य को प्राप्त करते हैं ॥८

६६७९. **वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्तामृताय कम् । समूधो रोमशं हतो देवेषु कृणुतो दुवः ॥९ ॥**

नित्यप्रति देवताओं की प्रार्थना करने वाले वे दम्पति ऐश्वर्य और हर्ष प्रदायक अन्न का दान करते हैं । वे गौओं, भेड़ों आदि पशुओं से समृद्ध होकर उन देवों की उपासना करके अमरत्व को प्राप्त करते हैं ॥९ ॥

६६८०. **आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम् । आ विष्णोः सचाभुवः ॥१० ॥**



पहाड़ों और सरिताओं में विद्यमान सुख, तथा विष्णुदेव के पास रहने वाले सुख की हम याचना करते हैं ॥१०॥

६६८१. ऐतु पूषा रयिर्भगः स्वस्ति सर्वधातमः । उरुरध्वा स्वस्तये ॥११ ॥

पूषा देवता ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । वे अत्यन्त हितकारी तथा सबको धारण करने वाले हैं । वे हमारे समीप पधारें । उनके आगमन से जीवन का विस्तृत भाग हमारे लिए हितकारी हो ॥११ ॥

६६८२. अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा । आदित्यानामनेह इत् ॥१२ ॥

रिपुओं द्वारा परास्त न होने वाले पूषादेव की सभी मनुष्य सच्चे मन से प्रार्थना करते हैं । आदित्यगण जिन साधकों पर प्रसन्न होते हैं, उनके पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१२ ॥

६६८३. यथा नो मित्रो अर्यमा वरुणः सन्ति गोपाः । सुगा ऋतस्य पन्थाः ॥१३ ॥

मित्र, वरुण तथा अर्यमा देवों के द्वारा संरक्षित होने के कारण जीवन में सन्मार्ग पर चलना हमारे लिए सरल हो ॥१३ ॥

६६८४. अग्निं वः पूर्व्यं गिरा देवमीळे वसूनाम् । सपर्यन्तः पुरुप्रियं मित्रं न क्षेत्रसाधसम् ॥१४ ॥

हे देवो ! ऐश्वर्य के निमित्त हम स्तोतागण आपमें से प्रमुख अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं । आप अनेकों लोगों के प्रिय पात्र तथा सखा हैं । आप यज्ञ क्षेत्र को सिद्ध करने वाले हैं ॥१४ ॥

६६८५. मक्षू देववतो रथः शूरो वा पृत्सु कासु चित् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१५ ॥

जिस प्रकार रणक्षेत्र में कोई योद्धा तीव्रगति से आगे बढ़ता है, उसी प्रकार देवताओं को प्रिय लगने वाले भक्त का, जीवन रूपी रथ द्रुतगति से आगे बढ़ता है । जो याजक देवताओं की सच्चे मन से उपासना करते हैं, वे अयाज्ञिक व्यक्ति को परास्त करते हैं ॥१५ ॥

६६८६. न यजमान रिष्यसि न सुन्वान न देवयो ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१६ ॥

हे याजको ! हम सोमरस को अभिषुत करने वाले तथा देवों की प्रार्थना करने वाले हैं । आपका कभी विनाश नहीं होगा । जो याजक सच्चे मन से देवताओं की उपासना करते हैं, वे अयाज्ञिकों को परास्त करने में समर्थ होते हैं ॥१६ ॥

६६८७. नकिष्टं कर्मणा नशन्न प्र योषन्न योषति ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१७ ॥

देवों की सच्ची लगन से उपासना करने वाले यजमान अपने कर्त्तव्य से च्युत नहीं हो सकते और न ही उन्हें कोई धन से दूर कर सकता है । वे स्वयं कभी भ्रष्ट नहीं हो सकते, (इसके विपरीत) अयाज्ञिकों को वे परास्त करने में सक्षम होते हैं ॥१७ ॥

६६८८. असदत्र सुवीर्यमुत त्यदाश्वश्व्यम् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१८ ॥

सच्ची लगन से उपासना करने वाले यजमान देवताओं के द्वारा श्रेष्ठ शक्ति तथा अश्वों को प्राप्त करते हैं । इसके अतिरिक्त वे अयाज्ञिकों को परास्त करने में सक्षम होते हैं ॥१८ ॥



[सूक्त - ३२]

[**ऋषि** - मेधातिथि काण्व । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - गायत्री ।]

६६८९. प्र कृतान्यृजीषिणः कण्वा इन्द्रस्य गाथया । मदे सोमस्य वोचत ॥१ ॥

हे कण्ववंशीय ऋषियो ! इन्द्रदेव के द्वारा सोमरस पीने के बाद, आनन्दित होकर किये गये कर्मों का आप गुणगान करें ॥१ ॥

६६९०. यः सृबिन्दमनर्शनिं पिप्रुं दासमहीशुवम् । वधीदुग्रो रिणन्नपः ॥२ ॥

पानी की धाराओं को प्रवाहित करने वाले शक्तिशाली इन्द्रदेव ने सृबिन्द, अनर्शनि, पिप्रु, अहीशुव तथा दास आदि समस्त शत्रुओं का संहार किया ॥२ ॥

६६९१. न्यर्बुदस्य विष्टपं वर्ष्माणं बृहतस्तिर । कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! अत्यन्त विशालकाय अर्बुद (मेघ) के दुर्ग को आप तोड़ दें, ऐसा वीरतापूर्ण कार्य आप ही सम्पन्न कर सकते हैं ॥३ ॥

६६९२. प्रति श्रुताय वो धृषत्तूर्णाशं न गिरेरधि । हुवे सुशिप्रमूतये ॥४ ॥

हे याजको ! जिस प्रकार बादलों से पानी की याचना करते हैं, उसी प्रकार हम आपकी सुरक्षा के निमित्त शत्रुओं के संहारक, मुकुटधारी इन्द्रदेव से स्तुति करते हैं ॥४ ॥

६६९३. स गोरश्वस्य वि व्रजं मन्दानः सोम्येभ्यः । पुरं न शूर दर्षसि ॥५ ॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप हर्षित होकर गौओं और अश्वों की शालाओं को सोम अभिषव करने वालों के उपयोग हेतु उसी प्रकार खोल देते हैं, जिस प्रकार आपने रिपुओं के नगर द्वारों को खोला था ॥५ ॥

६६९४. यदि मे रारणः सुत उक्थे वा दधसे चनः । आरादुप स्वधा गहि ॥६ ॥

यदि आप हमारे द्वारा अभिषुत सोमरस और स्तुति वचनों की आकांक्षा करते हैं, तो हमें पोषक अन्न प्रदान करने के निमित्त सुदूर स्थान से भी यज्ञस्थल पर पधारें ॥६ ॥

६६९५. वयं घा ते अपि ष्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः । त्वं नो जिन्व सोमपाः ॥७ ॥

सोमरस पीकर तृप्त होने वाले, प्रशंसा के योग्य हे इन्द्रदेव ! हम आपकी स्तुति करते हैं । आप हमें तुष्टि प्रदान करें ॥७ ॥

६६९६. उत नः पितुमा भर संरराणो अविक्षितम् । मघवन्भूरि ते वसु ॥८ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप प्रसन्न होकर हमें ऐसा ऐश्वर्य प्रदान करें, जो कभी क्षय न हो; क्योंकि आपके पास अपार सम्पत्ति है ॥८ ॥

६६९७. उत नो गोमतस्कृधि हिरण्यवतो अश्विनः । इळाभिः सं रभेमहि ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौ, अश्व, स्वर्ण तथा धन-धान्य से सम्पन्न बनाएँ, जिसे प्राप्त कर हम हर्षित हों ॥९ ॥

६६९८. बृबदुक्थं हवामहे सृप्रकरस्नमूतये । साधु कृण्वन्तमवसे ॥१० ॥

सम्पूर्ण जगत् के संरक्षण के लिए अपनी भुजाओं को फैलाने वाले तथा सत्कर्म करने वाले उन इन्द्रदेव का हम आवाहन करते हैं, जिनका सर्वत्र ही गुणगान किया जाता है ॥१० ॥

६६९९. यः संस्थे चिच्छतक्रतुरादीं कृणोति वृत्रहा । जरितृभ्यः पुरूवसुः ॥११ ॥



युद्धक्षेत्र में अनेकों वीरतापूर्ण कार्य करने वाले इन्द्रदेव वृत्र का वध करते हैं तथा अन्य शत्रुओं का भी संहार करते हैं। वे प्रार्थना करने वालों को प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥११ ॥

६७००. **स नः शक्रश्चिदा शकद्दानवाँ अन्तराभरः। इन्द्रो विश्वाभिरूतिभिः ॥१२ ॥**

सामर्थ्यवान् तथा दान-दाता इन्द्रदेव हमें बलवान् बनाएँ। वे अपनी रक्षण-शक्ति के द्वारा हमें अन्तः शक्ति प्रदान करें ॥१२ ॥

६७०१. **यो रायो३ वनिर्महान्त्सुपारः सुन्वतः सखा। तमिन्द्रमभि गायत ॥१३ ॥**

हे मनुष्यो ! प्रचुर धन वाले, संरक्षण करने वाले तथा विपत्ति से भली प्रकार पार लगाने वाले इन्द्रदेव, यजन करने वालों के सखा हैं। आप, ऐसे इन्द्रदेव का गुणगान करें ॥१३ ॥

६७०२. **आयन्तारं महि स्थिरं पृतनासु श्रवोजितम्। भूरेरीशानमोजसा ॥१४ ॥**

हे स्तोताओ ! संग्राम में अडिग रहने वाले, वैभव को जीतने वाले तथा अपने ओज से अनन्त शत्रुओं पर अधिकार एवं नियंत्रण करने वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना करें ॥१४ ॥

६७०३. **नकिरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम्। नकिर्वक्ता न दादिति ॥१५ ॥**

उन इन्द्रदेव की महान् सामर्थ्यों को कोई भी परास्त नहीं कर सकता। ऐसा भी कोई नहीं है, जो उन्हें दान-दाता न कहे ॥१५ ॥

६७०४. **न नूनं ब्रह्मणामृणं प्राशूनामस्ति सुन्वताम्। न सोमो अप्रता पपे ॥१६ ॥**

सोम का अभिषवण एवं पान करने वाले ब्राह्मणों (ब्रह्मनिष्ठों) पर निश्चितरूप से कोई ऋण (देव, ऋषि या पितृ ऋण) नहीं होता। जिसने ऋण भरा (चुकाया) नहीं, वह सोमपान नहीं कर सकता ॥१६ ॥

[सोम दिव्य अनुदानरूप में ही प्राप्त होता है। जिन्होंने पूर्व प्राप्त विभूतियों का निर्धारित उपयोग करके दिव्य ऋणों को उतारा नहीं है, वे अगले चरण के अनुदान प्राप्त करने के अधिकारी नहीं बनते।]

६७०५. **पन्य इदुप गायत पन्य उक्थानि शंसत। ब्रह्मा कृणोत पन्य इत् ॥१७ ॥**

प्रार्थना के योग्य इन्द्रदेव के निमित्त स्तुतिगान करें, उनके निमित्त ही मन्त्रोच्चारण करें तथा उन्हीं के निमित्त स्तोत्रों का निर्माण करें ॥१७ ॥

६७०६. **पन्य आ दर्दिरच्छता सहस्रा वाज्यवृतः। इन्द्रो यो यज्वनो वृधः ॥१८ ॥**

जिस शक्तिशाली इन्द्रदेव ने सहस्रों रिपुओं का वध कर दिया, उन्हें कोई भी शत्रु पीड़ित नहीं करते। वे याजकों को समृद्ध करते हैं ॥१८ ॥

६७०७. **वि षू चर स्वधा अनु कृष्टीनामन्वाहुवः। इन्द्र पिब सुतानाम् ॥१९ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी धारक शक्ति के निमित्त हम आपको आहूत करते हैं। आप हमें अन्न प्रदान करें और हमारे द्वारा प्रदत्त सोमरस का पान करें ॥१९ ॥

६७०८. **पिब स्वधैनवानामुत यस्तुग्र्ये सचा। उतायमिन्द्र यस्तव ॥२० ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त गौ दुग्ध और जल मिश्रित सोमरस प्रस्तुत है, आप उसका पान करें ॥२० ॥

६७०९. **अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपारणे। इमं रातं सुतं पिब ॥२१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जो साधक क्रोधित होकर सोमरस निकालता है, आप उसे ग्रहण न करें। उत्तम विधि से जो साधक सोमरस तैयार करता है, उसके यज्ञ में पहुँच कर सोमरस का पान करें ॥२१ ॥



६७१०. इहि तिस्रः परावत इहि पञ्च जनाँ अति । धेना इन्द्रावचाकशत् ॥२२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी पुकार को सुनकर तीनों सवनों में दूर देश से भी पधारें । आप पाँचों प्रकार के मनुष्यों (पितर, गन्धर्व, देवता, राक्षस तथा निषाद आदि) को लाँघकर भी हमारे समीप पधारें ॥२२ ॥

६७११. सूर्यो रश्मिं यथा सृजा ऽऽत्वा यच्छन्तु मे गिरः । निम्नमापो न सध्र्यक् ॥२३ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सूर्य अपनी रश्मियों को प्रदान करता है, उसी प्रकार आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । जिस प्रकार जल की धारा नीचे की तरफ (सहज ही) प्रवाहित होती है, उसी प्रकार हमारे स्तुति वचन आपके पास पहुँचें ॥२३ ॥

६७१२. अध्वर्यवा तु हि षिञ्च सोमं वीराय शिप्रिणे । भरा सुतस्य पीतये ॥२४ ॥

हे अध्वर्यो ! किरीटधारी इन्द्रदेव के पीने के लिए कलश में सोमरस लेकर आप उन्हें यथाशीघ्र समर्पित करें॥२४

६७१३. य उद्नः फलिगं भिनन्न्य१क्सिन्धूँरवासृजत् । यो गोषु पक्वं धारयत् ॥२५ ॥

उन इन्द्रदेव ने जल के निमित्त बादलों को तितर-बितर किया, सरिताओं को प्रवाहित किया तथा गौओं के अन्दर परिपक्व दुग्ध स्थापित किया ॥२५ ॥

६७१४. अहन्वृत्रमृचीषम और्णवाभमहीशुवम् । हिमेनाविध्यदर्बुदम् ॥२६ ॥

समस्त साधनों में जिन इन्द्रदेव की सराहना की जाती है, उन्होंने वृत्र, और्णवाभ तथा अहीशुव (नामक राक्षसों अथवा घेर लेने वाले, ऊन जैसे तथा गतिशील बादलों) को नष्ट किया । अर्बुद (राक्षस या जल युक्त मेघ को) हिम (शीतलता) से वेध दिया ॥२६ ॥

[बरसने वाले बादल हिम-शीतलता से ही जलरूप बनकर बरसते हैं, यही उनका वेधन है ।]

६७१५. प्र व उग्राय निष्टुरेऽषाळहाय प्रसक्षिणे । देवत्तं ब्रह्म गायत ॥२७ ॥

हे स्तुति करने वालो ! शक्तिशाली बलवान् तथा रिपुओं का विनाश करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त देवताओं को हर्षित करने वाले स्तोत्रों का पाठ करो ॥२७ ॥

६७१६. यो विश्वान्यभि व्रता सोमस्य मदे अन्धसः । इन्द्रो देवेषु चेतति ॥२८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस से आनन्दित होकर देवताओं के अन्दर समस्त कर्मों के ज्ञान को जाग्रत् करते हैं॥२८

६७१७. इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या । वोळहामभि प्रयो हितम् ॥२९ ॥

एक साथ ही उत्साहित होने वाले स्वर्णिम बालों वाले वे दोनों अश्व, कल्याणकारी धन-धान्यों को हमारी ओर ले आएँ ॥२९ ॥

६७१८. अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी । सोमपेयाय वक्षतः ॥३० ॥

अनेकों द्वारा स्तुत्य हे इन्द्रदेव ! दोनों अश्विनीकुमारों और प्रियमेध के द्वारा आप प्रशंसित हैं । अत: सोमपान के निमित्त यज्ञस्थल के निकट आप पधारें ॥३० ॥

[सूक्त - ३३]

[**ऋषि-** मेध्यातिथि काण्व । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** बृहती, १६-१८ गायत्री, १९ अनुष्टुप् ।]

६७१९. वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥१ ॥



हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! जिस प्रकार जल नीचे की ओर प्रवाहित होता है, उसी प्रकार शोधित सोमरस सहित हम आपको झुककर नमन करते हैं। पवित्र यज्ञ में कुश के आसन पर एक साथ बैठकर याजकगण आपकी उपासना करते हैं ॥१ ॥

६७२०. **स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।**
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ॥२ ॥

सभी को निवास देने वाले हे इन्द्रदेव ! सोमरस निकालकर याजकगण आपकी स्तुति करते हैं। सोमपान की इच्छा वाले आप, वृषभ जैसा नाद करते हुए कब हमारे यहाँ पधारेंगे ? ॥२ ॥

६७२१. **कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद्वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।**
पिशङ्गरूपं मघवन् विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ॥३ ॥

धनवान्, ज्ञानी, हे इन्द्रदेव ! शत्रुनाशक, सुवर्ण कान्तियुक्त, गौ के समान पवित्र धन, हम आपके पास से पाने के इच्छुक हैं। हे शूरवीर इन्द्रदेव ! कण्ववंशियों (मेधावी पुरुषों) द्वारा स्तुति किए जाने के बाद आप उन्हें हजारों प्रकार के बल तथा ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥३ ॥

६७२२. **पाहि गायान्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।**
यः संमिश्लो हर्योर्यः सुते सचा वज्री रथो हिरण्ययः ॥४ ॥

हे मेधातिथे ! जो इन्द्रदेव रथ में दो अश्वों को जोड़ते हैं, वज्रधारी हैं, रमणीय हैं, सुवर्णरथ में विराजमान हैं, ऐसे इन्द्रदेव को सोमपान से आनन्दित करके अपनी गौओं की रक्षा करें ॥४ ॥

६७२३. **यः सुषव्यः सुदक्षिण इनो यः सुक्रतुर्गृणे ।**
य आकरः सहस्रा यः शतामघ इन्द्रो यः पूर्भिदारितः ॥५ ॥

जिनके दायें-बायें हाथ श्रेष्ठ हैं, जिनसे वे सत्कर्म करते हैं, जो हजारों गुणों से सम्पन्न हैं, जो सैकड़ों ऐश्वर्यों से युक्त हैं, जो शत्रुओं के दुर्गों को ध्वस्त करते हैं और जो यज्ञों में पधारते हैं, उन इन्द्रदेव की हम प्रार्थना करते हैं ॥५ ॥

६७२४. **यो धृषितो योऽवृतो यो अस्ति श्मश्रुषु श्रितः ।**
विभूतद्युम्नश्च्यवनः पुरुष्टुतः क्रत्वा गौरिव शाकिनः ॥६ ॥

जो इन्द्रदेव शत्रुओं द्वारा कभी पराजित न होकर उनके बीच में प्रवेश करके उनका संहार करते हैं, वे प्रचुर ऐश्वर्य सम्पन्न तथा अनेकों द्वारा स्तुत्य हैं। अपने कर्म में प्रयत्नशील यजमान के लिए वे गौ के समान हैं ॥६ ॥

६७२५. **क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे ।**
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः ॥७ ॥

सोमयज्ञ में एक ही स्थान पर विद्यमान होकर सोमपान करने वाले अत्यधिक वैभव सम्पन्न इन्द्रदेव को कौन नहीं जानता ? सोमपान से प्रमुदित, शिरस्त्राण धारण किये हुए इन्द्रदेव अपनी शक्ति से विरोधियों के नगरों को विनष्ट कर देते हैं ॥७ ॥

६७२६. **दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे ।**
नकिष्ट्वा नि यमदा सुते गमो महाँश्चरस्योजसा ॥८ ॥

अपने ओज से विचरण करने वाले हमारे लिए सम्माननीय हे इन्द्रदेव ! आप इस सोमयज्ञ में पधारें। शत्रु की खोज में घूमने वाले, मतवाले हाथी के समान रथ द्वारा यज्ञ में जाने से आपको कोई रोक नहीं सकता ॥८ ॥



६७२७. **य उग्रः सन्ननिष्टृतः स्थिरो रणाय संस्कृतः ।**
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत् ॥९

जो शस्त्रों से सुसज्जित युद्धभूमि में स्थिर रहने वाले हैं, ऐसे अपराजेय, पराक्रमी वैभवशाली इन्द्रदेव हमारी स्तुतियों को सुनकर, दूसरे स्थान पर न जाकर इस यज्ञ में ही उपस्थित हों ॥९ ॥

६७२८. **सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽवृतः ।**
वृषा ह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥१० ॥

हे वीर इन्द्रदेव ! दूर और पास के देशों में सर्वत्र, शक्तिशाली रूप में आपकी ख्याति फैल रही है । हे इन्द्रदेव ! आप निश्चित ही बलशाली हैं । सोमयज्ञ करने वाले हम याजकों के आवाहन पर आकर आप हमारा संरक्षण करें ॥१० ॥

६७२९. **वृषणस्ते अभीशवो वृषा कशा हिरण्ययी ।**
वृषा रथो मघवन्वृषणा हरी वृषा त्वं शतक्रतो ॥११ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आपका स्वर्णिम चाबुक, रास, रथ तथा दोनों अश्व अत्यन्त बलशाली तथा सामर्थ्यवान् हैं । हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप भी अत्यन्त शक्ति-सम्पन्न हैं ॥११ ॥

६७३०. **वृषा सोता सुनोतु ते वृषन्नृजीपिन्ना भर ।**
वृषा दधन्वे वृषणं नदीष्वा तुभ्यं स्थातर्हरीणाम् ॥१२ ॥

सोम अभिषव करने वाले शक्तिशाली मनुष्य सोमरस निचोड़ें । हे सोमपान करने वाले इन्द्रदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें । आपके निमित्त पानी में संस्कारित सोम को मिश्रित करने वाले सोमरस प्रस्तुत करते हैं ॥१२ ॥

६७३१. **एन्द्र याहि पीतये मधु शविष्ठ सोम्यम् ।**
नायमच्छा मघवा शृणवद् गिरो ब्रह्मोक्था च सुक्रतुः ॥१३ ॥

हे शक्ति-सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप मधुर सोमरस को पीने हेतु पधारें ! आप महान् कार्य करने वाले हैं । हमारे द्वारा उच्चारित ज्ञानयुक्त स्तोत्रों का आप भली प्रकार श्रवण करें ॥१३ ॥

६७३२. **वहन्तु त्वा रथेष्ठामा हरयो रथयुजः ।**
तिरश्चिदर्यं सवनानि वृत्रहन्नन्येषां या शतक्रतो ॥१४ ॥

वृत्र का संहार करने वाले हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! रथ में नियोजित आपके अश्व, दूसरों द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले यज्ञों को छोड़कर हमारे इस श्रेष्ठ यज्ञ में आपको ले आएँ ॥१४ ॥

६७३३. **अस्माकमद्यान्तमं स्तोमं धिष्व महामह ।**
अस्माकं ते सवना सन्तु शन्तमा मदाय द्युक्ष सोमपाः ॥१५ ॥

हे महान् इन्द्रदेव ! आप हमारे द्वारा की गई स्तुतियों को समीप पधारकर ग्रहण करें (सुनें) । आप अत्यधिक सोमपान करने वाले हैं । आपको हर्षित करने के लिये सुखदायी सोमरस प्रस्तुत है ॥१५ ॥

६७३४. **नहि षस्तव नो मम शास्त्रे अन्यस्य रण्यति । यो अस्मान्वीर आनयत् ॥१६ ॥**

ओजस्वी इन्द्रदेव हमारे नायक हैं । वे हमारे, आपके या किसी अन्य के अधीन रहना पसन्द नहीं करते ॥१६ ॥



६७३५. इन्द्रश्चिद्घा तदब्रवीत्स्त्रिया अशास्यं मनः । उतो अह क्रतुं रघुम् ॥१७ ॥

इन्द्रदेव का भी कथन यही था कि स्त्रियों के मन पर अधिकार करना बड़ा ही दुष्कर कार्य है; क्योंकि उनका संकल्प अदम्य होता है ॥१७ ॥

६७३६. सप्ती चिद्घा मदच्युता मिथुना वहतो रथम् । एवेद्धूर्वृष्ण उत्तरा ॥१८ ॥

इन्द्रदेव के दो मतवाले अश्व उनके रथ में एक साथ नियोजित होकर उन्हें ले जाते हैं । उनके रथ की धुरी अति उत्तम है ॥१८ ॥

६७३७. अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरां पादकौ हर ।
मा ते कशप्लकौ दृशन्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ॥१९ ॥

(शापवश स्त्री बने हुए प्रायोगि से इन्द्रदेव ने कहा) अब तुम नीचे की ओर दृष्टि रखो, ऊपर की ओर नहीं । पैरों को पास-पास रखकर (छोटे कदमों से) चलो । तुम्हारे दोनों अंग-मुख एवं पिण्डलियाँ दिखाई न दें (वस्त्र से ढकी रहें), तुम ज्ञानी होकर भी (शाप वश) स्त्री बने हो ॥१९ ॥

[वर्तमान विज्ञान में भौतिक उपचार द्वारा लिंग-परिवर्तन किया जाता है, ऋषिकाल में तप बल से ऐसे प्रयोग किये जाते थे ।]

[सूक्त - ३४]

[**ऋषि-** १-१५ नीपातिथि काण्व, १६-१८ सहस्र वसुरोचिष् अङ्गिरस् । । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** अनुष्टुप्, १६-१८ गायत्री ।]

६७३८. एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१ ॥

हे तेजस्वी इन्द्रदेव ! आप अश्वारूढ़ होकर कण्व ऋषि की श्रेष्ठ स्तुतियों के श्रवण हेतु पधारें । द्युलोक में शासन करने वाले आप (हमारा अभीष्ट साधन करके) पुन: वहीं के लिए प्रस्थान करें ॥१ ॥

६७३९. आ त्वा ग्रावा वदन्निह सोमी घोषेण यच्छतु ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! (इस यज्ञ में) सोम कूटने वाला पाषाण शब्द करते हुए आपको (सोम) प्रदान करे । द्युलोक में वास एवं शासन करने वाले हे इन्द्रदेव ! पुन: आप अपने लोक को जाएँ ॥२ ॥

६७४०. अत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥३ ॥

यहाँ (यज्ञ में) यह (ग्रावा पत्थर)सोमलता को (उसी प्रकार)कँपाती है, जैसे भेड़िया भेड़ को । हे द्युलोक के वासी एवं शासक इन्द्रदेव ! आप देव लोक को प्रस्थान करें ॥३ ॥

६७४१. आ त्वा कण्वा इहावसे हवन्ते वाजसातये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥४ ॥

दिव्यलोक में निवास करने वाले हे इन्द्रदेव ! हम कण्ववंशीय ऋषि अपनी सुरक्षा और अन्न प्राप्ति करने के लिए आपको आहूत करते हैं । इसके बाद दिव्यलोक में शासन करने के निमित्त आप पुन: द्युलोक में जाएँ ॥४ ॥



६७४२. **दधामि ते सुतानां वृष्णे न पूर्वपाय्यम् ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥५ ॥

हे दिव्यलोक में निवास करने वाले इन्द्रदेव ! जिस प्रकार वायु को सबसे पहले संस्कारित सोम प्रदान किया जाता है, उसी प्रकार हम आपको सोमरस प्रदान करते हैं । आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिये पुन: द्युलोक को प्रस्थान करें ॥५ ॥

६७४३. **स्मत्पुरन्धिर्न आ गहि विश्वतोधीर्न ऊतये ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥६ ॥

हे दिव्यलोक के वासी इन्द्रदेव ! आप हमारी बुद्धि के संरक्षण तथा यश-विस्तार के लिए पधारें । आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिए पुन: द्युलोक में वापस जाएँ ॥६ ॥

६७४४. **आ नो याहि महेमते सहस्रोते शतामघ ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥७ ॥

हे श्रेष्ठ बुद्धिवाले तथा द्युलोक में निवास करने वाले इन्द्रदेव ! आप सहस्रों रक्षण-साधनों वाले और प्रचुर ऐश्वर्य वाले हैं । आप हमारे पास पधारें और द्युलोक के शासक होने के कारण पुन: द्युलोक में वापस जाएँ ॥७ ॥

६७४५. **आ त्वा होता मनुर्हितो देवत्रा वक्षदीड्यः ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥८ ॥

हे द्युलोकवासी इन्द्रदेव ! देवताओं द्वारा प्रशंसित और मनुष्यों के हितैषी अग्निदेव, आपको हमारे समीप ले आएँ । आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिए पुन: द्युलोक में वापस जाएँ ॥८ ॥

६७४६. **आ त्वा मदच्युता हरी श्येनं पक्षेव वक्षतः ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥९ ॥

हे द्युलोक वासी इन्द्रदेव ! जिस प्रकार बाज़ पक्षी के पंख उसको वहन करते हैं, उसी प्रकार आपके मतवाले घोड़े आपको वहन करके ले आएँ । हे इन्द्रदेव ! आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिए आप पुन: द्युलोक में वापस जाएँ ॥९ ॥

६७४७. **आ याह्यर्य आ परि स्वाहा सोमस्य पीतये ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा प्रदान किये गये सोमरस को पीने के निमित्त आप पधारें । हे द्युलोकवासी इन्द्रदेव ! आप दिव्यलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए आप पुन: वापस द्युलोक जाएँ ॥१० ॥

६७४८. **आ नो याह्युपश्रुत्युक्थेषु रणया इह ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥११ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी स्तुतियों को श्रवण करके हमारे इस यज्ञ के समीप पधारें और हमें हर्षित करें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए आप पुन: वापस द्युलोक जाएँ ॥११ ॥

६७४९. **सरूपैरा सु नो गहि संभृतैः सम्भृताश्वः ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१२ ॥



हे इन्द्रदेव ! आपके घोड़े अत्यन्त बलवान् हैं । आप समान आकृति वाले अश्वों द्वारा हमारे समीप पधारें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुन: वापस द्युलोक जाएँ ॥१२ ॥

६७५०. **आ याहि पर्वतेभ्यः समुद्रस्याधि विष्टपः ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप पर्वतों तथा आकाश से पधारें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुन: द्युलोक वापस जाएँ ॥१३ ॥

६७५१. **आ नो गव्यान्यश्व्या सहस्रा शूर दर्दृहि ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१४ ॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप हमें सहस्रों गौओं और अश्वों को प्रदान करें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुन: द्युलोक वापस जाएँ ॥१४ ॥

६७५२. **आ नः सहस्रशो भरायुतानि शतानि च ।**
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें सैकड़ों-हजारों की संख्या में ऐश्वर्य प्रदान करें । हे द्युलोकवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुन: द्युलोक वापस जाएँ ॥१५ ॥

६७५३. **आ यदिन्द्रश्च दद्वहे सहस्रं वसुरोचिषः । ओजिष्ठमश्व्यं पशुम् ॥१६ ॥**

धनों से समृद्ध होकर हम और आप, इन्द्रदेव द्वारा प्रदान किये गये हजारों की संख्या में बलिष्ठ अश्व आदि पशुओं को ग्रहण करें ॥१६ ॥

६७५४. **य ऋज्रा वातरंहसोऽरुषासो रघुष्यदः । भ्राजन्ते सूर्या इव ॥१७ ॥**

वायु के सदृश गति वाले तथा आसानी से गमन करने वाले इन्द्रदेव के रथ में नियोजित घोड़े सूर्यदेव की तरह आलोकित हो रहे हैं ॥१७ ॥

६७५५. **पारावतस्य रातिषु द्रवच्चक्रेष्वाशुषु । तिष्ठं वनस्य मध्य आ ॥१८ ॥**

पारावत (तत्त्वज्ञ ऋषि) द्वारा प्रदत्त ऐश्वर्य तथा द्रुतगामी अश्वों से युक्त रथ में विराजमान होकर हम (तपो) वन के मध्य पहुँच गये (ऐसा वसुरोचिष् ने बार-बार कहा ।) ॥१८ ॥

[सूक्त - ३५]

[**ऋषि-** श्यावाश्व आत्रेय । **देवता-** अश्वनीकुमार । **छन्द-** उपरिष्टात् ज्योति (त्रिष्टुप्), २२,२४ पंक्ति, २३ महाबृहती ।]

६७५६. **अग्निनेन्द्रेण वरुणेन विष्णुनादित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥१ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! इन्द्र, वरुण, अग्नि, विष्णु, आदित्यगण, वसु, रुद्र, उषा तथा सूर्यदेव के सहित आप दोनों सोमरस का पान करें ॥१ ॥

६७५७. **विश्वाभिर्धीभिर्भुवनेन वाजिना दिवा पृथिव्याद्रिभिः सचाभुवा ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥२ ॥



हे शक्तिशाली अश्विनीकुमारो ! समस्त जीवधारियों, द्युलोक, भूलोक, उषा, सूर्य तथा श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न होकर आप सोमरस का पान करें ॥२ ॥

६७५८. **विश्वैर्देवैस्त्रिभिरेकादशैरिहाद्भिर्मरुद्भिर्भृगुभिः सचाभुवा ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! सम्पूर्ण तैंतीस देवताओं, भृगुओं, मरुतों, जल, उषा तथा सूर्यदेव के साथ मिलकर आप दोनों सोमरस का पान करें ॥३ ॥

६७५९. **जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोळ्हमश्विना ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारी स्तुतियों पर ध्यान दें और हमारे यज्ञ का सेवन करें ।आप दोनों, तीनों सवनों के समय पधारें ।उसके बाद आप देवी उषा और सूर्यदेव के साथ विराजमान होकर हमें अन्न प्रदान करें ॥४ ॥

६७६०. **स्तोमं जुषेथां युवशेव कन्यनां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोळ्हमश्विना ॥५ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार युवतियों के स्वयंवर हेतु आने वाले आमन्त्रण को युवक स्वीकार करते हैं, उसी प्रकार हमारी स्तुतियों को आप स्वीकार करें । आप हमारे सम्पूर्ण (तीनों) सवनों में पधारें और सूर्यदेव के साथ विराजमान होकर हमें अन्न प्रदान करें ॥५ ॥

६७६१. **गिरो जुषेथामध्वरं जुषेथां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोळ्हमश्विना ॥६ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे स्तुतिवचनों को ग्रहण करें और श्रेष्ठ यज्ञों का सेवन करें । आप दोनों , समस्त (तीनों) सवनों में यहाँ पधारें और प्रातः सूर्योदयकाल में हमें अन्न प्रदान करें ॥६ ॥

६७६२. **हारिद्रवेव पतथो वनेदुप सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥७ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार प्यास से व्याकुल होकर पक्षी और पशु पानी के पास जाते हैं, उसी प्रकार तैयार किये हुए सोमरस के पास आप दोनों पधारें ।आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ हमारे यज्ञस्थल पर पधारें॥७

६७६३. **हंसाविव पतथो अध्वगाविव सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥८ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हंस के सदृश तेज-सम्पन्न हैं । जिस प्रकार प्यास से व्याकुल होकर पथिक तथा पशु-पक्षी जल के पास जाते हैं, उसी प्रकार आप दोनों तैयार किये हुए सोमरस के पास पधारें । आप उषाकाल तथा सूर्योदय के समय हमारे घर पर तीनों सवनों में पधारें ॥८ ॥

६७६४. **श्येनाविव पतथो हव्यदातये सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥९ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! अन्न प्रदान करने के लिए आप बाज़ पक्षी की तरह द्रुतगति से पधारें । जल के समीप जाते हुए प्यासे पशु-पक्षी के समान आप सोमरस पीने के लिए पधारें । आप उषाकाल और सूर्योदय के समय हमारे घर में तीनों बार पधारें ॥९ ॥



६७६५. **पिबतं च तृष्णुतं चा च गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१० ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप सोमपान करके तृप्त हों और हमें संतान एवं ऐश्वर्य प्रदान करें । आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ विद्यमान रहकर हमें महान् सामर्थ्य प्रदान करें ॥१० ॥

६७६६. **जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥११ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप रिपुओं पर विजय प्राप्त करें । हमारे द्वारा प्रशंसित होकर हमारी रक्षा करें । हमें संतान और ऐश्वर्य प्रदान करें ।आप उषाकाल और सूर्योदय के समय विद्यमान होकर हमें सामर्थ्य प्रदान करें ॥११ ॥

६७६७. **हतं च शत्रून्यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप शत्रुओं का विनाश करें और हमसे मित्रता करके हमें सन्तति तथा ऐश्वर्य प्रदान करें । आप उषाकाल तथा सूर्योदय के समय विद्यमान रहकर हमें शक्ति प्रदान करें ॥१२ ॥

६७६८. **मित्रावरुणवन्ता उत धर्मवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप मित्र, वरुण तथा धर्मशील मरुतों के साथ स्तुति करने वालों के आवाहन को सुनकर पधारते हैं । आप देवी उषा, सूर्यदेव तथा अदिति पुत्रों के साथ विद्यमान रहकर गमन करें ॥१३ ॥

६७६९. **अङ्गिरस्वन्ता उत विष्णुवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप स्तोताओं के आवाहन को सुनकर विष्णु , मरुद्गण तथा अंगिरस् के साथ पधारते हैं । आप देवी उषा, सूर्यदेव और अदिति पुत्रों के साथ विद्यमान रहकर प्रस्थान करें ॥१४ ॥

६७७०. **ऋभुमन्ता वृषणा वाजवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१५ ॥

अन्न से सामर्थ्यवान् हे अश्विनीकुमारो ! स्तोताओं के आवाहन को सुनकर आप ऋभुओं, आदित्यों तथा मरुतों के साथ पधारते हैं । आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ प्रस्थान करें ॥१५ ॥

६७७१. **ब्रह्म जिन्वतमुत जिन्वतं धियो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१६ ॥

हे अश्विनीकुमारो !आप असुरों का संहार करें और रोग के कीटाणुओं को भगायें ।आप मनुष्यों के ज्ञान और कर्म को नियन्त्रित रखें ।आप देवी उषा और सूर्यदेव के साथ सोमयाग में पधारकर सोमरस का पान करें ॥१६ ॥

६७७२. **क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं नृन्हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१७ ॥

हे अश्विनीकुमारो !आप असुरों का विनाश करें और रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करके, योद्धाओं को तथा उनके पराक्रम को नियन्त्रित करें ।आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ सोमयाग में पधारकर सोमपान करें ॥१७ ॥



६७७३. **धेनूर्जिन्वतमुत जिन्वतं विशो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१८ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप असुरों का संहार करें और रोगों को नष्ट करके गौओं तथा सन्तानों को बलिष्ठ बनायें । आप दोनों, देवी उषा और सूर्यदेव के साथ पधारकर अभिषुत सोमरस का पान करें ॥१८ ॥

६७७४. **अत्रेरिव शृणुतं पूर्व्यस्तुतिं श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरोअह्न्यम् ॥१९ ॥

रिपुओं के मद को चूर करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार आपने 'अत्रि' की प्रार्थना को सुना था, उसी प्रकार सोम अभिषव करते हुए मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की प्रार्थना को सुनें । देवी उषा और सूर्यदेव के साथ आकर आप दोनों अभिषुत सोमरस का पान करें ॥१९ ॥

६७७५. **सर्गाँ इव सृजतं सुष्टुतीरुप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरोअह्न्यम् ॥२० ॥

रिपुओं के घमण्ड को चूर करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! सोम अभिषव करते हुए मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की प्रार्थनाओं को निकट पधारकर स्वीकार करें । देवी उषा और सूर्यदेव के संग पधारकर आप दोनों अभिषुत सोमरस का पान करें ॥२० ॥

६७७६. **रश्मीँरिव यच्छतमध्वराँ उप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।**
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरोअह्न्यम् ॥२१ ॥

रिपुओं के घमण्ड को नष्ट करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! सोम अभिषव करने वाले मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि के यज्ञों में लगाम (नियंत्रक) की भाँति आयें । देवी उषा और सूर्यदेव के साथ उपस्थित होकरआप दोनों अभिषुत सोमरस का पान करें ॥२१ ॥

६७७७. **अर्वाग्रथं नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ।**
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपका आवाहन करते हैं, आप पधारें । आप अपने रथ को हमारे पास लायें और मधुर सोमरस का पान करके हमें रत्न प्रदान करें ॥२२ ॥

६७७८. **नमोवाके प्रस्थिते अध्वरे नरा विवक्षणस्य पीतये ।**
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपको आहूत करते हैं, आप निश्चित रूप से पधारें । हमारे श्रेष्ठ यज्ञ में किये गये अभिवादन-पूजन को ग्रहण करके, सोमपान के निमित्त पधारें और मुझ दानी को रत्न-धन प्रदान करें ॥२३ ॥

६७७९. **स्वाहाकृतस्य तृम्पतं सुतस्य देवावन्धसः ।**
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! अपने संरक्षण के लिए हम आपको आहूत करते हैं । अतः आप निश्चित रूप से पधारें । हमारे द्वारा अभिषुत सोम की हवियों को ग्रहण करके संतुष्ट हों और हमें रत्न-धन प्रदान करें ॥२४ ॥



[सूक्त - ३६]

[ऋषि- श्यावाश्व आत्रेय । देवता- इन्द्र । छन्द- शक्वरी, ७ महापंक्ति ।]

६७८०. **अवितासि सुन्वतो वृक्तबर्हिषः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।**
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥ १ ॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! सोम अभिषुत करने वालों तथा कुश का आसन बिछाने वाले याजकों को आप संरक्षण प्रदान करते हैं । आप सत्पुरुषों का पालन करने वाले और समस्त रिपुओं को पराजित करने वाले हैं । देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोम के अंश को आप मरुतों के साथ पान करके हर्षित हों ॥१ ॥

६७८१. **प्राव स्तोतारं मघवन्नव त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।**
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥२ ॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप महान् वैभव से सम्पन्न हैं । आप स्तोताओं को संरक्षण प्रदान करें । आप समस्त रिपु-सेनाओं पर विजय प्राप्त करने वाले तथा फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं । देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोम के अंश को आप मरुतों के साथ मिलकर पान करें और हर्षित हों । यह सोमरस आपके लिए सुखकारक हो ॥२ ॥

६७८२. **ऊर्जा देवाँ अवस्योजसा त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।**
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥३ ॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप अपनी ओजस्विता और शक्ति के द्वारा देवताओं को संरक्षित करते हैं । आप समस्त रिपु सेनाओं को पराजित करने वाले तथा सर्वत्र फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं । हे इन्द्रदेव ! देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर, हर्षित होने के लिए पान करें । यह सोम आपके लिए सुखकारक हो ॥३ ॥

६७८३. **जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।**
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥४ ॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप द्यु और भूलोक को उत्पन्न करने वाले हैं । आप समस्त रिपु सेनाओं को पराजित करने वाले और सर्वत्र फैले हुए जल (रस) को नियन्त्रित करने वाले हैं । देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर पान करें और हर्षित हों । यह सोमरस आपके लिए सुखकारक हो ॥४ ॥

६७८४. **जनिताश्वानां जनिता गवामसि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।**
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥५ ॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप गौओं और अश्वों को उत्पन्न करने वाले हैं । आप समस्त रिपु सेनाओं को पराजित करने वाले तथा सर्वत्र फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं । देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर हर्षित होने के लिए पान करें ॥५ ॥

६७८५. **अत्रीणां स्तोममद्रिवो महस्कृधि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।**
यं ते भागमधारयन् विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥६ ॥

आयुधधारी शतक्रतो हे इन्द्रदेव ! आप 'अत्रि' वंशियों की स्तुतियों का श्रवण करें । आप रिपुओं की समग्र सेनाओं को परास्त करने वाले तथा सर्वत्र फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं । हे सत्पुरुषों के पालक



इन्द्रदेव ! देवताओं के द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर, हर्षित होने के लिए पान करें ॥६ ॥

६७८६. **श्यावाश्वस्य सुन्वतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।**
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र ब्रह्माणि वर्धयन् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने यज्ञ कृत्य करने वाले 'अत्रि' ऋषि की स्तुतियों का श्रवण किया था, उसी प्रकार सोम अभिषव करने वाले मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की स्तुतियों का भी श्रवण करें । हे इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में आपने ब्रह्मज्ञान को समृद्ध करते हुए 'त्रसदस्यु' को अकेले ही रक्षित किया ॥७ ॥

[सूक्त - ३७]

[**ऋषि-** श्यावाश्व आत्रेय । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** महापंक्ति, १ अतिजगती ।]

६७८७. **प्रेदं ब्रह्म वृत्रतूर्येष्वाविथ प्र सुन्वतः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥१ ॥

बलों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आपने अपने समस्त रक्षण-साधनों के द्वारा इस स्तोता तथा सोम यज्ञ करने वाले याजक को रक्षित किया । निन्दारहित, वज्रधारी तथा वृत्र का हनन करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमपान करें ॥१ ॥

६७८८. **सेहान उग्र पृतना अभि द्रुहः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥२ ॥

बलों के स्वामी तथा वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त वीर हैं और निन्दारहित होकर वृत्र को मारने वाले हैं । आप अपने समस्त रक्षण-साधनों के द्वारा रिपु सेनाओं को परास्त करके, माध्यन्दिन सवन में पधार कर सोमरस का पान करें ॥२ ॥

६७८९. **एकराळस्य भुवनस्य राजसि शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥३ ॥

बलों के स्वामी तथा वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप इस लोक के एकमात्र सम्राट् के रूप में अलंकृत होते हैं । निन्दारहित और वृत्र का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें ॥३ ॥

६७९०. **सस्थावाना यवयसि त्वमेक इच्छचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥४ ॥

बलों के स्वामी और वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! भली प्रकार संगठित हुई रिपु-सेनाओं को आप अकेले ही तितर-बितर कर देते हैं । निन्दारहित और वृत्रहन्ता हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर, माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें ॥४ ॥

६७९१. **क्षेमस्य च प्रयुजश्च त्वमीशिषे शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥५ ॥

बलों के स्वामी और वृत्र का हनन करने वाले हे इन्द्रदेव ! उपलब्ध होने वाले और न उपलब्ध होने वाले



समस्त ऐश्वर्यों के आप स्वामी हैं । निन्दारहित और वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें ॥५ ॥

६७९२. **क्षत्राय त्वमवसि न त्वमाविथ शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥६ ॥

बलों के स्वामी और वृत्र का हनन करने वाले हे इन्द्रदेव ! अपनी सामर्थ्य के द्वारा आप सम्पूर्ण विश्व को रक्षित करते हैं, स्वयं भी पूर्ण सुरक्षित हैं । निन्दारहित और वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण- साधनों से सम्पन्न होकर माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें ॥६ ॥

६७९३. **श्यावाश्वस्य रेभतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।**
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र क्षत्राणि वर्धयन् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार यज्ञ-अनुष्ठान करने वाले 'अत्रि' ऋषि की स्तुतियों का आपने श्रवण किया था, उसी प्रकार स्मरण करने वाले 'श्यावाश्व' ऋषि की स्तुतियों का भी श्रवण करें । हे इन्द्रदेव ! आपने रणक्षेत्र में क्षात्रधर्म को समृद्ध करते हुए 'त्रसदस्यु' को अकेले ही सुरक्षित किया था ॥७ ॥

[सूक्त - ३८]

[**ऋषि**- श्यावाश्व आत्रेय । **देवता**- इन्द्राग्नी । **छन्द**- गायत्री ।]

६७९४. **यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु । इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥१ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! आप ही यज्ञ के ऋत्विज् हैं । आप हमारी अभिलाषा को समझें तथा पवित्र यज्ञीय कर्मों में पधारें ॥१ ॥

६७९५. **तोशासा रथयावाना वृत्रहणापराजिता । इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥२ ॥**

हे इन्द्राग्नि देव ! शत्रुओं का हनन करने वाले, रथ से यात्रा करने वाले, घेरा डालने वाले, दुष्टों का संहार करने वाले और कभी परास्त न होने वाले , आप हमारी स्तुति को स्वीकार करें ॥२ ॥

६७९६. **इदं वां मदिरं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः । इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥३ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! ऋत्विजों ने आपके लिए आनन्दप्रद, मधुर सोमरस तैयार किया है । इसके लिए हमारी प्रार्थना स्वीकार करें ॥३ ॥

६७९७. **जुषेथां यज्ञमिष्टये सुतं सोमं सधस्तुती । इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥४ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! आपकी एक साथ प्रार्थना की जाती है । हमारी आकांक्षाओं को पूर्ण करने के निमित्त आप हमारे यज्ञ में पधारें और अभिषुत सोमरस का पान करें ॥४ ॥

६७९८. **इमा जुषेथां सवना येभिर्हव्यान्यूहथुः । इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥५ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! जिस शक्ति से आप आहुतियों को ग्रहण करते हैं, हमारे इस यज्ञ में पधारकर, उसी शक्ति से इसका सेवन करें ॥५ ॥

६७९९. **इमां गायत्रवर्तनिं जुषेथां सुष्टुतिं मम । इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥६ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! हमारी गायत्री छन्द से बनी स्तुतियों का आप श्रवण करें और हमारे समीप पधारें ॥६ ॥

६८००. **प्रातर्यावभिरा गतं देवेभिर्जेन्यावसू । इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥७ ॥**



हे इन्द्राग्ने ! आप रिपुओं की सम्पत्ति पर विजय प्राप्त करते हैं । उषा काल के समय पधारने वाले देवताओं के साथ आप, सोमपान के निमित्त पधारें ॥७ ॥

६८०१. **श्यावाश्वस्य सुन्वतोऽत्रीणां शृणुतं हवम् । इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥८ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! आप सोम अभिषव करने वाले 'अत्रि' वंशीय ऋषियों और मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की प्रार्थना को सुनें तथा सोमपान के निमित्त पधारें ॥८ ॥

६८०२. **एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः । इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥९ ॥**

हे इन्द्राग्ने ! जिस प्रकार आत्मज्ञानियों ने सोमपान के निमित्त आपको आहूत किया था, उसी प्रकार अपनी सुरक्षा के लिए हम आपका आवाहन करते हैं ॥९ ॥

६८०३. **आहं सरस्वतीवतोरिन्द्राग्न्योरवो वृणे । याभ्यां गायत्रमृच्यते ॥१० ॥**

जिन इन्द्रदेव और अग्निदेव के लिए गायत्री छन्द वाले स्तोत्र उच्चारित किये जाते हैं, उनके द्वारा संरक्षित होने की हम सब कामना करते हैं ॥१० ॥

[सूक्त - ३९]

[**ऋषि**- नाभाक काण्व । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- महापंक्ति ।]

६८०४. **अग्निमस्तोष्यृग्मियमग्निमीळा यजध्यै ।**
अग्निर्देवाँ अनक्तु न उभे हि विदथे कविरन्तश्चरति दूत्यं१ नभन्तामन्यके समे ॥१॥

अपने यज्ञ के निमित्त हम ऋक्मन्त्रों द्वारा पूजने योग्य अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं । हमारे द्वारा प्रदत्त आहुतियों से वे देवताओं को आलोकित करें । क्रान्तदर्शी अग्निदेव मनुष्य और देवों के मध्य में संदेशवाहक का कार्य करते हुए गमन करते हैं, जिसके कारण हमारे समस्त रिपु नष्ट हो जाते हैं ॥१ ॥

६८०५. **न्यग्ने नव्यसा वचस्तनूषु शंसमेषाम् ।**
न्यराती रराव्णां विश्वा अर्यो अरातीरितो युच्छन्त्वामुरो नभन्तामन्यके समे ॥२॥

हे अग्ने ! हमारे शरीर में विद्यमान (रोग रूपी) रिपुओं को और हविप्रदाता के रिपुओं को आप अपने नवीन आयुधों द्वारा नष्ट करें । (साथ ही) समस्त मूढ़ और दुष्ट-दुराचारी शत्रुओं का विनाश करें ॥२ ॥

६८०६. **अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं घृतं न जुह्व आसनि ।**
स देवेषु प्र चिकिद्धि त्वं ह्यसि पूर्व्यः शिवो दूतो विवस्वतो नभन्तामन्यके समे॥३ ॥

हे अग्ने ! हम आपके मुख में हर्ष प्रदायक घृत की आहुतियाँ प्रदान करते हुए मननीय स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं, इन्हें ग्रहण करें । आप अत्यन्त प्राचीन, हितकारी, सम्पूर्ण ऐश्वर्यों के स्वामी तथा देवताओं के सन्देशवाहक हैं । आप हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का विनाश करें ॥३ ॥

६८०७. **तत्तदग्निर्वयो दधे यथायथा कृपण्यति ।**
ऊर्जाहुतिर्वसूनां शं च योश्च मयो दधे विश्वस्यै देवहूत्यै नभन्तामन्यके समे ॥४ ॥

स्तोतागण, जिस प्रकार के अन्न की इच्छा करते हैं, अग्निदेव उन्हें वैसा ही अन्न प्रदान करते हैं । स्तुतियों द्वारा बुलाये जाने वाले अग्निदेव, याजकों को हितकारी सुख और रोगनिरोधक क्षमता प्रदान करते हैं । यज्ञों में सभी देवों के साथ आवाहन किये जाने वाले अग्निदेव, हमारे रिपुओं का विनाश करें ॥४ ॥



६८०८. **स चिकेत सहीयसाग्निश्चित्रेण कर्मणा ।**

स होता शश्वतीनां दक्षिणाभिरभीवृत इनोति च प्रतीव्यं१ नभन्तामन्यके समे ॥५॥

वे अग्निदेव अपनी सामर्थ्य और कार्यों की विचित्रता से पहचाने जाते हैं । वे यज्ञों में विद्यमान रहने वाले और देवताओं का आवाहन करने वाले हैं । वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति से सम्पन्न होकर चढ़ाई करने के निमित्त रिपुओं तक पहुँचते हैं और उनका विनाश करते हैं ॥५ ॥

६८०९. **अग्निर्जाता देवानामग्निर्वेद मर्तानामपीच्यम् ।**

अग्निः स द्रविणोदा अग्निर्द्वारा व्यूर्णुते स्वाहुतो नवीयसा नभन्तामन्यके समे ॥६॥

वे अग्निदेव मनुष्य जीवन के रहस्यों और देवताओं के रहस्यों को जानते हैं । वे नवीन अन्नों की आहुतियों को ग्रहण करके समस्त ऐश्वर्यों को प्रदान करते हैं तथा सम्पूर्ण रिपुओं का विनाश करते हैं । वे बुलाये जाने के बाद सम्पूर्ण सम्पत्ति का द्वार खोल देते हैं ॥६ ॥

[वैज्ञानिक-विचारक यह तथ्य स्वीकार करते हैं कि मनुष्य ने जब से अग्नि के विविध प्रयोग सीखे, तभी से उसमें वैभव उत्पादन की क्षमता आ गयी ।]

६८१०. **अग्निर्देवेषु संवसुः स विक्षु यज्ञियास्वा ।**

स मुदा काव्या पुरु विश्वं भूमेव पुष्यति देवो देवेषु यज्ञियो नभन्तामन्यके समे॥७॥

वे अग्निदेव देवताओं के बीच में वास करते हैं और यज्ञ-कृत्य करने वालों के बीच में यज्ञाग्नि के रूप में प्रकट होते हैं । जिस प्रकार पृथ्वी, जगत् को पोषण प्रदान करती है, उसी प्रकार अग्निदेव सम्पूर्ण कार्यों को पुष्ट करते हैं । वे महान् गुणों से सम्पन्न होने के कारण पूजनीय हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें ॥७ ॥

६८११. **यो अग्निः सप्तमानुषः श्रितो विश्वेषु सिन्धुषु ।**

तमागन्म त्रिपस्त्यं मन्धातुर्दस्युहन्तममग्निं यज्ञेषु पूर्व्यं नभन्तामन्यके समे ॥८॥

वे अग्निदेव सातों द्वीपों, सरिताओं और सभी मनुष्यों में व्याप्त रहते हैं । तीनों (द्यु, अन्तरिक्ष और पृथ्वी) स्थानों में विद्यमान रहने वाले अग्निदेव विद्वान् पुरुषों की रक्षा करते हैं । महान् तथा दुष्ट लोगों के संहारक अग्निदेव को हम यज्ञों में वरण करते हैं, क्योंकि वे हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का विनाश करते हैं ॥८ ॥

[वर्तमान इतिहासकारों की मान्यता है कि पृथ्वी के सातो द्वीपों की खोज कुछ सौ वर्ष पूर्व ही हो सकी है, किन्तु ऋषिगण हजारों वर्ष पूर्व इस तथ्य को जानते थे । ऊर्जा रूप में अग्नि को प्रकृति एवं जीवों में संव्याप्त देखते थे ।]

६८१२. **अग्निस्त्रीणि त्रिधातून्या क्षेति विदथा कविः ।**

स त्रीँरेकादशाँ इह यक्षच्च पिप्रयच्च नो विप्रो दूतः परिष्कृतो नभन्तामन्यके समे॥९॥

क्रान्तदर्शी अग्निदेव तीनों स्थानों (पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक) में निवास करते हैं । वे देवताओं के संदेशवाहक हैं । वे पवित्र होकर देवताओं तक आहुतियाँ पहुँचाते हैं और हमें भी तुष्ट करते हैं । वे हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का संहार करते हैं ॥९ ॥

६८१३. **त्वं नो अग्न आयुषु त्वं देवेषु पूर्व्य वस्व एक इरज्यसि ।**

त्वामापः परिस्रुतः परि यन्ति स्वसेतवो नभन्तामन्यके समे ॥१०॥

हे पुरातन अग्ने ! आप देवताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं और मनुष्यों के स्वामी हैं । सर्वत्र प्रवाहित होने वाली जल धाराएँ आपकी तरफ गमन करती हैं । आप हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का संहार करें ॥१० ॥



[सूक्त - ४०]

[**ऋषि**- नाभाक काण्व । **देवता**- इन्द्राग्नी । **छन्द**- महापंक्ति, २ शक्वरी,१२ त्रिष्टुप् ।]

६८१४. **इन्द्राग्नी युवं सु नः सहन्ता दासथो रयिम् ।**
येन दृळ्हा समत्स्वा वीळु चित्साहिषीमह्यग्निर्वनेव वात इन्नभन्तामन्यके समे ॥१॥

हे इन्द्राग्ने ! आप हमें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करें । जैसे अग्नि और वायु दोनों मिलकर वनों को भस्म कर देते हैं, उसी प्रकार हम उस सम्पत्ति के द्वारा बलिष्ठ रिपु-सेनाओं का विनाश करें ॥१ ॥

६८१५. **नहि वां वव्रयामहेऽथेन्द्रमिद्यजामहे शविष्ठं नृणां नरम् ।**
स नः कदा चिदर्वता गमदा वाजसातये गमदा मेधसातये नभन्तामन्यके समे ॥२॥

नायकों में सर्वश्रेष्ठ, शक्तिशाली हे इन्द्राग्ने !हम, आप दोनों की उपेक्षा नहीं, उपासना करते हैं ।आप अन्न आदि वैभव प्रदान करने के लिए अपने अश्वों द्वारा हमारे यज्ञों में कब पधार रहे हैं ?हमारे रिपु स्वयं नष्ट हो जाएँ ॥२॥

६८१६. **ता हि मध्यं भराणामिन्द्राग्नी अधिक्षितः । ता उ कवित्वना कवी**
पृच्छ्यमाना सखीयते सं धीतमश्नुतं नरा नभन्तामन्यके समे ॥३ ॥

हे श्रेष्ठ नायक इन्द्राग्ने ! आप अपनी विद्वत्ता के कारण सबके लिए वरणीय हैं । मित्रता के इच्छुक अपने भक्तों द्वारा किये गए कर्मों को आप स्वीकार करें । आप रणक्षेत्र के बीच में विद्यमान रहते हैं, जिससे हमारे अन्य रिपु अपने आप नष्ट हो जाते हैं ॥३ ॥

६८१७. **अभ्यर्च नभाकवदिन्द्राग्नी यजसा गिरा ।**
ययोर्विश्वमिदं जगदियं द्यौः पृथिवी मह्यु१पस्थे बिभृतो वसु नभन्तामन्यके समे॥४ ॥

उन दोनों (इन्द्राग्नि) में समस्त जगत् , धरती और आकाश विद्यमान हैं तथा वे ऐश्वर्य धारण करते हैं । हे याजको ! 'नाभाक' ऋषि के सदृश आप भी उन इन्द्राग्नि का यज्ञ और स्तोत्रों द्वारा पूजन करें । उनके प्रभाव से हमारे सभी शत्रु नष्ट हो जाएँ ॥४ ॥

६८१८. **प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ।**
या सप्तबुध्नमर्णवं जिह्मबारमपोर्णुत इन्द्र ईशान ओजसा नभन्तामन्यके समे ॥५॥

साधकगण 'नाभाक' ऋषि के सदृश इन्द्र और अग्निदेव की स्तुति करते हैं । वे जल के सप्तमूल अर्थात् सप्त महासागरों को अपने बल से आच्छादित करने वाले तथा जल-धाराओं को प्रवाहित करने वाले हैं । वे इन्द्रदेव अपने ओज के द्वारा समस्त जगत् को नियन्त्रित करने वाले ईश्वर हैं । (उनकी कृपा से) सभी शत्रु नष्ट हों ॥५ ॥

६८१९. **अपि वृश्च पुराणवद् व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय ।**
वयं तदस्य सम्भृतं वस्विन्द्रेण वि भजेमहि नभन्तामन्यके समे ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीन काल की तरह आप रिपुओं को पौधों की अवाञ्छित टहनियों की भाँति काट दें । आप दस्युओं के ओज को विनष्ट करें । आपके सहयोग से असुरों द्वारा संगृहीत ऐश्वर्य हमको प्राप्त हो तथा हमारे अन्य रिपु अपने आप नष्ट हो जाएँ ॥६ ॥

६८२०. **यदिन्द्राग्नी जना इमे विह्वयन्ते तना गिरा ।**
अस्माकेभिर्नृभिर्वयं सासह्याम पृतन्यतो वनुयाम वनुष्यतो नभन्तामन्यके समे॥७ ॥



जो मनुष्य अपने धन और प्रार्थनाओं के द्वारा इन्द्राग्निदेव को आवाहित करते हैं; उनके साथ हम अपने पराक्रमी योद्धाओं की सहायता से रिपु-सेनाओं को पराजित करते हैं। जो व्यक्ति हमसे प्रेम करते हैं, हम भी उनके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करें (और) हमारे अन्य रिपु विनष्ट हो जाएँ ॥७॥

६८२१. **या नु श्वेताववो दिव उच्चरात उप द्युभिः।**
इन्द्राग्न्योरनु व्रतमुहाना यन्ति सिन्धवो यान्त्सीं बन्धादमुञ्चतां नभन्तामन्यके समे॥८॥

वे इन्द्रदेव और अग्निदेव सतोगुण सम्पन्न हैं। वे अपने आलोक के द्वारा द्युलोक में सब जगह गमन करते हैं। उन्होंने सरिताओं को बन्धनमुक्त करके प्रवाहित किया। उनके कृत्यों के अनुसार याजकगण आचरण करते हैं। वे देव हमारे अन्य रिपुओं का विनाश करें ॥८॥

६८२२. **पूर्वीष्ट इन्द्रोपमातयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः सूनो हिन्वस्य हरिवः।**
वस्वो वीरस्यापृचो या नु साधन्त नो धियो नभन्तामन्यके समे॥९॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! अपने वीरतापूर्ण कार्यों से प्रसन्न करने वाले योद्धाओं को आप ऐश्वर्य प्रदान करें। आपके अनेकों नाम और अनेकों स्तोत्र हैं। उन स्तुतियों ने हमारी बुद्धि को श्रेष्ठ बनाया है, आप हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें ॥९॥

६८२३. **तं शिशीता सुवृक्तिभिस्त्वेषं सत्वानमृग्मियम्।**
उतो नु चिद्य ओजसा शुष्णस्याण्डानि भेदति जेषत्स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे॥१०॥

तेज-सम्पन्न इन्द्रदेव ने अपने ओज के द्वारा 'शुष्ण' नामक राक्षस के पुत्रों का संहार किया। उन्होंने ध्वनि करने वाली सरिताओं को नियन्त्रित किया। शक्तिशाली तथा मन्त्रों द्वारा प्रार्थनीय उन इन्द्रदेव को स्तुतियों द्वारा समृद्ध करें, जिससे वे समस्त रिपुओं का संहार करें ॥१०॥

६८२४. **तं शिशीता स्वध्वरं सत्यं सत्वानमृत्वियम्।**
उतो नु चिद्य ओहत आण्डा शुष्णस्य भेदत्यजैः स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे॥११॥

हे स्तोताओ ! जो सर्वत्र गमन करते हैं और 'शुष्ण' नामक राक्षस के पुत्रों का संहार करते हैं तथा जो हर्ष प्रदायक जल-प्रवाहों को नियंत्रित करते हैं; उन श्रेष्ठ मार्गदर्शक, अविनाशी तथा प्रार्थनीय इन्द्रदेव को आप समृद्ध करें, जिससे वे समस्त रिपुओं का संहार कर सकें ॥११॥

६८२५. **एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि।**
त्रिधातुना शर्मणा पातमस्मान् वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥१२॥

हमने अपने पिता 'मान्धाता' और 'अंगिरा' ऋषि के सदृश ही अग्नि और इन्द्रदेव के लिए अभिनव स्तुतियाँ की हैं। वे हमें तीन पर्वों वाला (तीन प्रकार सर्दी - गर्मी - बरसात से सुरक्षित) आवास प्रदान करें और हमें ऐश्वर्य सम्पन्न बनाएँ ॥१२॥

[सूक्त - ४१]

[**ऋषि-** नाभाक काण्व। **देवता-** वरुण। **छन्द-** महापंक्ति।]

६८२६. **अस्मा ऊ षु प्रभूतये वरुणाय मरुद्भ्योऽर्चा विदुष्टरेभ्यः।**
यो धीता मानुषाणां पश्वो गाइव रक्षति नभन्तामन्यके समे॥१॥



हे स्तोताओ ! वरुणदेव, मनुष्यों के समस्त पशुओं को, गौओं के सदृश ही रक्षित करते हैं । ऐश्वर्यवान् वरुणदेव तथा ज्ञानी मरुद्गण की आप उपासना करें । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥१ ॥

६८२७. **तमू षु समना गिरा पितॄणां च मन्मभिः । नाभाकस्य प्रशस्तिभिर्यः**
सिन्धूनामुपोदये सप्तस्वसा स मध्यमो नभन्तामन्यके समे ॥२ ॥

हम अपने श्रेष्ठ स्तोत्रों से वरुणदेव की स्तुति करते हैं, पितरों की स्तुति करते हैं । 'नाभाक' ऋषि के स्तोत्रों के द्वारा, सात सरिताओं से समृद्ध सप्तमहासागरों की स्तुति करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें ॥२ ॥

६८२८. **स क्षपः परि षस्वजे न्यु१स्रो मायया दधे स विश्वं परि दर्शतः ।**
तस्य वेनीरनु व्रतमुषस्तिस्रो अवर्धयन्नभन्तामन्यके समे ॥३ ॥

दर्शनीय और अत्यन्त त्यागी वरुणदेव अपने कर्म-कौशल के द्वारा समस्त संसार को विनिर्मित करते हैं । वे रात्रियों को मिलाकर रखते हैं । वृद्धि की कामना वाले व्यक्ति उन (वरुण देव) को तीनों उषाओं में संवर्धित करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥३ ॥

६८२९. **यः ककुभो निधारयः पृथिव्यामधि दर्शतः । स माता पूर्व्यं पदं**
तद्वरुणस्य सप्त्यं स हि गोपा इवेर्यो नभन्तामन्यके समे ॥४ ॥

जिन दर्शनीय वरुणदेव ने पृथ्वी पर समस्त दिशाओं की स्थापना की, वही सबके स्वामी भी हैं । उनका उच्च स्थान पहले से निर्धारित है ।वे ग्वाले के समान सबकी सुरक्षा करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥४॥

६८३०. **यो धर्ता भुवनानां य उस्राणामपीच्या३ वेद नामानि गुह्या ।**
स कविः काव्या पुरु रूपं द्यौरिव पुष्यति नभन्तामन्यके समे ॥५ ॥

वरुणदेव, समस्त लोकों को धारण करने वाले और किरणों के गुह्य नामों को जानने वाले हैं । वे ही द्युलोक के समान कवियों (दूरदर्शियों) के ज्ञान को पुष्ट करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥५ ॥

६८३१. **यस्मिन् विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता । त्रितं जूती सपर्यत व्रजे**
गावो न संयुजे युजे अश्वाँ अयुक्षत नभन्तामन्यके समे ॥६ ॥

चक्र की नाभि के समान जिन वरुणदेव में समस्त सद्ज्ञान आश्रित हैं, तीनों भुवनों में व्याप्त होने वाले उन देव की सभी लोग प्रार्थना करें । जिस प्रकार गौएँ गोष्ठ में प्रवेश करती हैं, उसी प्रकार रिपुओं को पराजित करने के लिए रथों में घोड़ों को नियोजित करके वे रणक्षेत्र में जाते हैं । वे समस्त रिपुओं का विनाश करते हैं ॥६ ॥

६८३२. **य आस्वत्क आशये विश्वा जातान्येषाम् । परि धामानि मर्मृशद्वरुणस्य**
पुरो गये विश्वे देवा अनु व्रतं नभन्तामन्यके समे ॥७ ॥

जो वरुणदेव समस्त पदार्थों को छत्र के सदृश ढक कर रहते हैं, जो समस्त देवताओं के बल को समृद्ध करते हैं; सभी देवता उनके कृत्यों का अनुपालन करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥७ ॥

६८३३. **स समुद्रो अपीच्यस्तुरो द्यामिव रोहति नि यदासु यजुर्दधे ।**
स माया अर्चिना पदास्तृणान्नाकमारुहन्नभन्तामन्यके समे ॥८ ॥

समुद्रों के स्वामी वरुणदेव, सूर्य की भाँति आकाश में आरूढ़ होकर सभी दिशाओं में कर्मरत होते हैं । वे सभी मनुष्यों को दान देते हैं । वे राक्षसं' की माया को अपने दिव्य प्रकाश से नष्ट कर देते हैं । हमारे समस्त रिपु नष्ट हों ॥८ ॥



६८३४. **यस्य श्वेता विचक्षणा तिस्रो भूमीरधिक्षितः ।**
त्रिरुत्तराणि पप्रतुर्वरुणस्य ध्रुवं सदः स सप्तानामिरज्यति नभन्तामन्यके समे ॥९॥

अन्तरिक्ष में विद्यमान रहने वाले जिन वरुणदेव ने अपने उज्ज्वल तेज के द्वारा तीनों लोकों का विस्तार किया, उनका स्थान अविचल है । वे (जल के) सातों (स्रोतों) को नियंत्रित करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥९ ॥

६८३५. **यः श्वेताँ अधिनिर्णिजश्चक्रे कृष्णाँ अनु व्रता । स धाम पूर्व्यं ममे यः स्कम्भेन वि रोदसी अजो न द्यामधारयन्नभन्तामन्यके समे ॥१० ॥**

जिन वरुणदेव ने अपने व्रत के अनुसार अपनी किरणों को दिन में सफेद और रात में काली बनाया तथा जिनने अन्तरिक्ष और पृथ्वीलोक को उसी प्रकार धारण किया, जैसे आदित्य द्युलोक को धारण करते हैं, वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥१० ॥

[सूक्त - ४२]

[**ऋषि-** नाभाक काण्व अथवा अर्चनाना आत्रेय । **देवता-** १-३ वरुण, ४-६ अश्विनीकुमार । **छन्द-** १-३ त्रिष्टुप्, ४-६ अनुष्टुप् ।]

६८३६. **अस्तभ्नाद् द्यामसुरो विश्ववेदा अमिमीत वरिमाणं पृथिव्याः ।**
आसीदद्विश्वा भुवनानि सम्राड् विश्वेत्तानि वरुणस्य व्रतानि ॥१ ॥

वरुणदेव सर्वज्ञाता और बलवान् हैं, उन्होंने द्युलोक को स्थापित किया तथा पृथ्वी को विस्तार दिया है । उन्होंने समस्त लोकों को नियंत्रित किया है । ये समस्त पुरुषार्थ वरुणदेव के ही हैं ॥१ ॥

६८३७. **एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तं नमस्या धीरममृतस्य गोपाम् ।**
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत्पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे ॥२ ॥

हे स्तोताओ ! आप उन श्रेष्ठ वरुणदेव की वंदना करें । जो अमृत को सुरक्षित करने वाले और धैर्य धारण करने वाले हैं । आप उनको नमन करें । वे हमें तीन खण्डों वाला सुरक्षित आवास प्रदान करें । आकाश तथा पृथ्वी पर हमारा संरक्षण करें । हम उनकी गोद में निश्चिन्त होकर रहते हैं ॥२ ॥

६८३८. **इमां धियं शिक्षमाणस्य देव क्रतुं दक्षं वरुण सं शिशाधि ।**
ययाति विश्वा दुरिता तरेम सुतर्माणमधि नावं रुहेम ॥३ ॥

हे वरुणदेव ! यज्ञ (परमार्थ) करने वाली हमारी बुद्धि को आप श्रेष्ठ दिशा प्रदान करें । आप हमारी कर्मशीलता और बौद्धिक क्षमता को बढ़ाएँ । जिसके सहयोग से हम समस्त विपत्तियों को पार कर जाएँ और सुगमता से पार लगाने वाली नाव पर आरूढ़ हों ॥३ ॥

६८३९. **आ वां ग्रावाणो अश्विना धीभिर्विप्रा अचुच्यवुः ।**
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥४ ॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! विद्वान् पुरुष आप दोनों के निमित्त पाषाणों से पीसकर तैयार किया गया सोमरस प्रस्तुत करते हैं, जिससे आपकी अनुकम्पा प्राप्त करके, वे अपने समस्त रिपुओं का विनाश करने में सफल हो सकें ॥४ ॥



६८४०. **यथा वामत्रिरश्विना गीर्भिर्विप्रो अजोहवीत् ।**
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥५ ॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार 'अत्रि' ऋषि ने अपनी स्तुतियों के द्वारा, सोमरस पान करने के लिए आपको आवाहित किया था, उसी प्रकार हम भी आपका आवाहन करते हैं । आप हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें ॥५ ॥

६८४१. **एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।**
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥६ ॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार विद्वान् पुरुषों ने सोमपान के निमित्त आपका आवाहन किया था, उसी प्रकार अपने संरक्षण के लिए हम भी आपका आवाहन करते हैं ।आप हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें ॥६ ॥

[सूक्त - ४३]

[**ऋषि-** विरूप आङ्गिरस । **देवता-** अग्नि । **छन्द-** गायत्री ।]

६८४२. **इमे विप्रस्य वेधसोऽग्नेरस्तृतयज्वनः । गिरः स्तोमास ईरते ॥१ ॥**

मेधावी अग्निदेव ही समस्त संसार को बनाने वाले हैं । वे अपने याजकों को कभी भी नष्ट नहीं होने देते । हम स्तोतागण ऐसे अग्निदेव की उपासना करते हैं ॥१ ॥

६८४३. **अस्मै ते प्रतिहर्यते जातवेदो विचर्षणे । अग्ने जनामि सुष्टुतिम् ॥२ ॥**

समस्त पदार्थों के ज्ञाता और सबको प्रकाशित करने वाले हे अग्ने ! आप से अनुदान की कामना करने वाले, हम याजकगण आपके निमित्त स्तोत्र पाठ करते हैं ॥२ ॥

६८४४. **आरोकाइव घेदह तिग्मा अग्ने तव त्विषः । दद्भिर्वनानि बप्सति ॥३ ॥**

हे अग्ने ! जिस प्रकार प्रकाश अंधकार को खा जाता है, उसी प्रकार आप की तेजस्वी लपटें वनों (काष्ठादि) को खा जाती हैं ॥३ ॥

६८४५. **हरयो धूमकेतवो वातजूता उप द्यवि । यतन्ते वृथगग्नयः ॥४ ॥**

धूम्र रूप ध्वजा से पहचाने जाने वाले अग्निदेव रसों का हरण करते हैं । वायु के द्वारा प्रेरित होकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने वाले अग्निदेव आकाश में पृथक्-पृथक् रूपों से विचरण करते हैं ॥४ ॥

६८४६. **एते त्ये वृथगग्नय इद्धासः समदृक्षत । उषसामिव केतवः ॥५ ॥**

अग्निदेव अलग-अलग जलकर प्रातःकाल उषा की लाली रूपी पताका के सदृश देखने योग्य हो जाते हैं ॥५ ॥

६८४७. **कृष्णा रजांसि पत्सुतः प्रयाणे जातवेदसः । अग्निर्यद्रोधति क्षमि ॥६ ॥**

संसार के समस्त पदार्थों के ज्ञाता अग्निदेव धरती पर प्रकट होकर जब वापस होते हैं, उस समय रज-कण काले रंग के हो जाते हैं ॥६ ॥

६८४८. **धासिं कृण्वान ओषधीर्बप्सदग्निर्न वायति । पुनर्यन्तरुणीरपि ॥७ ॥**

वे अग्निदेव अनेक प्रकार की ओषधियों को अन्न समझकर खाते हैं, फिर भी वे तुष्ट नहीं होते । वे सदैव युवा बने रहकर ओषधियों में विद्यमान रहते हैं ॥७ ॥



६८४९. **जिह्वाभिरह नन्नमदर्चिषा जञ्जणाभवन्। अग्निर्वनेषु रोचते ॥८ ॥**

वे अग्निदेव पेड़पौधों को अपनी जिह्वा के द्वारा चाटते हुए (जलाते हुए) अपने आत्मतेज से अत्यन्त आलोकित होते हैं और वनों में सुशोभित होते हैं ॥८ ॥

६८५०. **अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधीरनु रुध्यसे। गर्भे सञ्जायसे पुनः ॥९ ॥**

हे अग्ने ! आप जल में प्रविष्ट होते हैं और ओषधियों को स्थिरता प्रदान करते हुए उन्हीं के बीच से उत्पन्न होते हैं ॥९ ॥

६८५१. **उदग्ने तव तद् घृतादर्ची रोचत आहुतम्। निंसानं जुह्वो३ मुखे ॥१० ॥**

हे अग्ने ! आपकी लपटें घृत के रूप में आहुति ग्रहण करती हैं । घी से भरे हुए चम्मच को मुख से चाटकर वे सुशोभित होती हैं ॥१० ॥

६८५२. **उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे। स्तोमैर्विधेमाग्नये ॥११ ॥**

जिनका अन्न ग्रहण करने योग्य और आहुति भक्षण करने योग्य है, उन सोम पीठ वाले अग्निदेव का महान् स्तोत्रों के द्वारा हम पूजन करते हैं ॥११ ॥

६८५३. **उत त्वा नमसा वयं होतर्वरेण्यक्रतो। अग्ने समिद्भिरीमहे ॥१२ ॥**

देवताओं का आवाहन करने वाले महान् ज्ञानी हे अग्ने ! हम विनम्रतापूर्वक समिधाओं को प्रज्वलित कर आपकी प्रार्थना करते हैं ॥१२ ॥

६८५४. **उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत। अङ्गिरस्वद्धवामहे ॥१३ ॥**

पवित्र और आवाहन किये जाने योग्य हे अग्ने ! जिस प्रकार 'भृगु' और 'मनु' ने आपका आवाहन किया था, उसी प्रकार हम भी आपका आवाहन करते हैं ॥१३ ॥

६८५५. **त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता। सखा सख्या समिध्यसे ॥१४ ॥**

हे अग्ने ! आप सखा, सज्जन तथा विद्वान् हैं। आप समान गुणों वाली अग्नियों के द्वारा प्रकट या सुशोभित होते हैं ॥१४ ॥

६८५६. **स त्वं विप्राय दाशुषे रयिं देहि सहस्रिणम्। अग्ने वीरवतीमिषम् ॥१५ ॥**

हे अग्ने ! आप आहुति प्रदान करने वाले ज्ञानी पुरुषों को हजारों प्रकार का धन-धान्य और सन्तान आदि से युक्त वैभव प्रदान करें ॥१५ ॥

६८५७. **अग्ने भ्रातः सहस्कृत रोहिदश्व शुचिव्रत। इमं स्तोमं जुषस्व मे ॥१६ ॥**

भाई के समान प्रेम करने वाले, शक्तिशाली, तेज-सम्पन्न, लपटों वाले तथा पवित्र व्रतों को धारण करने वाले हे अग्ने ! आप हमारी स्तुतियों को स्नेहपूर्वक ग्रहण करें ॥१६ ॥

६८५८. **उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रतिहर्यते। गोष्ठं गाव इवाशत ॥१७ ॥**

हे अग्ने ! जिस प्रकार गौएँ आवाज करते हुए बछड़े की ओर जाती हैं, उसी प्रकार हमारी स्तुतियां आपकी ओर गमन करती हैं ॥१७ ॥

६८५९. **तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक्। अग्ने कामाय येमिरे ॥१८ ॥**

हे अग्ने ! आप अंगिराओं में सर्वश्रेष्ठ हैं । अपनी कामनाओं को प्राप्त करने के लिए समस्त प्रजाएं आपकी उपासना करती हैं ॥१८ ॥



६८६०. अग्निं धीभिर्मनीषिणो मेधिरासो विपश्चितः । अद्मसद्याय हिन्विरे ॥१९ ॥

अपने मन को श्रेष्ठ दिशा मे चलाने वाले विद्वान् और ज्ञानी पुरुष अपने श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा प्रत्येक घर में विद्यमान रहने वाले, अग्निदेव को प्रदीप्त करते हैं ॥१९ ॥

६८६१. तं त्वामज्मेषु वाजिनं तन्वाना अग्ने अध्वरम् । वह्निं होतारमीळते ॥२० ॥

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त शक्तिशाली, हवियों को वहन करने वाले तथा देवताओं को बुलाने वाले हैं । याजक, अपने घरों में यज्ञ सम्पन्न करते हुए आपकी प्रार्थना करते हैं ॥२० ॥

६८६२. पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे ॥२१ ॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वत्र विराजमान रहने वाले तथा समस्त प्राणियों को समान दृष्टि से देखने वाले सबके स्वामी हैं । इसलिए हम लोग युद्ध में आपका आवाहन करते हैं ॥२१ ॥

६८६३. तमीळिष्व य आहुतोऽग्निर्विभ्राजते घृतैः । इमं नः शृणवद्धवम् ॥२२ ॥

अग्निदेव घृत की हवियों से प्रज्वलित होते हैं । हे याजको ! आप उन अग्निदेव की ही प्रार्थना करें ; क्योंकि वे ही हमारी प्रार्थनाओं को सुनते हैं ॥२२ ॥

६८६४. तं त्वा वयं हवामहे शृण्वन्तं जातवेदसम् । अग्ने घ्नन्तमप द्विषः ॥२३ ॥

हे अग्निदेव ! आप समस्त पदार्थों को जानने वाले, हमारी स्तुतियों को सुनने वाले तथा सम्पूर्ण रिपुओं का संहार करने वाले हैं । हम आपका आवाहन करते हैं ॥२३ ॥

६८६५. विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम् । अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥२४ ॥

वे अग्निदेव श्रेष्ठ कार्यों के स्वामी और समस्त मनुष्यों के सम्राट् हैं । हम उनकी प्रार्थना करते हैं ॥२४ ॥

६८६६. अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् । सप्तिं न वाजयामसि ॥२५ ॥

वे अग्निदेव समस्त मनुष्यों को चलाने वाले एवं शक्तिशाली मनुष्यों के समान सबके लिए कल्याणकारी हैं । वे अश्व की भाँति द्रुतगामी हैं । अपनी आहुतियों के द्वारा हम उन्हें शक्तिशाली बनाते हैं ॥२५ ॥

६८६७. घ्नन्मृध्राण्यप द्विषो दहन् रक्षांसि विश्वहा । अग्ने तिग्मेन दीदिहि ॥२६ ॥

हे अग्निदेव ! हिंसा करने वालों, ईर्ष्या करने वालों तथा बाधा पहुँचाने वाले असुरों को जलाते हुए आप सदैव तीव्र आलोक से प्रकाशित हों ॥२६ ॥

६८६८. यं त्वा जनास इन्धते मनुष्वदङ्गिरस्तम । अग्ने स बोधि मे वचः ॥२७ ॥

हे अग्निदेव ! आप अंगिराओं में सर्वश्रेष्ठ हैं । जिस प्रकार आपको 'मनु' ने प्रज्वलित किया था, उसी प्रकार ये मनुष्य भी करते हैं । आप हमारी प्रार्थनाओं को भी उन्हीं की भाँति समझें ॥२७ ॥

६८६९. यदग्ने दिविजा अस्यप्सुजा वा सहस्कृत । तं त्वा गीर्भिर्हवामहे ॥२८ ॥

हे अग्निदेव ! आप आकाश से पैदा हुए (आदित्य रूप) हैं अथवा जल में पैदा हुए (बिजली रूप) हैं अथवा बल से पैदा हुए (भौतिक अग्नि के रूप में) हैं । हम आपका अपनी स्तुतियों द्वारा आवाहन करते हैं ॥२८ ॥

६८७०. तुभ्यं घेत्ते जना इमे विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । धासिं हिन्वन्त्यत्तवे॥२९ ॥

हे अग्निदेव ! सभी साधकगण तथा समस्त प्रजाएँ आपके भक्षण के लिए पृथक्-पृथक् हविष्यान्न प्रदान करती हैं ॥२९ ॥



६८७१. **ते घेदग्ने स्वाध्योऽहा विश्वा नृचक्षसः । तरन्तः स्याम दुर्गहा ॥३० ॥**

हे अग्निदेव ! आपके अनुग्रह से सत्कर्म करने वाले तथा सदैव श्रेष्ठ पदार्थों को देखने वाले होकर हम समस्त विपत्तियों को पार कर जायेंगे ॥३० ॥

६८७२. **अग्निं मन्द्रं पुरुप्रियं शीरं पावकशोचिषम् । हृद्भिर्मन्द्रेभिरीमहे ॥३१ ॥**

वे अग्निदेव पवित्र आलोक फैलाने वाले, अनेकों के प्रिय तथा यज्ञों द्वारा अत्यन्त तेज-सम्पन्न हैं । हम प्रसन्नता प्रदान करने वाली स्तुतियों से उन्हें आनन्दित करते हैं ॥३१ ॥

६८७३. **स त्वमग्ने विभावसुः सृजन्त्सूर्यो न रश्मिभिः । शर्धन्तमांसि जिघ्नसे ॥३२ ॥**

हे अग्निदेव ! आप उत्पन्न होकर सूर्यदेव की तरह शक्ति का संवर्धन तथा अंधकार का नाश कर देते हैं ॥३२ ॥

६८७४. **तत्ते सहस्व ईमहे दात्रं यन्नोपदस्यति । त्वदग्ने वार्यं वसु ॥३३ ॥**

हे अग्निदेव ! आपका ग्रहण करने योग्य तथा दान करने योग्य ऐश्वर्य सदैव अविनाशी बना रहता है । हम आपसे उसी ऐश्वर्य की याचना करते हैं ॥३३ ॥

[सूक्त - ४४]

[**ऋषि**- विरूप आङ्गिरस । **देवता**- अग्नि । **छन्द**- गायत्री ।]

६८७५. **समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन ॥१ ॥**

हे ऋत्विजो ! अतिथि के सदृश अग्निदेव की समिधाओं के द्वारा सेवा करें । घृत के रूप में इन्हे श्रेष्ठ आहुतियाँ समर्पित करें ॥१ ॥

६८७६. **अग्ने स्तोमं जुषस्व मे वर्धस्वानेन मन्मना । प्रति सूक्तानि हर्य नः ॥२ ॥**

हे अग्ने ! आप हमारे मननीय स्तोत्रों को स्वीकार करें और समृद्धि को प्राप्त करें । आप हमारे स्तोत्रों की कामना करें ॥२ ॥

६८७७. **अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ आ सादयादिह ॥३ ॥**

देवताओं के संदेशवाहक के रूप में आहुतियों को उनके पास तक पहुँचाने वाले अग्निदेव की हम स्थापना करते हैं और उनकी प्रार्थना करते हैं । वे इस यज्ञ मण्डप में देवगणों को आहूत करें ॥३ ॥

६८७८. **उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः । अग्ने शुक्रास ईरते ॥४ ॥**

हे तेजस्वी अग्निदेव ! भली प्रकार प्रदीप्त, महानता को प्रेरित करने वाली आपकी लपटें वृद्धि को प्राप्त करती हैं ॥४ ॥

६८७९. **उप त्वा जुह्वो३ मम घृताचीर्यन्तु हर्यत । अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥५ ॥**

पूजायोग्य हे अग्निदेव ! घृत (हवि) से परिपूर्ण पात्र आपको प्राप्त हों । आप हमारी आहुतियों को स्वीकार करें ॥५ ॥

६८८०. **मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् । अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥६ ॥**

आनन्द प्रदायक, देवताओं का आवाहन करने वाले, ऋतु के अनुकूल यज्ञ करने वाले, तेजस्विता से युक्त, प्रकाशमान अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं ॥६ ॥



६८८१. **प्रत्नं होतारमीड्यं जुष्टमग्निं कविक्रतुम्। अध्वराणामभिश्रियम् ॥७ ॥**

देवताओं को आहूत करने वाले, स्तुति के योग्य, परिचर्या करने योग्य, अत्यन्त विद्वान् तथा यज्ञों को अलंकृत करने वाले उन प्राचीन अग्निदेव की हम प्रार्थना करते हैं ॥७ ॥

६८८२. **जुषाणो अङ्गिरस्तमेमा हव्यान्यानुषक्। अग्ने यज्ञं नय ऋतुथा ॥८ ॥**

हे अग्निदेव ! आप 'अंगिरा' वंशियों में सबसे श्रेष्ठ हैं। हमारे यज्ञों को सम्पादित करते हुए समयानुसार आहुतियों का सेवन करें ॥८ ॥

६८८३. **समिधान उ सन्त्य शुक्रशोच इहा वह। चिकित्वान् दैव्यं जनम् ॥९ ॥**

हे अग्निदेव ! आप पूजने योग्य और पवित्र तेज वाले हैं। आप सर्वज्ञाता तथा दर्शनीय आलोक वाले हैं। आप देवजनों को हमारे इस यज्ञ में ले आयें ॥९ ॥

६८८४. **विप्रं होतारमद्रुहं धूमकेतुं विभावसुम्। यज्ञानां केतुमीमहे ॥१० ॥**

ज्ञानसम्पन्न, देवताओं को यज्ञ में आहूत करने वाले, धूम्र रूप पताका वाले, अत्यन्त तेज-सम्पन्न, विद्रोह न करने वाले तथा यज्ञों के ध्वज रूप अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं ॥१० ॥

६८८५. **अग्ने नि पाहि नस्त्वं प्रति ष्म देव रीषतः। भिन्धि द्वेषः सहस्कृत ॥११ ॥**

हे शक्तिसम्पन्न, तेजस्वी अग्निदेव ! आप हम याजकों की, हिंसक रिपुओं से सुरक्षा करें और हमसे ईर्ष्या करने वालों को नष्ट करें ॥११ ॥

६८८६. **अग्निः प्रत्नेन मन्मना शुम्भानस्तन्वं१ स्वाम्। कविर्विप्रेण वावृधे ॥१२ ॥**

अपने तेजस्वी स्वरूप में सुशोभित होने वाले मेधावी अग्निदेव को ऋत्विजों द्वारा पुरातन स्तोत्रों से प्रज्वलित किया जाता है ॥१२ ॥

६८८७. **ऊर्जो नपातमा हुवेऽग्निं पावकशोचिषम्। अस्मिन्यज्ञे स्वध्वरे ॥१३ ॥**

ऊर्जा को नीचे न गिरने देने वाले, पवित्र बनाने वाले, दीप्तिमान् अग्निदेव का इस उत्तम यज्ञ में हम आवाहन करते हैं ॥१३ ॥

६८८८. **स नो मित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा। देवैरा सत्सि बर्हिषि ॥१४ ॥**

पूज्य, मित्र तुल्य हे अग्निदेव ! आप शुभ्र ज्वालाओं और तेज से पूर्ण होकर देवों के साथ इस यज्ञ में प्रतिष्ठित हों ॥१४ ॥

६८८९. **यो अग्निं तन्वो३ दमे देवं मर्तः सपर्यति। तस्मा इद्दीदयद्वसु ॥१५ ॥**

ऐश्वर्य की अभिलाषा करने वाले जो व्यक्ति अपने घरों में अग्निदेव की अभ्यर्थना करते हैं, उन्हीं को वे ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥१५ ॥

६८९०. **अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतांसि जिन्वति ॥१६ ॥**

देवताओं में सर्वश्रेष्ठ, आकाश के उन्नत स्थान पर प्रतिष्ठित रहने वाले, पृथ्वी के स्वामी ये अग्निदेव (जल) में ओज स्थापित करते हैं ॥१६ ॥

६८९१. **उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते। तव ज्योतींष्यर्चयः ॥१७ ॥**

हे अग्ने ! स्वच्छ, उज्ज्वल और प्रकाशित ज्योतियाँ आपके तेज को प्रवाहित करती रहती हैं ॥१७ ॥



६८९२. **ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वर्पतिः । स्तोता स्यां तव शर्मणि ॥१८ ॥**

हे अग्ने ! आप स्वर्ग लोक के स्वामी, वरण करने योग्य और दान देने योग्य धन के अधिष्ठाता हैं । आपके द्वारा प्रदत्त सुख भोगते हुए हम सदा आपके प्रशंसक बने रहें ॥१८ ॥

६८९३. **त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति चित्तिभिः । त्वां वर्धन्तु नो गिरः ॥१९ ॥**

हे अग्निदेव ! मनीषीगण आपकी प्रार्थना करते हुए अपने श्रेष्ठ कर्मों से आपको हर्षित करते हैं । हमारी प्रार्थनाएँ आपको समृद्ध करें ॥१९ ॥

६८९४. **अदब्धस्य स्वधावतो दूतस्य रेभतः सदा । अग्नेः सख्यं वृणीमहे ॥२० ॥**

हे अग्निदेव ! आप अविनाशी और सामर्थ्यवान् हैं । आप देवताओं के संदेशवाहक तथा ज्ञान के उपदेशक हैं । हम आपकी मित्रता को अंगीकार करते हैं ॥२० ॥

६८९५. **अग्निः शुचिव्रततमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः । शुची रोचत आहुतः ॥२१ ॥**

हे अग्निदेव ! आप पवित्र ज्ञानी, अत्यन्त शुभ कर्म करने वाले तथा क्रांतदर्शी हैं । आप पवित्रतापूर्वक प्रदान की हुई आहुतियों द्वारा अलंकृत होते हैं ॥२१ ॥

६८९६. **उत त्वा धीतयो मम गिरो वर्धन्तु विश्वहा । अग्ने सख्यस्य बोधि नः ॥२२ ॥**

हे अग्निदेव ! हमारे सत्कर्म और हमारी स्तुतियाँ आपको समृद्ध करें । आप हमारे सख्यभाव को समझें ॥२२ ॥

६८९७. **यदग्ने स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम् । स्युष्टे सत्या इहाशिषः ॥२३ ॥**

हे अग्निदेव ! हम आपको समर्पित होकर आपके बन जाएँ और आप हमारे बन जाएँ । आपके आशीष हमारे जीवन में सत्य सिद्ध हों ॥२३ ॥

६८९८. **वसुर्वसुपतिर्हि कमस्यग्ने विभावसुः । स्याम ते सुमतावपि ॥२४ ॥**

हे अग्निदेव ! आप आलोक-सम्पन्न, सबका पालन करने वाले और सम्पूर्ण ऐश्वर्यों के स्वामी हैं । हम आपकी इच्छा के अनुरूप विवेकपूर्ण आचरण करें ॥२४ ॥

६८९९. **अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धवः । गिरो वाश्रास ईरते ॥२५ ॥**

हे अग्निदेव ! आप सत्कर्मों के धारक हैं । हमारी सुन्दर प्रार्थनाएँ आपके पास उसी प्रकार पहुँचती हैं, जिस प्रकार सरिताएँ समुद्र की ओर गमन करती हैं ॥२५ ॥

६९००. **युवानं विश्पतिं कविं विश्वादं पुरुवेपसम् । अग्निं शुम्भामि मन्मभिः ॥२६ ॥**

यज्ञादि विविध सत्कर्म करने वाले, हमेशा युवा रहने वाले, समस्त आहुतियों का सेवन करने वाले विद्वान् अग्निदेव को हम अपनी स्तुतियों द्वारा समृद्ध करते हैं ॥२६ ॥

६९०१. **यज्ञानां रथ्ये वयं तिग्मजम्भाय वीळवे । स्तोमैरिषेमाग्नये ॥२७ ॥**

तीक्ष्ण लपटों वाले, यज्ञों में प्रमुख तथा पराक्रमी अग्निदेव की हम अपने स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हैं ॥२७ ॥

६९०२. **अयमग्ने त्वे अपि जरिता भूतु सन्त्य । तस्मै पावक मृळय ॥२८ ॥**

पवित्र बनाने वाले, पूजनीय हे अग्निदेव ! हम स्तोता आपकी विविध प्रकार से वन्दना करते हैं । आप हमें सुख प्रदान करें ॥२८ ॥



६९०३. **धीरो ह्यस्यद्मसद् विप्रो न जागृविः सदा। अग्ने दीदयसि द्यवि ॥२९ ॥**

हे अग्निदेव ! आप ज्ञानी तथा धैर्यवान् हैं। आप आहुतियों का सेवन करते हुए प्रजाओं के हित में सदैव जाग्रत् रहते हैं। आप आकाश में आलोकित होते हैं ॥२९ ॥

६९०४. **पुराग्ने दुरितेभ्यः पुरा मृध्रेभ्यः कवे। प्र ण आयुर्वसो तिर ॥३० ॥**

हे मेधावी अग्निदेव ! आप सबको आश्रय प्रदान करने वाले हैं। पाप करने वालों और हिंसा करने वालों से आप हमारी रक्षा करें और हमारे आयुष्य की वृद्धि करें ॥३० ॥

[सूक्त - ४५]

[**ऋषि**- त्रिशोक काण्व। **देवता**- इन्द्र, १-इन्द्राग्नी। **छन्द**- गायत्री।]

६९०५. **आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥१ ॥**

यज्ञाग्नि को प्रज्वलित करने वाले याजकगण अपने मित्र चिरयुवा इन्द्रदेव के निमित्त यज्ञशाला में पवित्र आसन (कुशाएँ) प्रदान करते हैं ॥१ ॥

६९०६. **बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥२ ॥**

ऋषियों के पास समिधायें पर्याप्त हैं। स्तोत्र भी असंख्य हैं। चिरयुवा इन्द्रदेव सदैव ही इन ऋषियों के मित्र बनकर रहते हैं ॥२ ॥

६९०७. **अयुद्ध इद्युधा वृतं शूर आजति सत्वभिः। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥३ ॥**

इन्द्रदेव जिनके मित्र हैं, वे साधक युद्ध की इच्छा न रखते हुए भी सैन्यबल से युक्त शत्रु को पराजित करने में समर्थ होते हैं ॥३ ॥

६९०८. **आ बुन्दं वृत्रहा ददे जातः पृच्छद्वि मातरम्। क उग्राः के ह शृण्विरे ॥४ ॥**

वृत्र को मारने वाले इन्द्रदेव ने जन्म लेते ही अपने हाथ में धनुष-बाण ग्रहण किया और अपनी माता से पूछा कि इस संसार में अत्यन्त पराक्रमी वीर कौन-कौन से हैं ? ॥४ ॥

६९०९. **प्रति त्वा शवसी वदद् गिरावप्सो न योधिषत्। यस्ते शत्रुत्वमाचके ॥५ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी शक्ति से सम्पन्न माता ने कहा कि शत्रु जो तुमसे शत्रुता रखता है, वह पर्वतों में (मदमत्त) हाथी की तरह विचरण करता है ॥५ ॥

६९१०. **उत त्वं मघवञ्छृणु यस्ते वष्टि ववक्षि तत्। यद्वीळयासि वीळु तत् ॥६ ॥**

हे धनवान् इन्द्रदेव ! जो व्यक्ति आपसे याचना करते हैं, आप उन्हें वह सब प्रदान करते हैं। जिसे आप शक्तिशाली बनाते हैं, वही बलवान् बनता है। अतः आप हमारी प्रार्थनाएँ सुनें ॥६ ॥

६९११. **यदाजिं यात्याजिकृदिन्द्रः स्वश्वयुरुप। रथीतमो रथीनाम् ॥७ ॥**

इन्द्रदेव जब अपने श्रेष्ठ अश्वों को नियोजित करके रणक्षेत्र में युद्ध करने के लिए जाते हैं, तब वे सभी रथियों के बीच महारथी की भाँति सुशोभित होते हैं ॥७ ॥

६९१२. **वि षु विश्वा अभियुजो वज्रिन्विष्वग्यथा वृह। भवा नः सुश्रवस्तमः ॥८ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! जैसे भी सम्भव हो आप अपनी प्रजाओं को हर प्रकार से (बढ़ाएँ) समृद्ध करें। आप हमारे लिए उत्तम अन्न से सम्पन्न बने रहें ॥८ ॥



६९१३. अस्माकं सु रथं पुर इन्द्रः कृणोतु सातये । न यं धूर्वन्ति धूर्तयः ॥९ ॥

दुष्ट लोग जिनको मार नहीं सकते, ऐसे इन्द्रदेव हमारी वांछित वस्तुओं को प्रदान करने के लिए अपने श्रेष्ठ रथ को सामने करें अर्थात् यज्ञ स्थल पर उपस्थित हों ॥९ ॥

६९१४. वृज्याम ते परि द्विषोऽरं ते शक्र दावने । गमेमेदिन्द्र गोमतः ॥१० ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! हम आपके शत्रुओं के बन्धन में कभी न जाएँ । जब आप अनेकों गौओं से सम्पन्न वांछित धन देते हैं, तब हम आपके सम्मुख विद्यमान रहें ॥१० ॥

६९१५. शनैश्चिद्यन्तो अद्रिवोऽश्वावन्तः शतग्विनः । विवक्षणा अनेहसः ॥११ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! हम धीरे-धीरे प्रगति करते हुए सैकड़ों गौओं और अश्वों से युक्त धन से सम्पन्न हों तथा पापरहित बनें रहें ॥११ ॥

[ऋषि का भाव है कि सम्पन्नता के लिए पापाचार न करें ।]

६९१६. ऊर्ध्वा हि ते दिवेदिवे सहस्रा सूनृता शता । जरितृभ्यो विमंहते ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने यजमान को सैकड़ों और हजारों प्रकार के विविध ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥१२ ॥

६९१७. विद्मा हि त्वा धनञ्जयमिन्द्र दृळ्हा चिदारुजम् ।
आदारिणं यथा गयम् ॥१३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप धन को जीतने वाले मजबूत किलों को भी ध्वस्त करने वाले तथा रिपुओं का संहार करने वाले हैं । हम आपको घर के समान संरक्षण प्रदान करने वाले समझते है ॥१३ ॥

६९१८. ककुहं चित्त्वा कवे मन्दन्तु धृष्णविन्दवः । आ त्वा पणिं यदीमहे ॥१४ ॥

हे क्रान्तदर्शी इन्द्रदेव ! आप रिपुओं के संहारक हैं । जब हम आपसे धन की कामना करें, तब हमारा यह सोमरस आपके लिये तृप्तिदायक हो ॥१४ ॥

६९१९. यस्ते रेवाँ अदाशुरिः प्रममर्ष मघत्तये । तस्य नो वेद आ भर ॥१५ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! जो मनुष्य अपार वैभव से सम्पन्न होकर भी कृपण है और आपसे द्वेष करता है । आप उसका ऐश्वर्य हमें प्रदान करें ॥१५ ॥

[कृपण व्यक्ति की सम्पन्नता का सदुपयोग नहीं हो पाता, इसलिए वह सम्पदा सदुपयोग कर्त्ताओं के पास पहुँचे यही उचित है ।]

६९२०. इम उ त्वा वि चक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः । पुष्टावन्तो यथा पशुम् ॥१६ ॥

जिस प्रकार पशुपालक हाथ में घास लेकर स्नेहपूर्वक पशुओं की ओर देखता है, उसी प्रकार आपको तृप्त करने के लिए याजकगण सोमादि हाथ में लेकर आपकी ओर देखते रहते हैं ॥१६ ॥

६९२१. उत त्वाबधिरं वयं श्रुत्कर्णं सन्तमूतये । दूरादिह हवामहे ॥१७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप ध्वनियाँ सुनने में भली प्रकार सक्षम हैं, बधिर नहीं है । अपनी सुरक्षा के लिए हम आपको दूर स्थान से भी आहूत करते हैं ॥१७ ॥

६९२२. यच्छुश्रूया इमं हवं दुर्मर्षं चक्रिया उत । भवेरापिर्नो अन्तमः ॥१८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी पुकार को सुनकर अपनी असीम सामर्थ्य को प्रकट करें और हमारे निकटस्थ प्रिय बन्धु हो जाएँ ॥१८ ॥



६९२३. यच्चिद्धि ते अपि व्यथिर्जगन्वांसो अमन्महि । गोदा इदिन्द्र बोधि नः ॥१९ ॥

हे इन्द्रदेव ! जब हम दुःख से व्यथित होकर आपकी शरण में आयें और प्रार्थना करें, तब आप जागरूक होकर हमें गौएँ प्रदान करें ॥१९ ॥

६९२४. आ त्वा रम्भं न जिव्रयो ररभ्मा शवसस्पते । उश्मसि त्वा सधस्थ आ ॥२० ॥

सामर्थ्यवान् हे अग्निदेव ! जिस प्रकार वृद्ध व्यक्ति दण्ड का सहारा प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार हम आपके आश्रय को प्राप्त करें । हम यज्ञ मण्डप में आपकी उपस्थिति की कामना करते हैं ॥२० ॥

६९२५. स्तोत्रमिन्द्राय गायत पुरुनृम्णाय सत्वने । नकिर्यं वृण्वते युधि ॥२१ ॥

हे स्तोताओ ! जिन पराक्रमी इन्द्रदेव को रणक्षेत्र में कोई परास्त नहीं कर सकता, आप उन इन्द्रदेव का गुणगान करें ॥२१ ॥

६९२६. अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये । तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥२२ ॥

हे बलशाली इन्द्रदेव ! इस सोमयज्ञ में आपके लिए सोमरस समर्पित करते हैं । आप इस तृप्तिकारक सोमरस का पान करें ॥२२ ॥

६९२७. मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन् । माकीं ब्रह्मद्विषो वनः ॥२३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपसे रक्षण की कामना करने वाले तथा उपहास करने वाले अज्ञानियों का आप पर कोई प्रभाव न पड़े । ज्ञान-द्वेषियों की आप कोई भी सहायता न करें ॥२३ ॥

६९२८. इह त्वा गोपरीणसा महे मन्दन्तु राधसे । सरो गौरो यथा पिब ॥२४ ॥

हे इन्द्रदेव ! गौ-दुग्ध मिश्रित सोमरस की हवि देकर होता ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए आपकी प्रार्थना करते हैं । तालाब में जल पीने वाले मृग की भाँति आप सोमरस का पान करें ॥२४ ॥

६९२९. या वृत्रहा परावति सना नवा च चुच्युवे । ता संसत्सु प्र वोचत ॥२५ ॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! प्राचीन काल में आपने जो पुरातन तथा नवीन धन प्रदान किया था, उसका विवेचन आप सभागृह में करें ॥२५ ॥

६९३०. अपिबत् कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे । अत्रादेदिष्ट पौंस्यम् ॥२६ ॥

कद्रु के द्वारा निष्पन्न सोमरस का इन्द्रदेव ने पान किया और हजारों भुजाओं वाले बलशाली शत्रु का संहार किया । इससे उनका दर्शनीय पराक्रम प्रकट हुआ ॥२६ ॥

६९३१. सत्यं तत्तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यम् । व्यानट् तुर्वणे शमि ॥२७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपने 'तुर्वश' और यादवों के वास्तविक कार्यों को जानकर रणक्षेत्र में 'अह्नवाय' नामक रिपु का वध कर दिया ॥२७ ॥

६९३२. तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमतः । समानमु प्र शंसिषम् ॥२८ ॥

(हे स्तोताओ) सज्जनों को बाधाओं से पार कराने वाले, शत्रुओं को भयभीत करने वाले, पशुधन से सम्पन्न, अन्न का दान करने वाले तथा उन्नतशील इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं ॥२८ ॥

६९३३. ऋभुक्षणं न वर्तव उक्थेषु तुग्र्यावृधम् । इन्द्रं सोमे सचा सुते ॥२९ ॥

सोमाभिषव करते हुए सभी स्तोता एक साथ मिलकर जल की वृद्धि करने वाले महान् इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं । उनसे ऐश्वर्य प्राप्ति की कामना करते हैं ॥२९ ॥



६९३४. **यः कृन्तदिद्वि योन्यं त्रिशोकाय गिरिं पृथुम् । गोभ्यो गातुं निरेतवे ॥३० ॥**

जिन इन्द्रदेव ने त्रिशोक के निमित्त जल को प्रवाहित करने के लिए विशाल मेघों को विदीर्ण किया, उन्होंने ही पृथ्वी पर किरणों के लिये (अथवा बहने वाले जल के लिए) मार्ग भी बनाया ॥३० ॥

६९३५. **यद्दधिषे मनस्यसि मन्दानः प्रेदियक्षसि । मा तत्करिन्द्र मृळय ॥३१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हर्षित होकर जिस ऐश्वर्य को धारण करते हैं, जिसकी कामना करते हैं तथा जिसका दान करते हैं, वह ऐश्वर्य हमें क्यों नहीं प्रदान करते ? हे देव ! आप हमें समृद्ध करें ॥३१ ॥

६९३६. **दभ्रं चिद्धि त्वावतः कृतं शृण्वे अधि क्षमि । जिगात्विन्द्र ते मनः ॥३२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा किया हुआ छोटा कार्य भी धरती पर विख्यात हो जाता है । अतः आप हमारे ऊपर कृपा करें ॥३२ ॥

६९३७. **तवेदु ताः सुकीर्तयोऽसन्नुत प्रशस्तयः । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! जब आप हमें हर्षित करते हैं, उस समय आप ही यशस्वी और प्रशंसनीय होते हैं ॥३३ ॥

६९३८. **मा न एकस्मिन्नागसि मा द्वयोरुत त्रिषु । वधीर्मा शूर भूरिषु ॥३४ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा एक अपराध होने पर हमारा संहार न करें । दो अपराध होने पर अथवा तीन या अधिक अपराध होने पर भी आप हमें पीड़ित न करें ॥३४ ॥

६९३९. **बिभया हि त्वावत उग्रादभिप्रभङ्गिणः । दस्मादहमृतीषहः ॥३५ ॥**

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप रिपुओं पर चोट करने वाले और पापी मनुष्यों का विनाश करने वाले हैं । आप रिपुओं को परास्त करने में सक्षम हैं । हम आपसे भयभीत न हों ॥३५ ॥

६९४०. **मा सख्युः शूनमा विदे मा पुत्रस्य प्रभूवसो । आवृत्वद्भूतु ते मनः ॥३६ ॥**

सम्पदा से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! हम अपने सखा अथवा पुत्र के ऐश्वर्य की याचना नहीं करते । हम तो आपके मन को अपनी ओर आकृष्ट करना चाहते हैं ॥३६ ॥

६९४१. **को नु मर्या अमिथितः सखा सखायमब्रवीत् । जहा को अस्मदीषते ॥३७ ॥**

हे मनुष्यो ! क्रोधरहित, सखारूप इन्द्रदेव ने अपने मित्र से प्रश्न किया कि हमने किस निर्दोष मनुष्य का हनन किया है ? और कौन हमसे दूर भागता है ? ॥३७ ॥

६९४२. **एवारे वृषभा सुतेऽसिन्वन्भूर्यावयः । श्वघ्नीव निवता चरन् ॥३८ ॥**

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! जिस प्रकार पर्वतों पर रहने वाला शिकारी अपने शिकार को प्राप्त करता है, उसी प्रकार सोम अभिषव करने वाले 'एवार' (नाम वाले अथवा आदरणीय व्यक्ति) को आपने प्रचुर सम्पत्ति प्रदान की ॥३८ ॥

६९४३. **आ त एता वचोयुजा हरी गृभ्णे सुमद्रथा । यदीं ब्रह्मभ्य इद्ददः ॥३९ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके कहने मात्र से ही रथ में नियोजित हो जाने वाले अश्वों को हम आहूत करते हैं । इस सम्पत्ति को आपने ब्रह्मनिष्ठ साधकों के निमित्त ही प्रदान किया है ॥३९ ॥

६९४४. **भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः । वसु स्पार्हं तदा भर ॥४० ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे समस्त हिंसक रिपुओं का विनाश करके उन्हें हमसे दूर हटाएँ तथा उनका ऐश्वर्य हमारे पास पहुँचाएँ ॥४० ॥



६९४५. **यद्वीळाविन्द्र यत्स्थिरे यत्पर्शाने पराभृतम्। वसु स्पार्हं तदा भर ॥४१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हमें ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो पुष्ट और स्थिर भूमि में विद्यमान हो तथा जिसे किसी ने स्पर्श न किया हो ॥४१ ॥

६९४६. **यस्य ते विश्वमानुषो भूरेर्दत्तस्य वेदति। वसु स्पार्हं तदा भर ॥४२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त जिस वैभव को सभी लोग उचित ढंग से जानते हैं, उस वाञ्छित ऐश्वर्य को हमें पर्याप्त मात्रा में प्रदान करें ॥४२ ॥

[सूक्त - ४६]

[**ऋषि-** वश अश्व्य । **देवता-** २१-२४ पृथुश्रवा कानीत, २५-२८, ३२ वायु । **छन्द-** गायत्री, १ पाद निचृत्, ५ ककुप्, ७ बृहती, ८ अनुष्टुप्, ९ सतोबृहती, ११-१२ प्रगाथ (बृहती, विपरीतापंक्ति), १३ द्विपदा (जगती), १४ बृहती पिपीलिकामध्या, १५ ककुम्न्यंकुशिरा, १६ विराट्, १७ जगती, १८ उपरिष्टाद् बृहती, १९ बृहती, २० विषमपदा बृहती, २१-२४ पंक्ति, २२ संस्तार पंक्ति, २५-२८ प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) ३० द्विपदा विराट्, ३१ उष्णिक्, ३२ पंक्ति ।]

६९४७. **त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः। स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥१ ॥**

धनवान्, श्रेष्ठ नायक और अश्वों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आपके समान रक्षक अन्य कोई नहीं है । हम आपके प्रति समर्पित होकर रहें ॥१ ॥

६९४८. **त्वां हि सत्यमद्रिवो विद्म दातारमिषाम्। विद्म दातारं रयीणाम् ॥२ ॥**

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! हम आपको अन्नदाता और ऐश्वर्य प्रदाता के रूप में मानते हैं, यही वास्तविकता है ॥२ ॥

६९४९. **आ यस्य ते महिमानं शतमूते शतक्रतो। गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ॥३ ॥**

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप सैकड़ों रक्षण- साधनों से सम्पन्न हैं । स्तोतागण स्तुति करते हुए आपकी महानता का वर्णन करते हैं ॥३ ॥

६९५०. **सुनीथो घा स मर्त्यो यं मरुतो यमर्यमा। मित्रः पान्त्यद्रुहः ॥४ ॥**

मरुद्गण, मित्र और अर्यमादेव द्रोहरहित होकर जिस साधक की रक्षा करते हैं, वह साधक निश्चित रूप से श्रेष्ठ पथगामी होता है ॥४ ॥

६९५१. **दधानो गोमदश्ववत्सुवीर्यमादित्यजूत एधते। सदा राया पुरुस्पृहा ॥५ ॥**

हम स्तोतागण इन्द्र (सूर्य) द्वारा संरक्षित होकर गौओं और अश्वों से सम्पन्न सामर्थ्यवान् होते हैं । हम उनसे वांछित धन प्राप्त करके समृद्ध होते हैं ॥५ ॥

६९५२. **तमिन्द्रं दानमीमहे शवसानमभीर्वम्। ईशानं राय ईमहे ॥६ ॥**

शक्ति से सम्पन्न, निर्भीक तथा सबके अधिष्ठाता, उन इन्द्रदेव से हम दान और ऐश्वर्य की याचना करते हैं ॥६ ॥

६९५३. **तस्मिन्हि सन्त्यूतयो विश्वा अभीरवः सचा।**
तमा वहन्तु सप्तयः पुरूवसुं मदाय हरयः सुतम् ॥७ ॥



रक्षण करने वाली समस्त निर्भीक सेनाएँ इन्द्रदेव के आश्रित रहकर साथ-साथ निवास करती हैं। उनके द्रुतगामी घोड़े उन्हें हर्षित करने के लिए सोमयाग के समीप ले आयें ॥७ ॥

६९५४. यस्ते मदो वरेण्यो य इन्द्र वृत्रहन्तमः ।
य आददिः स्व१र्नृभिर्यः पृतनासु दुष्टरः ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपका जो 'मद' (सोमपानजनित हर्षातिरेक) वरण करने योग्य है, जो रिपुओं का संहारक है, जो शत्रुओं के धन का हरण करने वाला है और जो संग्राम में अभिभूत (पराभूत) न होने वाला है, (उस मद-हर्षातिरेक के लिए अश्व लेकर आएँ) ॥८ ॥

६९५५. यो दुष्टरो विश्ववार श्रवाय्यो वाजेष्वस्ति तरुता ।
स नः शविष्ठ सवना वसो गहि गमेम गोमति व्रजे ॥९ ॥

उन इन्द्रदेव का शौर्य रणक्षेत्र में रिपुओं के द्वारा अजेय, शक्तिप्रदायक तथा विपत्तियों से मुक्ति दिलाने वाला है। वरण करने योग्य, शक्ति से सम्पन्न तथा सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारे यज्ञ में पधारें, जिससे हम गौओं से सम्पन्न गोष्ठ में प्रविष्ट हों ॥९ ॥

[गौओं के गोष्ठ का तात्पर्य किरणों के पुञ्ज अथवा इन्द्रिय समूह से भी लगाया जा सकता है ।]

६९५६. गव्यो षु णो यथा पुराश्वयोत रथया । वरिवस्य महामह ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! सदैव की तरह हमें उत्तम गौओं, श्रेष्ठ घोड़ों से युक्त रथ तथा प्रतिष्ठापूर्ण धन प्रदान करने की इच्छा से आप हमारे पास आयें ॥१० ॥

६९५७. नहि ते शूर राधसोऽन्तं विन्दामि सत्रा ।
दशस्या नो मघवन्नू चिदद्रिवो धियो वाजेभिराविथ ॥११ ॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! वास्तव में आपकी सम्पत्ति असीम है। हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें। हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से हमारे कर्मों का संरक्षण करें ॥११ ॥

६९५८. य ऋष्वः श्रावयत्सखा विश्वेत् स वेद जनिमा पुरुष्टुतः ।
तं विश्वे मानुषा युगेन्द्रं हवन्ते तविषं यतस्रुचः ॥१२ ॥

वे महान् इन्द्रदेव कीर्तिवानों के सखा और अनेकों द्वारा प्रशंसित हैं। वे हमारे सम्पूर्ण जन्मों के ज्ञाता हैं। उन शक्तिशाली इन्द्रदेव के निमित्त स्रुक् पात्र से हवि प्रदान करने वाले हम याजकगण सदैव यजन करते हैं ॥१२ ॥

६९५९. स नो वाजेष्वविता पुरूवसुः पुरः स्थाता । मघवा वृत्रहा भुवत् ॥१३ ॥

वे धनवान् इन्द्रदेव अनेकों को निवास प्रदान करने वाले और वृत्र का संहार करने वाले हैं। वे रणक्षेत्र में सदैव अग्रणी रहकर हमारा संरक्षण करें ॥१३ ॥

६९६०. अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ॥१४ ॥

हे उद्गाताओ ! हितकारी, असुरजयी, सोमरस से आनन्दित होने वाले वीर, मेधावी तथा कीर्तिमान् इन्द्रदेव की विशेष स्तोत्रों से स्तुति करो ॥१४ ॥

६९६१. ददी रेक्णस्तन्वे ददिर्वसु ददिर्वाजेषु पुरुहूत वाजिनम् । नूनमथ ॥१५ ॥



अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमको पुष्टिदायक धन दें, श्रेष्ठ आवास दें तथा रणक्षेत्र में शक्ति से सम्पन्न असीम उत्साह प्रदान करें ॥१५ ॥

६९६२. **विश्वेषामिरज्यन्तं वसूनां सासह्वांसं चिदस्य वर्पसः । कृपयतो नूनमत्यथ ॥१६॥**

हे स्तोताओ ! समस्त ऐश्वर्यों को नियंत्रित करने वाले और शक्तिशाली रिपुओं को भी परास्त करने वाले इन्द्रदेव की आप भली प्रकार प्रार्थना करें ॥१६ ॥

६९६३. **महः सु वो अरमिषे स्तवामहे मीळ्हुषे अरङ्गमाय जग्मये ।**
यज्ञेभिर्गीर्भिर्विश्वमनुषां मरुतामियक्षसि गाये त्वा नमसा गिरा ॥१७॥

हम उन शक्तिशाली, सज्जनों की सहायता करने वाले, सब जगह गमन करने वाले इन्द्रदेव की प्रचुर अन्न प्राप्ति के लिए यजनीय स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हैं । आप भी उनकी प्रार्थना करें । हे इन्द्रदेव ! आप समस्त मनुष्यों तथा मरुद्गणों के उपास्य हैं, हम अपने विनम्र वचनों द्वारा आपका गुणगान करते हैं ॥१७ ॥

६९६४. **ये पातयन्ते अज्मभिर्गिरीणां स्नुभिरेषाम् ।**
यज्ञं महिष्वणीनां सुम्नं तुविष्वणीनां प्राध्वरे ॥१८॥

जो मरुद्गण अपने शक्ति-प्रवाहों से सम्पन्न होकर पर्वतीय (मेघीय) जल को नीचे की ओर प्रवाहित करते हैं, उन गर्जनशील मरुतों के निमित्त हम यजन करते हैं । उनकी कृपा से इस श्रेष्ठ यज्ञ में सुख प्राप्त करते हैं ॥१८ ॥

६९६५. **प्रभङ्गं दुर्मतीनामिन्द्र शविष्ठा भर ।**
रयिमस्मभ्यं युज्यं चोदयन्मते ज्येष्ठं चोदयन्मते ॥१९॥

प्रेरक बुद्धि से सम्पन्न, शक्तिशाली हे इन्द्रदेव ! आप दुर्बुद्धिग्रस्त मनुष्यों का विनाश करते हैं । आप हमें उत्तम ऐश्वर्य से परिपूर्ण करें ॥१९ ॥

६९६६. **सनितः सुसनितरुग्र चित्र चेतिष्ठ सूनृत ।**
प्रासहा सम्राट् सहुरिं सहन्तं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ॥२०॥

दानशील, शक्तिशाली तथा सत्यभाषी हे इन्द्रदेव ! आप अद्‌भुत सामर्थ्य से सम्पन्न हैं और रिपुओं का विनाश करने वाले सम्राट् हैं । हमें आप ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो रणक्षेत्र में रिपुओं को परास्त करने वाली और सहनशक्ति प्रदान करने वाली हो ॥२० ॥

६९६७. ***आ स एतु य ईवदाँ अदेवः पूर्तमाददे ।**
यथा चिद्वशो अश्व्यः पृथुश्रवसि कानीते३स्या व्युष्याददे ॥२१॥

अश्व्य (अश्व से उत्पन्न या पुत्र) 'वश' ने उषाकाल में कानीत (कनीत से उत्पन्न या पुत्र) पृथुश्रवा (यशस्वी) से वैभव प्राप्त किया । ऐसा दान प्राप्त करने वाले (वश) यहाँ पधारें ॥२१ ॥

[पौराणिक संदर्भ से मंत्र का अर्थ सीधा-साधा निकल आता है; किन्तु इस मन्त्र सहित आगे के कुछ मंत्र गूढ़ तथ्यों का संकेत भी करते प्रतीत होते हैं । उस संदर्भ में वर्णित इन नामों के भावार्थ सहायक हो सकते है । जैसे पृथुश्रवा - इसका अर्थ यशस्वी होता है । प्राण-प्रवाह के लिए भी यह संबोधन सही बैठता दिखता है । 'वश' - यह अश्व से उत्पन्न या उनके पुत्र हैं । अश्व सर्वत्र संचरित होने वाली आत्मचेतना है । उसका एक अंश काया के वश में जीवात्मारूप में रहता है, उसे 'वश' कह सकते हैं । उषाकाल-जीवन के उदय के समय प्राण-प्रवाह से 'वश' को गुप्त वैभव प्राप्त होता है । उसी का आगे आलंकारिक उल्लेख प्रतिभासित होता है]



६९६८. षष्टिं सहस्राश्व्यस्यायुतासनमुष्ट्रानां विंशतिं शता ।
दश श्यावीनां शता दश त्र्यरुषीणां दश गवां सहस्रा ॥२२ ॥

(वश कहते हैं-) मैंने साठ हजार तथा अयुत (दस हजार) अश्वों (संचारक सामर्थ्यों) को तथा बीस सौ (दो हजार) ऊँटों को प्राप्त किया । श्याम वर्ण की दस सौ (एक हजार) घोड़ियाँ तथा तीन स्थानों (ककुद, पीठ एवं बगल) पर प्रकाशित (सफेद लकीरों से युक्त) दस हजार गौएँ भी प्राप्त कीं ॥२२ ॥

[उक्त वर्णन 'वश' जीव चेतना को प्राप्त वैभव का है । अश्व (सरपट चलने वाले) तथा ऊँट (लहराकर चलने वाले) प्रवाह मिलाकर ७२ हजार होते हैं । यह ७२ हजार नाड़ियों के प्रतीक हो सकते हैं । घोडियाँ एवं गौएँ उत्पादक सामर्थ्यों की प्रतीक हैं । प्रकृति में तीनों (द्यु , अन्तरिक्ष एवं पृथ्वी) क्षेत्रों में प्रकाशित पोषक किरणें अथवा काया में तीनों (स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण) शरीरों में संव्याप्त उत्पादक क्षमताओं का संकेत भी हो सकता है ।]

६९६९. दश श्यावा ऋधद्रयो वीतवारास आशवः । मथ्रा नेमिं नि वावृतुः ॥२३ ॥

हमारे रथ की धुरी को दस श्याम वर्ण वाले घोड़े खींचते हैं । वे घोड़े अत्यन्त द्रुतगामी, शक्तिशाली तथा रिपुओं को मथने वाले हैं ॥२३ ॥

[शरीर रथ को खींचने वाले दस घोड़े इन्द्रियों को कहा जा सकता है । गीताकार ने इन्द्रियों को (इन्द्रियाणि प्रमाथीनि) मंथन स्वभाव वाली कहा है ।]

६९७०. दानासः पृथुश्रवसः कानीतस्य सुराधसः ।
रथं हिरण्ययं ददन् मंहिष्ठः सूरिरभूद्वर्षिष्ठमकृत श्रवः ॥२४ ॥

'पृथुश्रवा' के पुत्र 'कानीत' अत्यन्त धनवान् हैं । उन्होंने हमें स्वर्णिम रथ प्रदान किया । इसलिए वे सर्वश्रेष्ठ दानी और विद्वान् हो गए । इसके बाद हमने उनकी कीर्ति को समृद्ध किया ॥२४ ॥

६९७१. आ नो वायो महे तने याहि मखाय पाजसे ।
वयं हि ते चकृमा भूरि दावने सद्यश्चिन्महि दावने ॥२५ ॥

हे वायो ! महान् ऐश्वर्य प्राप्त करने के निमित्त हम आपकी प्रार्थना करते हैं । आप हमें प्रचुर सम्पत्ति और यज्ञीय बल प्रदान करने के लिए पधारें ॥२५ ॥

६९७२. यो अश्वेभिर्वहते वस्त उस्रास्त्रिः सप्त सप्ततीनाम् ।
एभिः सोमेभिः सोमसुद्भिः सोमपा दानाय शुक्रपूतपाः ॥२६ ॥

सोमरस पीने वाले, बल बढ़ाने वाले तथा शुद्ध करने वाले वायुदेव अपने अश्वों से गमन करते हैं और तीन गुना सात बार, फिर उसका सत्तर गुना (अर्थात् १४७०) गौओं को आश्रय प्रदान करते हैं । सोम अभिषव करने वालों को वे दान देते हैं ॥२६ ॥

६९७३. यो म इमं चिदु त्मनामन्दच्चित्रं दावने ।
अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तराय सुक्रतुः ॥२७ ॥

यह जो (दानशील वायु) हमें विलक्षण दान देकर आनन्दित होता है, उस सत्कर्म परायण (पृथुश्रवा) यशस्वी ने (इस प्रयोजन हेतु) युवा 'अक्ष' (व्यवहार कुशल) 'नहुष' (मनुष्यों) 'सुकृत्' (श्रेष्ठकर्मी) तथा 'सुकृत्तर' (श्रेष्ठतर कर्मी) को प्रेरित किया ॥२७ ॥

६९७४. उचथ्ये३ वपुषि यः स्वराळुत वायो घृतस्नाः ।
अश्वेषितं रजेषितं शुनेषितं प्राज्म तदिदं नु तत् ॥२८ ॥



तेजस्वी वायु (प्राणयुक्त प्रवाह) जो उचथ्य (नामक राजा अथवा स्तुत्य) वपु (राजा या शरीर) के क्षेत्र में स्व, प्रकाशित (अथवा स्वयं ही शासक) हैं; उन्होंने घोड़ों, ऊँटों तथा श्वानों से प्रेरित (प्रेषित) जो अन्न प्रदान किया, यह वही है ॥२८ ॥

[प्राण-प्रवाह एक ओर स्तुत्य शरीरों में स्वप्रकाशित होकर उन्हें ओजस्वी बनाता है, दूसरी ओर उर्वर प्रदेशों में (अश्वों द्वारा ले जाने योग्य) रेगिस्तानी प्रदेशों में (ऊँटों द्वारा ले जाने योग्य) तथा हिम प्रदेशों में (कुत्तों द्वारा ले जाने योग्य) पोषक पदार्थ भी प्रदान करता है। ऋषि यज्ञ से उत्पन्न पर्जन्य में उन्हीं अन्नों (पोषक-प्रवाहों) को संचरित होता हुआ देखते हैं।]

६९७५. **अध प्रियमिषिराय षष्टिं सहस्रासनम्। अश्वानामिन्न वृष्णाम् ॥२९ ॥**

इस समय ऐश्वर्य प्रदान करने वाले शासक से हमने आठ हजार शक्तिशाली अश्वों को दान के रूप में ग्रहण किया ॥२९ ॥

६९७६. **गावो न यूथमुप यन्ति वध्रय उप मा यन्ति वध्रयः ॥३० ॥**

जिस प्रकार गौएँ (पोषक शक्तियाँ) अपने झुण्ड के साथ गमन करती हैं, उसी प्रकार 'पृथुश्रवा' द्वारा प्रदत्त वृषभ (बलशाली प्रवाह) हमारे साथ गमन करते हैं ॥३० ॥

६९७७. **अध यच्चारथे गणे शतमुष्ट्राँ अचिक्रदत्।**
अध श्वित्नेषु विंशतिं शता ॥३१ ॥

उसके बाद विचरण करने वाले ऊँटों के झुण्ड से सौ ऊँट और श्वेत वर्ण वाली गौओं में दो हजार गौएँ दान में प्रदान की ॥३१ ॥

६९७८. **शतं दासे बल्बूथे विप्रस्तरुक्ष आ ददे।**
ते ते वायविमे जना मदन्तीन्द्रगोपा मदन्ति देवगोपाः ॥३२ ॥

हम गौओं और अश्वों का पालन करने वाले ब्राह्मण हैं। हमने 'बलबूथ' नाम वाले (अथवा बल-सम्पन्न) से सैकड़ों गौएँ तथा अश्व प्राप्त किये थे। हे वायो ! ये सब आपके आश्रित हैं। ये स्तोतागण इन्द्र तथा अन्य देवताओं द्वारा संरक्षित होकर हर्षित होते हैं ॥३२ ॥

६९७९. **अध स्या योषणा मही प्रतीची वशमश्व्यम्। अधिरुक्मा वि नीयते ॥३३ ॥**

इसके बाद वे (दाता) स्वर्णिम आभूषणों से सुसज्जित तथा वंदनीया नारी को 'अश्व्य' के पुत्र 'वश' के सम्मुख पहुँचाते हैं ॥३३ ॥

[अलंकृत एवं वन्दनीय नारी विशेष प्राणशक्ति (कुण्डलिनी जैसी) को कह सकते हैं। यह तभी प्राप्त होती है, जब 'वश' (जीव चेतना) पहले प्राप्त विभूतियों को सुनियोजित कर लेते हैं।]

[सूक्त - ४७]

[**ऋषि-** त्रित आप्त्य। **देवता-** आदित्यगण, १४-१८ आदित्यगण और उषा। **छन्द-** महापंक्ति।]

६९८०. **महि वो महतामवो वरुण मित्र दाशुषे। यमादित्या अभि द्रुहो**
रक्षथा नेमघं नशदनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१ ॥

हे मित्र और वरुणदेव ! जिन रक्षण-साधनों से आप हवि प्रदाता यजमान को संरक्षण प्रदान करते हैं, वे अत्यन्त श्रेष्ठ हैं। हे आदित्यगण ! आप जिस यजमान को विद्रोही रिपुओं से संरक्षित करते हैं, उसको पाप आदि पीड़ित नहीं कर सकते ॥१ ॥



६९८१. विदा देवा अघानामादित्यासो अपाकृतिम्। पक्षा वयो यथोपरि
व्य१स्मे शर्म यच्छतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥२ ॥

हे आदित्यगण ! आपको यह ज्ञात है कि हमारा दु:ख किस प्रकार दूर हो ? जिस प्रकार पक्षी अपने बच्चों को पंख से ढककर सुख देता है, उसी प्रकार आप हमें सुख प्रदान करें । आपके रक्षण- साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥२ ॥

[जब तक बच्चे सांसारिक प्रभावों को सहन करने योग्य परिपक्व नहीं हो जाते हैं, तब तक अभिभावक पक्षी उन्हें अपने पंखों की छाया में सुरक्षित रखते हैं। साधक देवों से ऐसी ही सुरक्षा चाहते हैं।]

६९८२. व्य१स्मे अधि शर्म तत्पक्षा वयो न यन्तन। विश्वानि विश्ववेदसो
वरूथ्या मनामहेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥३ ॥

जिस प्रकार पक्षी पंखों से ढककर अपने बच्चों को सुरक्षा प्रदान करते हैं, उसी प्रकार आप हमें संरक्षित करें । सर्वज्ञाता हे देवो ! आपसे सम्पूर्ण संरक्षण की हम कामना करते हैं । आपके रक्षण- साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥३ ॥

६९८३. यस्मा अरासत क्षयं जीवातुं च प्रचेतसः। मनोर्विश्वस्य घेदिम
आदित्या राय ईशतेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥४ ॥

प्रचेता (चेतना के संचारक) आदित्यगण जिन्हें जीवन के साधन एवं आवास प्रदान करते हैं, उन्हीं मनुष्यों के लिए संसार के ऐश्वर्यों पर भी शासन (उन्हें व्यवस्थित-सुनियोजित) करते हैं। हे देवो ! आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥४ ॥

६९८४. परि णो वृणजन्नघा दुर्गाणि रथ्यो यथा। स्यामेदिन्द्रस्य
शर्मण्यादित्यानामुतावस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥५ ॥

जिस प्रकार रथ को खींचने वाले घोड़े दुर्गम पथ को छोड़ देते हैं, उसी प्रकार हम पापपूर्ण रास्तों को छोड़ देंगे । हम इन्द्रदेव के आश्रित तथा आदित्यों से संरक्षित होकर रहें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥५ ॥

[बिना रथ के खाली घोड़ों को दुर्गम स्थानों से भी गुजरने दिया जाता है, किन्तु रथ में नियोजित घोड़ों को केवल साफ-सुथरे मार्गों पर ही चलाया जाता है। लोक मंगल के लिए यज्ञीय दायित्वों का वहन करने वाले सत्पुरुषों को यत्नपूर्वक मर्यादित मार्ग पर ही चलाना या चलना होता है।]

६९८५. परिह्वृतेदना जनो युष्मादत्तस्य वायति। देवा अदभ्रमाश वो
यमादित्या अहेतनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥६ ॥

कष्ट सहन करके भी जो व्यक्ति आपकी उपासना करता है, वह आपके ऐश्वर्य को प्राप्त करता है । हे द्रुत गति से गमन करने वाले देवताओ ! जिनके समीप आप पधारते हैं, वे व्यक्ति असीमित ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥६ ॥

६९८६. न तं तिग्मं चन त्यजो न द्रासदभि तं गुरु। यस्मा उ शर्म सप्रथ
आदित्यासो अराध्वमनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥७ ॥

हे आदित्यगण ! जो व्यक्ति आपके आश्रित होकर रहते हैं, उन्हें तीक्ष्ण हथियार भी पीड़ित नहीं कर सकते । वे बड़ी-बड़ी विपत्तियों से भी बचकर सुखी रहते हैं । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥७ ॥



६९८७. **युष्मे देवा अपि ष्मसि युध्यन्तइव वर्मसु । यूयं महो न एनसो**
यूयमर्भादुरुष्यतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥८ ॥

हे देवताओ ! जिस प्रकार कवच धारण करके योद्धा सुरक्षित रहते हैं, उसी प्रकार आपको समर्पित होकर, हम छोटे-बड़े पापों से बचे रहते हैं । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥८ ॥

[पाप कर्म मनुष्यों एवं मनुष्यता के लिए घातक अस्त्रों जैसे हानिकारक हैं । देवत्व के कवच से (देव अनुशासन में आबद्ध रहकर) ही उनसे बचा जा सकता है ।]

६९८८. **अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु । माता मित्रस्य रेवतोऽर्यम्णो**
वरुणस्य चानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥९ ॥

सम्पत्तिवान् अर्यमा, मित्र और वरुणदेव की माता अदिति हमें सुरक्षित करें । वे हमें सुख प्रदान करें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥९ ॥

६९८९. **यद्देवाः शर्म शरणं यद्भद्रं यदनातुरम् । त्रिधातु यद्वरूथ्यं१ तदस्मासु**
वि यन्तनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१० ॥

हे देवताओ !आप अपने आश्रय (कवच) का सुख हमें प्रदान करें ।वह त्रिधातु (तीन गुणों या धारण-क्षमताओं) कल्याणप्रद, रोगमुक्त तथा रक्षण-सामर्थ्य से युक्त हों । आपके रक्षण- साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१० ॥

६९९०. **आदित्या अव हि ख्यताधि कूलादिव स्पशः । सुतीर्थमर्वतो यथानु**
नो नेषथा सुगमनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥११ ॥

हे आदित्यगण ! जिस प्रकार मनुष्य सरिता के किनारे से नीचे की ओर दृष्टिपात करता है, उसी प्रकार आप ऊपर से नीचे हमारी तरफ देखें । जिस प्रकार अच्छे घाट से अश्वों को (जल तक) ले जाते हैं, उसी प्रकार आप हमें श्रेष्ठ मार्ग पर चलाएँ । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥११ ॥

६९९१. **नेह भद्रं रक्षस्विने नावयै नोपया उत । गवे च भद्रं धेनवे**
वीराय च श्रवस्यतेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१२ ॥

हे आदित्यो ! आप असुरों, विद्वेषियों तथा उपद्रवियों का हित न करके सदैव गौओं (पोषण देने वालों) पराक्रमियों (रक्षकों) तथा कीर्ति की कामना करने वाले (लोक हितैषी) मनुष्यों का ही कल्याण करें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१२ ॥

६९९२. **यदाविर्यदपीच्यं१ देवासो अस्ति दुष्कृतम् । त्रिते तद्विश्वमाप्त्य**
आरे अस्मद्दधातनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१३ ॥

हे देवताओ ! हमारे प्रकट तथा गुप्त पापों को आप हमसे दूर करें । मुझ त्रित आप्त्य (तीनों-भाव, विचार एवं कर्मानुसार आप्त अनुशासन में रहने वाले, कृषि या साधक) में वे एक भी पाप न रहें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१३ ॥

६९९३. **यच्च गोषु दुष्वप्न्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः । त्रिताय तद्विभावर्याप्त्याय**
परा वहानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१४ ॥

हे सूर्य पुत्री उषादेवि !आप हमारी औरहमारी गौओं के दुःस्वप्नों (कुकल्पनाओं) को मुझ 'त्रित आप्त्य' ऋषि के निवेदन पर दूर करें । हे विभावरी (श्रेष्ठ आभा से भर देने वाली) !आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥१४ ॥



६९९४. **निष्कं वा घा कृणवते स्रजं वा दुहितर्दिवः । त्रिते दुष्ष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये**
परि दद्मस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१५ ॥

हे सूर्य पुत्री उषादेवि ! गढ़ाई करने वाले तथा माला बनाने वाले के दुःस्वप्नों (कुकल्पनाओं) को आप 'त्रित आप्त्य' ऋषि की प्रार्थना से दूर करें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१५ ॥

[स्वर्ण आदि श्रेष्ठ धातुओं की तरह श्रेष्ठ व्यक्तियों की गढ़ाई भी की जाती है । मनकों या फूलों की तरह सत्पुरुषों को भी माला की तरह गूँथा जाता है । ऐसे श्रेष्ठ कौशलयुक्त व्यक्तियों में कुकल्पनाएँ न उभरें ।]

६९९५. **तदन्नाय तदपसे तं भागमुपसेदुषे । त्रिताय च द्विताय चोषो**
दुष्ष्वप्न्यं वहानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१६ ॥

हे उषादेवि ! आप अन्न लेने वाले और देने वाले अथवा उस अन्न के भाग को ग्रहण करने वाले 'त्रित आप्त्य' के दुःस्वप्नों (कुकल्पनाओं या हीन संकल्पों) को दूर हटाएं । हे देवि ! आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१६ ॥

६९९६. **यथा कलां यथा शफं यथ ऋणं सन्नयामसि । एवा दुष्ष्वप्न्यं**
सर्वमाप्त्ये सं नयामस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१७ ॥

जिस प्रकार यज्ञार्थ वस्तुओं का क्रमशः दान करते हैं । जिस प्रकार उधार के सूद एवं मूलधन को क्रमशः पूर्णरूपेण चुका देते हैं, उसी प्रकार अपने सम्पूर्ण दुःस्वप्नों को हम 'त्रित आप्त्य' ऋषि अपने पास से हटा देंगे आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१७ ॥

[हीन संकल्प मनुष्य के लिए स्वाभाविक नहीं हैं, वे संयोगवश बाहर से प्रवेश कर जाते हैं । उन्हें विजातीय मानकर कर्ज की तरह अपने सिर से उतार देना चाहिए ।]

६९९७. **अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसो वयम् । उषो यस्माद्दुष्ष्वप्न्यादभैष्माप**
तदुच्छत्वनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१८ ॥

हे उषादेवि ! आज हम विजयी होकर लाभान्वित तथा पापरहित होंगे । जिस दुःस्वप्न से हम भयभीत हो गये थे, उससे हमें मुक्त करें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं ॥१८ ॥

[मन में हीन आकांक्षाएँ आने लगती हैं, तो साधक चिन्तित होने लगता है । दिव्य शक्तियों के सहयोग से उन्हें बलपूर्वक दूर कर देना ही साधक की विजय है । इस विजय की स्थिति बन जाने पर साधक हर्षित होते हैं ।]

[सूक्त - ४८]

[**ऋषि-** प्रगाथ काण्व । **देवता-** सोम । **छन्द-** त्रिष्टुप्, ५ जगती ।]

६९९८. **स्वादोरभक्षि वयसः सुमेधाः स्वाध्यो वरिवोवित्तरस्य ।**
विश्वे यं देवा उत मर्त्यासो मधु ब्रुवन्तो अभि सञ्चरन्ति ॥१ ॥

जिस सोमरस को समस्त देवता तथा मनुज 'मधुर' कहकर सराहना करते हुए ग्रहण करते हैं; अत्यन्त स्वादिष्ट तथा सम्माननीय उस सोमरस का, हम श्रेष्ठ स्वाध्यायी और मेधावी याजकगण सेवन करते हैं ॥१ ॥

६९९९. **अन्तश्च प्रागा अदितिर्भवा[redacted]वयाता हरसो दैव्यस्य ।**
इन्दविन्द्रस्य सख्यं जुषाणः श्रौष्टीव धुरमनु राय ऋध्याः ॥२ ॥



हे अविनाशी सोमरस ! आप देवताओं के अन्त: करण में प्रवेश करके उनके क्रोध को नष्ट करते हैं । रथ में नियोजित होकर अश्व जिस प्रकार भार वहन करते हैं, उसी प्रकार आप इन्द्रदेव की मैत्री को ग्रहण करके याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए संलग्न होते हैं ॥२ ॥

७०००. अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् ।
किं नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य ॥३ ॥

हे सोम ! आप यज्ञ की समृद्धि को बढ़ाने वाले हैं । हम यजमान आपके सहयोग से सूर्य रूप ज्योति से ज्योतित होकर अमरत्व को प्राप्त करें । हम भूलोक से दिव्य लोक में आरोहण करें । हम देवों के ज्योतिर्मय स्वर्गलोक को देखने में समर्थ हों ॥३ ॥

७००१. शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः ।
सखेव सख्य उरुशंस धीरः प्र ण आयुर्जीवसे सोम तारीः ॥४ ॥

हे सोम ! जिस प्रकार पिता के लिए पुत्र तथा मित्र के लिए मित्र सुखदायक होता है, उसी प्रकार आप (सोम) हमारे हृदय के लिए सुखकारी हों । हे बहु प्रशंसित सोम ! आप बुद्धि से सम्पन्न हैं । आप हमारे जीवन में सुख और आयुष्य की वृद्धि करें ॥४ ॥

७००२. इमे मा पीता यशस उरुष्यवो रथं न गावः समनाह पर्वसु ।
ते मा रक्षन्तु विस्रसश्चरित्रादुत मा स्रामाद्यवयन्त्विन्दवः ॥५ ॥

जिस प्रकार बैलों को रथ में नियोजित किया जाता है, उसी प्रकार यह सोमरस हमारे प्रत्येक अंग को कर्म में नियोजित करे । कीर्तिवान् यह सोम हम संरक्षण की अभिलाषा करने वालों की चारित्रिक-भ्रष्टता से रक्षा करे और रोगों से मुक्त करे ॥५ ॥

७००३. अग्निं न मा मथितं सं दिदीपः प्र चक्षय कृणुहि वस्यसो नः ।
अथा हि ते मद आ सोम मन्ये रेवाँ इव प्र चरा पुष्टिमच्छ ॥६ ॥

हे सोम ! पान किये जाने पर आप प्रज्वलित अग्नि के समान हमें आलोक और तेज से सम्पन्न करें । आप हमें ऐश्वर्यवान् बनायें । इसके बाद आपके आनन्द के लिए हम प्रार्थना करते हैं । आप ऐश्वर्यवान् के समान सब जगह गमन करें तथा पोषण प्राप्त करें ॥६ ॥

७००४. इषिरेण ते मनसा सुतस्य भक्षीमहि पित्र्यस्येव रायः ।
सोम राजन् प्र ण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि ॥७ ॥

हम कामनायुक्त मन से पैतृक सम्पत्ति के समान अभिषुत सोमरस का सेवन करेंगे । हे तेजसम्पन्न सोम ! जिस प्रकार सूर्यदेव दिन में प्रकाश की वृद्धि करते हैं, उसी प्रकार आप हमारे आयुष्य की वृद्धि करें ॥७ ॥

७००५. सोम राजन् मृळया नः स्वस्ति तव स्मसि व्रत्या३ स्तस्य विद्धि ।
अलर्ति दक्ष उत मन्युरिन्दो मा नो अर्यो अनुकामं परा दाः ॥८ ॥

हे तेज सम्पन्न सोम ! हमारे हित के लिए आप हमें प्रसन्न करें । हम व्रतशील आपके ही हैं, इस तथ्य को आप समझें । हे सोम ! आप हमें विवेक युक्त मन्यु (अनीति से लड़ने की क्षमता) प्रदान करें । आप हमें रिपुओं के अधीन न करें ॥८ ॥

[सुख हितकारी भी होते हैं और अहितकर भी हो सकते हैं । यहाँ हितयुक्त सुखों की ही कामना की गयी है ।]



७००६. **त्वं हि नस्तन्वः सोम गोपा गात्रेगात्रे निषसत्था नृचक्षाः ।**
यत्ते वयं प्रमिनाम व्रतानि स नो मृळ सुषखा देव वस्यः ॥९ ॥

हे सोम ! आप हमारे शरीर के संरक्षक तथा मनुष्यों के निरीक्षक हैं । आप हमारे अंग-प्रत्यंग में समाहित हो जायें । यद्यपि हम आपके व्रतों को भंग कर देते हैं (प्रयास करने पर भी निभा नहीं पाते); फिर भी आप हमारे अभिन्न सखा बनकर हमें सुख प्रदान करें ॥९ ॥

७००७. **ऋदूदरेण सख्या सचेय यो मा न रिष्येद्धर्यश्व पीतः ।**
अयं यः सोमो न्यधाय्यस्मे तस्मा इन्द्रं प्रतिरमेम्यायुः ॥१० ॥

श्रेष्ठ अश्वों वाले हे इन्द्रदेव ! जो सोमरस पान करने पर पीड़ा न पहुँचाये, हम उस सुपाच्य सोमरस की मित्रता प्राप्त करें । अपने पेट में पहुँचे हुए सोमरस को दीर्घकाल तक बने रहने की हम आपसे प्रार्थना करते हैं ॥१० ॥

७००८. **अप त्या अस्थुरनिरा अमीवा निरत्रसन्तमिषीचीरभैषुः ।**
आ सोमो अस्माँ अरुहद्विहाया अगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥११ ॥

वह श्रेष्ठ सोमरस हमें मिल गया है । कठिनाई से दूर होने वाले और अत्यधिक पीड़ा पहुँचाने वाले रोग अब नष्ट हो जाएँ, जिससे हम भयरहित हो जाएँ । जहाँ पर सोम आयुष्य की वृद्धि करते हों, हम वहीं जाएँ ॥११ ॥

७००९. **यो न इन्दुः पितरो हृत्सु पीतोऽमर्त्यो मर्त्यां आविवेश ।**
तस्मै सोमाय हविषा विधेम मृळीके अस्य सुमतौ स्याम ॥१२ ॥

हे पितरो ! पान करने पर जो अविनाशी सोमरस मानवों के हृदय में प्रवेश करता है, उस सोमरस की आहुतियों के द्वारा हम आपकी सेवा करते हैं । हम उनकी श्रेष्ठ बुद्धि तथा अनुकम्पा को प्राप्त करें ॥१२ ॥

७०१०. **त्वं सोम पितृभिः संविदानोऽनु द्यावापृथिवी आ ततन्थ ।**
तस्मै त इन्दो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१३ ॥

हे सोम ! आप पितरों की शक्ति के साथ मिलकर दिव्यलोक और भूलोक तक विस्तार प्राप्त करते हैं । हम हविष्य समर्पित करते हुए आपकी सेवा करते हैं, आप हमें धन-धान्य से सम्पन्न करें ॥१३ ॥

७०११. **त्रातारो देवा अधि वोचता नो मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः ।**
वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ॥१४ ॥

हे रक्षा करने वाले देवताओ ! आप हमें मीठे शब्दों में उपदेशित करें । दुःस्वप्न हमें अपने अधीन न करें । हम नित्य ही सोमरस के प्रियपात्र बने रहें । श्रेष्ठ सन्तानों से सम्पन्न होकर हम सोमरस की प्रार्थना करें ॥१४ ॥

७०१२. **त्वं नः सोमविश्वतो वयोधास्त्वं स्वर्विदा विशा नृचक्षाः ।**
त्वं न इन्द ऊतिभिः सजोषाः पाहि पश्चातादुत वा पुरस्तात् ॥१५ ॥

हे सोम ! आप हर तरफ से हमें अन्न प्रदान करने वाले हैं । आप सुखदाता तथा सर्वदर्शी हैं । आप हमारे अन्दर प्रवेश करें । हर्षित होकर अपने रक्षण-साधनों द्वारा हमें सुरक्षा प्रदान करें ॥१५ ॥



[अथ वालखिल्यम्]

[सूक्त - ४९]

[**ऋषि-** प्रस्कण्व काण्व । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** प्रगाथ (विषमाबृहती, समा सतोबृहती ।)]

७०१३. **अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।**
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥१ ॥

हे ऋत्विजो ! ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव स्तुति करने वालों को अनेक प्रकार के श्रेष्ठ धनों से सम्पन्न बनाते हैं । अतः उत्तम धन की प्राप्ति के लिए जैसे भी संभव हो, उनकी (इन्द्रदेव की) अर्चना करो ॥१ ॥

७०१४. **शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।**
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥२ ॥

जिस प्रकार सेनापति, शत्रु सेना पर चढ़ाई करते समय अपनी सेना का संरक्षण करता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ कार्यों में अपने साधन लगाने वालों का इन्द्रदेव संरक्षण करते हैं । ऐसे साधन, लोगों को तृप्तिदायक पर्वत के जल (झरने) के समान लाभदायक होते हैं ॥२ ॥

७०१५. **आ त्वा सुतास इन्दवो मदा य इन्द्र गिर्वणः ।**
आपो न वज्रिन्नन्वोक्यं१ सरः पृणन्ति शूर राधसे ॥३ ॥

हे वज्रधारी, शूरवीर इन्द्रदेव ! आनन्द-प्रदायक सोमरस आपके लिए ही अभिषुत किया गया है । जिस प्रकार पानी सरोवर को भरता है, उसी प्रकार यह सोमरस आपको परिपूर्ण (तृप्त) करता है ॥३ ॥

७०१६. **अनेहसं प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठमीं पिब ।**
आ यथा मन्दसानः किरासि नः प्र क्षुद्रेव त्मना धृषत् ॥४ ॥

रिपुओं का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप इस दोषमुक्त और सराहनीय सोमरस का पान करें । हर्षित होकर आप हमें क्षुद्र की तरह (बहुत क्षुद्र-छोटी वस्तु समझकर) ऐश्वर्य प्रदान करें ॥४ ॥

७०१७. **आ नः स्तोममुप द्रवद्धियानो अश्वो न सोतृभिः ।**
यं ते स्वधावन्त्स्वदयन्ति धेनव इन्द्र कण्वेषु रातयः ॥५ ॥

हे तृप्ति देने वाले इन्द्रदेव ! आपकी धेनुएँ (गौएँ अथवा धारण सामर्थ्य) तथा कण्व वंशियों को दिये गए साधन, जिस (यज्ञ) को श्रेष्ठ बनाते हैं; सोम अभिषव करने वालों के द्वारा की हुई स्तुतियों से प्रेरित होकर, अश्व के सदृश द्रुतगति से आप वहाँ पधारें ॥५ ॥

७०१८. **उग्रं न वीरं नमसोप सेदिम विभूतिमक्षितावसुम् ।**
उद्रीव वज्रिन्नवतो न सिञ्चते क्षरन्तीन्द्र धीतयः ॥६ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप, नष्ट न होने वाले अनेकों प्रकार के ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं । जिस प्रकार मनुष्य पराक्रमी व्यक्ति का आश्रय ग्रहण करते हैं, उसी प्रकार हम विनयपूर्वक आपके पास आते हैं । जिस प्रकार कुएँ के जल से खेतों की सिंचाई होती है, उसी प्रकार हमारे हाथ की अँगुलियाँ आपके निमित्त सोमरस अभिषुत करती हैं ॥६ ॥



७०१९. **यद्ध नूनं यद्वा यज्ञे यद्वा पृथिव्यामधि।**
अतो नो यज्ञमाशुभिर्महेमत उग्र उग्रेभिरा गहि ॥७ ॥

श्रेष्ठ बुद्धि-सम्पन्न हे वीर इन्द्रदेव !आप यज्ञ-मण्डप में विद्यमान हों, धरती पर विद्यमान हों या अन्य किसी स्थान पर विद्यमान हों, आप हमारे यज्ञ-स्थल पर अपने बलशाली तथा द्रुतगामी अश्वों द्वारा अवश्य पधारें ॥७ ॥

७०२०. **अजिरासो हरयो ये त आशवो वाताइव प्रसक्षिणः।**
येभिरपत्यं मनुषः परीयसे येभिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्रुतगामी तथा वायु के सदृश वेगवान् अश्व रिपुओं पर विजय प्राप्त करने वाले हैं । आप उनके द्वारा मनुष्यों के यज्ञों को तथा समस्त लोकों को देखने के लिए गमन करते हैं ॥८ ॥

७०२१. **एतावतस्त ईमह इन्द्र सुम्नस्य गोमतः।**
यथा प्रावो मघवन् मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने ऋषि मेध्यातिथि (मेधा के अनुगामी) और नीपातिथि (नीतिमार्ग के अनुगामी) को अपार धन देकर उनकी रक्षा की थी, उसी प्रकार आप हमें गौओं, अश्वों से सम्पन्न वैभव प्रदान करें । हम आप से याचना करते हैं ॥९ ॥

७०२२. **यथा कण्वे मघवन्त्रसदस्यवि यथा पक्थे दशव्रजे।**
यथा गोशर्ये असनोर्ऋजिश्वनीन्द्र गोमद्धिरण्यवत् ॥१० ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आपने जिस प्रकार कण्व, दशव्रज (दस इन्द्रियों के नियामक), त्रसदस्यु (दस्युओं को त्रास देने वाले), पक्थ (परिपक्व) तथा ऋजिश्वी (ऋजुमार्गगामी) को गौओं (पोषण) तथा स्वर्ण (वैभव) से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान किया, उसी प्रकार हमें भी प्रदान करें ॥१० ॥

[सूक्त - ५०]

[**ऋषि-** पुष्टिगु काण्व । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती ।]

७०२३. **प्र सु श्रुतं सुराधसमर्चा शक्रमभिष्टये।**
यः सुन्वते स्तुवते काम्यं वसु सहस्रेणेव मंहते ॥१ ॥

हे स्तोताओ ! जो इन्द्रदेव सोम यज्ञ करने वालों तथा स्तोताओं को सहस्रों प्रकार के इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, उन बलशाली तथा ऐश्वर्यशाली, यशस्वी इन्द्रदेव की ; वाञ्छित सम्पत्ति प्राप्ति के निमित्त आप विधिवत् प्रार्थना करें ॥१ ॥

७०२४. **शतानीका हेतयो अस्य दुष्टरा इन्द्रस्य समिषो महीः।**
गिरिर्न भुज्मा मघवत्सु पिन्वते यदीं सुता अमन्दिषुः ॥२ ॥

जब सुसंस्कृत सोमरस उन इन्द्रदेव को आनन्दित करता है, तब वे सम्पत्तिवानों को पर्वत के सदृश विशाल पदार्थों का भण्डार प्रदान करके, उन्हें तुष्ट करते हैं । उनके पास अडिग रहने वाले तथा भली प्रकार फेंके जाने वाले सैकड़ों अस्त्र-शस्त्र हैं ॥२ ॥

७०२५. **यदीं सुतास इन्दवोऽभि प्रियममन्दिषुः।**
आपो न धायि सवनं म आ वसो दुघा इवोप दाशुषे ॥३ ॥



सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव !अभिषुत सोमरस ने जब आपको आनन्दित किया, तब आपने हम आहुति प्रदाताओं के यज्ञ-कर्म को दूध देने वाली गौओं तथा जल के सदृश (सबको तृप्ति देने वाला) बनाया ॥३ ॥

७०२६. अनेहसं वो हवमानमूतये मध्वः क्षरन्ति धीतयः ।
आ त्वा वसो हवमानास इन्दव उप स्तोत्रेषु दधिरे ॥४ ॥

हे याजको ! अपनी सुरक्षा के लिए आप उन इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस अभिषुत करते हैं, जो अत्यन्त सराहनीय तथा रिपुओं के द्वारा अजेय हैं । सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! यज्ञ-मण्डप में सराहनीय सोमरस आपके सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है ॥४ ॥

७०२७. आ नः सोमे स्वध्वर इयानो अत्यो न तोशते ।
यं ते स्वदावन्त्स्वदन्ति गूर्तयः पौरे छन्दयसे हवम् ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी स्तुतियों की अभिलाषा करते हैं, वे आपको हर्षित करती हैं । अश्व के सदृश वेगपूर्वक गमन करते हुए आप हमारे सोमयज्ञ में पधारें तथा रिपुओं (दुष्प्रवृत्तियों) का विनाश करें ॥५ ॥

७०२८. प्र वीरमुग्रं विविचिं धनस्पृतं विभूतिं राधसो महः ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो वसुत्वना सदा पीपेथ दाशुषे ॥६ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव !आप अत्यन्त पराक्रमी तथा अनेकों प्रकार के ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं ।हम आपसे प्रचुर ऐश्वर्य की याचना करते हैं । आप पानी से युक्त जलकुण्ड के सदृश, हम हवि-प्रदाता यजमानों को सन्तुष्ट करते हैं ॥६ ॥

७०२९. यद्ध नूनं परावति यद्वा पृथिव्यां दिवि ।
युजान इन्द्र हरिभिर्महेमत ऋष्व ऋष्वेभिरा गहि ॥७ ॥

महान् बुद्धि सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप द्युलोक में विद्यमान हों, भूलोक अथवा अन्यत्र किसी दूर प्रदेश में हों, अपने शक्तिशाली अश्वों को नियोजित करके हमारे समीप शीघ्र ही पधारें ॥७ ॥

७०३०. रथिरासो हरयो ये ते अस्रिध ओजो वातस्य पिप्रति ।
येभिर्नि दस्युं मनुषो निघोषयो येभिः स्वः परीयसे ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके रथ में नियोजित होने वाले अश्व बाधाओं से रहित हैं । आप उनके द्वारा रिपुओं को प्रताड़ित करते हैं तथा स्वर्ग-लोक में चारों ओर गमन करते हैं । आपके अश्व वायु में व्याप्त ओज को आत्मसात् करते हैं ॥८ ॥

७०३१. एतावतस्ते वसो विद्याम शूर नव्यसः ।
यथा प्राव एतशं कृत्व्ये धने यथा वशं दशव्रजे ॥९ ॥

सबको निवास प्रदान करने वाले शूरवीर हे इन्द्रदेव ! आपने ऐश्वर्य के लिए 'एतश' तथा 'दशव्रज' ऋषि को संरक्षित किया । आप ऐश्वर्यवान् तथा प्रार्थनीय हैं । हम आपको भली-भाँति जानते हैं ॥९ ॥

७०३२. यथा कण्वे मघवन् मेधे अध्वरे दीर्घनीथे दमूनसि ।
यथा गोशर्ये असिषासो अद्रिवो मयि गोत्रं हरिश्रियम् ॥१० ॥

वज्र को धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने यज्ञ-स्थल पर 'कण्व' ऋषि, 'दीर्घनीथ', तथा 'गोशर्य' को रक्षित किया था, उसी प्रकार अश्वों द्वारा पधारकर हमारी सुरक्षा करें ॥१० ॥





[सूक्त - ५१]

[ऋषि- श्रुष्टिगु काण्व । देवता- इन्द्र । छन्द- प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

७०३३. **यथा मनौ सांवरणौ सोममिन्द्रापिबः सुतम् ।**
नीपातिथौ मघवन् मेध्यातिथौ पुष्टिगौ श्रुष्टिगौ सचा ॥१ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने 'सांवरण मनु' के यज्ञ में अभिषुत सोमरस का पान किया था, उसी प्रकार बलशाली गौओं से युक्त 'मेधातिथि', 'नीपातिथि' 'पुष्टिगु' तथा 'श्रुष्टिगु' आदि ऋषियों के यज्ञ में भी सोमपान किया करें ॥१ ॥

७०३४. **पार्षद्वाणः प्रस्कण्वं समसादयच्छयानं जिव्रिमुद्धितम् ।**
सहस्राण्यसिषासद् गवामृषिस्त्वोतो दस्यवे वृकः ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! उच्च स्थान में शयन करने वाले ऋषि 'प्रस्कण्व' को जब 'पार्षद्वाण' के ऊपर स्थापित किया गया, उस समय आपने उनकी सुरक्षा करके सहस्रों गौओं की रक्षा की थी ॥२ ॥

७०३५. **य उक्थेभिर्न विन्धते चिकिद्य ऋषिचोदनः ।**
इन्द्रं तमच्छा वद नव्यस्या मत्यरिष्यन्तं न भोजसे ॥३ ॥

(ऋषि श्रुष्टिगु स्वयं के प्रति कहते हैं) जो इन्द्रदेव स्तोत्रों द्वारा सभी के ज्ञाता तथा ऋषियों के प्रेरक हैं, उनके निमित्त अभिनव स्तुतियाँ करें । उनसे दिव्य पोषण की कामना करें ॥३ ॥

७०३६. **यस्मा अर्कं सप्तशीर्षाणमानृचुस्त्रिधातुमुत्तमे पदे ।**
स त्वि१मा विश्वा भुवनानि चिक्रददादिज्जनिष्ट पौंस्यम् ॥४ ॥

जिन इन्द्रदेव ने समस्त लोकों का सृजन करके अपनी शक्ति को प्रकट किया । उनके लिए स्तोतागणों ने सप्त शीर्ष (सात व्याहृतियों) तथा तीन धारक क्षमताओं से युक्त स्तोत्रों का वाचन किया ॥४ ॥

७०३७. **यो नो दाता वसूनामिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।**
विद्मा ह्यस्य सुमतिं नवीयसीं गमेम गोमति व्रजे ॥५ ॥

हम अपनी सहायता के लिए ऐश्वर्य प्रदाता इन्द्रदेव को आहूत करते हैं । हम जानी हुई उनकी अभिनव प्रार्थना करके श्रेष्ठ गौओं से सम्पन्न गोशाला को प्राप्त करें ॥५ ॥

७०३८. **यस्मै त्वं वसो दानाय शिक्षसि स रायस्पोषमश्नुते ।**
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥६ ॥

सबको आवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! जिस व्यक्ति को आप दान देने का उपदेश देते हैं, वह व्यक्ति ऐश्वर्य से पोषित होता है । हे प्रार्थनीय तथा धनवान् इन्द्रदेव ! हम याजकगण अपनी सहायता के निमित्त आपका आवाहन करते हैं ॥६ ॥

७०३९. **कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।**
उपोपेन्नु मघवन् भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप कभी सृष्टि को विखण्डित नहीं करते । आप याजक के सहयोगी बनें । आप देवता हैं । आपका दान बार-बार आता है, जो (आशा से) अधिक ही प्राप्त होता है ॥७ ॥



७०४०. **प्र यो ननक्षे अभ्योजसा क्रिविं वधैः शुष्णं निघोषयन् ।**
यदेदस्तम्भीत्प्रथयन्नमूं दिवमादिज्जनिष्ट पार्थिवः ॥८ ॥

जिन इन्द्रदेव ने अपनी सामर्थ्य से स्वर्ग लोक को रोकने वाले 'शुष्ण' नामक असुर का अपने आयुधों द्वारा वध किया, उन्होंने ही धरती के समस्त पदार्थों को उत्पन्न किया ॥८ ॥

७०४१. **यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।**
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत् सो अज्यते रयिः ॥९ ॥

सभी आर्य एवं दास जिसके धन के रक्षक हैं, जो 'रुशम' के लिए 'पवीर' (रथ नेमि) की तरह अनुकूल होते हैं, वे ही इन्द्रदेव तुम्हारे लिए गुप्त धन प्रदायक होते हैं ॥९ ॥

७०४२. **तुरण्यवो मधुमन्तं घृतश्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।**
अस्मे रयिः पप्रथे वृष्ण्यं शवोऽस्मे सुवानास इन्दवः ॥१० ॥

शीघ्र कार्य करने वाले विप्रगण मधुर घृतसिक्त पूजनीय मंत्रों का उच्चारण करते हैं । इससे हमारे लिए धन, वीर्य (पौरुष) तथा सोम की सिद्धि होती है ॥१० ॥

[सूक्त - ५२]

[**ऋषि**- आयु काण्व । **देवता**- इन्द्र । **छन्द**- प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

७०४३. **यथा मनौ विवस्वति सोमं शक्रापिबः सुतम् ।**
यथा त्रिते छन्द इन्द्र जुजोषस्यायौ मादयसे सचा ॥१ ॥

सामर्थ्य- सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने विवस्वान् मनु द्वारा प्रदत्त अभिषुत सोमरस का पान किया तथा त्रित ऋषि के छन्दों का श्रवण किया, उसी प्रकार आप मुझ 'आयु ऋषि' के साथ आसीन होकर हर्षित हों ॥१ ॥

७०४४. **पृषध्रे मेध्ये मातरिश्वनीन्द्र सुवाने अमन्दथाः ।**
यथा सोमं दशशिप्रे दशोण्ये स्यूमरश्मावृजूनसि ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आप सोम अभिषव करने वाले मेध्य, दशशिप्र, पृषध्र तथा मातरिश्वा द्वारा प्रदत्त सोमरस का पान करके हर्षित हुए, उसी प्रकार आप स्यूमरश्मि, ऋजूनस तथा दशोण्य ऋषियों के यज्ञ में सोमरस का पान करके हर्षित हों ॥२ ॥

७०४५. **य उक्था केवला दधे यः सोमं धृषितापिबत् ।**
यस्मै विष्णुस्त्रीणि पदा विचक्रम उप मित्रस्य धर्मभिः ॥३ ॥

रिपुओं का संहार करने वाले इन्द्रदेव केवल स्तोत्रों को ग्रहण करते हैं तथा सोमरस पान करते हैं । जिसके निमित्त विष्णुदेव ने मित्रवत् कर्त्तव्य की पूर्ति के लिए तीन पादों से सब कुछ (तीनों लोकों को) नाप लिया था, वे इन्द्रदेव हमें सुख प्रदान करें ॥३ ॥

७०४६. **यस्य त्वमिन्द्र स्तोमेषु चाकनो वाजे वाजिञ्छतक्रतो ।**
तं त्वा वयं सुदुघामिव गोदुहो जुहूमसि श्रवस्यवः ॥४ ॥

शक्तिशाली तथा शतकर्मा हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ में स्तोताओं द्वारा की गई स्तुतियों से सन्तुष्ट होते हैं । अन्न की कामना करने वाले हम याजक आपको आहुतियाँ समर्पित करते हुए उसी प्रकार सन्तुष्ट करते हैं,



जिस प्रकार ग्वाला गौओं को चारा(आहार) प्रदान करके सन्तुष्ट करता है ॥४ ॥

७०४७. **यो नो दाता स नः पिता महाँ उग्र ईशानकृत्।**
अयामन्नुग्रो मघवा पुरूवसुर्गोरश्वस्य प्र दातु नः ॥५ ॥

पराक्रमी तथा शासन करने वाले महान् इन्द्रदेव हमारे पिता तुल्य हैं । वे हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । वे रणक्षेत्र से पीछे न हटने वाले अत्यन्त विकराल योद्धा हैं । अनेकों को निवास देने वाले वे इन्द्रदेव हमें गौएँ तथा अश्व प्रदान करें ॥५ ॥

७०४८. **यस्मै त्वं वसो दानाय मंहसे स रायस्पोषमिन्वति।**
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥६ ॥

सभी को आश्रय प्रदान करने वाले शतकर्मा हे इन्द्रदेव ! आप जिस व्यक्ति को दान देने की इच्छा करते हैं, वही व्यक्ति ऐश्वर्य से सम्पन्न होकर आपका संरक्षण प्राप्त करता है । ऐश्वर्य की कामना करने वाले स्तोत्रों से आपका आवाहन करते हैं ॥६ ॥

७०४९. **कदा चन प्र युच्छस्युभे नि पासि जन्मनी।**
तुरीयादित्य हवनं त इन्द्रियमा तस्थावमृतं दिवि ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप दो प्रकार से जन्म लेने वाले हैं । आप कभी प्रमत्त नहीं होते (सदैव जागरूक रहते हैं) । हे आदित्य (अदिति पुत्र) ! आप जगत् पालक हैं । शरीर में इन्द्रियाँ आपकी प्रतीक हैं तथा अमर द्युलोक में आप (जगदात्मा) का आवाहन करते हैं ॥७ ॥

[ऋषि ने इन्द्रदेव का जन्म दो प्रकार से बताया है । एक व्यक्ति वाचक इन्द्र, देवमाता अदिति के पुत्र हैं, इसलिए उनको आदित्य नाम से भी सम्बोधित किया जा सकता है । विश्व संगठक ब्राह्म विद्या के रूप में उनका दूसरा जन्म कहा गया है । वे ही अणुओं के घटकों को, शरीर के इन्द्रियादि घटकों को तथा ब्रह्माण्ड के ग्रह-उपग्रहों को संयुक्त रखने वाली आत्मशक्ति के रूप में स्थित रहते हैं ।]

७०५०. **यस्मै त्वं मघवन्निन्द्र गिर्वणः शिक्षो शिक्षसि दाशुषे।**
अस्माकं गिर उत सुष्टुतिं वसो कण्ववच्छृणुधी हवम् ॥८ ॥

धनवान्, प्रार्थनीय तथा आश्रयदाता हे इन्द्रदेव ! आप दानियों को जो ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, उसके लिए हम भी आपकी स्तुति करते हैं । जिस प्रकार आपने कण्व ऋषि की स्तुतियों को सुना था, उसी प्रकार हमारी भी प्रार्थना सुनें ॥८ ॥

७०५१. **अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत।**
पूर्वीर्ऋतस्य बृहतीरनूषत स्तोतुर्मेधा असृक्षत ॥९ ॥

हे ऋत्विजो ! आप इन्द्रदेव के लिए सनातन कण्ठस्थ स्तोत्रों का पाठ करें । पूर्व यज्ञों में बृहती छन्द में सामगान किया था । इससे स्तोताओं की मेधा में वृद्धि होती है ॥९ ॥

७०५२. **समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम्।**
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥१० ॥

जिन इन्द्रदेव ने द्युलोक, पृथ्वी लोक, सूर्य तथा प्रचुर सम्पत्ति का सृजन किया, उन्हें गौ-दुग्ध युक्त तेजस्वी एवं शुद्ध सोमरस ने हर्षित किया ॥१० ॥



[सूक्त - ५३]

[ऋषि- मेध्य काण्व । देवता- इन्द्र । छन्द- प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

७०५३. **उपमं त्वा मघोनाञ्ज्येष्ठञ्च वृषभाणाम् ।**
पूर्भित्तमं मघवन्निन्द्र गोविदमीशानं राय ईमहे ॥१ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप सम्पत्तिवानों तथा बलवानों में सर्वश्रेष्ठ हैं तथा शत्रुओं की पुरियों को नष्ट करने वाले हैं । गौओं को प्रदान करने वाले आप सभी के शासक हैं । हम भी आपसे ऐश्वर्य की याचना करते हैं ॥१ ॥

७०५४. **य आयुं कुत्समतिथिग्वमर्दयो वावृधानो दिवेदिवे ।**
तं त्वा वयं हर्यश्वं शतक्रतुं वाजयन्तो हवामहे ॥२ ॥

शतकर्मा, हरि संज्ञक अश्वों वाले जिन इन्द्रदेव ने आयु, अतिथिग्व तथा कुत्स को नित्य सामर्थ्य प्रदान करके महान् बनाया ।अपनी सहायता के लिए हम उनका आवाहन करते हैं तथा उनसे बल की कामना करते हैं ॥२ ॥

७०५५. **आ नो विश्वेषां रसं मध्वः सिञ्चन्त्वद्रयः ।**
ये परावति सुन्विरे जनेष्वा ये अर्वावतीन्दवः ॥३ ॥

दूर या निकट के प्रदेशों में जिस सोम की प्रतिष्ठा है, उसे हम सबके लिए (ऋत्विग्गण) अद्रि (पत्थर) से निचोड़कर निकालें ॥३ ॥

७०५६. **विश्वा द्वेषांसि जहि चाव चा कृधि विश्वे सन्वन्त्वा वसु ।**
शीष्टेषु चित्ते मदिरासो अंशवो यत्रा सोमस्य तृम्पसि ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस याजक के सोमरस का पान करके आप सन्तुष्ट होते हैं, उसके समस्त शत्रुओं को परास्त करके उसकी सुरक्षा करें, समस्त मानव उसे ऐश्वर्य प्रदान करें । उसके द्वारा तैयार किया गया सोमरस आपके लिए हितकारी हो ॥४ ॥

७०५७. **इन्द्र नेदीय एदिहि मितमेधाभिरूतिभिः ।**
आ शन्तम शन्तमाभिरभिष्टिभिरा स्वापे स्वापिभिः ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! शान्तिप्रदायक, सुखदायी कामनाओं के साथ श्रेष्ठ बन्धुओं सहित आप हमारे समीप पधारें । आप मेधावी तथा संरक्षण की कामना करने वालों के साथ पधारें॥५ ॥

७०५८. **आजितुरं सत्पतिं विश्वचर्षणिं कृधि प्रजास्वाभगम् ।**
प्र सू तिरा शचीभिर्ये त उक्थिनः क्रतुं पुनत आनुषक् ॥६ ॥

समस्त मनुष्यों के हितैषी तथा सत्पात्रों के पालनकर्त्ता हे इन्द्रदेव ! आप प्रजाओं में संव्याप्त युद्धों को जीतने वाले हैं । आप अपने स्तोताओं को धन प्रदान करके अपनी सामर्थ्य से उन्हें समृद्ध बनाएँ तथा यज्ञादि कार्यों को सम्पादित करें ॥६ ॥

७०५९. **यस्ते साधिष्ठोऽवसे ते स्याम भरेषु ते ।**
वयं होत्राभिरुत देवहूतिभिः ससवांसो मनामहे ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम अपनी सुरक्षा के लिए आपका आवाहन करते हैं । रणक्षेत्र में हम आपके आश्रित होकर रहें । अपनी स्तुतियों द्वारा अन्न की कामना करने वाले हम (याजक) आपकी उपासना करते हैं ॥७ ॥



७०६०. **अहं हि ते हरिवो ब्रह्म वाजयुराजिं यामि सदोतिभिः ।**
त्वामिदेव तममे समश्वयुर्गव्युरग्रे मथीनाम् ॥८ ॥

अश्वों से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! गौओं, अश्वों तथा अन्न की कामना करने वाले हम (याजक) आपके द्वारा संरक्षित होकर भंयकर संग्राम में भी चले जाते हैं ।हम भयभीत होने पर पराक्रमियों में सर्वश्रेष्ठ, आपकी शरण में आते हैं ॥८ ॥

[सूक्त - ५४]

[**ऋषि**- मातरिश्वा काण्व । **देवता**- इन्द्र, ३-४ विश्वेदेवा । **छन्द**- प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

७०६१. **एतत्त इन्द्र वीर्यं गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ।**
ते स्तोभन्त ऊर्जमावन् घृतश्चुतं पौरासो नक्षन्धीतिभिः ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! ऋत्विग्गण आपकी सामर्थ्य का वर्णन करते हैं । उन्होंने प्रार्थनाओं द्वारा आपसे अन्न तथा घृत प्रदान करने वाली गौएँ प्राप्त कीं ॥१ ॥

७०६२. **नक्षन्त इन्द्रमवसे सुकृत्यया येषां सुतेषु मन्दसे ।**
यथा संवर्ते अमदो यथा कृश एवास्मे इन्द्र मत्स्व ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिनके सोमयागों द्वारा आप हर्षित होते हैं, वे याजक अपनी सुरक्षा के लिए सत्कर्मों द्वारा आपका वरण करते हैं । जिस प्रकार आप 'संवर्त' तथा 'कृश' ऋषि के यज्ञ में हर्षित हुए थे, उसी प्रकार हमारे यज्ञ में भी आनन्दित हों ॥२ ॥

७०६३. **आ नो विश्वे सजोषसो देवासो गन्तनोप नः ।**
वसवो रुद्रा अवसे न आ गमञ्छृण्वन्तु मरुतो हवम् ॥३ ॥

मित्रभाव से रहने वाले समस्त देवगण हमारे समीप पधारें । संरक्षण के लिए वसु और रुद्रदेव हमारे समीप पधारें तथा मरुद्गण हमारी स्तुतियों का श्रवण करें ॥३ ॥

७०६४. **पूषा विष्णुर्हवनं मे सरस्वत्यवन्तु सप्त सिन्धवः ।**
आपो वातः पर्वतासो वनस्पतिः शृणोतु पृथिवी हवम् ॥४ ॥

विष्णुदेव, सरस्वती, पूषा और सप्त-सरिताएँ हमारे यज्ञ को संरक्षण प्रदान करें । वनस्पति, जल, वायु, पर्वत तथा धरित्री हमारी स्तुतियों को सुनें ॥४ ॥

७०६५. **यदिन्द्र राधो अस्ति ते माघोनं मघवत्तम ।**
तेन नो बोधि सधमाद्यो वृधे भगो दानाय वृत्रहन् ॥५ ॥

हे वृत्रहन्ता, ऐश्वर्यवान् , वन्दनीय इन्द्रदेव ! आप अपने श्रेष्ठ धन के साथ उल्लसित होकर दान देने के लिए (हमारी ओर) बढ़ें ॥५ ॥

७०६६. **आजिपते नृपते त्वमिद्धि नो वाज आ वक्षि सुक्रतो ।**
वीती होत्राभिरुत देववीतिभिः ससवांसो वि शृण्विरे ॥६ ॥

युद्ध को नियंत्रित करने वाले तथा सत्कर्म करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप प्रजाजनों का पोषण करते हैं तथा रणक्षेत्र में हमें संरक्षित करते हैं । देवताओं के निमित्त यजन करने वाले याजक अन्न प्राप्ति की इच्छा करते हुए आपकी प्रार्थना करते हैं ॥६ ॥



७०६७. **सन्ति ह्यर्१ य आशिष इन्द्र आयुर्जनानाम् ।**
अस्मान्नक्षस्व मघवन्नुपावसे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ॥७ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! मनुष्यों का जीवन तथा धन आपके आश्रित है । संरक्षित करने के लिए आप हमें अपने ही पास रखें तथा पोषक अन्न प्रदान करें ॥७ ॥

७०६८. **वयं त इन्द्र स्तोमेभिर्विधेम त्वमस्माकं शतक्रतो ।**
महि स्थूरं शशयं राधो अह्रयं प्रस्कण्वाय नि तोशय ॥८ ॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप हमारे हैं और हम आपके । स्तोत्रों के द्वारा हम आपकी प्रार्थना करते हैं । हे इन्द्रदेव ! आप मुझ प्रस्कण्व ऋषि को ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें , जो महान् , निन्दारहित तथा सदैव अक्षुण्ण हो ॥८ ॥

[सूक्त - ५५]

[**ऋषि-** कृशकाण्व । **देवता-** प्रस्कण्व । **छन्द-** गायत्री, ३,५ अनुष्टुप् ।]

७०६९. **भूरीदिन्द्रस्य वीर्य१ व्यख्यमभ्यायति । राधस्ते दस्यवे वृक ॥१ ॥**

दुष्टों का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपका श्रेष्ठ शौर्य ही चारों ओर आलोकित हो रहा है । आपका ऐश्वर्य हमें भी प्राप्त हो ॥१ ॥

७०७०. **शतं श्वेतास उक्षणो दिवि तारो न रोचन्ते । मह्ना दिवं न तस्तभुः ॥२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त सैकड़ों श्वेत वृषभ दिव्यलोक में तारों के सदृश सुशोभित हो रहे हैं । आप अपनी सामर्थ्य से दिव्यलोक को धारण किये हुए हैं ॥२ ॥

७०७१. **शतं वेणूञ्छतं शुनः शतं चर्माणि म्लातानि ।**
शतं मे बल्बजस्तुका अरुषीणां चतुःशतम् ॥३ ॥

उन इन्द्रदेव ने कृश ऋषि को सैकड़ों श्वान, वे५ु , मुलायम खाल, घास के गट्ठर तथा लालवर्ण के चार सौ अश्व प्रदान किये ॥३ ॥

७०७२. **सुदेवाः स्थ काण्वायना वयोवयो विचरन्तः । अश्वासो न चङ्क्रमत ॥४ ॥**

हे कण्ववंशियो ! आप (आकाश में) पक्षियों के समान तथा (भूमिपर) अश्वों के समान विचरण करते हुए महान् देवत्व से सम्पन्न बनें ॥४ ॥

७०७३. **आदित्साप्तस्य चर्किरन्नानूनस्य महि श्रवः ।**
श्यावीरतिध्वसन्पथश्चक्षुषा चन सन्नशे ॥५ ॥

हे स्तोताओ ! आप सप्त लोकों के अधिष्ठाता इन्द्रदेव की प्रार्थना करें । श्यामवर्ण के पथ को पार करते हुए आप उन्हें आँखों से देख सकते हैं । पूर्णता को प्राप्त उनकी कीर्ति महान् है ॥५ ॥

[सूक्त - ५६]

[**ऋषि-** पृषध्र काण्व । **देवता-** प्रस्कण्व, ५- अग्नि, सूर्य । **छन्द-** गायत्री, ५- पंक्ति ।]

७०७४. **प्रति ते दस्यवे वृक राधो अदर्श्यह्रयम् । द्यौर्न प्रथिना शवः ॥१ ॥**



रिपुओं के लिए व्याघ्र के समान हे इन्द्रदेव ! आपका पवित्र ऐश्वर्य उन रिपुओं के लिए विपरीत प्रतीत होता है । आपकी सामर्थ्य दिव्यलोक के समान महान् है ॥१ ॥

७०७५. **दश मह्यं पौतक्रतः सहस्रा दस्यवे वृकः । नित्याद्रायो अमंहत ॥२ ॥**

सत्कर्म करने वाले हे इन्द्रदेव ! हमारे लिए आपने दस सहस्र रिपुओं का वध कर दिया तथा उनके अविनाशी धनं का भण्डार हमें प्रदान किया ॥२ ॥

७०७६. **शतं मे गर्दभानां शतमूर्णावतीनाम् । शतं दासाँ अति स्रजः ॥३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपने मुझ (पृषध्र) को सैकड़ों भेड़ें, गधे और सेवक प्रदान किये ॥३ ॥

७०७७. **तत्रो अपि प्राणीयत पूतक्रतायै व्यक्ता । अश्वानामिन्न यूथ्याम् ॥४ ॥**

जो मनुष्य श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न हैं, उनके ही पास वे इन्द्रदेव अश्वों के झुण्ड के समान ऐश्वर्य पहुँचाते हैं ॥४ ॥

७०७८. **अचेत्यग्निश्चिकितुर्हव्यवाट् स सुमद्रथः ।**
अग्निः शुक्रेण शोचिषा बृहत् सूरो अरोचत दिवि सूर्यो अरोचत ॥५ ॥

हव्य को देवताओं के सन्निकट ले जाने वाले रथ के समान ज्ञान-सम्पन्न अग्निदेव प्रकट हुए हैं । जब वे अपने उज्ज्वल आलोक से धरती पर सुशोभित होते हैं, तब द्युलोक में सूर्यदेव भी आलोकित होने लगते हैं ॥५ ॥

[सूक्त - ५७]

[**ऋषि**- मेध्य काण्व । **देवता**- अश्विनीकुमार । **छन्द**- त्रिष्टुप् ।]

७०७९. **युवं देवा क्रतुना पूर्व्येण युक्ता रथेन तविषं यजत्रा ।**
आगच्छतं नासत्या शचीभिरिदं तृतीयं सवनं पिबाथः ॥१ ॥

सत्य का आचरण करने वाले सम्माननीय हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने सामर्थ्यपूर्ण कर्मों से सम्पन्न होकर रथ द्वारा यज्ञ-स्थल पर पधारें । आप तीसरे सवन में सोमरस का पान करें ॥१ ॥

७०८०. **युवां देवास्त्रय एकादशासः सत्याः सत्यस्य ददृशे पुरस्तात् ।**
अस्माकं यज्ञं सवनं जुषाणा पातं सोममश्विना दीद्यग्नी ॥२ ॥

अग्नि के समान तेज-सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे यज्ञ और सवन में पधारकर सोमरस का पान करें । आपके साथ सत्य का पालन करने वाले तैंतीस देवों का समूह भी है ॥२ ॥

७०८१. **पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः ।**
सहस्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वाँ इत्ताँ उप याता पिबध्यै ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! अन्तरिक्ष से पृथ्वी पर जल की वृष्टि करने वाला आपका कार्य अत्यन्त सराहनीय है । गौओं को खोजने जैसे सहस्रों पुण्य कार्यों के समय, सोमरस पान करने के लिए आप यहाँ पधारें ॥३ ॥

७०८२. **अयं वां भागो निहितो यजत्रेमा गिरो नासत्योप यातम् ।**
पिबतं सोमं मधुमन्तमस्मे प्र दाश्वांसमवतं शचीभिः ॥४ ॥

पूजने योग्य हे अश्विनीकुमारो ! स्तुतियों को सुनने के निमित्त आप दोनों हमारे निकट पधारें । आपके लिए यह सोम भाग रखा हुआ है । मुझ हवि-प्रदाता को अपनी सामर्थ्य से संरक्षित करें । हमारे हित के लिए मधुर सोमरस का पान करें ॥४ ॥



[सूक्त - ५८]

[ऋषि- मेध्य काण्व । देवता- विश्वेदेवा, १ विश्वेदेवा अथवा ऋत्विज् । छन्द- त्रिष्टुप् ।]

७०८३. **यमृत्विजो बहुधा कल्पयन्तः सचेतसो यज्ञमिमं वहन्ति ।**
यो अनूचानो ब्राह्मणो युक्त आसीत्का स्वित्तत्र यजमानस्य संवित् ॥१ ॥

विद्वान् याजक ने विविध प्रकार से यज्ञ कृत्यों को सम्पादित करते हुए देवत्व को प्राप्त किया । उस (यज्ञ) में जो ज्ञानी ब्राह्मण नियुक्त किये गये थे, इस सम्बन्ध में उनका ज्ञान कैसा था ? ॥१ ॥

७०८४. **एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभूतः ।**
एकैवोषाः सर्वमिदं वि भात्येकं वा इदं वि बभूव सर्वम् ॥२ ॥

एक ही अग्निदेव विविध रूपों में प्रज्वलित होते हैं । एक ही सूर्यदेव समस्त पदार्थों में समाहित होकर अनेक रूपों में प्रतिभासित होते हैं तथा देवी उषा अकेली ही सम्पूर्ण जगत् को आलोकित करती हैं । ये सब मिलकर वस्तुतः एक ही हैं ॥२ ॥

७०८५. **ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरिवारम् ।**
चित्रामघा यस्य योगेऽधिजज्ञे तं वां हुवे अतिरिक्तं पिबध्यै ॥३ ॥

जाज्वल्यमान, सर्वज्ञ, सुखदाता अग्निदेव का हम आवाहन करते हैं । तीनों लोकों में गमनशील उनके सान्निध्य से हमें धन-ऐश्वर्य का लाभ मिलता है ॥३ ॥

[सूक्त - ५९]

[ऋषि- सुपर्ण काण्व । देवता- इन्द्रावरुण । छन्द-जगती ।]

७०८६. **इमानि वां भागधेयानि सिस्रत इन्द्रावरुणा प्र महे सुतेषु वाम् ।**
यज्ञेयज्ञे ह सवना भुरण्यथो यत्सुन्वते यजमानाय शिक्षथः ॥१ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! सोमाभिषव करने वाले याजकों को आप धन प्रदान करते हैं । सभी यज्ञों के प्रत्येक सवनों में सोमभाग को ग्रहण करने के लिए आप पधारते हैं । सोमरस अभिषुत करने के बाद हम आपका आवाहन करते हैं ॥१ ॥

७०८७. **निष्षिध्वरीरोषधीराप आस्तामिन्द्रावरुणा महिमानमाशत ।**
या सिस्रतू रजसः पारे अध्वनो ययोः शत्रुर्नकिरादेव ओहते ॥२ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप अन्तरिक्ष को पार करने वाले मार्ग से गमन करते हैं । कोई भी देवद्रोही व्यक्ति आपसे शत्रुता करने में सक्षम नहीं है । आपकी महिमा से समस्त जल ओषधीय गुणों से युक्त होता है ॥२ ॥

७०८८. **सत्यं तदिन्द्रावरुणा कृशस्य वां मध्व ऊर्मिं दुहते सप्त वाणीः ।**
ताभिर्दाश्वांसमवतं शुभस्पती यो वामदब्धो अभि पाति चित्तिभिः ॥३ ॥

हे कल्याण के स्वामी इन्द्रावरुण ! सप्त छन्दों वाली ऋचाओं का गान करके, 'कृश' ऋषि का सोम आपके लिए तैयार किया जाता है । जो उपासक मन लगाकर अपनी सुरक्षा के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं, उन हवि प्रदाता यजमानों की आप रक्षा करते हैं ॥३ ॥



७०८९. **घृतप्रुषः सौम्या जीरदानवः सप्त स्वसारः सदन ऋतस्य ।**
या ह वामिन्द्रावरुणा घृतश्चुतस्ताभिर्धत्तं यजमानाय शिक्षतम् ॥४ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! यज्ञ-मण्डप में विद्यमान रहने वाली सात बहनें, (सप्त छन्दों वाली ऋचाएँ) सौम्यता से प्रवाहित होती हुई घृत-धाराओं से आपको सींचती हैं । उन्हें ग्रहण करके आप याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करें तथा उन्हें उच्च पदों पर स्थापित करें ॥४ ॥

७०९०. **अवोचाम महते सौभगाय सत्यं त्वेषाभ्यां महिमानमिन्द्रियम् ।**
अस्मान्त्स्वन्द्रावरुणा घृतश्चुतस्त्रिभिः साप्तेभिरवतं शुभस्पती ॥५ ॥

कल्याणकारी शक्तियों के स्वामी हे इन्द्र और वरुणदेव ! अपने को सौभाग्यशाली बनाने के लिए , हम आपकी वास्तविक महानता का गुणगान करते हैं । घृत-धाराओं से सिञ्चित करने वाले हम याजकों को वे तीन और सात अथवा (तीन x सात) इक्कीस प्रकार से रक्षित करें ॥५ ॥

७०९१. **इन्द्रावरुणा यदृषिभ्यो मनीषां वाचो मतिं श्रुतमदत्तमग्रे ।**
यानि स्थानान्यसृजन्त धीरा यज्ञं तन्वानास्तपसाभ्यपश्यम् ॥६ ॥

हे इन्द्र और वरुण देव ! पुरातन कालीन ऋषियों को आपने जो ज्ञान, वाणी, विवेक तथा विचार प्रदान किया था, उसकी सहायता से उन्होंने जिन यज्ञ-मण्डपों का सृजन किया था, उसको हम अपनी तपश्चर्या द्वारा जानें व प्राप्त करें ॥६ ॥

७०९२. **इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम् ।**
प्रजां पुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्र तिरतं न आयुः ॥७ ॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! यजन करने वाले यजमानों को आप ऐसा धन प्रदान करें, जो सौम्यता, निरहंकारिता तथा पोषण देने वाला हो । हमें सन्तान, पुष्टि तथा सम्पत्ति प्रदान करते हुए आप हमारे आयुष्य की वृद्धि करें ॥७ ॥

॥ इति वालखिल्यं समाप्तम् ॥

[सूक्त - ६०]

[**ऋषि-** भर्ग प्रागाथ । **देवता-**अग्नि । **छन्द-** प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

७०९३. **अग्न आ याह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।**
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ॥१ ॥

हे अग्निदेव ! आप देवों को बुलाने वाले हैं, हमारी प्रार्थना सुनकर अपनी (विभूतिरूप) अग्नियोंसहित यहाँ पधारें । हे पूज्य अग्निदेव ! अध्वर्यु के द्वारा प्रदत्त आसन पर आपके प्रतिष्ठित होने पर, हम आपका पूजन करें ॥१ ॥

७०९४. **अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे ।**
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥२ ॥

बल से उत्पन्न सर्वत्र गमनशील हे अग्ने !आप तक हविष्यान्न पहुँचाने के लिए यह हवि पात्र सक्रिय है ।शक्ति का ह्रास रोकने वाले अभीष्टदाता, तेजस्वी, ज्वालाओं से युक्त आपकी हम यज्ञस्थल पर प्रार्थना करते हैं ॥२ ॥

७०९५. **अग्ने कविर्वेधा असि होता पावक यक्ष्यः ।**
मन्द्रो यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यो विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ॥३ ॥



हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त पूज्य, विद्वान् , हर्ष प्रदान करने वाले तथा सबको शुद्ध करने वाले हैं । सबसे महान् तथा होता के रूप में आप ज्ञानियों द्वारा श्रेष्ठ स्तोत्रों से प्रशंसित होते हैं ॥३ ॥

७०९६. **अद्रोघमा वहोशतो यविष्ठ्य देवाँ अजस्र वीतये ।**
अभि प्रयांसि सुधिता वसो गहि मन्दस्व धीतिभिर्हितः ॥४ ॥

शक्तिशाली, सबको निवास प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! आप हमारी हवियों का सेवन करने के लिए, विद्रोहरहित तथा अभिलाषा से युक्त देवताओं को यज्ञस्थल पर ले आएँ । हमारे द्वारा भावनापूर्वक प्रदान किये गये हविष्यान्न को आप ग्रहण करें । हमारी प्रार्थनाओं द्वारा प्रशंसित होकर आनन्दित हों ॥४ ॥

७०९७. **त्वमित्सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतस्कविः ।**
त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥५ ॥

हे सर्वरक्षक अग्ने ! आप अपने गुणधर्म के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं । आप सत्यरूप तथा ज्ञानी हैं । तेजस्विता के प्रतीक अग्निरूप , आपके प्रज्वलित होने पर, ज्ञानी-श्रेष्ठ याज्ञिक आपकी स्तुति करते हैं तथा सेवा के लिए तैयार रहते हैं ॥५ ॥

७०९८. **शोचा शोचिष्ठ दीदिहि विशे मयो रास्व स्तोत्रे महाँ असि ।**
देवानां शर्मन् मम सन्तु सूरयः शत्रूषाहः स्वग्नयः ॥६ ॥

अत्यन्त तेजस्वी हे अग्निदेव ! समस्त देवताओं में आप सर्वश्रेष्ठ हैं । आप भली प्रकार से प्रज्वलित होकर प्रार्थना करने वाले मनुष्यों को सुख प्रदान करें । आप रिपुओं को पराजित करने वाले बनें ॥६ ॥

७०९९. **यथा चिद्वृद्धमतसमग्ने सञ्जूर्वसि क्षमि ।**
एवा दह मित्रमहो यो अस्मध्रुग् दुर्मन्मा कश्च वेनति ॥७ ॥

मित्रों में महान् हे अग्निदेव ! जिस प्रकार आप सूखी लकड़ी को भस्म कर देते हैं, उसी प्रकार आप हमारे उन विद्रोहियों तथा दुर्बुद्धिग्रस्त लोगों को जलाकर भस्म कर दें, जो हमारे पतन की कामना करते हैं ॥७ ॥

७१००. **मा नो मर्ताय रिपवे रक्षस्विने माघशंसाय रीरधः ।**
अस्रेधद्भिस्तरणिभिर्यविष्ठ्य शिवेभिः पाहि पायुभिः ॥८ ॥

अत्यन्त शक्तिशाली हे अग्निदेव ! आप हमें रिपुओं, पापियों तथा दुष्कर्म का उपदेश देने वाले मनुष्यों के आश्रित करके कष्ट न दें । आप अपने हिंसारहित तथा विपत्तियों से पार लगाने वाले रक्षण-साधनों से हमारी सुरक्षा करें ॥८ ॥

७१०१. **पाहि नो अग्न एकया पाह्युत द्वितीयया ।**
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जाम्पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥९ ॥

सबको स्थापित करने वाले हे अग्ने ! आप प्रथम स्तुति से हमारी रक्षा करें, द्वितीय स्तुति से अभय प्रदान करें, तृतीय से भी संरक्षण प्रदान करें । हे ऊर्जाओं के स्वामी ! आप चतुर्थ स्तुति से हम सबका पालन करें ॥९ ॥

७१०२. **पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोऽव ।**
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षामहे वृधे ॥१० ॥

हे अग्निदेव ! रणक्षेत्र में आप समस्त असुरों तथा दान न करने वाले रिपुओं से हमारी सुरक्षा करें । यजन करने तथा सम्पत्ति प्राप्त करने के निमित्त हम आपको निकटतम सखा के रूप में ग्रहण करते हैं ॥१० ॥



७१०३. आ नो अग्ने वयोवृधं रयिं पावक शंस्यम्।
रास्वा च न उपमाते पुरुस्पृहं सुनीती स्वयशस्तरम् ॥११ ॥

पवित्र करने वाले हे अग्निदेव ! आप धन की वृद्धि करते हैं। हमें आप प्रशंसनीय धन प्रदान करें, जो उत्तम नीति के मार्ग से प्राप्त हुआ हो। वह हमारे लिए यशदायी हो ॥११ ॥

७१०४. येन वंसाम पृतनासु शर्धतस्तरन्तो अर्य आदिशः।
स त्वं नो वर्ध प्रयसा शचीवसो जिन्वा धियो वसुविदः ॥१२ ॥

हे बलशाली अग्निदेव ! आप हमें धन तथा अन्न से समृद्ध करके सद्बुद्धि प्रदान करें। हम रणक्षेत्र में पराक्रम प्रदर्शित करते हुए, हथियारों द्वारा प्रहार करके, रिपुओं को लाँघकर उनका विनाश कर सकें ॥१२ ॥

७१०५. शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत्।
तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः ॥१३ ॥

जिस प्रकार वृषभ अपने सींग को नुकीला करने के लिए अपने सिर को घुमाते हैं, उसी प्रकार अग्निदेव अपनी लपटों को घुमाते हैं। इनके नुकीले हथियारों को रोकने में कोई भी सक्षम नहीं है। वे शक्ति के पुत्र और श्रेष्ठ दन्त वाले हैं ॥१३ ॥

७१०६. नहि ते अग्ने वृषभ प्रतिधृषे जम्भासो यद्वितिष्ठसे।
स त्वं नो होतः सुहुतं हविष्कृधि वंस्वा नो वार्या पुरु ॥१४ ॥

वृष्टिकारक हे अग्निदेव ! आप यज्ञ का सम्पादन करने वाले हैं। आपकी लपटों को कोई भी रोकने में समर्थ नहीं है; क्योंकि आप अपनी ज्वालाओं को विविध प्रकार से संवर्धित करते हैं। आप हमारी आहुतियों को स्वीकार करके हमें वरणीय ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१४ ॥

७१०७. शेषे वनेषु मात्रोः सं त्वा मर्तास इन्धते।
अतन्द्रो हव्या वहसि हविष्कृत आदिद्देवेषु राजसि ॥१५ ॥

हे अग्ने ! आप वनों में, माता के गर्भ में तथा भूमि में अदृश्यरूप से व्याप्त हैं। याज्ञिक आपको बड़ी श्रद्धापूर्वक (समिधाओं द्वारा) जाग्रत् करते हैं। हे अग्निदेव ! आप आलस्यहीन होताओं के हव्य को देवताओं तक पहुँचाते हैं और स्वयं भी उनके मध्य सुशोभित होते हैं ॥१५ ॥

७१०८. सप्त होतारस्तमिदीळते त्वाग्ने सुत्यजमह्रयम्।
भिनत्स्यद्रिं तपसा वि शोचिषा प्राग्ने तिष्ठ जनाँ अति ॥१६ ॥

हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ दानी और प्रदीप्त हैं। सात याजक आपकी प्रार्थना करते हैं। आप अपनी (ऊर्जा) तप:शक्ति से मेघों को विदीर्ण करते हैं। हे अग्निदेव ! आप हव्य धारण करके देवताओं तक पहुँचाएँ ॥१६ ॥

७१०९. अग्निमग्निं वो अध्रिगुं हुवेम वृक्तबर्हिषः।
अग्निं हितप्रयसः शश्वतीष्वा होतारं चर्षणीनाम् ॥१७ ॥

हे याजको ! हम कुश निर्मित पवित्र आसन फैलाकर पृथ्वीलोक में विद्यमान अग्निदेव को आपके लिए आहूत करते हैं। वे समस्त प्रजाओं तथा यजमानों के कल्याण के लिए आहुति धारण करते हैं ॥१७ ॥



७११०. केतेन शर्मन्त्सचते सुषामण्यग्ने तुभ्यं चिकित्वना ।
इषण्यया नः पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्ठमूतये ॥१८ ॥

हे अग्निदेव ! सुन्दर साम वाले हर्ष प्रदायक यज्ञों में विद्वान् याजक आपकी प्रार्थना करते हैं । आप अनेकों प्रकार के धनों को प्रदान करने के लिए हमारे समीप पधारें ॥१८ ॥

७१११. अग्ने जरितर्विश्पतिस्तेपानो देव रक्षसः ।
अप्रोषिवान्गृहपतिर्महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ॥१९ ॥

हे ज्ञानस्वरूप अग्निदेव ! आप प्रजाओं का रक्षण और पोषण करने वाले तथा आसुरी प्रकृति के लोगों को संताप देने वाले हैं ।आप घरों के स्वामी सदा घरों में विद्यमान रहते हैं । हे द्युलोक के रक्षक ! आप वन्दनीय हैं ॥१९ ॥

७११२. मा नो रक्ष आ वेशीदाघृणीवसो मा यातुर्यातुमावताम् ।
परोगव्यूत्यनिरामप क्षुधमग्ने सेध रक्षस्विनः ॥२० ॥

उत्तम ऐश्वर्य से सम्पन्न हे अग्निदेव ! हमारे अन्दर (दुष्प्रवृत्तिरूपी) असुर, कष्टदायक बीमारियाँ तथा पिशाचों की पीड़ा प्रवेश न कर पाएँ । हे अग्ने ! भुखमरी तथा असुरों को आप हमारे पास मत आने दें ॥२० ॥

[सूक्त - ६१]

[**ऋषि-** भर्ग प्रागाथ । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) ।]

७११३. उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवा सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत् ॥१ ॥

धनवान् और बलवान् हे इन्द्रदेव ! दोनों प्रकार की हमारी प्रार्थना को समीप आकर सुनें । सामूहिक उपासना से प्रसन्न होकर आप सोमपान के लिए यहाँ उपस्थित हों ॥१ ॥

७११४. तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसे धिषणे निष्टतक्षतुः ।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः ॥२ ॥

आकाश और पृथ्वी ने वृष्टिकर्त्ता समर्थ और तेजस्वी इन्द्रदेव को (महत्ता प्रदर्शित करने के लिए) संस्कारित किया । हे इन्द्रदेव ! आप उपमानों में सर्वश्रेष्ठ हैं । आप सोमपान की इच्छा से यज्ञवेदी पर विराजमान होते हैं ॥२ ॥

७११५. आ वृषस्व पुरूवसो सुतस्येन्द्रान्धसः ।
विद्मा हि त्वा हरिवः पृत्सु सासहिमधृष्टं चिद्दधृष्वणिम् ॥३ ॥

महान् ऐश्वर्य से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप सोमरूप अन्न की वृष्टि करें । आप रणक्षेत्र में अश्वों से सम्पन्न होकर रिपुओं को पराजित करने वाले हैं । हमें ज्ञात है कि आप स्वयं पराजित न होकर औरों का विनाश करने वाले हैं ॥३ ॥

७११६. अप्रामिसत्य मघवन्तथेदसदिन्द्र क्रत्वा यथा वशः ।
सनेम वाजं तव शिप्रिन्नवसा मक्षू चिद्यन्तो अद्रिवः ॥४ ॥

सदैव सत्य का आचरण करने वाले हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप जिस प्रकार की इच्छा करते हैं, वह पूर्ण हो जाती है । हे वज्रधारी तथा मुकुटधारी इन्द्रदेव ! आपके द्वारा संरक्षित होकर विजयी होते हुए हम अन्न प्राप्त करें ॥४ ॥



७११७. **शग्ध्यू३ षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।**
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥५ ॥

शचीपति, शूरवीर हे इन्द्रदेव ! सब प्रकार के रक्षा-साधनों के साथ आप हमें अभीष्ट फल प्रदान करें । सौभाग्ययुक्त धन प्रदान करने वाले आपकी हम आराधना करते हैं ॥५ ॥

७११८. **पौरो अश्वस्य पुरुकृद् गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः ।**
नकिर्हि दानं परिमर्धिषत्त्वे यद्यद्यामि तदा भर ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप गौओं (गायों, इन्द्रियों, पोषक-प्रवाहों) तथा अश्वों (घोड़ों, पुरुषार्थ एवं शक्ति प्रवाहों) को बढ़ाने वाले हैं । आप स्वर्ण (सम्पदा) के स्रोत हैं । आपके अनुदानों को विस्मृत करने की सामर्थ्य किसी में नहीं, अत: हमें अभीष्ट फलों से परिपूर्ण करें ॥६ ॥

७११९. **त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये । उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥७ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हम उत्तम आचरण से युक्त होकर आपका आवाहन करते हैं । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! गौ, अश्व तथा श्रेष्ठ धन प्राप्ति की हमारी कामनाओं की पूर्ति करें ॥७ ॥

७१२०. **त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे ।**
आ पुरन्दरं चकृम विप्रवचस इन्द्रं गायन्तोऽवसे ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हविर्दाता को सैकड़ों-हजारों गौओं के समूह देने की सामर्थ्य से युक्त हैं । शत्रुनगरों का विध्वंस करने में समर्थ आपको हम अपनी रक्षा के निमित्त सामगान करते हुए बुलाते हैं ॥८ ॥

७१२१. **अविप्रो वा यदविधद् विप्रो वेन्द्र ते वचः ।**
स प्र ममन्दत्त्वाया शतक्रतो प्राचामन्यो अहंसन ॥९ ॥

मन्यु शक्ति से सम्पन्न हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! कोई भी व्यक्ति, चाहे वह ज्ञानी हो या मूर्ख हो, यदि आपकी प्रार्थना करता है, तो आपकी अनुकम्पा से हर्षित होता है ॥९ ॥

७१२२. **उग्रबाहुर्म्रक्षकृत्वा पुरन्दरो यदि मे शृणवद्धवम् ।**
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥१० ॥

रिपुओं का संहार करने वाले तथा विशाल भुजाओं वाले हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्य के स्वामी तथा रिपुओं की पुरियों को नष्ट करने वाले हैं, आप हमारी स्तुतियों का श्रवण करें । हम ऐश्वर्य की कामना करने वाले याजक आपका आवाहन करते हैं ॥१० ॥

७१२३. **न पापासो मनामहे नारायासो न जल्हवः ।**
यदिन्न्विन्द्रं वृषणं सचा सुते सखायं कृणवामहै ॥११ ॥

इन्द्रदेव को हम पाप-प्रवृत्ति का नहीं मानते । उन्हें ऐश्वर्य एवं यज्ञ कर्म से हीन भी नहीं मानते । अस्तु, हम उन बलशाली को सोमयज्ञ में अपना सखा बनाते हैं ॥११ ॥

[किसी को मित्र बनाने के समय उक्त मर्यादाओं का ध्यान रखना उचित है । केवल बल या धन-सम्पन्नता के आधार पर हीन वृत्ति या हीन कर्म वाले को मित्र नहीं बना लेना चाहिए ।]

७१२४. **उग्रं युयुज्म पृतनासु सासहिमृणकातिमदाभ्यम् ।**
वेदा भृमं चित्सनिता रथीतमो वाजिनं यमिदू नशत् ॥१२ ॥



जिनकी स्तुति ऋण के समान सुनिश्चित फल प्रदायक है, जो अनेकों गतिशील अश्वों और रथों के स्वामी एवं उनके ज्ञाता हैं, जो अनेकों यजमानों के मध्य समाये रहते हैं-ऐसे अदम्य साहस के धनी, अजेय वीर इन्द्रदेव को हम (यज्ञस्थल पर) प्रतिष्ठित करते हैं ॥१२ ॥

७१२५. **यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि।**
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि ॥१३ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम भयभीत हैं , हमें भयरहित करें । हे धनवान् देव ! आप सर्वसामर्थ्यवान् हैं, अत: अपनी सामर्थ्य से हमारे शत्रुओं तथा हिंसक वृत्ति वालों को नष्ट कर हमारा संरक्षण करें ॥ १३ ॥

७१२६. **त्वं हि राधस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधतः।**
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥१४ ॥

हे ऐश्वर्यशाली इन्द्रदेव ! हमें देने के लिए आप असंख्य धनों को धारण करते हैं । हे स्तुति करने योग्य धनवान् देव ! शुद्ध सोमरस का आस्वादन करने के निमित्त, हम साधक आपको बुलाते हैं ॥१४ ॥

७१२७. **इन्द्रः स्पळुत वृत्रहा परस्पा नो वरेण्यः।**
स नो रक्षिषच्चरमं स मध्यमं स पश्चात्पातु नः पुरः ॥१५ ॥

हे सर्वज्ञ इन्द्रदेव ! आप वृत्र का संहार करने वाले तथा सज्जनों का पोषण करने वाले हैं । आप हमारे वरणीय होकर हमारी श्रेष्ठतम तथा मध्यम प्रवृत्तियों को संरक्षण प्रदान करें (हीन भावों को नष्ट होने दें) । आप आगे और पीछे की ओर से हमारी सुरक्षा करें ॥१५ ॥

७१२८. **त्वं नः पश्चादधरादुत्तरात्पुर इन्द्र नि पाहि विश्वतः।**
आरे अस्मत्कृणुहि दैव्यं भयमारे हेतीरदेवीः ॥१६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें असुरों और देवताओं के डर से रहित करें तथा ऊपर-नीचे, आगे-पीछे सब तरफ से हमारी सुरक्षा करें ॥१६ ॥

७१२९. **अद्याद्या श्वःश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः।**
विश्वा च नो जरितृन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥१७ ॥

हे इन्द्रदेव ! वर्तमान और भविष्य में हमें आपका संरक्षण प्राप्त हो । हे सज्जनों के पालक इन्द्रदेव ! आप सर्वदा दिन और रात हम याजकों के रक्षक बने रहें ॥१७ ॥

७१३०. **प्रभङ्गी शूरो मघवा तुवीमघः सम्मिश्लो वीर्याय कम्।**
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ॥१८ ॥

ये इन्द्रदेव अपने पराक्रम से शत्रुओं की सामर्थ्य को चूर-चूर करने वाले हैं । ये सब में व्याप्त होने वाले और ऐश्वर्यवान् हैं ।हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आपकी दोनों भुजाएँ, जो वज्र को धारण करती हैं, विशिष्ट सामर्थ्य से युक्त हैं ॥१.

[सूक्त - ६२]

[ऋषि- प्रगाथ काण्व । देवता- इन्द्र । छन्द- पंक्ति , ७, ९, बृहती ।]

७१३१. **प्रो अस्मा उपस्तुतिं भरता यज्जुजोषति।**
उक्थैरिन्द्रस्य माहिनं वयो वर्धन्ति सोमिनो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१ ॥



हे याजको ! आप इन्द्रदेव की प्रार्थना करें तथा उनके सोमरूप अन्न को अपने स्तोत्रों द्वारा समृद्ध करें । उनके द्वारा दिया गया दान हितकारी होता है ॥१ ॥

७१३२. **अयुजो असमो नृभिरेकः कृष्टीरयास्यः ।**
पूर्वीरति प्र वावृधे विश्वा जातान्योजसा भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥२ ॥

वे इन्द्रदेव समस्त देवताओं में प्रमुख, सर्वश्रेष्ठ तथा अनश्वर हैं । वे अपने ओज से समस्त प्राणियों तथा पुरातन लोगों को समृद्ध करते हैं । उनका ऐश्वर्य कल्याण करने वाला है ॥२ ॥

७१३३. **अहितेन चिदर्वता जीरदानुः सिषासति ।**
प्रवाच्यमिन्द्र तत्तव वीर्याणि करिष्यतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥३ ॥

शीघ्रता से दान करने वाले, द्रुतगामी अश्वों द्वारा गमन के इच्छुक हे इन्द्रदेव ! वीरता प्रदर्शित करने वाला आपका प्रसिद्ध कार्य सराहनीय है । आपका ऐश्वर्य हित करने वाला है ॥३ ॥

७१३४. **आ याहि कृणवाम त इन्द्र ब्रह्माणि वर्धना ।**
येभिः शविष्ठ चाकनो भद्रमिह श्रवस्यते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥४ ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! हम आपके जोश को बढ़ाने वाले स्तोत्रों का गायन करते हैं, अतः आप पधारें । आप कीर्ति की कामना करने वाले याजकों का हित करना चाहते हैं, क्योंकि आपका ऐश्वर्य हित करने वाला है ॥४ ॥

७१३५. **धृषतश्चिद्धृषन्मनः कृणोषीन्द्र यत्त्वम् ।**
तीव्रैः सोमैः सपर्यतो नमोभिः प्रतिभूषतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥५ ॥

जो यजमान परिष्कृत सोमरस समर्पित करके वन्दनापूर्वक आपका सत्कार करते हैं, आप उनको उच्च मनोबल प्रदान करते हैं । आपका ऐश्वर्य सभी के लिए हितकारी होता है ॥५ ॥

७१३६. **अव चष्ट ऋचीषमोऽवताँ इव मानुषः ।**
जुष्ट्वी दक्षस्य सोमिनः सखायं कृणुते युजं भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार मनुष्य प्यास से व्याकुल होकर जलकुण्ड को देखते हैं, उसी प्रकार आप हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होकर हम सबको देखते हैं । सोम अभिषव करने वालों से आप मित्रता करते हैं । आपका ऐश्वर्य कल्याण करने वाला है ॥६ ॥

७१३७. **विश्वे त इन्द्र वीर्यं देवा अनु क्रतुं ददुः ।**
भुवो विश्वस्य गोपतिः पुरुष्टुत भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! समस्त देवता आपका अनुगमन करके शक्ति तथा बुद्धि को धारण करते हैं । हे बहुप्रशंसित इन्द्रदेव ! आप समस्त लोकों तथा गौओं के अधिष्ठाता हैं । आपका दान कल्याण करने वाला है ॥७ ॥

७१३८. **गृणे तदिन्द्र ते शव उपमं देवतातये ।**
यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥८ ॥

हे शचीपते इन्द्रदेव ! हम निकट ही सम्पन्न होने वाले उस यज्ञ में आपके सामर्थ्य की स्तुति करते हैं, जिसके कारण आप वृत्र का वध करने में सक्षम हैं । आपका दान कल्याणकारी है ॥८ ॥



७१३९. **समनेव वपुष्यतः कृणवन्मानुषा युगा।**
विदे तदिन्द्रश्चेतनमध श्रुतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥९ ॥

जिस प्रकार समान विचार वाली पत्नी सामर्थ्यवान् पति को अपने वश में कर लेती है, उसी प्रकार समस्त जीवों और सम्वत्सर को इन्द्रदेव अपने वश में कर लेते हैं। वे उस विवेकपूर्ण कार्य के द्वारा विख्यात होते हैं। उनका दान कल्याण करने वाला है ॥९ ॥

७१४०. **उज्जातमिन्द्र ते शव उत्त्वामुत्तव क्रतुम्।**
भूरिगो भूरि वावृधुर्मघवन्तव शर्मणि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१० ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! अनेक गौओं से सम्पन्न यजमान आपके द्वारा प्रदान किये गये सुख का उपभोग करते हैं।वे आपकी सामर्थ्य और कर्म को बढ़ाते हुए समृद्धिशाली बनाते हैं। आपका दान कल्याण करने वाला है ॥१० ॥

७१४१. **अहं च त्वं च वृत्रहन्त्सं युज्याव सनिभ्य आ।**
अरातीवा चिदद्रिवोऽनु नौ शूर मंसते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥११ ॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप वृत्र का वध करने वाले हैं। ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हम आपको समर्पित हो जाएँ। हे शूरवीर इन्द्रदेव ! दान न देने वाले भी आपके ऐश्वर्य की प्रशंसा करते हैं। आपका दान कल्याण करने वाला है ॥११ ॥

७१४२. **सत्यमिद्वा उ तं वयमिन्द्रं स्तवाम नानृतम्।**
महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतींषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१२ ॥

हम उन इन्द्रदेव की सच्चे मन से प्रार्थना करते हैं, यह सत्य है। सोम अभिषव न करने वाले व्यक्ति को वे नष्ट कर देते हैं तथा अभिषव करने वाले के लिए उनका दान हितकारी होता है ॥१२ ॥

[सूक्त - ६३]

[**ऋषि-** प्रगाथ काण्व। **देवता-** इन्द्र, १२ देवगण। **छन्द-** गायत्री, १, ४, ५, ७ अनुष्टुप्, १२ त्रिष्टुप्।]

७१४३. **स पूर्व्यो महानां वेनः क्रतुभिरानजे।**
यस्य द्वारा मनुष्पिता देवेषु धिय आनजे ॥१ ॥

जिन इन्द्र के द्वारा, देवताओं (के सान्निध्य) में पिता (पालक) मनु ने बुद्धि (अथवा कर्म के प्रेरक सूत्र) प्राप्त किये, वे (इन्द्र) तेजस्वी (श्रेष्ठ) यजमानों की हवि की कामना करते हुए (यज्ञ में) पहुँचते हैं ॥१ ॥

७१४४. **दिवो मानं नोत्सदन्त्सोमपृष्ठासो अद्रयः। उक्था ब्रह्म च शंस्या ॥२ ॥**

सोमाभिषव करने वाले सराहनीय स्तोत्र तथा पाषाण कभी भी उन इन्द्रदेव का त्याग न करें, जिन्होंने दिव्यलोक का सृजन किया है ॥२ ॥

७१४५. **स विद्वाँ अङ्गिरोभ्य इन्द्रो गा अवृणोदप। स्तुषे तदस्य पौंस्यम् ॥३ ॥**

ज्ञानी इन्द्रदेव ने ऋषि अंगिरा के निमित्त गौओं को प्रदान किया। अत: हम उन इन्द्रदेव के सामर्थ्य की सराहना करते हैं ॥३ ॥

७१४६. **स प्रत्नथा कविवृध इन्द्रो वाकस्य वक्षणिः।**
शिवो अर्कस्य होमन्यस्मत्रा गन्त्ववसे ॥४ ॥



वे इन्द्रदेव मेधावियों की वृद्धि करने वाले तथा स्तोताओं को सुख प्रदान करने वाले हैं । हमारी सुरक्षा के लिए सोमयाग करते समय वे यज्ञशाला में पधारें ॥४ ॥

७१४७. **आदू नु ते अनु क्रतुं स्वाहा वरस्य यज्यवः ।**
श्वात्रमर्का अनूषतेन्द्र गोत्रस्य दावने ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! स्वाहा उच्चारण के साथ यज्ञकर्म सम्पन्न करने वाले तथा स्तुति करने वाले याजकगण ऐश्वर्य प्राप्ति के निमित्त आपके कृत्यों का गुणगान करते हैं ॥५ ॥

७१४८. **इन्द्रे विश्वानि वीर्या कृतानि कर्त्वानि च । यमर्का अध्वरं विदुः ॥६ ॥**

स्तुति करने वाले, उन इन्द्रदेव को हिंसारहित मानते हैं ।सभी शौर्यपूर्ण कार्य इन्द्रदेव के अन्दर समाहित हैं ॥६ ॥

७१४९. **यत्पाञ्चजन्यया विशेन्द्रे घोषा असृक्षत ।**
अस्तृणाद् बर्हणा विपो३ ऽर्यो मानस्य स क्षयः ॥७ ॥

जब पाँचों प्रजाएँ (पाँचों वर्ग के मनुष्य अथवा पंचतत्व, पंच प्राण आदि) एक साथ मिलकर इन्द्रदेव की प्रार्थना करती हैं, तब वे इन्द्रदेव अपने पराक्रम से शत्रुओं का संहार करते हैं । ऐसे महान् इन्द्रदेव हम विप्रों द्वारा सम्मान-प्राप्ति के अधिकारी हैं ॥७ ॥

७१५०. **इयमु ते अनुष्टुतिश्चकृषे तानि पौंस्या । प्रावश्चक्रस्य वर्तनिम् ॥८ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आपने जो शौर्य प्रदर्शित किया है, उसके लिए हम प्रार्थना करते हैं । आप हमारे रथ के मार्ग को संरक्षित करें ॥८ ॥

७१५१. **अस्य वृष्णो व्योदन उरु क्रमिष्ट जीवसे । यवं न पश्व आ ददे ॥९ ॥**

पशुओं के सदृश मनुष्य भी उन शक्तिशाली इन्द्रदेव से जौ आदि अन्न प्राप्त करके जीवित रहने के लिए उत्कृष्ट कर्म करते हैं ॥९ ॥

७१५२. **तद्दधाना अवस्यवो युष्माभिर्दक्षपितरः । स्याम मरुत्वतो वृधे ॥१० ॥**

हे याजको ! रक्षण की कामना करने वाले हम याजक, मरुत्वान् इन्द्रदेव की कीर्ति में वृद्धि करते हुए, आप सबके सहयोग से धन-धान्य से परिपूर्ण हो जाएँ ॥१० ॥

७१५३. **बळृत्वियाय धाम्न ऋक्वभिः शूर नोनुमः । जेषामेन्द्र त्वया युजा ॥११ ॥**

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप यज्ञों के (सत्कर्म के) पालन करने वाले तथा ओजस्वी हैं । हम आपके सहयोग से विजयी हों ॥११ ॥

७१५४. **अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ।**
यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ अवन्तु देवाः ॥१२ ॥

समस्त देवताओं में वृत्रहन्ता इन्द्रदेव प्रमुख तथा शक्तिशाली हैं । वे स्तोताओं के समीप पधारते हैं । वर्षा कारक मेघों द्वारा रुद्रों के साथ रणक्षेत्र में वे हमारा संरक्षण करें ॥१२ ॥

[सूक्त - ६४]

[ऋषि- प्रगाथ काण्व । देवता- इन्द्र । छन्द- गायत्री ।]

७१५५. **उत्त्वा मन्दन्तु स्तोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः । अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥१ ॥**



हे इन्द्रदेव ! आपको यह सोमरस आनन्द प्रदान करने वाला हो । हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें तथा ज्ञान के साथ द्वेष रखने वालों का संहार करें ॥१ ॥

७१५६. **पदा पर्णीँरराधसो नि बाधस्व महाँ असि । नहि त्वा कश्चन प्रति ॥२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप महान् हैं । आपके समान समर्थता किसी में नहीं है । आप यज्ञादि कर्म न करने वाले कृपणों को पीड़ित करें ॥२ ॥

७१५७. **त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् । त्वं राजा जनानाम् ॥३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप सिद्ध रस युक्त (सोमरस) पदार्थों एवं निषिद्ध पदार्थों के स्वामी हैं । आप समस्त प्राणियों के शासक हैं ॥३ ॥

७१५८. **एहि प्रेहि क्षयो दिव्या३ घोषञ्चर्षणीनाम् । ओभे पृणासि रोदसी ॥४ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञस्थल पर पधारें और उद्घोष करते हुए स्वर्गलोक की ओर गमन करें । आप अपने ओज से धरती और आकाश को तुष्ट करते हैं ॥४ ॥

७१५९. **त्यं चित्पर्वतं गिरिं शतवन्तं सहस्रिणम् । वि स्तोतृभ्यो रुरोजिथ ॥५ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप उस पहाड़ के समान वज्र से सैकड़ों, सहस्रों मेघों को विदीर्ण करें, हम स्तुति करने वालों का आप कल्याण करें ॥५ ॥

७१६०. **वयमु त्वा दिवा सुते वयं नक्तं हवामहे । अस्माकं काममा पृण ॥६ ॥**

हे इन्द्रदेव ! सोम अभिषव करते समय हम आपको अपनी सहायता के लिए आहूत करते हैं । आप हमारी अभिलाषाओं की पूर्ति करें ॥६ ॥

७१६१. **क्व१ स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः । ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ॥७ ॥**

युवा, सशक्त ग्रीवा वाले एवं किसी के सामने न झुकने वाले वे देवेन्द्र इस समय कहाँ हैं ? कौन याजक उनका पूजन करता है ? ॥७ ॥

७१६२. **कस्य स्वित्सवनं वृषा जुजुष्वाँ अव गच्छति । इन्द्रं क उ स्विदा चके ॥८ ॥**

वे शक्तिशाली इन्द्रदेव किन मनुष्यों के यज्ञ की हवियों को ग्रहण करने के लिए पधारते हैं । उन इन्द्रदेव के विषय में किस याजक को ज्ञान है ? ॥८ ॥

७१६३. **कं ते दाना असक्षत वृत्रहन्कं सुवीर्या । उक्थे क उ स्विदन्तमः ॥९ ॥**

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप किस व्यक्ति को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ? और किस व्यक्ति को सामर्थ्य प्रदान करते हैं तथा किसके समीप यज्ञ में आसीन होते हैं ? ॥९ ॥

७१६४. **अयं ते मानुषे जने सोमः पूरुषु सूयते । तस्येहि प्र द्रवा पिब ॥१० ॥**

हे इन्द्रदेव !आपके निमित्त हम मनुष्य सोम निचोड़ते हैं । आप यथाशीघ्र पधार कर सोमरस का पान करें ॥१ ॥

७१६५. **अयं ते शर्यणावति सुषोमायामधि प्रियः । आर्जीकीये मदिन्तमः ॥११ ॥**

यह 'शर्यणावत्' सुषोमा' एवं 'आर्जीकीया' (क्षेत्र या नदी के समीप) में तैयार अथवा उपलब्ध; यह सोम आपको आनन्दित करने वाला हो ॥११ ॥

[श्रेष्ठ गुणकारी सोम किस क्षेत्र में प्राप्त होता था या हो सकता है, यहाँ उसका संकेत है । यास्क मुनि के अनुसार आर्जिकीया 'विपाशा' नदी का ही नाम है । सायण के अनुसार कुरुक्षेत्र के पास यह स्थान है ।]



७१६६. तमद्य राधसे महे चारुं मदाय घृष्वये । एहीमिन्द्र द्रवा पिब ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए तथा रिपुओं का संहार करने के लिए यथाशीघ्र पधारकर श्रेष्ठ सोमरस का पान करें ॥१२ ॥

[सूक्त - ६५]

[**ऋषि-** प्रगाथ काण्व । **देवता-** इन्द्र । **छन्द-** गायत्री ।]

७१६७. यदिन्द्र प्रागपागुदङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः । आ याहि तूयमाशुभिः ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों में निरत साधनों द्वारा सभी दिशाओं से जिनका आवाहन किया जाता है, वे आप यथाशीघ्र अपने द्रुतगामी अश्वों द्वारा पधारें ॥१ ॥

७१६८. यद्वा प्रस्रवणे दिवो मादयासे स्वर्णरे । यद्वा समुद्रे अन्धसः ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप दिव्यलोक की अमृत रूपी शक्ति धाराओं, अन्तरिक्ष की रस धाराओं तथा पृथ्वी पर यज्ञादि के समय प्रवाहित होने वाली सोमरस की धाराओं से पुष्ट एवं हर्षित होते हैं ॥२ ॥

७१६९. आ त्वा गीर्भिर्महामुरुं हुवे गामिव भोजसे । इन्द्र सोमस्य पीतये ॥३ ॥

हे महान् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार गौओं को भोजन देने के लिएआहूत करते हैं, उसी प्रकार हम अपनी स्तुतियों द्वारा सोमरस पीने के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥३ ॥

७१७०. आ त इन्द्र महिमानं हरयो देव ते महः । रथे वहन्तु बिभ्रतः ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! महान् महिमा वाले आपके अश्व, रथ को वहन करते हुए यहाँ (यज्ञस्थल) तक ले आएँ ॥४ ॥

७१७१. इन्द्र गृणीष उ स्तुषे महाँ उग्र ईशानकृत् । एहि नः सुतं पिब ॥५ ॥

पराक्रमी तथा सबके अधिष्ठाता हे इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त महान् हैं । हम प्रार्थनाओं द्वारा आपका गुणगान करते हैं । आप हमारे निकट पधार कर सोमरस का पान करें ॥५ ॥

७१७२. सुतावन्तस्त्वा वयं प्रयस्वन्तो हवामहे । इदं नो बर्हिरासदे ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! हविष्यान्न से युक्त हम सोम अभिषव करने वाले याजक, कुश निर्मित पवित्र आसन पर आसीन होने के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥६ ॥

७१७३. यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम् । तं त्वा वयं हवामहे ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अनेकों मनुष्यों के लिए सामान्यत: उपलब्ध रहते हैं, इसी कारण हम आपका आवाहन करते हैं ॥७ ॥

७१७४. इदं ते सोम्यं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः । जुषाण इन्द्र तत्पिब ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम याजक पाषाणों द्वारा पीसकर सोम को तैयार करते हैं । आप हर्षित होकर उस मधुर सोमरस का पान करें ॥८ ॥

७१७५. विश्वाँ अर्यो विपश्चितोऽति ख्यस्तूयमा गहि । अस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥९ ॥

हे महान् इन्द्रदेव ! आप शीघ्र ही पधारें और (मार्ग के) समस्त विप्रजनों को पार करके हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥९ ॥

७१७६. दाता मे पृषतीनां राजा हिरण्यवीनाम् । मा देवा मघवा रिषत् ॥१० ॥



स्वर्ण और गौओं के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। हे देवताओ ! उन इन्द्रदेव को कोई बाधा न पहुँचाए ॥१० ॥

७१७७. **सहस्रे पृषतीनामधिश्चन्द्रं बृहत्पृथु । शुक्रं हिरण्यमा ददे ॥११ ॥**

इन्द्रदेव द्वारा प्रदत्त हर्ष प्रदान करने वाले सहस्रों गौओं के रूप में श्रेष्ठ, प्रचुर तथा तेजपूर्ण ऐश्वर्य को हम ग्रहण करते हैं ॥११ ॥

७१७८. **नपातो दुर्गहस्य मे सहस्रेण सुराधसः । श्रवो देवेष्वक्रत ॥१२ ॥**

हम अरक्षित एवं पीड़ित हैं । (हम एवं) हमारे सम्बन्धी जन सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य के स्वामी हों और देवताओं के बीच में यशस्वी बनें ॥१२ ॥

[सूक्त - ६६]

[**ऋषि** - कलि प्रागाथ । **देवता** - इन्द्र । **छन्द**- प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती), १५ अनुष्टुप् ।]

७१७९. **तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये ।**
बृहद् गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥१ ॥

जैसे बालक अभिभावक को पुकारता है, वैसे ही हम अपने हितैषी इन्द्रदेव को सहायता के लिए बुलाते हैं । हे ऋत्विजो ! अपनी रक्षा के लिए सोमयज्ञ में ऐश्वर्य देने वाले वेगवान् अश्वों से युक्त इन्द्रदेव की आराधना करें ॥१ ॥

७१८०. **न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदे सुशिप्रमन्धसः ।**
य आदृत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ॥२ ॥

सुन्दर आकृति वाले इन्द्रदेव को प्राणों की बाजी लगाने वाले असुर भी नहीं हरा सकते । ऐश्वर्य दाता, सोमरस पीकर आनन्दित होने वाले इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं । वे सोमयज्ञ करने वाले, भावपूर्ण स्तुतियाँ करने वाले याजकों को श्रेयस्कर अनुदान प्रदान करते हैं ॥२ ॥

७१८१. **यः शक्रो मृक्षो अश्व्यो यो वा कीजो हिरण्ययः ।**
स ऊर्वस्य रेजयत्यपावृतिमिन्द्रो गव्यस्य वृत्रहा ॥३ ॥

वे इन्द्रदेव अत्यन्त शक्तिशाली तथा ऐश्वर्यवान् हैं । वे अश्वों से सम्पन्न, अद्‌भुत तथा वृत्ररूपी शत्रुओं का संहार करने वाले हैं । गौओं (किरणों) के अवरोधक को वे भय से प्रकम्पित कर देते हैं ॥३ ॥

७१८२. **निखातं चिद्यः पुरुसम्भृतं वसूदिद्वपति दाशुषे ।**
वज्री सुशिप्रो हर्यश्व इत् करदिन्द्रः क्रत्वा यथा वशत् ॥४ ॥

मुकुटधारी तथा वज्र को धारण करने वाले अश्ववान् इन्द्रदेव अपनी इच्छानुसार कर्म करते हैं । वे संगृहीत किये गये प्रचुर ऐश्वर्य को दानी याजकों के लिए बाहर निकालते हैं ॥४ ॥

[पृथ्वी में संचित खनिज सम्पदा के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों का मत है कि किसी अज्ञात आकर्षण शक्ति के वशीभूत समान पदार्थ धीरे-धीरे भू-गर्भ में एक स्थान पर एकत्रित होते रहते हैं । संगठक शक्ति 'इन्द्र' को ऋषिगण इस रूप में भी देखते रहे होंगे । व्यक्तित्व में समाहित क्षमताओं को प्रकट करने का अर्थ भी लिया जा सकता है ।]

७१८३. **यद्वावन्थ पुरुष्टुत पुरा चिच्छूर नृणाम् ।**
वयं तत्त इन्द्र सं भरामसि यज्ञमुक्थं तुरं वचः ॥५ ॥



बहुप्रशंसित तथा पराक्रमी हे इन्द्रदेव ! आपने पुराने अनुभवी याजकों से जो कामना की थी, उसकी हम पूर्ति करते हैं । हम आपके सामने यज्ञों, उक्थों तथा प्रार्थनाओं को समर्पित करते हैं ॥५ ॥

७१८४. **सचा सोमेषु पुरुहूत वज्रिवो मदाय द्युक्ष सोमपाः ।**
त्वमिद्धि ब्रह्मकृते काम्यं वसु देष्ठः सुन्वते भुवः ॥६ ॥

अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले तथा वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप तेज से सम्पन्न तथा सोमपान करने वाले हैं । सोम अभिषव करते समय आप हर्षित होने के लिए सम्मिलित होते हैं । स्तोताओं तथा सोम यज्ञ करने वालों को आप इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥६ ॥

७१८५. **वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।**
तस्मा उ अद्य समना सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥७ ॥

हम याजकों ने इन्द्रदेव को कल सोमरस से तृप्त किया था । उन्हें आज के यज्ञ में भी सोमरस प्रदान करते हैं । हे याजको ! इस समय स्तोत्रों का गान करके इन्द्रदेव को अलंकृत करें ॥७ ॥

७१८६. **वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।**
सेमं नः स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ॥८ ॥

भेड़िये जैसे क्रूर शत्रु भी इन्द्रदेव के समक्ष अनुकूल हो जाते हैं; ऐसे वे (इन्द्रदेव) हमारी प्रार्थनाओं को स्वीकार करते हुए हमें उत्कृष्ट चिन्तन, संयुक्त विवेक-बुद्धि प्रदान करें ॥८ ॥

७१८७. **कदू न्व१स्याकृतमिन्द्रस्यास्ति पौंस्यम् ।**
केनो नु कं श्रोमतेन न शुश्रुवे जनुषः परि वृत्रहा ॥९ ॥

ऐसा कौन सा पुरुषार्थ है, जिसको इन्द्रदेव ने नहीं किया हो तथा उनकी वीरता की गाथाएँ किसने नहीं सुनी ? वृत्र का संहार करने वाले इन्द्रदेव बचपन से ही विख्यात हैं ॥९ ॥

७१८८. **कदू महीरधृष्टा अस्य तविषीः कदु वृत्रघ्नो अस्तृतम् ।**
इन्द्रो विश्वान् बेकनाटाँ अहर्दृश उत क्रत्वा पणीँरभि ॥१० ॥

उन इन्द्रदेव ने अपने महान् पराक्रम से रिपुओं का कब संहार नहीं किया ? उनका रिपु वृत्र, उनके द्वारा कब अवध्य रहा ? वे अपने कर्मों के द्वारा समस्त लोभियों तथा कृपणों को नष्ट करते हैं ॥१० ॥

[वृत्र कब अवध्य रहा ? इस वाक्य से प्रकट होता है कि इन्द्र द्वारा वृत्र वध की प्रक्रिया किसी एक काल में सीमित नहीं रही है, वह हर समय चलने वाली प्रक्रिया है । इसी आधार पर इन्द्र और वृत्र पात्र नहीं, प्रवृत्तिपरक नाम प्रतीत होते हैं ।]

७१८९. **वयं घा ते अपूर्व्येन्द्र ब्रह्माणि वृत्रहन् ।**
पुरूतमासः पुरुहूत वज्रिवो भृतिं न प्र भरामसि ॥११ ॥

अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले तथा वृत्र का संहार करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप वज्र को धारण करने वाले हैं । अभिनव स्तोत्रों के द्वारा हम सेवकों की भाँति आपकी स्तुति करते हैं ॥११ ॥

७१९०. **पूर्वीश्चिद्धि त्वे तुविकूर्मिन्नाशसो हवन्त इन्द्रोतयः ।**
तिरश्चिदर्यः सवना वसो गहि शविष्ठ श्रुधि मे हवम् ॥१२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अनेकों श्रेष्ठ कर्मों को करने वाले हैं । आपके पास अनेकों संरक्षण-साधन उपलब्ध हैं, इसलिए हम आपको आहूत करते हैं । शक्तिशाली तथा सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारी



स्तुतियों को सुनने के बाद अन्यों को लाँघकर हमारे यज्ञ-मण्डप में पधारें ॥१२ ॥

७१९१. **वयं घा ते त्वे इद्विन्द्र विप्रा अपि ष्मसि ।**
नहि त्वदन्य: पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता ॥१३ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले हैं । हम याजकगण आपके ही आश्रय में रहें । हमें आपके अलावा कोई अन्य सुख प्रदान करने वाला नहीं दिखाई देता ॥१३ ॥

७१९२. **त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधो३ भिशस्तेरव स्पृधि ।**
त्वं न ऊती तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित् ॥१४ ॥

हे बलशाली इन्द्रदेव ! आप सत्यमार्ग के ज्ञाता हैं । आप हमें निर्धनता तथा क्षुधा के अभिशाप से मुक्त करें । आप अपने वीरतापूर्ण विचित्र कार्यों तथा संरक्षण-साधनों से हमें समर्थ बनाएँ ॥१४ ॥

७१९३. **सोम इद्वः सुतो अस्तु कलयो मा बिभीतन ।**
अपेदेष ध्वस्मायति स्वयं घैषो अपायति ॥१५ ॥

हे कलि वंशियो ! आपके द्वारा अभिषुत सोम इन्द्रदेव के निमित्त प्रस्तुत हो । आप भयभीत न हों; क्योंकि हिंसा करने वाले लोग स्वयं दूर भाग रहे हैं ॥१५ ॥

[सूक्त - ६७]

[**ऋषि -** मत्स्य साम्मद अथवा मैत्रावरुणि मान्य अथवा अनेक मत्स्य जालनद्ध । **देवता** - आदित्यगण । छन्द - गायत्री ।]

७१९४. **त्यान्नु क्षत्रियाँ अव आदित्यान्याचिषामहे । सुमृळीकाँ अभिष्टये ॥१ ॥**

श्रेष्ठ सुख प्रदान करने वाले तथा रिपुओं के आक्रमणों से बचाने वाले उन आदित्यगणों से अपने अभीष्ट की पूर्ति के निमित्त हम सुरक्षा की याचना करते हैं ॥१ ॥

७१९५. **मित्रो नो अत्यंहतिं वरुण: पर्षदर्यमा । आदित्यासो यथा विदु: ॥२ ॥**

मित्र, वरुण, अर्यमा तथा आदित्यगण जिस प्रकार भी उचित समझें, (उसी प्रकार) वे हमें दुष्कर्मों से बचाएँ ॥२ ॥

७१९६. **तेषां हि चित्रमुक्थ्यं१ वरूथमस्ति दाशुषे । आदित्यानामरङ्कृते ॥३ ॥**

उन आदित्यों के पास वरण करने योग्य तथा प्रशंसा करने योग्य प्रचुर ऐश्वर्य है । वे हवि प्रदान करने वाले बलशाली यजमान को महान् ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥३ ॥

७१९७. **महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन् । अवांस्या वृणीमहे ॥४ ॥**

हे मित्रावरुण और अर्यमा देवो ! आप और आपकी सुरक्षा-प्रक्रिया दोनों महान् हैं । हम आपसे सुरक्षा की कामना करते हैं ॥४ ॥

७१९८. **जीवान्नो अभि धेतनादित्यास: पुरा हथात् । कद्ध स्थ हवनश्रुत: ॥५ ॥**

हे आदित्यो ! आप हमारी स्तुतियों को सुनने वाले हैं । आप चाहे जहाँ हों, हमारी मृत्यु के पहले ही (हमारी रक्षार्थ) यथाशीघ्र पधारें ॥५ ॥

७१९९. **यद्व: श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दि: । तेना नो अधि वोचत ॥६ ॥**



हे देव !सोमयाग करने वाले याजकों को आप जो ऐश्वर्य तथा घर प्रदान करते हैं, उससे हमें भी सम्पन्न करें ॥६ ॥

७२००. अस्ति देवा अंहोरुर्वस्ति रत्नमनागसः । आदित्या अद्भुतैनसः ॥७ ॥

दुष्कर्म करने वाले मनुष्य पाप के भागीदार होते हैं । सत्कर्म करने वालों का पुण्य बहुत रमणीक होता है । हे आदित्यगण ! आप हमें पापों से मुक्त करें तथा सन्मार्ग का पथ-प्रशस्त करें ॥७ ॥

७२०१. मा नः सेतुः सिषेदयं महे वृणक्तु नस्परि । इन्द्र इद्धि श्रुतो वशी ॥८ ॥

विख्यात इन्द्रदेव सबको वशीभूत करने वाले हैं । वे महान् कर्म करने में रुकावट न डालकर हमें बन्धनमुक्त करें ॥८ ॥

७२०२. मा नो मृचा रिपूणां वृजिनानामविष्यवः । देवा अभि प्र मृक्षत ॥९ ॥

रक्षा करने के इच्छुक हे देवताओ ! कपटी रिपुओं का हिंसक कार्य हमें पीड़ित न करे । उनके हिंसक कार्यों से हमें मुक्त करें ॥९ ॥

७२०३. उत त्वामदिते मह्यहं देव्युप ब्रुवे । सुमृळीकामभिष्टये ॥१० ॥

हे महान् अदिति देवि ! आप श्रेष्ठ सुख प्रदान करने वाली हैं । अभीष्ट कामना की पूर्ति के लिए हम आपकी प्रार्थना करते हैं ॥१० ॥

७२०४. पर्षि दीने गभीर आँ उग्रपुत्रे जिघांसतः । माकिस्तोकस्य नो रिषत् ॥११ ॥

पराक्रमी सन्तानों में सम्पन्न हे अदिति देवि ! हिंसक प्रवृत्ति के लोग दीन या अच्छी (कैसी भी) परिस्थितियों में हमारी सन्तानों की हत्या न करें ॥११ ॥

७२०५. अनेहो न उरुव्रज उरूचि वि प्रसर्तवे । कृधि तोकाय जीवसे ॥१२ ॥

हे महान् आदित्यगण ! हिंसारहित, श्रेष्ठ गमन करने योग्य हमारे पथ हर प्रकार से सुरक्षित हों । हमारी सन्तानों को आप दीर्घायुष्य प्रदान करें ॥१२ ॥

७२०६. ये मूर्धानः क्षितीनामदब्धासः स्वयशसः । व्रता रक्षन्ते अद्रुहः ॥१३ ॥

हे आदित्यो ! आप अत्यन्त कीर्तिमान् हैं । आप प्रमाद और विद्रोहरहित होकर हम मनुष्यों के कर्मों को संरक्षण प्रदान करते हैं ॥१३ ॥

७२०७. ते न आस्नो वृकाणामादित्यासो मुमोचत । स्तेनं बद्धमिवादिते ॥१४ ॥

हे अदितिमाता तथा आदित्यगण ! चोरों की भाँति (छल से) बाँधे गये हम लोगों को आप हिंसक दुष्टों के मुखों से बचायें ॥१४ ॥

[पाप वृत्तियाँ चोरों की भाँति हमारी असावधानी का लाभ उठाकर हमें अपने हिंसक जबड़ों में दबोच लेती हैं । उनसे मुक्ति की कामना की गयी है ।]

७२०८. अपो षु ण इयं शरुरादित्या अप दुर्मतिः । अस्मदेत्वजघ्नुषी ॥१५ ॥

हे आदित्यगण ! मारक साधन हमारी हिंसा न करके हमसे दूर हट जायें । दुर्बुद्धि भी हमसे दूर हो जाये ॥१५ ॥

७२०९. शश्वद्धि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिर्वयम् । पुरा नूनं बुभुज्महे ॥१६ ॥

श्रेष्ठ, दानी हे आदित्यो ! आपके रक्षण-साधनों द्वारा संरक्षित होकर हम सदैव श्रेष्ठ सुखों का सेवन करते रहें ॥१६ ॥



७२१०. **शश्वन्तं हि प्रचेतसः प्रतियन्तं चिदेनसः। देवाः कृणुथ जीवसे ॥१७॥**

हे विद्वान् देवताओ ! हमको मारने वाले पापी को दूर करके हमें दीर्घ आयुष्य प्रदान करें ॥१७॥

७२११. **तत्सु नो नव्यं सन्यस आदित्या यन्मुमोचति। बन्धाद् बद्धमिवादिते ॥१८॥**

हे अदितिदेवि और आदित्यगण ! जिस प्रकार आप बँधे हुए व्यक्तियों को बन्धन से छुड़ाते हैं, उसी प्रकार आपका बल हमें भी बन्धन से मुक्त करे। आपका वह बल प्रार्थना के योग्य है ॥१८॥

७२१२. **नास्माकमस्ति तत्तर आदित्यासो अतिष्कदे। यूयमस्मभ्यं मृळत ॥१९॥**

हे आदित्यो ! हम आपके सदृश वेगवान् नहीं हैं। आपका वह वेग हमें संकटों से मुक्त कर सकता है, अतः आप हमें सुख प्रदान करें ॥१९॥

७२१३. **मा नो हेतिर्विवस्वत आदित्याः कृत्रिमा शरुः। पुरा नु जरसो वधीत् ॥२०॥**

हे आदित्यो ! यम के मारक आयुध हमको वृद्धावस्था से पूर्व विनष्ट न करें ॥२०॥

७२१४. **वि षु द्वेषो व्यंहतिमादित्यासो वि संहितम्। विष्वग्वि वृहता रपः ॥२१॥**

हे आदित्यो ! आप विद्वेषियों, पापियों तथा उनके संगठनों का विनाश करके, पापों को समस्त स्थानों से दूर करें ॥२१॥

[सूक्त - ६८]

[**ऋषि** - प्रियमेध आङ्गिरस। **देवता** - इन्द्र, १४-१९ ऋक्ष अश्वमेध। **छन्द** - गायत्री, १, ४, ७, १० अनुष्टुप्।]

७२१५. **आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि।**
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्र शविष्ठ सत्पते ॥१॥

शत्रुओं को पराजित करने वाले, शौर्ययुक्त यजमानों के पोषक, हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! संरक्षण एवं सुख के निमित्त, गतिशील रथ के समान, आपको हम (यजमान गण) यज्ञस्थल पर ले आते हैं ॥१॥

७२१६. **तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते। आ पप्राथ महित्वना ॥२॥**

महान् शक्तिमान, बहुत से उत्तम कर्म करने वाले पूज्य हे इन्द्रदेव ! आप सब प्रकार की महिमा से युक्त होकर संसार भर में व्याप्त रहते हैं ॥२॥

७२१७. **यस्य ते महिना महः परि ज्मायन्तमीयतुः। हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ॥३॥**

हे इन्द्रदेव ! आपके महान् हाथ सर्वत्र व्यापक और गतिशील हैं। आप स्वर्णयुक्त (सोने की तरह देदीप्यमान) वज्र को धारण करने वाले हैं ॥३॥

७२१८. **विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः। एवैश्च चर्षणीनामूती हुवे रथानाम् ॥४॥**

हे मरुतो ! आपके सैनिकों पर होने वाले आक्रमण के समय रथों की सुरक्षा के लिए हम शत्रु सैनिकों पर आक्रमण करने वाले, शत्रुओं के लिए अजेय, बलशाली इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं ॥४॥

७२१९. **अभिष्टये सदावृधं स्वर्मीळ्हेषु यं नरः। नाना हवन्त ऊतये ॥५॥**

सभी लोग संग्राम में अपनी सुरक्षा के लिए तथा अभीष्ट प्राप्ति के लिए जिनका आवाहन करते हैं, हमेशा विकासमान उन इन्द्रदेव का हम भी आवाहन करते हैं ॥५॥

७२२०. **परोमात्रमृचीषममिन्द्रमुग्रं सुराधसम्। ईशानं चिद्वसूनाम् ॥६॥**



जो इन्द्रदेव अत्यन्त पराक्रमी, सम्पत्तिवान्, असीम, प्रार्थनाओं के इच्छुक तथा ऐश्वर्यों के स्वामी हैं, उन्हें हम आवाहित करते हैं ॥६ ॥

७२२१. **तं तमिद्राधसे मह इन्द्रं चोदामि पीतये ।**
यः पूर्व्यामनुष्टुतिमीशे कृष्टीनां नृतुः ॥७ ॥

जो सबके नायक हैं तथा स्तोताओं की पुरातन प्रार्थनाओं को सुनने वाले हैं, उन इन्द्रदेव का हम श्रेष्ठ सम्पत्ति की प्राप्ति हेतु, सोमपान के लिए आवाहन करते हैं ॥७ ॥

७२२२. **न यस्य ते शवसान सख्यमानंश मर्त्यः नकिः शवांसि ते नशत् ॥८ ॥**

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! कोई भी व्यक्ति आपकी मित्रता तथा सामर्थ्य की प्रतिद्वन्द्विता नहीं कर सकता ॥८ ॥

७२२३. **त्वोतासस्त्वा युजाप्सु सूर्ये महद्धनम् । जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥९ ॥**

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा संरक्षित होकर तथा आपकी कृपा प्राप्त करके हम सूर्योदय काल के यज्ञ को सम्पन्न करें । हम युद्धों में जीतकर प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त करें ॥९ ॥

७२२४. **तं त्वा यज्ञेभिरीमहे तं गीर्भिर्गिर्वणस्तम ।**
इन्द्र यथा चिदाविथ वाजेषु पुरुमाय्यम् ॥१० ॥

हे वंदनीय इन्द्रदेव ! हम यज्ञों तथा प्रार्थनाओं द्वारा आपका आवाहन करते हैं, जिससे संग्राम में आप हमें संरक्षण प्रदान करें ॥१० ॥

७२२५. **यस्य ते स्वादु सख्यं स्वाद्वी प्रणीतिरद्रिवः । यज्ञो वितन्तसाय्यः ॥११ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपकी मित्रता तथा प्रीति मधुर एवं सुस्वादु है; अतः सभी लोग आपके निमित्त यजन करते हैं ॥११ ॥

७२२६. **उरु णस्तन्वे३ तन उरु क्षयाय नस्कृधि । उरु णो यन्धि जीवसे ॥१२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी सन्तानों के निमित्त प्रचुर ऐश्वर्य, हमारे आवास के निमित्त विशाल भवन तथा जीवन के लिए दीर्घ आयुष्य प्रदान करें ॥१२ ॥

७२२७. **उरुं नृभ्य उरुं गव उरुं रथाय पन्थाम् । देववीतिं मनामहे ॥१३ ॥**

हे इन्द्रदेव ! अपने परिजनों के निमित्त हम आपसे विशाल ऐश्वर्य, गौओं के निमित्त विस्तृत स्थान तथा रथों के निमित्त विस्तृत मार्ग की कामना करते हैं । इस हेतु हम यजन करते हैं ॥१३ ॥

अगली छः ऋचाओं में अंगिरा पुत्र ऋषि प्रियमेध को यज्ञीय दान के क्रम में प्राप्त विभूतियों का वर्णन है । पौराणिक संदर्भ से दानदाता है, राजा अतिथिग्व पुत्र इन्द्रोत, राजा ऋक्ष के पुत्र तथा राजा अश्वमेध के पुत्र । दान में प्राप्त हुए हैं दो-दो विभिन्न गुणयुक्त अश्व जिनके साथ बलशाली घोड़ी भी है । ऋचाओं में गूढ़ आध्यात्मिक सूत्रों के भी संकेत भासित होते हैं ।उस संदर्भ से दान पाने वाले हैं प्रियमेध-दिव्यमेधा के अंशरूप जो यज्ञीय अनुशासन में चलने के कारण सबके प्रिय हैं । अथितिग्व (आतिथ्य में कुशल) के पुत्र इन्द्रोत (इन्द्र के गुणयुक्त शरीर तंत्र को नियमित करने वाली जीव चेतना) ऋक्ष (गतिशील) के पुत्र-प्राण तथा अश्वमेध (विवेकयुक्त पराक्रम) के पुत्र (सत्कर्म) । इनके अनुदान विविध प्रकार के अश्व-अर्थात् विभिन्न विशेषताओं से युक्त बल प्रवाह है । इन संदर्भों से भी मन्त्रार्थ सिद्ध होते हैं -

७२२८. **उप मा षड् द्वाद्वा नरः सोमस्य हर्ष्या । तिष्ठन्ति स्वादुरातयः ॥१४ ॥**

सोमरस पान से आनन्दित होकर श्रेष्ठ सम्पत्ति के साथ छः नायक दो-दो की जोड़ी में हमारी ओर पधार रहे हैं ॥१४ ॥



[पौराणिक संदर्भ में ऊपर वर्णित राजा दो-दो (पिता-पुत्र) की जोड़ी से हैं। प्राकृतिक संदर्भ में षड् ऋतुओं में से दो-दो के जोड़े अथवा शरीरस्थ चय-अपचय (एनाबॉलिज्म-कैटाबॉलिज्म) नाड़ी तन्त्र के संवेदनात्मक-परासंवेदनात्मक (सिम्पैथेटिक-पैरा सिम्पैथेटिक) तथा कर्म में श्रम और कौशल के प्रेरक-प्रवाह कहे जा सकते हैं]

७२२९. **ऋज्रावन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि। आश्वमेधस्य रोहिता ॥१५ ॥**

(अतिथिग्व पुत्र) इन्द्रोत से ऋजु (सरल प्रकृति वाले) ऋक्ष पुत्र से प्रेरक तथा अश्वमेध के पुत्र से रोहित (लाल अथवा आरोहणशील) अश्व अथवा बल प्रवाह प्राप्त हुए ॥१५ ॥

[उक्त दो मंत्रों से प्रकट होता है कि इन्द्रोत से प्राप्त ऋजु स्वभाव वाले रथयुक्त हैं। शरीर तंत्र को नियमित करने वाले चय-अपचय प्रवाह ऋजु स्वभाव के हैं, सरलता से चलते रहते हैं, तथा रथ संवाहक (कैरियर) क्षमता से युक्त हैं। ऋक्ष पुत्र के अश्व प्रेरक एवं लगाम युक्त हैं। इनकी संगति प्रेरक (सिम्पैथैटिक) तथा नियंत्रक (पैटासिम्पैथैटिक) नाड़ी शक्तियों से बैठती है। अश्वमेध से प्राप्त है सुन्दर स्वास्थ्य वाले- सत्कर्म से प्राप्त श्रम और कौशल शक्ति प्रवाह सुन्दर हैं। ये सब प्रियमेध को ही प्राप्त होते हैं।]

७२३०. **सुरथाँ आतिथिग्वे स्वभीशूँरार्क्षे। आश्वमेधे सुपेशसः ॥१६ ॥**

अतिथिग्व के पुत्र से श्रेष्ठ रथ युक्त ऋक्ष पुत्र से सुन्दर लगाम (नियंत्रण तंत्र) युक्त तथा अश्वमेध के पुत्र से सुन्दर स्वरूप वाले (अश्व या प्राण प्रवाह) प्राप्त हुए ॥१६ ॥

७२३१. **षळश्वाँ आतिथिग्व इन्द्रोते वधूमतः। सचा पूतक्रतौ सनम् ॥१७ ॥**

अतिथिग्व के पुत्र इन्द्रोत के पवित्र कर्मानुष्ठान (यज्ञ) में हमने मादा सहित छः अश्वों को (यज्ञ) में एक साथ ग्रहण किया ॥१७ ॥

[पवित्र कर्मों के लिये अथवा यज्ञीय प्रक्रिया के अंतर्गत ही देवों के उक्त अनुदान एक साथ प्राप्त होते हैं।]

७२३२. **ऐषु चेतद्वृषण्वत्यन्तर्ऋज्रेष्वरुषी। स्वभीशुः कशावती ॥१८ ॥**

आसानी से चलने वाले अश्वों के मध्य में शक्तिशाली तेजस्वी तथा लगाम से युक्त (घोड़ी) भी दिखायी दे रही हैं ॥१८ ॥

[चय-अपचय रूपें प्राण प्रवाहों के बीच प्रखर जीवनी शक्ति अथवा इड़ा पिंगला प्राण प्रवाहों के बीच सुषुम्ना (कुंडलिनी शक्ति) का संकेत भासित होता है।]

७२३३. **न युष्मे वाजबन्धवो निनित्सुश्चन मर्त्यः। अवद्यमधि दीधरत् ॥१९ ॥**

अन्नदान करने वाले हे बन्धुओ ! निन्दक व्यक्ति भी आपकी निन्दा करने में सक्षम नहीं हो सकता ॥१९ ॥

[बन्धु सम्बोधन दान-दाताओं अथवा उपलब्ध दिव्य प्राण प्रवाहों के लिये है।]

[सूक्त - ६९]

[**ऋषि** - प्रियमेध आङ्गिरस। **देवता** - इन्द्र, ११ पूर्वार्द्ध के विश्वेदेवा, ११ उत्तरार्द्ध एवं १२ के वरुण। **छन्द** - अनुष्टुप्, २ उष्णिक्, ४-६ गायत्री, ११, १६ पंक्ति, १७, १८बृहती।]

७२३४. **प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं मन्दद्वीरायेन्दवे। धिया वो मेधसातये पुरन्ध्या विवासति ॥१॥**

हे याजको ! तीन स्तोत्रों से तैयार किये गये हविरूप अन्न (भोज्य पदार्थ) को श्रेष्ठ वीर इन्द्रदेव के लिए प्रदान करें। यज्ञ-सम्पादन के लिए विवेकपूर्वक किये गये सत्कर्मों का अभीष्ट फल प्रदान करके वे इन्द्रदेव यजमानों को सम्मानित करते हैं ॥१ ॥

७२३५. **नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम्। पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि ॥२ ॥**



हे यजमानो ! आपके लिए हम उषा को उत्पन्न करने वाले, चन्द्रकिरणों को उत्पन्न करने वाले गौओं को पालने वाले इन्द्रदेव को बुलाते हैं; (क्योंकि) आप गोदुग्ध को पोषक अन्न के रूप में प्राप्त करने की इच्छा करते हैं ॥२ ॥

७२३६. **ता अस्य सूददोहसः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।**
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ॥३ ॥

सूर्योदय होने पर जो गौएँ (किरणे) देवताओं के जन्म स्थान (द्युलोक) से तीनों सवनों में प्रचुर दुग्ध (रस) प्रदान करती हैं। वे अपने दुग्ध को इन्ददेव के निमित्त सोमरस में मिलाती हैं ॥३ ॥

७२३७. **अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥४ ॥**

हे याजको ! गोपालक, सत्यनिष्ठ, सज्जनों के संरक्षक इन्द्रदेव की मन्त्रोच्चारण सहित प्रार्थना करें, जिससे उनकी शक्तियों का आभास हो सके ॥४ ॥

७२३८. **आ हरयः ससृज्रिरेऽरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि सन्नवामहे ॥५ ॥**

जिन इन्द्रदेव की हम अपने यज्ञमण्डप में प्रार्थना करते हैं, उनको उत्तम अश्व यज्ञशाला में ले आएँ ॥५ ॥

७२३९. **इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु । यत्सीमुपह्वरे विदत् ॥६ ॥**

जब यज्ञस्थल के समीप ही इन्द्रदेव मधुर रस का पान करते हैं, तब गौएँ वज्रहस्त इन्द्रदेव के (पान करने के) लिए मधुर दुग्ध प्रदान करती हैं ॥६ ॥

७२४०. **उद्यद् ब्रध्नस्य विष्टपं गृहमिन्द्रश्च गन्वहि ।**
मध्वः पीत्वा सचेवहि त्रिः सप्त सख्युः पदे ॥७ ॥

जब हम इन्द्रदेव के साथ सूर्यलोक में गमन करें, तब अपने सखा उन इन्द्रदेव के श्रेष्ठतम इक्कीसवें स्थान पर मीठे सोमरस का पान करके एक-दूसरे से मिलें ॥७ ॥

७२४१. **अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत । अर्चन्तु पुत्रका उत पुरं न धृष्ण्वर्चत ॥८ ॥**

हे प्रियमेध के वंशज मनुष्यो ! यज्ञ-प्रिय, सन्तान एवं साधकों की कामना को पूर्ण करने वाले तथा शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव का आप सभी (श्रद्धापूरित होकर) सम्मान करें ॥८ ॥

इस ऋचा को अधिकांश टीकाकारों ने युद्ध पर घटित किया है; किन्तु इसका अर्थ प्रकृति पर भी बहुत सहज ही लागू होता है। यहाँ शब्दार्थ इस ढंग से करने का प्रयास किया गया है कि दोनों ही अर्थ सहज ही सिद्ध हो सकें —

७२४२. **अव स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत् ।**
पिङ्गा परि चनिष्कददिन्द्राय ब्रह्मोद्यतम् ॥९ ॥

गर्गर स्वर (रणवाद्यों अथवा मेघों से) उभर रहे हैं। गोधा (हस्तरक्षक आवरण अथवा किरणों के धारणकर्त्ता-अवरोधक) सब ओर शब्द कर रहे हैं। पिंगा (धनुष की प्रत्यंचा अथवा विद्युत्) की ध्वनि (टंकार या कड़क) सब ओर सुनाई देती है। ऐसे में इन्द्रदेव (पराक्रमी संरक्षक अथवा वर्षा के देवता) के लिए स्तोत्र बोलें ॥९ ॥

७२४३. **आ यत्पतन्त्येन्यः सुदुघा अनपस्फुरः ।**
अपस्फुरं गृभायत सोममिन्द्राय पातवे ॥१० ॥

जब उज्ज्वल जल से समृद्ध नदियाँ प्रवाहित होती हैं। उस समय इन्द्रदेव के पीने के लिए श्रेष्ठ गुणों से युक्त मधुर सोमरस लेकर उपस्थित हों ॥१० ॥



७२४४. **अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत ।**
वरुण इदिह क्षयत्तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ॥११ ॥

अग्नि, इन्द्र तथा विश्वेदेवा सोमपान करके हर्षित हुए। वरुणदेव भी यहाँ उपस्थित रहे। जिस प्रकार गौएँ अपने बच्चे को प्राप्त करने के लिए शब्द करती हैं, उसी प्रकार हमारे स्तोत्र उन वरुणदेव की प्रार्थना करते हैं ॥११ ॥

७२४५. **सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्त सिन्धवः ।**
अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्म्यं सुषिरामिव ॥१२ ॥

हे वरुणदेव ! जिस प्रकार किरणें सूर्य की ओर गमन करती हैं, उसी प्रकार आपके ओज से सातों सरिताएँ समुद्र की ओर प्रवाहित होती हैं ॥१२ ॥

७२४६. **यो व्यर्तीँरफाणयत् सुयुक्ताँ उप दाशुषे ।**
तक्वो नेता तदिद्वपुरुपमा यो अमुच्यत ॥१३ ॥

जो इन्द्रदेव द्रुतगामी अश्वों को रथ में नियोजित करके हविप्रदाता यजमान के पास जाते हैं, वे विशाल शरीर वाले नायक इन्द्रदेव यज्ञशाला में प्रमुख स्थान प्राप्त करते हैं ॥१३ ॥

७२४७. **अतीदु शक्र ओहत इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ।**
भिनत्कनीन ओदनं पच्यमानं परो गिरा ॥१४ ॥

वे इन्द्रदेव अत्यन्त सौन्दर्ययुक्त तथा शक्तिशाली हैं। वे समस्त रिपुओं तथा स्तुतियों से भी परे हैं। वे जल से युक्त बादलों को नष्ट कर डालते हैं ॥१४ ॥

७२४८. **अर्भको न कुमारकोऽधि तिष्ठन्नवं रथम् ।**
स पक्षन्महिषं मृगं पित्रे मात्रे विभुक्रतुम् ॥१५ ॥

ये इन्द्रदेव अपने विशाल शरीर से नूतन रथ पर सुशोभित होते हैं। वे विविध श्रेष्ठ कर्मों को सम्पन्न करते हुए बादलों को जल बरसाने के लिए प्रेरित करते हैं ॥१५ ॥

७२४९. **आ तू सुशिप्र दम्पते रथं तिष्ठा हिरण्ययम् ।**
अध द्युक्षं सचेवहि सहस्रपादमरुषं स्वस्तिगामनेहसम् ॥१६ ॥

हे सुन्दर आकृति वाले दम्पते (इन्द्रदेव) ! सहस्रों रश्मियों से आलोकित, द्रुतगामी स्वर्णिम रथ पर आप भली प्रकार आरूढ़ हों (यहाँ आयें); तब हम दोनों एक साथ मिलेंगे ॥१६ ॥

७२५०. **तं घेमित्था नमस्विन उप स्वराजमासते ।**
अर्थं चिदस्य सुधितं यदेतव आवर्तयन्ति दावने ॥१७ ॥

उन स्वप्रकाशित इन्द्रदेव की वंदना करने वाले याजक साधना करते हैं। उसके बाद वे श्रेष्ठ सम्पत्ति तथा सद्बुद्धि ग्रहण करते हैं ॥१७ ॥

७२५१. **अनु प्रत्नस्यौकसः प्रियमेधास एषाम् ।**
पूर्वामनु प्रयतिं वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आशत ॥१८ ॥

कुश-आसन फैलाने वाले तथा यज्ञों में हविष्यान्न प्रदान करने वाले 'प्रियमेध' ऋषि की सन्तानों ने उन इन्द्रदेव के शाश्वत निवासस्थल (स्वर्ग) को प्राप्त किया ॥१८ ॥



[सूक्त - ७०]

[**ऋषि** - पुरुहन्मा आङ्गिरस । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - बृहती, १-६ प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती), १३ उष्णिक्, १४ अनुष्टुप्, १५ पुर उष्णिक् ।]

७२५२. **यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।**
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठो यो वृत्रहा गृणे ॥१ ॥

मानवों के अधिपति, वेगवान् शत्रु-सेना के संहारक, वृत्रहन्ता, श्रेष्ठ इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं ॥१ ॥

७२५३. **इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि ।**
हस्ताय वज्रः प्रति धायि दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ॥२ ॥

हे साधक ! अपनी रक्षा के लिए देवराज इन्द्र की उपासना करो । जिनके संरक्षण में (देवत्व की) रक्षा एवं (असुरता के) विनाश की दोहरी शक्ति है । वे इन्द्रदेव, सूर्य के समान तेजस्वी वज्र को हाथ में धारण करते हैं ॥२ ॥

७२५४. **नकिष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।**
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्ण्वोजसम् ॥३ ॥

स्तुत्य, महाबलशाली, समृद्ध, अपराजित, शत्रुओं का दमन करने वाले इन्द्रदेव को जो साधक यज्ञादि कर्मों द्वारा अपना सहचर (अनुकूल) बना लेता है, उसके कर्मों को कोई नष्ट नहीं कर सकता ॥३ ॥

७२५५. **अषाळ्हमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन्महीरुरुज्रयः ।**
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामो अनोनवुः ॥४ ॥

जिन इन्द्रदेव के प्राकट्य पर महान् वेगवाली गौएँ (किरणें) और पृथ्वी तथा आकाश भी उनके समक्ष झुककर अभिवादन करते हैं, उन उग्र , शत्रु विजेता और पराक्रमी इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं ॥४ ॥

७२५६. **यद् द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।**
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! सैकड़ों देवलोक, सैकड़ों भूमियाँ तथा हजारों सूर्य भी यदि उत्पन्न हो जाएँ , तो भी आपकी समानता नहीं कर सकते । द्यावा-पृथिवी में (कोई भी) आपकी बराबरी करने वाला नहीं है ॥५ ॥

७२५७. **आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन्विश्वा शविष्ठ शवसा ।**
अस्माँ अव मघवन्गोमति व्रजे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ॥६ ॥

हे बलशाली इन्द्रदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से सभी की इच्छा पूरी करते हैं । हे बलवान्, धनवान् , वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप गौयुक्त (पोषण साधनों सहित) हमें संरक्षण प्रदान करें ॥६ ॥

७२५८. **न सीमदेव आपदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।**
एतग्वा चिद्य एतशा युयोजते हरी इन्द्रो युयोजते ॥७ ॥

हे दीर्घजीवी इन्द्रदेव ! (जो व्यक्ति) शुभ्रवर्ण वाले दो अश्वों (उज्ज्वल चिंतन-चरित्र) को अपने (जीवन के) साथ जोड़ता है, उसी के साथ हर्यश्व (इन्द्र के दोनों हरित अश्व) भी जुड़ जाते हैं ॥७ ॥



७२५९. **तं वो महो महाय्यमिन्द्रं दानाय सक्षणिम् ।**
यो गाधेषु य आरणेषु हव्यो वाजेष्वस्ति हव्यः ॥८ ॥

हे याजको ! मित्रवत् जो इन्द्रदेव सामान्य स्थानों, निवास स्थानों तथा संग्रामों में आवाहनीय हैं । आप उनकी धन-ऐश्वर्य प्राप्त करने के निमित्त प्रार्थना करें ॥८ ॥

७२६०. **उदू षु णो वसो महे मृशस्व शूर राधसे ।**
उदू षु मह्यै मघवन्मघत्तय उदिन्द्र श्रवसे महे ॥९ ॥

पराक्रमी तथा सम्पत्तिवान् हे इन्द्रदेव ! आप हमें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करने के लिए विकसित करें । आप हमें इस योग्य बनाएँ, जिससे हम श्रेष्ठ अन्न ग्रहण कर सकें ॥९ ॥

७२६१. **त्वं न इन्द्र ऋतयुस्त्वानिदो नि तृम्पसि ।**
मध्ये वसिष्व तुविनृम्णोर्वोर्नि दासं शिश्नथो हथैः ॥१० ॥

अति पराक्रमी हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ की रक्षा करने वाले हैं । आप निन्दकों के ऐश्वर्य को छीनकर हमें सन्तुष्ट करें । आप शस्त्रों के द्वारा दस्युओं का संहार करके हमें अपना महान् आश्रय प्रदान करें ॥१० ॥

७२६२. **अन्यव्रतममानुषमयज्वानमदेवयुम् ।**
अव स्वः सखा दुधुवीत पर्वतः सुघ्नाय दस्युं पर्वतः ॥११ ॥

(इन्द्रदेव के) सखारूप पर्वत-ऋषि देवताओं के निन्दक, मानवता से शून्य अयाज्ञिकों तथा धार्मिक कृत्य न करने वालों को स्वर्ग से पतित कर देते हैं ।ऐसे दुष्टों को पर्वत ऋषि वध करने वाले योद्धाओं को सौंप देते हैं ॥११॥

७२६३. **त्वं न इन्द्रासां हस्ते शविष्ठ दावने ।**
धानानां न सं गृभायास्मयुर्द्धिः सं गृभायास्मयुः ॥१२ ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप हमारी अभिलाषाओं की पूर्ति करने वाले हैं । जिस प्रकार याजक धान की खील (लाजा) को यज्ञार्थ हाथ में लेते हैं, उसी प्रकार आप हमारे लिए अपने हाथ में (दानार्थ) गौएँ लें, पुनः पुत्र लें (अर्थात् गौएँ एवं पुत्र प्रदान करें) ॥१२ ॥

७२६४. **सखायः क्रतुमिच्छत कथा राधाम शरस्य ।**
उपस्तुतिं भोजः सूरिर्योऽअह्रयः ॥१३ ॥

हे मित्रो ! हम उन अन्न प्रदाता, कपटरहित तथा ज्ञानी इन्द्रदेव की किस तरह से प्रार्थना करें , जो शौर्य प्रकट करने की अभिलाषा से शत्रुओं का संहार करने वाले हैं ? ॥१३ ॥

७२६५. **भूरिभिः समह ऋषिभिर्बर्हिष्मद्भिः स्तविष्यसे ।**
यदित्थमेकमेकमिच्छर वत्सान्परादद: ॥१४ ॥

शत्रुओं के विनाशक हे इन्द्रदेव ! आप वन्दनीय हैं, जब आप हमें अनेकों बछड़ों सहित गौएँ प्रदान करते हैं, तब अनेकों ऋषि तथा याज्ञिक आपकी सराहना करते हैं ॥१४ ॥

७२६६. **कर्णगृह्या मघवा शौरदेव्यो वत्सं नस्त्रिभ्य आनयत् । अजां सूरिर्न धातवे ॥१५॥**

हे सम्पत्तिवान् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार समझदार मालिक बकरी को कान पकड़कर लाते हैं, उसी प्रकार आप पराक्रम से प्राप्त होने वाली दिव्य गौओं (या शक्तियों) को हमारे लिए ले आएँ ॥१५ ॥



[सूक्त - ७१]

[**ऋषि** - सुदीति और पुरुमीळ्ह आङ्गिरस अथवा उन दोनों में से कोई एक । **देवता** - अग्नि । **छन्द** - गायत्री, १०-१५ प्रगाथ (समा सतोबृहती, विषमा बृहती]

७२६७. **त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः । उत द्विषो मर्त्यस्य ॥१ ॥**

हे अग्ने ! संसार से द्वेष करने वाले व्यक्तियों एवं शत्रुओं से हमारी रक्षा करें और विषम परिस्थितियों में हमें धैर्यवान् बनाएँ ॥१ ॥

७२६८. **नहि मन्युः पौरुषेय ईशे हि वः प्रियजात । त्वमिदसि क्षपावान् ॥२ ॥**

जन्म से ही प्रिय लगने वाले हे अग्निदेव ! किसी पापी का क्रोध आपके भक्तों पर शासन नहीं कर सकता । आप रात्रि में भी आलोकित होते हैं ॥२ ॥

७२६९. **स नो विश्वेभिर्देवेभिरूर्जो नपाद्भद्रशोचे । रयिं देहि विश्ववारम् ॥३ ॥**

शक्ति को क्षीण न होने देने वाले हे अग्निदेव ! आप कल्याणकारी आलोक से सम्पन्न हैं । आप समस्त देवताओं के द्वारा हमें वरणीय ऐश्वर्य प्रदान कराएँ ॥३ ॥

७२७०. **न तमग्ने अरातयो मर्तं युवन्त रायः । यं त्रायसे दाश्वांसम् ॥४ ॥**

हे अग्निदेव ! आप जिन हवि प्रदाता मनुष्यों को संरक्षण प्रदान करते हैं, उनको कोई दुराचारी व्यक्ति ऐश्वर्य से वंचित नहीं कर सकता ॥४ ॥

७२७१. **यं त्वं विप्र मेधसातावग्ने हिनोषि धनाय । स तवोती गोषु गन्ता ॥५ ॥**

हे ज्ञानी अग्निदेव ! आप जिन याजकों को ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए यज्ञ-कृत्यों में प्रेरित करते हैं, वे आपके संरक्षण में गौओं से युक्त होते हैं ॥५ ॥

७२७२. **त्वं रयिं पुरुवीरमग्ने दाशुषे मर्ताय । प्र णो नय वस्यो अच्छ ॥६ ॥**

हे अग्निदेव ! आप आहुति प्रदाताओं को योद्धाओं से युक्त श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करते हैं । अतः हमें भी प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥६ ॥

७२७३. **उरुष्या णो मा परा दा अघायते जातवेदः । दुराध्ये३ मर्ताय ॥७ ॥**

समस्त पदार्थों के ज्ञाता हे अग्निदेव ! आप हमें संरक्षण प्रदान करें । आप हमें पापी तथा हिंसक मनुष्यों के अधीन न होने दें ॥७ ॥

७२७४. **अग्ने माकिष्टे देवस्य रातिमदेवो युयोत । त्वमीशिषे वसूनाम् ॥८ ॥**

हे तेजस्वी अग्निदेव ! आप ही समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं । कोई दुराचारी व्यक्ति आपके द्वारा प्रदत्त दान से हमें वंचित न करे ॥८ ॥

७२७५. **स नो वस्व उप मास्यूर्जो नपान्माहिनस्य । सखे वसो जरितृभ्यः ॥९ ॥**

शक्ति के पुत्र तथा अनेकों को निवास प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! हम स्तुति करने वालों को आप महानता से सम्पन्न श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करें ॥९ ॥

७२७६. **अच्छा नः शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम् ।**
अच्छा यज्ञासो नमसा पुरूवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ॥१० ॥



हमारी प्रार्थनाएँ भली प्रकार से प्रज्वलित ज्वालाओं से सुशोभित और दर्शन योग्य अग्निदेव के समीप सहजता से जाएँ । हमारी रक्षा के लिए घृतयुक्त हवियों से सम्पन्न यज्ञ, प्रचुर सम्पदा से युक्त और अति प्रशंसनीय अग्निदेव को प्राप्त हों ॥१० ॥

७२७७. **अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम् ।**
द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ॥११ ॥

हम दान की प्राप्ति की कामना से बल के पुत्र जातवेदा अग्निदेव का आवाहन करते हैं । वे दो रूपों वाले हैं, मरणधर्मा प्रजाओं (मनुष्यों) में वे 'होता' तथा अमरदेवों के लिए वे 'आनन्दरूप ' हैं ॥११ ॥

७२७८. **अग्निं वो देवयज्ययाग्निं प्रयत्यध्वरे ।**
अग्निं धीषु प्रथममग्निमर्वत्यग्निं क्षैत्राय साधसे ॥१२ ॥

हे याजको ! यज्ञ के लिए हम अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं । यज्ञाग्नि के प्रदीप्त होने पर समस्त विवेकपूर्ण कार्यों में संलग्न रहते हुए तथा क्षेत्रीय लाभ के लिए सर्वप्रथम उन अग्निदेव की हम उपासना करते हैं ॥१२ ॥

७२७९. **अग्निरिषां सख्ये ददातु न ईशे यो वार्याणाम् ।**
अग्निं तोके तनये शश्वदीमहे वसुं सन्तं तनूपाम् ॥१३ ॥

वे अविनाशी अग्निदेव समस्त प्राणियों के पालन करने वाले तथा सभी के अन्दर निवास करने वाले हैं । वे श्रेष्ठ ऐश्वर्यों के अधिष्ठाता तथा हमारे सखा हैं । हम अपनी सन्तानों के निमित्त उनसे प्रचुर ऐश्वर्य एवं अन्न की कामना करते हैं ॥१३ ॥

७२८०. **अग्निमीळिष्वावसे गाथाभिः शीरशोचिषम् ।**
अग्निं राये पुरुमीळ्ह श्रुतं नरोऽग्निं सुदीतये छर्दिः ॥१४ ॥

हे स्तोताओ ! विस्तृत-विकराल ज्वालाओं वाले अग्निदेव की स्तुति करो । उद्‌गातागण उन प्रसिद्ध अग्निदेव से धन तथा श्रेष्ठ प्रकाशयुक्त आवास-प्राप्ति हेतु प्रार्थना करते हैं ॥१४ ॥

७२८१. **अग्निं द्वेषो योतवै नो गृणीमस्यग्निं शं योश्च दातवे ।**
विश्वासु विक्ष्ववितेव हव्यो भुवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ॥१५ ॥

वे अग्निदेव शासक के सदृश सम्पूर्ण प्रजाओं के संरक्षक तथा ऋषियों को निवास प्रदान करने वाले हैं । अपने रिपुओं को दूर हटाने, हर्ष तथा अभय प्राप्त करने के लिए हम उन स्तुत्य अग्निदेव की साधना करते हैं ॥१५ ॥

[सूक्त - ७२]

[**ऋषि** - हर्यत प्रागाथ । **देवता** - अग्नि अथवा हवि स्तुति । **छन्द** - गायत्री ।]

७२८२. **हविष्कृणुध्वमा गमदध्वर्युर्वनते पुनः । विद्वाँ अस्य प्रशासनम् ॥१ ॥**

हे याजको ! आप सब आहुतियाँ प्रदान करें, (क्योंकि) अग्निदेव प्रकट हो गए हैं । ये (याजक) आहुतियाँ प्रदान करने में कुशल हैं, पुनः-पुनः आहुतियाँ प्रदान करते हैं ॥१ ॥

७२८३. **नि तिग्ममभ्यंशुं सीदद्धोता मनावधि । जुषाणो अस्य सख्यम् ॥२ ॥**

तीक्ष्ण लपटों वाले अग्निदेव के समीप जो याजकगण आसीन होते हैं ; उनका सम्बन्ध अग्निदेव से मित्रवत् होता है ॥२ ॥



७२८४. अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया । गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ॥३ ॥

याजकगण, रुद्र के समान अग्निदेव को प्रतिष्ठित करने की आकांक्षा करते हैं । वे सुप्त अग्नि को जिह्वा (मन्त्रों) द्वारा प्रदीप्त करते हैं ॥३ ॥

७२८५. जाम्यतीतपे धनुर्वयोधा अरुहद्वनम् । दृषदं जिह्वयावधीत् ॥४ ॥

अन्न प्रदान करने वाले अग्निदेव प्रदीप्त होकर अन्तरिक्ष का अतिक्रमण कर जाते हैं । वे वनसमूह या जलसमूह (मेघों) पर भी (विद्युत् रूप में) आरूढ़ हो जाते हैं । वे अपनी जिह्वा (लपटों) से मेघों (या शिलाओं हिमशिलाओं) को विदीर्ण कर देते हैं ॥४ ॥

७२८६. चरन्वत्सो रुशन्निह निदातारं न विन्दते । वेति स्तोतव अम्ब्यम् ॥५ ॥

बच्चे के सदृश उछलने वाले अग्निदेव जाज्वल्यमान होकर, प्रार्थना करने वाले स्तोताओं की कामना करते हैं । कोई भी निन्दा करने वाला व्यक्ति उनको नहीं प्राप्त कर सकता ॥५ ॥

७२८७. उतो न्वस्य यन्महदश्वावद्योजनं बृहत् । दामा रथस्य ददृशे ॥६ ॥

उन अग्निदेव के महिमामय तथा विशाल रथ अश्वों से सम्पन्न हैं ।उन रथों की लगाम भी दिखने लगी है ॥६ ॥

७२८८. दुहन्ति सप्तैकामुप द्वा पञ्च सृजतः । तीर्थे सिन्धोरधि स्वरे ॥७ ॥

सिन्धु तट पर, स्व प्रकाशित तीर्थ में, सात मिलकर एक का दोहन करते हैं । उनमें से दो, पाँच को प्रेरित करते हैं ॥७ ॥

[यह ऋचा बहु-आर्थिक है । दो पाषाणों और पाँच अँगुलियों द्वारा सोम निचोड़ने, मन और बुद्धि द्वारा पंच प्राणों को प्रेरित कर जीवन रस का उत्पादन, प्रस्थाता, अध्वर्युसहित पाँच याजकों द्वारा यजन कार्य आदि इससे सिद्ध होते हैं ।]

७२८९. आ दशभिर्विवस्वत इन्द्रः कोशमचुच्यवीत् । खेदया त्रिवृता दिवः ॥८ ॥

अग्निदेव दस विवस्वतों एवं त्रिविध दीप्तियों के द्वारा दिव्य (अथवा द्युलोक के) कोष को विदीर्ण (उपयोग के लिए खोल) देते हैं ॥८ ॥

[इस ऋचा में आकाश से पर्जन्य का कोष तथा शरीरस्थ दिव्य कोषों को खोलने-उपलब्धि की स्थिति में लाने का भाव प्रकट हो रहा है ।]

७२९०. परि त्रिधातुरध्वरं जूर्णिरेति नवीयसी । मध्वा होतारो अञ्जते ॥९ ॥

तीन रंगों वाले (काला, लाल, सफेद) द्रुतगामी अग्निदेव, अपनी अभिनव ज्वालाओं के द्वारा यज्ञ की ओर गमन करते हैं । होतागण उनको घृत की हवियों से सिंचित करते हैं ॥९ ॥

७२९१. सिञ्चन्ति नमसावतमुच्चाचक्रं परिज्मानम् । नीचीनबारमक्षितम् ॥१० ॥

जिसका चक्र ऊपर (अंतरिक्ष में) स्थित है । चारों ओर से नीचे झुकता हुआ जिसका निचला द्वार क्षीण नहीं है । उस महान् को नमन करते हुए यज्ञकर्ता हवन करते हैं ॥१० ॥

[आकाशस्थ प्रकृति चक्र, चारों ओर से क्षितिज रूप में झुकता हुआ दिखता है, किन्तु उसका निचला द्वार जिससे पृथ्वी का पोषण होता है, क्षीण नहीं है । उक्त महान् (यज्ञीय) व्यवस्था के प्रति आस्था रखते हुए याजकगण यज्ञीय परंपरा का निर्वाह करते हैं ।]

७२९२. अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु । अवतस्य विसर्जने ॥११ ॥

सम्मानित अध्वर्युगण यज्ञ के समीप पधारकर, शेष मधुर सोमरस को महावीर (पात्र या महान् पराक्रमी इन्द्रदेव) के विसर्जन के अवसर पर स्थापित करते हैं ॥११ ॥



७२९३. गाव उपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा । उभा कर्णा हिरण्यया ॥१२ ॥

सूर्य-रश्मियाँ यज्ञार्थ आएँ, वे पृथ्वी को (उर्वर बनाकर) यज्ञीय रूप प्रदान करने वाली हैं, जिनके दोनों छोर चमकीले हैं ॥१२ ॥

[पृथ्वी के दोनों ध्रुवों पर चुम्बकीय तरंगों का प्रचण्ड प्रवाह विद्यमान है, चुम्बकीय ऊर्जा के कारण उन्हें चमकीला कहा गया है ।]

७२९४. आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम् । रसा दधीत वृषभम् ॥१३ ॥

हे अध्वर्यो ! आकाश और पृथ्वी में देदीप्यमान दुग्ध (धवल किरणों) से सोम का मिश्रण करो; (क्योंकि) बाद में वह दुग्ध बलशाली सोम को आत्मसात् कर लेता है ।(और स्वयं अत्यधिक बलशाली बन जाता है) ॥१३ ॥

७२९५. ते जानत स्वमोक्यं१ सं वत्सासो न मातृभिः । मिथो नसन्त जामिभिः ॥१४ ॥

वे गौएँ (पोषक किरणें) अपने स्थानों को जानती हैं, जिस प्रकार बछड़े भीड़ में विद्यमान होते हुए भी अपनी माताओं के पास चले जाते हैं, उसी प्रकार ये गौएँ (दिव्य किरणें) भी अपने बन्धुओं (समान गुण-धर्म वालों) के पास चली जाती हैं ॥१४ ॥

[सूर्य की विभिन्न गुण-धर्म वाली किरणें विशिष्ट प्रकार के जीवों-वनस्पतियों को विशिष्ट प्रकार के पोषण देती रहती हैं । सूक्ष्म रेडियो धर्मी तरंगें भी भीड़ भरे संसार में अपने जैसे गुण-धर्म वाले सर्किटों तक पहुँच जाती हैं ।]

७२९६. उप स्रक्वेषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि । इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ॥१५ ॥

भक्षण करने वाली ज्वालाओं से प्राप्त अन्न और दुग्ध को इन्द्रदेव और अग्निदेव यज्ञ (यज्ञीय प्रक्रिया) द्वारा आकाश में विकीर्ण कर देते हैं । तत्पश्चात् इन्द्रदेव और अग्निदेव को सभी (प्रकृति के अंग-अवयव या देवशक्तियाँ) दुग्ध (पोषक पदार्थ) देते हैं ॥१५ ॥

७२९७. अधुक्षत्पिप्युषीमिषमूर्जं सप्तपदीमरिः । सूर्यस्य सप्त रश्मिभिः ॥१६ ॥

वायुदेव ने सूर्यदेव की सप्त रश्मियों से पुष्ट हुए अन्न एवं रस का दोहन (यज्ञीय प्रक्रिया के अन्तर्गत) सप्त पद वाली (वाणियों-मंत्रों) के संयोग से किया ॥१६ ॥

[यज्ञीय क्रम में सूक्ष्म पोषक कणों का सृजन अग्नि के साथ मंत्र शक्ति के संयोग से ही होता है । वायुदेव उसी को प्राप्त करते हैं ।]

७२९८. सोमस्य मित्रावरुणोदिता सूर आ ददे । तदातुरस्य भेषजम् ॥१७ ॥

हे मित्र और वरुणदेव ! सूर्योदय के समय शक्तिदायक सोमरस को हम प्राप्त करते हैं, क्योंकि वह रोगियों के लिए औषधिरूप है ॥१७ ॥

७२९९. उतो न्वस्य यत्पदं हर्यतस्य निधान्यम् । परि द्यां जिह्वयातनत् ॥१८ ॥

आलोकवान् अग्निदेव अपने निर्धारित स्थल पर आसीन होकर, अपनी ज्वालाओं को सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में फैलाते हैं ॥१८ ॥

[सूक्त - ७३]

[**ऋषि** - गोपवन आत्रेय अथवा सप्तवध्रि । **देवता** - अश्विनीकुमार । **छन्द** - गायत्री]

७३००. उदीराथामृतायते युञ्जाथामश्विना रथम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने रथ को नियोजित करके सुगम मार्गों से गमन करते हुए पधारें । आपका संरक्षण सदा हमारे पास रहे ॥१ ॥



७३०१. **निमिषश्चिज्जवीयसा रथेना यातमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥२ ॥**

हे अश्विनीकुमारो !आप अत्यन्त द्रुतगामी रथ द्वारा पधारें ।आपके संरक्षण-साधन हमेशा हमारे समीप रहें ॥२ ॥

७३०२. **उप स्तृणीतमत्रये हिमेन घर्ममश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥३ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! अग्निदेव की ज्वलनशीलता को आप 'अत्रि' ऋषि के निमित्त बर्फ द्वारा रोकें । आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें ॥३ ॥

७३०३. **कुह स्थः कुह जग्मथुः कुह श्येनेव पेतथुः । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥४ ॥**

हे अश्विद्वय ! आप कहाँ निवास करते हैं ? आप किस जगह गये थे ? आप बाज़ पक्षी के समान कहाँ से आ रहे हैं ? आपका संरक्षण सदा हमारे पास रहे ॥४ ॥

७३०४. **यदद्य कर्हि कर्हि चिच्छुश्रूयातमिमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप चाहे जहाँ हों, हमारी पुकार को सुनकर आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें ॥५ ॥

७३०५. **अश्विना यामहूतमा नेदिष्ठं याम्याप्यम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥६ ॥**

आवाहन करने योग्य दोनों अश्विनीकुमारों को हम अपना आत्मीय मित्र जानकर उनके समीप जाते हैं । उनके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें ॥६ ॥

७३०६. **अवन्तमत्रये गृहं कृणुतं युवमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥७ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! 'अत्रि' ऋषि के निमित्त आपने संरक्षणयुक्त आवास विनिर्मित किया था । अतः आपके रक्षण-साधन हमेशा हमारे समीप रहें ॥७ ॥

७३०७. **वरेथे अग्निमातपो वदते वल्ग्वत्रये । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥८ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! श्रेष्ठ वाणी से आपके निमित्त स्तोत्र उच्चरित करने वाले 'अत्रि' ऋषि को आप अग्नि की ज्वलनशीलता से सुरक्षित करें । आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें ॥८ ॥

७३०८. **प्र सप्तवध्रिराशसा धारामग्नेरशायत । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥९ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! सप्तवध्रि (एक ऋषि अथवा सप्त किरणों या अश्वों) को नियोजित करने वाले सूर्यदेव ने, आशा भरे स्तोत्रों से प्रेरित होकर अग्नि की ज्वालाओं को मंजूषा से बाहर करके धरती पर फैला दिया । आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें ॥९ ॥

७३०९. **इहा गतं वृषण्वसू शृणुतं म इमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१० ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं । आप स्तुतियों को सुनकर हमारे समीप पधारें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१० ॥

७३१०. **किमिदं वां पुराणवज्जरतोरिव शस्यते । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥११ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! वृद्ध पुरुषों की भाँति आपको बार-बार क्यों आवाहित करना पड़ता है ? आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥११ ॥

७३११. **समानं वां सजात्यं समानो बन्धुरश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१२ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों का पैदा होना समान है तथा भ्रातृत्व-भाव भी समान है । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१२ ॥



७३१२. **यो वां रजांस्यश्विना रथो वियाति रोदसी । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१३ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! आपका रथ धरती, आकाश तथा अन्य समस्त भुवनों को लाँघकर गमन करता है। आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१३ ॥

७३१३. **आ नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रैरुप गच्छतम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१४ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! सहस्रों अश्वों तथा गौओं के समूह के साथ हमारे निकट पधारें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१४ ॥

७३१४. **मा नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रेभिरति ख्यतम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१५ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! सहस्रों अश्वों तथा गौओं के समूह से आप हमें वंचित न करें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१५ ॥

७३१५. **अरुणप्सुरुषा अभूदकर्ज्योतिर्ऋतावरी । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१६ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! प्रातः अरुणोदय के समय आकाश लालिमायुक्त हो गया है और यज्ञों के साथ आलोक प्रसरित होने वाला है । इसलिए आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१६ ॥

७३१६. **अश्विना सु विचाकशद्वृक्षं परशुमाँ इव । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१७ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार कुल्हाड़ी से युक्त मनुष्य वृक्षों को काट डालते हैं, उसी प्रकार आलोकवान् सूर्यदेव, तम को नष्ट करके उदित हो गये हैं । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१७ ॥

७३१७. **पुरं न धृष्णवा रुज कृष्णया बाधितो विशा । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१८ ॥**

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार इन्द्रदेव ने दुष्कर्मियों के नगरों को विनष्ट किया था, उसी प्रकार आप भी उन काले कर्म करने वालों (रोगों) का विनाश करें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें ॥१८ ॥

[सूक्त - ७४]

[**ऋषि** - गोपवन आत्रेय । **देवता** - अग्नि, १३-१५ श्रुतर्वा आर्क्ष्य । **छन्द** - गायत्री, १, ४, ७, १०, १३-१५ अनुष्टुप् ।]

७३१८. **विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम् ।**
अग्निं वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥१ ॥

अन्न एवं बल चाहने वाले, हे मनुष्यो ! सर्वप्रिय एवं सर्वपूज्य अग्निदेव की स्तुति करो । हम (ऋत्विग्गण) भी इन (गृहपति) अग्निदेव की सुखदायक स्तोत्रों से स्तुति करते हैं ॥१ ॥

७३१९. **यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् । प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥२ ॥**

हविदाता मित्र के समान घृतादि से यज्ञ सम्पन्न करते हुए वैदिक स्तोत्रों से अग्निदेव का स्तवन करते हैं ॥२ ॥

७३२०. **पन्यांसं जातवेदसं यो देवतात्युद्यता । हव्यान्यैरयद्दिवि ॥३ ॥**

स्तुत्य, सर्वज्ञान युक्त अग्निदेव की हम प्रशंसा करते हैं । अग्निदेव यज्ञ में प्रदत्त हविष्यान्न को देवलोक तक पहुँचाने में सहायक हैं ॥३ ॥

७३२१. **आगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानवम् ।**
यस्य श्रुतर्वा बृहन्नार्क्षो अनीक एधते ॥४ ॥



ऋक्षपुत्र श्रुतर्वा की (वृद्धि) हेतु, प्रचण्ड ज्वालाओं वाले, वृत्र संहारक, श्रेष्ठ, मनुष्यों के लिए हितकारी अग्निदेव का हम वरण (उपासना) करते हैं ॥४ ॥

७३२२. **अमृतं जातवेदसं तिरस्तमांसि दर्शतम्। घृताहवनमीड्यम् ॥५ ॥**

वे अविनाशी अग्निदेव समस्त पदार्थों के ज्ञाता तथा अन्धकार को नष्ट करके दिखने वाले हैं। घृत से आहुतियाँ देने योग्य (उन) की हम स्तुति करते हैं ॥५ ॥

७३२३. **सबाधो यं जना इमे३ऽग्निं हव्येभिरीळते। जुह्वानासो यतस्रुचः ॥६ ॥**

कामना करने वाले याजकगण अपने यज्ञों में स्रुवा-पात्र को लेकर जिन अग्निदेव को आहुतियाँ समर्पित करते हैं, हम उनकी स्तुति करते हैं ॥६ ॥

७३२४. **इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा।**
मन्द्र सुजात सुक्रतोऽमूर दस्मातिथे ॥७ ॥

दर्शनीय तथा अतिथि के समान वन्दनीय हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त प्रज्ञावान्, हर्षदायक तथा सत्कर्म करने वाले हैं। आपकी प्रशंसनीय मेधा हमारे अन्दर स्थापित हो ॥७ ॥

७३२५. **सा ते अग्ने शन्तमा चनिष्ठा भवतु प्रिया। तया वर्धस्व सुष्टुतः ॥८ ॥**

हे अग्निदेव ! हमारे द्वारा सम्पन्न की गयी प्रार्थनाएँ आपके लिए हर्षदायक, अन्नप्रदायक तथा प्रिय हों। उसे ग्रहण करके आप समृद्ध हों ॥८ ॥

७३२६. **सा द्युम्नैर्द्युम्निनी बृहदुपोप श्रवसि श्रवः। दधीत वृत्रतूर्ये ॥९ ॥**

हे अग्निदेव ! आप हमारी तेजस्वी प्रार्थनाओं को ग्रहण करके हमें ऐसी शक्ति प्रदान करें, जिससे हम संग्राम में रिपुओं को परास्त कर श्रेष्ठ कीर्ति प्राप्त कर सकें ॥९ ॥

७३२७. **अश्वमिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम्।**
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यंपन्यं च कृष्टयः ॥१० ॥

जो अग्निदेव अपनी शक्ति के द्वारा मनुष्यों को श्रेष्ठ सम्पत्ति तथा अन्न प्रदान करते हैं, सत्पुरुषों का पालन करने वाले प्रकाशमान उन अग्निदेव की सभी लोग सेवा करते हैं। वे गौओं, अश्वों, महारथियों तथा इन्द्रदेव के समान हैं ॥१० ॥

७३२८. **यं त्वा गोपवनो गिरा चनिष्ठदग्ने अङ्गिरः। स पावक श्रुधी हवम् ॥११ ॥**

गोपवन (इस नाम के ऋषि, पवित्र इन्द्रियों वाले साधक) की स्तुति द्वारा प्रकट हुए, शरीरावयवों में सूक्ष्म रूप से विद्यमान, सबको पवित्र करने वाले हे अग्निदेव ! आप हमारी प्रार्थना ध्यान से सुनें ॥११ ॥

७३२९. **यं त्वा जनास ईळते सबाधो वाजसातये। स बोधि वृत्रतूर्ये ॥१२ ॥**

हे अग्निदेव ! सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए विपित्तग्रस्त लोग आपकी प्रार्थना करते हैं। रिपुओं का संहार करने के लिए आप जागरूक हों ॥१२ ॥

७३३०. **अहं हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति।**
शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम् ॥१३ ॥

ऋक्ष (पराक्रमी) के पुत्र श्रुतर्वा (अश्वों-गतिशीलों के स्वामी) रिपुओं के अभिमान को नष्ट करने वाले हैं। उनके यज्ञ में हमने चार अश्वों के सिर को भेड़ों के बालों के सदृश साफ किया ॥१३ ॥



७३३१. **मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः ।**
सुरथासो अभि प्रयो वक्षन्वयो न तुग्र्यम् ॥१४ ॥

जिस प्रकार तुग्र पुत्र 'भुज्यु' को अश्विनीकुमारों के यानों ने उनके लक्ष्य तक पहुँचाया था, उसी प्रकार शक्तिशाली (श्रुतर्वा) के चार द्रुतगामी घोड़े उनके रथ में नियोजित होकर हमें गन्तव्य स्थान तक पहुँचाते हैं ॥१४ ॥

७३३२. **सत्यमित्त्वा महेनदि परुष्ण्यव देदिशम् ।**
नेमापो अश्वदातरः शविष्ठादस्ति मर्त्यः ॥१५ ॥

हे महान् सरिता परुष्णि तथा जल-समूह ! हम आपसे, वास्तविक रूप से निवेदन करते हैं कि इस शक्तिशाली (श्रुतर्वा) से श्रेष्ठ, अश्वों (पराक्रम) का दान करने वाला कोई अन्य नहीं है ॥१५ ॥

[सूक्त - ७५]

[ऋषि - विरूप आङ्गिरस । देवता - अग्नि । छन्द - गायत्री ।]

७३३३. **युक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव । नि होता पूर्व्यः सदः ॥१ ॥**

हे अग्ने ! देवों का आवाहन करने वाले अश्वों को सारथी के समान अपने रथ में नियोजित करें । सर्वप्रथम हविदाता होने से आप हमारे इस यज्ञानुष्ठान में प्रतिष्ठित हों ॥१ ॥

७३३४. **उत नो देव देवाँ अच्छा वोचो विदुष्टरः । श्रद्विश्वा वार्या कृधि ॥२ ॥**

हे अग्निदेव ! देवताओं के बीच में सर्वश्रेष्ठ विद्वान् के रूप में हमें प्रतिष्ठित करें । वरणीय हव्य को सार्थक रूप प्रदान करें ॥२ ॥

७३३५. **त्वं ह यद्यविष्ठ्य सहसः सूनवाहुत । ऋतावा यज्ञियो भुवः ॥३ ॥**

शक्ति के पुत्र तथा सत्य का पालन करने वाले हे अग्निदेव ! आप यजनीय हैं तथा हवियों के द्वारा प्रदीप्त होते हैं ॥३ ॥

७३३६. **अयमग्निः सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः । मूर्धा कवी रयीणाम् ॥४ ॥**

ज्ञानी अग्निदेव सैकड़ों-हजारों प्रकार के अन्नों तथा धनों के सर्वोच्च अधिष्ठाता हैं ॥४ ॥

७३३७. **तं नेमिमृभवो यथा नमस्व सहूतिभिः । नेदीयो यज्ञमङ्गिरः ॥५ ॥**

हे (अङ्गिरा) अग्निदेव ! जिस प्रकार कुशल शिल्पकार रथ की नेमि को श्रेष्ठ बनाते हैं, उसी प्रकार देवताओं के साथ आप भी उपस्थित होकर हमारे यज्ञों को श्रेष्ठ तथा वंदनीय बनाएँ ॥५ ॥

७३३८. **तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूप नित्यया । वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम् ॥६ ॥**

हे महर्षि विरूप ! शक्तिशाली तथा प्रखर तेज सम्पन्न अग्निदेव की आप अपने अमृत वचनों द्वारा प्रार्थना करें ॥६ ॥

७३३९. **कमु ष्विदस्य सेनयाग्नेरपाकचक्षसः । पणिं गोषु स्तरामहे ॥७ ॥**

सूक्ष्म दृष्टि-सम्पन्न अग्निदेव की सेना (ज्वाला-ऊर्जा) द्वारा, गौएँ (पोषक किरणें या वर्षा) प्राप्त करने के निमित्त किस पणि (आसुरी बाधा) का हनन करें ? ॥७ ॥

७३४०. **मा नो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः । कृशं न हासुरघ्न्याः ॥८ ॥**

हे अग्निदेव ! जिस प्रकार दूध देने वाली गौएँ अपने दुर्बल बछड़े का त्याग नहीं करतीं, उसी प्रकार आप भी हमारा परित्याग न करें; क्योंकि हम देवों की प्रजा (संतान) हैं ॥८ ॥



७३४१. **मा नः समस्य दूढ्य१: परिद्वेषसो अंहतिः । ऊर्मिर्न नावमा वधीत् ॥९ ॥**

जिस तरह समुद्र की लहरें नौका को बाधा पहुँचाती हैं, उसी तरह समस्त विद्वेषियों की दुर्बुद्धि हमें चोट न पहुँचाए ॥९ ॥

७३४२. **नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः । अमैरमित्रमर्दय ॥१० ॥**

हे दिव्य क्षमता-सम्पन्न अग्ने ! समस्त साधकजन आपको नमस्कार करते हैं । आप अहितकारियों का संहार करें ॥१० ॥

७३४३. **कुवित्सु नो गविष्टयेऽग्ने संवेषिषो रयिम् । उरुकृदुरु णस्कृधि ॥११ ॥**

हे अग्निदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें, जिससे हम गौओं को प्राप्त कर सकें । आप हमें समृद्ध करें, क्योंकि आप उन्नत करने वाले हैं ॥११ ॥

७३४४. **मा नो अस्मिन्महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा । संवर्गं सं रयिं जय ॥१२ ॥**

हे अग्निदेव ! भारवाहक व्यक्ति की भाँति (थककर या ऊबकर) युद्ध में आप हमारा परित्याग न करें । आप हमारे लिये रिपुओं के ऐश्वर्य को जीतें ॥१२ ॥

७३४५. **अन्यमस्मद्भिया इयमग्ने सिषक्तु दुच्छुना । वर्धा नो अमवच्छवः ॥१३ ॥**

हे अग्निदेव ! आपकी कष्ट देने वाली सामर्थ्य, हमको छोड़कर अन्यों को भयाक्रान्त करे । आप हमारी शक्ति तथा वेग को बढ़ाएँ ॥१३ ॥

७३४६. **यस्याजुषन्नमस्विनः शमीमदुर्मखस्य वा । तं घेदग्निर्वृधावति ॥१४ ॥**

जिन स्तोताओं तथा याज्ञिकों के त्रुटिपूर्ण यज्ञ-कृत्यों को भी आप स्वीकार कर लेते हैं, उनकी बढ़ने वाली सम्पत्ति को संरक्षण प्रदान करते हैं ॥१४ ॥

७३४७. **परस्या अधि संवतोऽवराँ अभ्या तर । यत्राहमस्मि ताँ अव ॥१५ ॥**

हे अग्निदेव ! आप शत्रु-सेना के स्थान पर हमारी सेना को विजयी बनाएँ । जिस सेना के मध्य हम स्थित हैं, उसे संरक्षण प्रदान करें ॥१५ ॥

७३४८. **विद्मा हि ते पुरा वयमग्ने पितुर्यथावसः । अधा ते सुम्नमीमहे ॥१६ ॥**

हे अग्निदेव ! जैसे पुत्र अपने संरक्षक पिता के श्रेष्ठ सुख की कामना करते हैं, वैसे ही हे रक्षक ! प्राचीनकाल से ही प्राप्त आपके सुख को हम जानते हैं तथा उसकी कामना करते हैं ॥१६ ॥

[सूक्त - ७६]

[ऋषि - कुरुसुति काण्व । देवता - इन्द्र । छन्द - गायत्री ।]

७३४९. **इमं नु मायिनं हुव इन्द्रमीशानमोजसा । मरुत्वन्तं न वृञ्जसे ॥१ ॥**

जो इन्द्रदेव विवेकपूर्वक अपनी सामर्थ्य के द्वारा सबको नियन्त्रित करते हैं । उन मरुत्वान् इन्द्रदेव का हम रिपुओं का संहार करने के लिए आवाहन करते हैं ॥१ ॥

७३५०. **अयमिन्द्रो मरुत्सखा वि वृत्रस्याभिनच्छिरः । वज्रेण शतपर्वणा ॥२ ॥**

इन इन्द्रदेव ने मरुद्गणों के साथ मिलकर, सैकड़ों पर्वों वाले (गाँठों वाले) वज्र का प्रहार करके वृत्र के सिर को विदीर्ण किया ॥२ ॥



७३५१. **वावृधानो मरुत्सखेन्द्रो वि वृत्रमैरयत्। सृजन्त्समुद्रिया अपः ॥३ ॥**

उन इन्द्रदेव ने मरुतों की सहायता से वृत्र का संहार करके अन्तरिक्ष में स्थित जल को प्रवाहित किया ॥३ ॥

७३५२. **अयं ह येन वा इदं स्वर्मरुत्वता जितम्। इन्द्रेण सोमपीतये ॥४ ॥**

जिन्होंने मरुतों के सहयोग से सोमपान करने के लिए, स्वर्ग को भी जीत लिया था; ये वही इन्द्रदेव हैं ॥४ ॥

७३५३. **मरुत्वन्तमृजीषिणमोजस्वन्तं विरप्शिनम्। इन्द्रं गीर्भिर्हवामहे ॥५ ॥**

हम उन मरुत्वान् इन्द्रदेव को अपनी प्रार्थनाओं द्वारा आहूत करते हैं, जो अत्यन्त ओजस्वी तथा महान् हैं ॥५ ॥

७३५४. **इन्द्रं प्रत्नेन मन्मना मरुत्वन्तं हवामहे। अस्य सोमस्य पीतये ॥६ ॥**

उन मरुत्वान् इन्द्रदेव का, हम अपनी पुरातन स्तुतियों द्वारा, सोमपान के निमित्त आवाहन करते हैं ॥६ ॥

७३५५. **मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्वः पिबा सोमं शतक्रतो। अस्मिन्यज्ञे पुरुष्टुत ॥७ ॥**

हर्ष की वर्षा करने वाले हे मरुत्वान् इन्द्रदेव ! आप सैकड़ों यज्ञादि सत्कर्म करने वाले हैं। अत: आप इस यज्ञ में (पधारकर) सोमरस का पान करें ॥७ ॥

७३५६. **तुभ्येदिन्द्र मरुत्वते सुताः सोमासो अद्रिवः। हृदा हूयन्त उक्थिनः ॥८ ॥**

वज्र धारण करने वाले हे मरुत्वान् इन्द्रदेव ! जिन स्तोताओं ने आपके निमित्त सोमरस संस्कारित किया है, वे श्रद्धापूर्वक अन्त:करण से आपका आवाहन करते हैं ॥८ ॥

७३५७. **पिबेदिन्द्र मरुत्सखा सुतं सोमं दिविष्टिषु। वज्रं शिशान ओजसा ॥९ ॥**

मरुतों के सखा हे इन्द्रदेव ! आप हमारे स्वर्ग प्रदायक यज्ञों में सोमपान करके, अपनी शक्ति के द्वारा वज्र की धार को तीक्ष्ण बनाएँ ॥९ ॥

७३५८. **उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रे अवेपयः। सोममिन्द्र चमू सुतम् ॥१० ॥**

हे इन्द्रदेव ! पात्र में रखे हुए सोमरस को ग्रहण करें तथा सामर्थ्यशाली होकर उठें और अपनी ठोड़ी (जबड़ों) को चलाएँ ॥१० ॥

७३५९. **अनु त्वा रोदसी उभे क्रक्षमाणमकृपेताम्। इन्द्र यद्दस्युहाभवः ॥११ ॥**

शत्रुओं के प्रति स्पर्धा का भाव रखने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा शत्रुओं का नाश किये जाने पर द्युलोक एवं पृथ्वीलोक दोनों ही आनन्द को प्राप्त करते हैं ॥११ ॥

७३६०. **वाचमष्टापदीमहं नवस्रक्तिमृतस्पृशम्। इन्द्रात् परि तन्वं ममे ॥१२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! सत्य को बढ़ाने वाली, नवीन कल्पनाओं वाली तथा आठ पदों वाली, आपकी हम छोटी-सी स्तुति करते हैं ॥१२ ॥

[सूक्त - ७७]

[**ऋषि** - कुरुसुति काण्व। **देवता** - इन्द्र। **छन्द** - गायत्री, १० - ११ प्रगाथ (समा बृहती, विषमा सतो बृहती)।]

७३६१. **जज्ञानो नु शतक्रतुर्वि पृच्छदिति मातरम्। क उग्राः के ह शृण्विरे ॥१ ॥**

पैदा होते ही शतक्रतु (इन्द्रदेव) ने अपनी माता से पूछा कि कौन-कौन से विख्यात योद्धा हैं ? ॥१ ॥



७३६२. आदीं शवस्यब्रवीदौर्णवाभमहीशुवम्। ते पुत्र सन्तु निष्टुरः ॥२ ॥

इसके बाद शक्तिशाली माता ने जवाब दिया कि हे वत्स ! 'और्णवाभ' तथा 'अहीशुव' नामक राक्षस हैं जिनका आपके द्वारा वध किया जाना चाहिए ॥२ ॥

[और्णवाभ (ऊन की तरह) तथा अहीशुव (अजगर की तरह) यह सम्बोधन मेघों के लिए भी प्रयुक्त होते हैं ।]

७३६३. समित्तान्वृत्रहाखिदत्खे अराँ इव खेदया। प्रवृद्धो दस्युहाभवत् ॥३ ॥

उसके बाद वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ने रथ में अरों को बाँधने के सदृश, उन राक्षसों रस्से से कस कर बाँध दिया। तब दस्युहन्ता इन्द्रदेव ने अपना विस्तार किया ॥३ ॥

७३६४. एकया प्रतिधापिबत्साकं सरांसि त्रिंशतम्। इन्द्रः सोमस्य काणुका ॥४ ॥

उन इन्द्रदेव ने सोमरस से परिपूर्ण तीस पात्रों का एक साथ ही पान कर लिया ॥४ ॥

७३६५. अभि गन्धर्वमतृणदबुध्नेषु रजः स्वा। इन्द्रो ब्रह्मभ्य इद्वृधे ॥५ ॥

उन इन्द्रदेव ने विद्वानों को समृद्ध करने के लिए आकाश में स्थित आधाररहित मेघों को विदीर्ण किया ॥५ ॥

७३६६. निराविध्यद् गिरिभ्य आ धारयत्पक्वमोदनम्। इन्द्रो बुन्दं स्वाततम् ॥६ ॥

इन्द्रदेव ने अस्त्रों से मेघोंको नष्ट करके जल प्रवाहित किया। इस प्रकार पृथ्वी ने परिपक्व अन्न धारण किया ॥६ ॥

७३६७. शतब्रध्न इषुस्तव सहस्रपर्ण एक इत्। यमिन्द्र चकृषे युजम् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! धनुष में नियोजित होने वाला एक ही बाण है, जिसमें सैकड़ों फल तथा सहस्रों पंख हैं ॥७ ॥

[यज्ञ से उत्पन्न पर्जन्य युक्त प्रवाह अथवा विद्युत् संचार को ही ऐसे बाण की संज्ञा दी जा सकती है।]

७३६८. तेन स्तोतृभ्य आ भर नृभ्यो नारिभ्यो अत्तवे। सद्यो जात ऋभुष्ठिर ॥८ ॥

युद्ध में अविचल रहने वाले हे इन्द्रदेव ! शीघ्र ही प्रकट होकर आप उस बाण की सहायता से पुरुषों, नारियों तथा स्तुति करने वालों के लिए प्रचुर अन्न प्रदान करें ॥८ ॥

७३६९. एता च्यौत्नानि ते कृता वर्षिष्ठानि परीणसा। हृदा वीड्वधारयः ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप इन सेनाओं को अपने अविचल तथा मृदुल अंतःकरण से धारण करें; क्योंकि ये आपके द्वारा संघबद्ध की गई हैं ॥९ ॥

७३७०. विश्वेत्ता विष्णुराभरदुरुक्रमस्त्वेषितः।
शतं महिषान्क्षीरपाकमोदनं वराहमिन्द्र एमुषम् ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रेरणा प्राप्त कर बलशाली विष्णुदेव (पोषण प्रदायक देव) सैकड़ों सामर्थ्यवान् बैल, जल से पूर्ण मेघ, परिपक्व क्षीर तथा समस्त पदार्थों को प्रदान करते हैं ॥१० ॥

[इन्द्र संगठक सत्ता के रूप में है, पोषण का (विष्णु का) कार्य उसके बाद प्रारंभ होता है। पोषण के लिए आवश्यक विष्णु द्वारा प्रदत्त सभी पदार्थ इन्द्र (संगठक सत्ता) द्वारा ही प्रेरित होते हैं।]

७३७१. तुविक्षं ते सुकृतं सूमयं धनुः साधुर्बुन्दो हिरण्ययः।
उभा ते बाहू रण्या सुसंस्कृत ऋदूपे चिदृदूवृधा ॥११ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपका बाण सोने से बना है और आपके दोनों बाहु रिपुओं के विनाशक तथा यज्ञों को समृद्ध करने वाले हैं। आपके धनुष अनेकों बाणों को छोड़ने वाले हैं तथा अच्छे ढंग से निर्मित होने के कारण अत्यधिक हर्षकारी हैं ॥११ ॥



[सूक्त - ७८]

[**ऋषि** - कुरुसुति काण्व । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - गायत्री, १० बृहती) ।]

७३७२. **पुरोळाशं नो अन्धस इन्द्र सहस्रमा भर । शता च शूर गोनाम् ॥१ ॥**

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप सैकड़ों गौओं के समूह, सोमरस तथा श्रेष्ठ आहार के रूप में हजारों पुरोडाश हमारे लिए प्रदान करें ॥१ ॥

७३७३. **आ नो भर व्यञ्जनं गामश्वमभ्यञ्जनम् । सचा मना हिरण्यया ॥२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हमें सुसंस्कृत व्यञ्जन, गौ, अश्व, तेल तथा स्वर्णिम आभूषण प्रदान करें ॥२ ॥

७३७४. **उत नः कर्णशोभना पुरूणि धृष्णवा भर । त्वं हि शृण्विषे वसो ॥३ ॥**

श्रेष्ठ धनों से सम्पन्न, उदार हे इन्द्रदेव ! आप हमारे लिए अनेक प्रकार के कर्णाभूषण आदि प्रदान करें ॥३ ॥

७३७५. **नकीं वृधीक इन्द्र ते न सुषा न सुदा उत । नान्यस्त्वच्छूर वाघतः ॥४ ॥**

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप सबसे महान् हैं । सभी को ऐश्वर्य आदि देने वाले हैं । याजकों को कोई नेतृत्व प्रदान करने वाला भी आपसे भिन्न नहीं है ॥४ ॥

७३७६. **नकीमिन्द्रो निकर्तवे न शक्रः परिशक्तवे । विश्वं शृणोति पश्यति ॥५ ॥**

उन बलशाली इन्द्रदेव को कोई परास्त नहीं कर सकता और न ही कोई उनको नष्ट कर सकता है । वे समस्त पदार्थों को देखने-सुनने वाले हैं ॥५ ॥

७३७७. **स मन्युं मर्त्यानामदब्धो नि चिकीषते । पुरा निदश्चिकीषते ॥६ ॥**

किसी भी व्यक्ति द्वारा पराभूत न होने वाले इन्द्रदेव, पापी लोगों के निकृष्ट क्रोध को निन्दा करने के पहले ही शान्त कर देते हैं ॥६ ॥

७३७८. **क्रत्व इत्पूर्णमुदरं तुरस्यास्ति विधतः । वृत्रघ्नः सोमपाव्नः ॥७ ॥**

वे कर्मशील इन्द्रदेव, वृत्र का संहार करने वाले हैं । वे सोमरस पान करने वाले हैं । मनुष्यों की इच्छाओं को तुरन्त पूर्ण करने वाले इन्द्रदेव का उदर निश्चितरूप से (सोमरस से) परिपूर्ण है ॥७ ॥

७३७९. **त्वे वसूनि सङ्गता विश्वा च सोम सौभगा । सुदात्वपरिह्वृता ॥८ ॥**

हे इन्द्रदेव ! कपटरहित, श्रेष्ठ ऐश्वर्य तथा समस्त सौभाग्य आप में सन्निहित हैं ॥८ ॥

७३८०. **त्वामिद्यवयुर्मम कामो गव्युर्हिरण्ययुः । त्वामश्वयुरेषते ॥९ ॥**

हे इन्द्रदेव ! अन्न, स्वर्ण, गौ तथा अश्वों की कामना करने वाला हमारा मन आपकी ही उपासना करता है ॥९ ॥

७३८१. **तवेदिन्द्राहमाशसा हस्ते दात्रं चना ददे ।**
दिनस्य वा मघवन्त्सम्भृतस्य वा पूर्धि यवस्य काशिना ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं । आपके ही आश्रय में हम अपने हाथ में दराँती (फसल काटने वाला औजार) ग्रहण करते हैं । हमारे द्वारा तैयार किए हुए जौ की मुट्ठी द्वारा हमारे भवनों (भंडारों) को परिपूर्ण करें ॥१० ॥

[इन्द्र की कृपा से कृषि होती है, तभी उसे काट पाते हैं । उसमें से इन्द्र के लिए पुनः मुट्ठी भर अन्न (यज्ञभाग) निकालते हैं । उसी मुट्ठी भर से इन्द्र पर्जन्य वर्षण द्वारा हमें समृद्ध बना देते हैं ।]



[सूक्त - ७९]

[ऋषि - कृत्नु भार्गव । देवता - सोम । छन्द - गायत्री, ९ अनुष्टुप् ।]

७३८२. अयं कृत्नुरगृभीतो विश्वजिदुद्भिदित्सोमः । ऋषिर्विप्रः काव्येन ॥१ ॥

यह सोम समस्त कर्मों के कर्त्ता, सबको जीतने वाले, दूसरों के द्वारा अग्रहणीय तथा विश्वजित् एवं उद्‌भिद नामक सोमयज्ञों को सम्पन्न करने वाले हैं। विद्वान् ऋषि के काव्यों (स्तोत्रों) 'द्वारा' ये स्तुत्य हैं ॥१ ॥

७३८३. अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषक्ति विश्वं यत्तुरम्। प्रेमन्धः ख्यन्निः श्रोणो भूत् ॥२ ॥

(ये सोमदेव) वस्त्रहीनों को आच्छादित करते हैं, रोगियों के समस्त रोगों की चिकित्सा करते हैं, अन्धों को दृष्टि प्रदान करते हैं तथा लँगड़ों को गति प्रदान करते हैं ॥२ ॥

[विद्युत् प्रवाह उपकरण भेद से गर्मी, ठंडक, वर्षा आदि उत्पन्न करने में समर्थ है। स्पष्ट है कि यह सोम प्रकृतिगत ऐसा दिव्य प्रवाह है, जो विद्युत् की तरह विभिन्न रूपों में हितकारी सिद्ध होता है।]

७३८४. त्वं सोम तनूकृद्‌भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यः । उरु यन्तासि वरूथम् ॥३ ॥

हे सोमदेव ! आप, शरीर को कमजोर बनाने वाले (रोगरूपी) रिपुओं से सुरक्षा करने के लिए श्रेष्ठ कवच के समान हैं ॥३ ॥

७३८५. त्वं चित्ती तव दक्षैर्दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन्। यावीरघस्य चिद् द्वेषः ॥४ ॥

हे सरल गति वाले सोमदेव ! आप अपने विवेक तथा कुशलता द्वारा हमारे विनाशकारी रिपुओं को द्यावा-पृथिवी से दूर भगाएँ ॥४ ॥

७३८६. अर्थिनो यन्ति चेदर्थं गच्छानिद्ददुषो रातिम्। ववृज्युस्तृष्यतः कामम् ॥५ ॥

ऐश्वर्य की कामना करने वाले लोग, ऐश्वर्य प्रदाता के पास जाकर अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति कर लेते हैं ॥५ ॥

७३८७. विदद्यत्पूर्व्यं नष्टमुदीमृतायुमीरयत्। प्रेमायुस्तारीदतीर्णम् ॥६ ॥

जब व्यक्ति नष्ट हुई अपनी पुरानी सम्पत्ति को पुनः प्राप्त करते हैं, उस समय वह धन उन्हें यज्ञ करने के लिए प्रेरित करता है, तभी दीर्घायु की प्राप्ति होती है ॥६ ॥

[व्यसनों में नष्ट होने वाली शक्ति एवं सम्पत्ति को तप, संयम, परमार्थ जैसे यज्ञीय प्रयोजनों में लगाने से ही दीर्घायुष्य की प्राप्ति होती है।]

७३८८. सुशेवो नो मृळयाकुरदृप्तक्रतुरवातः । भवा नः सोम शं हृदे ॥७ ॥

हे सोमदेव ! आप हमारे हृदय के लिए हर्षकारी तथा उन्माद को दूर करने वाले हों। आप हमारे वात आदि रोगों को दूरकर हमें शान्ति प्रदान करें ॥७ ॥

७३८९. मा नः सोम सं वीविजो मा वि बीभिषथा राजन्। मा नो हार्दि त्विषा वधीः ॥८ ॥

हे ओजस्वी सोमदेव ! आप अपने ओज से हमें प्रकम्पित तथा भयाक्रान्त न करें। हमारे अन्तःकरण को पीड़ित न होने दें ॥८ ॥

७३९०. अव यत्स्वे सधस्थे देवानां दुर्मतीरीक्षे ।
राजन्नप द्विषः सेध मीढ्वो अप स्रिधः सेध ॥९ ॥

हर्षप्रदायक तथा तेजस्वी हे सोमदेव ! हमारे गृहों में देवताओं का अभिशाप न आए। आप हमारे रिपुओं तथा हिंसा करने वाले मनुष्यों को देखते ही, हमसे दूर भगाएँ ॥९ ॥



[सूक्त - ८०]

[ऋषि - एकद्यू नौधस । देवता - इन्द्र, १० देवगण । छन्द - गायत्री, १० त्रिष्टुप् ।]

७३९१. नह्य१न्यं बळाकरं मर्डितारं शतक्रतो । त्वं न इन्द्र मृळय ॥१ ॥

हे शतक्रतो !हमने आपके अतिरिक्त किसी को सुख देने वाला नहीं माना, अतः आप हमें सुख प्रदान करें ॥१ ॥

७३९२. यो नः शश्वत्पुराविथाऽमृध्रो वाजसातये । स त्वं न इन्द्र मृळय ॥२ ॥

हे अहिंसित इन्द्रदेव ! पहले आपने अन्न प्राप्त करने के लिए हमें संरक्षित किया था । अब आप हमें हर प्रकार से सुख प्रदान करें ॥२ ॥

७३९३. किमङ्ग रध्रचोदनः सुन्वानस्यावितेदसि । कुवित्स्विन्द्र णः शकः ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप धन दाताओं को प्रेरणा देने वाले हैं तथा याज्ञिकों के संरक्षक हैं । अतः आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३ ॥

७३९४. इन्द्र प्र णो रथमव पश्चाच्चित्सन्तमद्रिवः । पुरस्तादेनं मे कृधि ॥४ ॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! हमारे पिछड़े हुए रथ को आप संरक्षित करें तथा उसे आगे लाएँ ॥४ ॥

७३९५. हन्तो नु किमाससे प्रथमं नो रथं कृधि । उपमं वाजयु श्रवः ॥५ ॥

रिपुओं का संहार करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप मौन होकर क्यों बैठे हैं ? आप हमारे रथ को सबसे आगे कर दें; क्योंकि शक्ति प्रदान करने वाला अन्न आपके पास विद्यमान है ॥५ ॥

७३९६. अवा नो वाजयुं रथं सुकरं ते किमित्परि । अस्मान्त्सु जिग्युषस्कृधि ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके लिए सभी कार्य हर तरह से आसान हैं । अन्न से सम्पन्न हमारे रथ का आप संरक्षण करें तथा संग्राम में विजयी बनाएँ ॥६ ॥

७३९७. इन्द्र दृह्यस्व पूरसि भद्रा त एति निष्कृतम् । इयं धीर्ऋत्वियावती ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं, इसलिए आप समृद्ध हों । आप यज्ञ-कर्म को सम्पादित करने वाले हैं । हमारी हितकारी स्तुतियाँ आपके लिए किये गये सत्कर्मों की ओर गमन करती हैं ॥७ ॥

७३९८. मा सीमवद्य आ भागुर्वी काष्ठा हितं धनम् । अपावृक्ता अरत्नयः ॥८ ॥

प्रिय न लगने वाले रिपु, हमारे समीप न आएँ । विराट् रणक्षेत्र में विद्यमान ऐश्वर्य को, वे इन्द्रदेव निन्दकों में वितरित न करें ॥८ ॥

७३९९. तुरीयं नाम यज्ञियं यदा करस्तदुश्मसि । आदित्पतिर्न ओहसे ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके यज्ञ सम्बन्धी चौथे नाम की कामना करते हैं, जिसको आपने स्वयं निर्धारित किया है । आप इसी यज्ञरूप से ही सभी को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥९ ॥

७४००. अवीवृधद्वो अमृता अमन्दीदेकद्यूर्देवा उत याश्च देवीः ।
तस्मा उ राधः कृणुत प्रशस्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥१० ॥

हे देवियो तथा देवताओ ! स्तुतिपूर्वक सोम समर्पित करके हम 'एकद्यू' ऋषि आपको तृप्त करते हैं तथा महानता की वृद्धि करते हैं । आप हमें उत्तम धन प्रदान करें । विवेक द्वारा ऐश्वर्य प्रदान करने वाले इन्द्रदेव उषाकाल में ही पधारें ॥१० ॥



[सूक्त - ८१]

[**ऋषि** - कुसीदी काण्व । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - गायत्री ।]

७४०१. आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय । महाहस्ती दक्षिणेन ॥१ ॥

महान् भुजाओं वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमें न्यायोपार्जित, प्रशंसनीय ऐश्वर्य दाहिने हाथ से प्रदान करें ॥१ ॥

७४०२. विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम् । तुविमात्रमवोभिः ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपको ऐश्वर्यशाली, बहुमुखी पराक्रम प्रकट करने वाले, व्यापक आकारयुक्त संरक्षणकर्त्ता के रूप में जानते हैं ॥२ ॥

७४०३. नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम् । भीमं न गां वारयन्ते ॥३ ॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप बलशाली वृषभ जैसे हैं । दान देने में प्रवृत्त आपको देवता या मनुष्य, कोई भी नहीं डिगा सकता ॥३ ॥

७४०४. एतो न्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्वः स्वराजम् । न राधसा मर्धिषन्नः ॥४ ॥

हे स्तोताओ ! ऐश्वर्य के स्वामी तथा स्वयं प्रकाशित होने वाले इन्द्रदेव की; हम यहाँ उपस्थित होकर प्रार्थना करें; जिससे ऐश्वर्य के क्षेत्र में हमारी प्रतिद्वन्द्विता करने वाला कोई अन्य न रहे ॥४ ॥

७४०५. प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत्साम गीयमानम् । अभि राधसा जुगुरत् ॥५ ॥

हे स्तोताओ ! वे इन्द्रदेव इन स्तोत्रों की प्रशंसा करें, छन्दों को जानें तथा गाने योग्य सामगान का श्रवण करें । वे ऐश्वर्य प्रदान करके हमारे ऊपर अनुकम्पा करें ॥५ ॥

७४०६. आ नो भर दक्षिणेनाभि सव्येन प्र मृश । इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने दोनों हाथों द्वारा हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । हमें धन से वंचित न करें ॥६ ॥

७४०७. उप क्रमस्वा भर धृषता धृष्णो जनानाम् । अदाशूष्टरस्य वेदः ॥७ ॥

रिपुओं के संहारक हे इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए गमन करें । अपनी शक्ति द्वारा स्वार्थी मनुष्यों के ऐश्वर्य का अपहरण करके हमें (यज्ञार्थ) प्रदान करें ॥७ ॥

७४०८. इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः । अस्माभिः सु तं सनुहि ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव !विप्रों के बीच में वितरित करने योग्य जो आपकी सम्पत्ति है, उसे हमारे बीच में भी वितरित करें ॥८ ॥

७४०९. सद्योजुवस्ते वाजा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः । वशैश्च मक्षू जरन्ते ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपका ऐश्वर्य सबको शीतलता देने वाला तथा तत्काल प्राप्त होने वाला है । आप उस ऐश्वर्य को हमें तथा अपने अधीन रहने वाले दूसरे लोगों को प्रदान करें ॥९ ॥

[सूक्त - ८२]

[**ऋषि** - कुसीदी काण्व । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - गायत्री ।]

७४१०. आ प्र द्रव परावतोऽर्वावतश्च वृत्रहन् । मध्वः प्रति प्रभर्मणि ॥१ ॥

हे वृत्र-संहारक इन्द्रदेव ! आप चाहे दूर हों या पास, हमारे यज्ञ मण्डप में (मधुर) सोमरस को पीने के लिए अवश्य पधारें ॥१ ॥



७४११. तीव्राः सोमास आ गहि सुतासो मादयिष्णवः । पिबा दधृग्यथोचिषे ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव !आनन्ददायी सोम अभिषुत किया गया है, अत: आप यहाँ तीव्र गति से पधारकर सोमपान करें ॥२॥

७४१२. इषा मन्दस्वादु तेऽरं वराय मन्यवे । भुवत्त इन्द्र शं हृदे ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमरूप अन्न से हर्षित हों तथा वह आपके हृदय के लिए हर्षकारी हो । सेवन करने के बाद वह आपके हृदय में मन्यु पैदा करे ॥३ ॥

७४१३. आ त्वशत्रवा गहि न्यु१क्थानि च हूयसे । उपमे रोचने दिवः ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप रिपुओं से रहित हैं । आप तेज से सम्पन्न हैं । आप यज्ञों में स्तुतियों द्वारा आहूत किये जाते हैं । इसलिए दिव्यलोक से आप यहाँ पधारें ॥४ ॥

७४१४. तुभ्यायमद्रिभिः सुतो गोभिः श्रीतो मदाय कम् । प्र सोम इन्द्र हूयते ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! पत्थरों द्वारा कूटकर अभिषुत किये गये सोमरस को हम गोदुग्ध में मिलाकर आपकी प्रसन्नता के लिए आपको प्रदान करते हैं ॥५ ॥

७४१५. इन्द्र श्रुधि सु मे हवमस्मे सुतस्य गोमतः । वि पीतिं तृप्तिमश्नुहि ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे आवाहन का भली प्रकार श्रवण करें । हमारे द्वारा समर्पित, गो-दुग्ध मिलाए हुए अभिषुत सोमरस को पीकर, आप आनन्दित हों ॥६ ॥

७४१६. य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥७ ॥

हे सामर्थ्यशाली इन्द्रदेव ! आपके लिए शुद्ध सोमरस चमस (छोटे-बड़े) पात्रों में भरकर रखा हुआ है । आप इस दिव्य रस का पान करें ॥७ ॥

७४१७. यो अप्सु चन्द्रमा इव सोमश्चमूषु ददृशे । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष (या जल) में चन्द्रमा के सदृश प्रतीत होने वाले ग्रहों में विद्यमान सोमरस के आप स्वामी हैं । इसलिए आप इसका पान करें ॥८ ॥

७४१८. यं ते श्येनः पदाभरत्तिरो रजांस्यस्पृतम् । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! श्येन (प्रशंसनीय) पक्षी ने आपके लिए अस्पृष्ट (जिसे किसी ने उपयोग के लिए छुआ भी नहीं है) सोमरस को स्वर्ग से ला दिया है । अस्तु , पदों (दोनों सवनों) में आप इस सोम का पान करें ॥९ ॥

[तैत्तिरीय संहिता ६ .१ .६ .४ के अनुसार आद्यशक्ति गायत्री दिव्य लोकों से पक्षीरूप में आकाशमार्ग से, दिव्य सोम को लायीं । उससे इन्द्रादि देवता पुष्ट हुए । ऋषि आग्रह करते हैं कि प्रातः एवं सायंकालीन संध्या (वन्दन) के समय इस दिव्य सोम का पान देवगण एवं साधकगण करें ।]

[सूक्त - ८३]

[**ऋषि** - कुसीदी काण्व । **देवता** - विश्वेदेवा । **छन्द** - गायत्री ।]

७४१९. देवानामिदवो महत्तदा वृणीमहे वयम् । वृष्णामस्मभ्यमूतये ॥१ ॥

हे बलशाली देवो ! हम अपनी रक्षा के लिए आपके महिमामय संरक्षण की याचना करते हैं ॥१ ॥

७४२०. ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा । वृधासश्च प्रचेतसः ॥२ ॥

मित्र, वरुण और अर्यमा देवता सदैव हमारे सहायक बनें । वे धन की अभिवृद्धि करने वाले बनें ॥२ ॥



७४२१. **अति नो विष्पिता पुरु नौभिरपो न पर्षथ। यूयमृतस्य रथ्यः ॥३ ॥**

यज्ञों में अग्रणी हे देवो ! जिस प्रकार सरिताओं को नावों द्वारा पार किया जाता है, उसी प्रकार आप हमें अनेकों विपत्तियों से पार करें ॥३ ॥

७४२२. **वामं नो अस्त्वर्यमन्वामं वरुण शंस्यम्। वामं ह्यावृणीमहे ॥४ ॥**

हे वरुणदेव तथा अर्यमादेव ! हम आपसे श्रेष्ठ ऐश्वर्य की याचना करते हैं; आपके द्वारा हमें श्रेष्ठ तथा सराहनीय ऐश्वर्य प्राप्त हो ॥४ ॥

७४२३. **वामस्य हि प्रचेतस ईशानासो रिशादसः। नेमादित्या अघस्य यत् ॥५ ॥**

रिपुओं के संहारक, विद्वान् हे देवताओ ! आप श्रेष्ठ ऐश्वर्यों के अधिष्ठाता हैं। हे आदित्यगण ! दुष्कर्मियों के पास विद्यमान ऐश्वर्य को हमें प्रदान करें ॥५ ॥

७४२४. **वयमिद्वः सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ना। देवा वृधाय हूमहे ॥६ ॥**

हे श्रेष्ठ दानी देवो !हम घर में हों अथवा रास्ते में हों, अपनी प्रगति के लिए आपका ही आवाहन करते हैं ॥६ ॥

७४२५. **अधि न इन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम्। इता मरुतो अश्विना ॥७ ॥**

हे इन्द्रदेव,मरुत्देव, विष्णुदेव तथा अश्विनीकुमारो !अपने परिजनों के मध्य में आप हमें सर्वश्रेष्ठ बनाएँ ॥७ ॥

७४२६. **प्र भ्रातृत्वं सुदानवोऽध द्विता समान्या। मातुर्गर्भे भरामहे ॥८ ॥**

हे श्रेष्ठ दानी देवताओ ! माँ के गर्भ में, समानता से तथा भ्रातृ-भाव सहित दो प्रकार से रहने वाले (अथवा दो-दो करके जन्म लेने वाले) आपका हम (स्तोतागण) वर्णन करते हैं ॥८ ॥

७४२७. **यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः। अधा चिद्व उत ब्रुवे ॥९ ॥**

हे श्रेष्ठ दानी देवताओ ! आप सब ओज से सम्पन्न हैं। आप इन्द्रदेव को अपने से ज्येष्ठ स्वीकार करते हैं; इसलिए हम आपकी प्रार्थना करते हैं ॥९ ॥

[सूक्त - ८४]

[**ऋषि** - उशना काण्व। **देवता** - अग्नि। **छन्द** - गायत्री।]

७४२८. **प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्। अग्निं रथं न वेद्यम् ॥१ ॥**

हे अग्ने ! उपासकों की अभिलाषा पूरी करने वाले, सदा सब पर कृपा करने वाले, मित्र के समान व्यवहार करने वाले आप हमारी प्रार्थना से प्रसन्न हों ॥१ ॥

७४२९. **कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अध द्विता। नि मर्त्येष्वादधुः ॥२ ॥**

देवो ने प्रशंसनीय ज्ञानियों की भाँति अग्नि को दोनों रूपों में मनुष्यों के बीच स्थापित किया ॥२ ॥

७४३०. **त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः। रक्षा तोकमुत त्मना ॥३ ॥**

सदा युवा (अजर) रहने वाले हे अग्ने ! आप दानशीलों की रक्षा के लिए उनकी स्तुतियों पर ध्यान दें। अपने पुत्रों की रक्षा के लिए प्रयत्नशील हों ॥३ ॥

७४३१. **कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम्। वराय देव मन्यवे ॥४ ॥**

हे अग्निदेव ! आप अंगिरा (अंगों में रस संचरित करने वाले) एवं ऊर्जा न गिरने देने वाले हैं। वरण योग्य और विरोधियों को पीड़ित करने वाले आपकी हम किस वाणी से स्तुति करें ? ॥४ ॥



७४३२. दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो । कदु वोच इदं नमः ॥५ ॥

(अरणि मंथन रूप) पुरुषार्थ से उत्पन्न हे अग्ने ! किस यजमान के यजन कर्म द्वारा हम आपके निमित्त आहुति अर्पित करें । ये हवि (अथवा ये स्तुतियाँ) आपको प्राप्त हों, ऐसी प्रार्थना हम कब करें ? ॥५ ॥

७४३३. अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितीः । वाजद्रविणसो गिरः ॥६ ॥

हे अग्ने ! आपकी हम पर ऐसी कृपा हो, जिससे अपनी स्तुतियों के प्रभाव से हम श्रेष्ठ स्थानों के अधिपति और श्रेष्ठ पोषक धन-धान्य से युक्त हो जाएँ ॥६ ॥

७४३४. कस्य नूनं परीणसो धियो जिन्वसि दम्पते । गोषाता यस्य ते गिरः ॥७ ॥

हे सत्य के रक्षक अग्ने ! आप किस प्रकार की बुद्धि (स्तुतियों) से प्रसन्न होते हैं ? आपकी किस प्रकार से और कौन सी स्तुतियाँ करके ज्ञान का साक्षात्कार हो सकता है ? ॥७ ॥

७४३५. तं मर्जयन्त सुक्रतुं पुरोयावानमाजिषु । स्वेषु क्षयेषु वाजिनम् ॥८ ॥

जो अग्निदेव सत्कर्म करने वाले हैं तथा युद्ध में रिपुओं का संहार करने के लिए आगे बढ़ने वाले हैं, ऐसे शक्तिशाली अग्निदेव को लोग अपने गृहों में स्थापित करके उनकी उपासना करते हैं ॥८ ॥

७४३६. क्षेति क्षेमेभिः साधुभिर्नकिर्यं घ्नन्ति हन्ति यः । अग्ने सुवीर एधते ॥९ ॥

हे अग्निदेव ! जो व्यक्ति आपके द्वारा संरक्षित होकर अपने घरों में सज्जनों के साथ निवास करते हैं, उनका संहार कोई रिपु नहीं कर सकता । वे अपने रिपुओं का संहार करते हुए श्रेष्ठ सन्तानों से समृद्ध होते हैं ॥९ ॥

[सूक्त - ८५]

[ऋषि - कृष्ण आङ्गिरस । देवता - अश्विनीकुमार । छन्द - गायत्री ।]

७४३७. आ मे हवं नासत्याश्विना गच्छतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥१ ॥

सत्यपालक हे अश्विनीकुमारो !आप हमारे आवाहन को सुनकर मधुर सोमरस पान करने के निमित्त पधारें ॥१॥

७४३८. इमं मे स्तोममश्विनेमं मे शृणुतं हवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! मीठे सोमरस का पान करने के निमित्त आप हमारे आवाहन तथा स्तोत्रों को सुनें ॥२ ॥

७४३९. अयं वां कृष्णो अश्विना हवते वाजिनीवसू । मध्वः सोमस्य पीतये ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप अन्नरूप ऐश्वर्य से युक्त हैं । हम 'कृष्ण' ऋषि मधुर सोमरस पान के निमित्त आपका आवाहन करते हैं ॥३ ॥

७४४०. शृणुतं जरितुर्हवं कृष्णस्य स्तुवतो नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो !स्तुति करने वाले हम, 'कृष्ण' ऋषि के आवाहन को आप मीठे सोमपान के निमित्त सुनें ॥४ ॥

७४४१. छर्दिर्यन्तमदाभ्यं विप्राय स्तुवते नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ॥५ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! मधुर सोमपान के निमित्त आप विद्वान् स्तोताओं को नष्ट न होने वाला आवास प्रदान करें ॥५ ॥

७४४२. गच्छतं दाशुषो गृहमित्था स्तुवतो अश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ॥६ ॥

हे अश्विनीकुमारो !मधुर सोमपानं के निमित्त, आप आहुति प्रदान करने वाले याज्ञिक के घर पधारें ॥६ ॥

७४४३. युञ्जाथां रासभं रथे वीड्वङ्गे वृषण्वसू । मध्वः सोमस्य पीतये ॥७ ॥



हे अश्विनीकुमारो ! आप ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं । मजबूत रथ में आवाज करने वाले अश्वों को आप मीठे सोमरस पीने के निमित्त नियोजित करें ॥७ ॥

७४४४. त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेना यातमश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ॥८ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! तिकोने आकार के तीन फलकों वाले रथ द्वारा मधुर सोमपान के निमित्त आप पधारें ॥८ ॥

७४४५. नू मे गिरो नासत्याश्विना प्रावतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥९ ॥

सत्यपालक हे अश्विनीकुमारो ! आप मधुर सोमपान करने के निमित्त हमारी स्तुतियों का श्रवण करें ॥९ ॥

[सूक्त - ८६]

[**ऋषि** - कृष्ण आङ्गिरस अथवा विश्वक कार्ष्णि । **देवता** - अश्विनीकुमार । **छन्द** - जगती ।]

७४४६. उभा हि दस्रा भिषजा मयोभुवोभा दक्षस्य वचसो बभूवथुः ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥१ ॥

देखने योग्य हे अश्वनीकुमारो ! आप हर्षप्रदायक भेषज रूप हैं तथा कुशलतापूर्वक किये गये स्तुति वचनों के योग्य हैं । अपने शारीरिक संरक्षण के निमित्त हम 'विश्वक' ऋषि आपका आवाहन करते हैं । आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें ॥१ ॥

७४४७. कथा नूनं वां विमना उप स्तवद्युवं धियं ददथुर्वस्य इष्टये ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥२ ॥

हे अश्वनीकुमारो ! 'विमना' ऋषि ने पुरातन काल में आपकी किस प्रकार स्तुति की थी ? उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए आपने 'विमना' को विवेक प्रदान किया है । शारीरिक संरक्षण के निमित्त हम 'विश्वक' ऋषि आपका आवाहन करते हैं । आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें ॥२ ॥

७४४८. युवं हि ष्मा पुरुभुजेममेधतुं विष्णाप्वे ददथुर्वस्य इष्टये ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥३ ॥

अनेकों का पालन करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! विष्णु आदि की अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिए आपने उन्हें ऐश्वर्य प्रदान किया था; इसलिए शारीरिक संरक्षण के निमित्त हम 'विश्वक' ऋषि आपका आवाहन करते हैं । आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें ॥३ ॥

७४४९. उत त्यं वीरं धनसामृजीषिणं दूरे चित्सन्तमवसे हवामहे ।
यस्य स्वादिष्ठा सुमतिः पितुर्यथा मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप ऐश्वर्य का दान करने वाले तथा सोमरस पान करने वाले हैं । आप अपनी श्रेष्ठ बुद्धि द्वारा पिता के सदृश हमारा पालन करने वाले हैं । हम अपने संरक्षण के निमित्त, दूर देश में रहने पर भी आपका आवाहन करते हैं । आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें ॥४ ॥

७४५०. ऋतेन देवः सविता शमायत ऋतस्य शृङ्गमुर्विया वि पप्रथे ।
ऋतं सासाह महि चित्पृतन्यतो मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥५ ॥

ऋत के द्वारा आदित्य अपनी रश्मियों को बटोरते हैं तथा ऋत के द्वारा वे पुनः रश्मियों को फैलाते हैं । विशाल सेनायुक्त रिपुओं को वे परास्त करते हैं । वे हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें ॥५ ॥





[सूक्त - ८७]

[**ऋषि** - कृष्ण आङ्गिरस अथवा द्युम्नीक वासिष्ठ अथवा प्रियमेध आङ्गिरस । **देवता** - अश्विनीकुमार । **छन्द** - प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) ।]

७४५१. **द्युम्नी वां स्तोमो अश्विना क्रिविर्न सेक आ गतम् ।**
मध्वः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा पातं गौराविवेरिणे ॥१ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार बरसात में जलकुण्ड भरा रहता है, उसी प्रकार आप हमारी स्तुतियों द्वारा परिपूर्ण होकर पधारें । जैसे हिरण जलकुण्ड में पानी पीते हैं, उसी प्रकार आप 'द्युम्नीक' ऋषि द्वारा अभिषुत किये गये आनन्ददायक सोमरस का पान करें ॥१ ॥

७४५२. **पिबतं घर्मं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं नरा ।**
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ नि पातं वेदसा वयः ॥२ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हम मनुष्यों के द्वारा तैयार किये गये यज्ञ मण्डप में पधारकर कुश-आसन पर आसीन हों । आप मधुर सोमरस का पान करके आनन्दित हों । अपने ऐश्वर्य के द्वारा आप हमारे आयुष्य (जीवन) का संरक्षण करें ॥२ ॥

७४५३. **आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।**
ता वर्तिर्यातमुप वृक्तबर्हिषो जुष्टं यज्ञं दिविष्टिषु ॥३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम 'प्रियमेध' ऋषि समस्त रक्षण-साधनों सहित आपका आवाहन करते हैं । हम अपने यज्ञमण्डप में कुश-आशन बिछाकर तैयार किये हैं, अतः आप दोनों पधारकर हमारी श्रेष्ठ आहुतियों को ग्रहण करें ॥३ ॥

७४५४. **पिबतं सोमं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं सुमत् ।**
ता वावृधाना उप सुष्टुतिं दिवो गन्तं गौराविवेरिणम् ॥४ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार हिरण जलकुण्ड के पास जाते हैं, उसी प्रकार आप हमारी प्रार्थनाओं द्वारा तृप्त हों । आप दिव्य लोक में पधारकर सुखदायक आसन ग्रहण करें तथा मधुर सोमरस का पान करें ॥४ ॥

७४५५. **आ नूनं यातमश्विनाश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।**
दस्रा हिरण्यवर्तनी शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ॥५ ॥

सत्पात्रों का पालन करने वाले तथा ऋत (यज्ञ) का संवर्धन करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप स्वर्णिम रथ से सम्पन्न हैं तथा रिपुओं का विनाश करने वाले हैं । आप अपने तेजस्वी अश्वों द्वारा पधारकर सोमरस का पान करें ॥५ ॥

७४५६. **वयं हि वां हवामहे विपन्यवो विप्रासो वाजसातये ।**
ता वल्गू दस्रा पुरुदंससा धियाश्विना श्रुष्ट्या गतम् ॥६ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम प्रार्थना करने वाले विप्र लोग अन्न वितरण के निमित्त आपका आवाहन करते हैं । आप विभिन्न कर्म करने वाले तथा रिपुओं का विनाश करने वाले हैं । श्रेष्ठ सौन्दर्ययुक्त तथा विवेकवान् , आप दोनों शीघ्र पधारें ॥६ ॥



[सूक्त - ८८]

[**ऋषि** - नोधा गौतम । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) ।]

७४५७. **तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।**
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥१ ॥

हे ऋत्विजो ! शत्रुओं से रक्षा करने वाले, तेजस्वी सोमरस से तृप्त होने वाले इन्द्रदेव की हम उसी प्रकार स्तुति करते हैं, जैसे गोशाला में अपने बछड़ों के पास जाने के लिए गौएँ उल्लसित रहती हैं ॥१ ॥

७४५८. **द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।**
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ॥२ ॥

देवलोकवासी , उत्तम दानदाता, सामर्थ्यवान् इन्द्रदेव से हम सब प्रकार के ऐश्वर्य , सैकड़ों गौएँ तथा पोषक अन्न की कामना करते हैं ॥२ ॥

७४५९. **न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीळवः ।**
यद्दित्ससि स्तुवते मावते वसु नकिष्टदा मिनाति ते ॥३ ॥

विशाल, स्थिर पर्वत के समान, कर्त्तव्यपथ से विचलित न होने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदान किया गया वैभव हम यजमानों को निरन्तर प्राप्त होता रहे ॥३ ॥

७४६०. **योद्धासि क्रत्वा शवसोत दंसना विश्वा जाताभि मज्मना ।**
आ त्वायमर्क ऊतये ववर्तति यं गोतमा अजीजनन् ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव !आप अपने कर्म और सामर्थ्य के द्वारा वीर कहलाते हैं तथा समस्त जीवों को नियन्त्रित करते हैं । अपनी सुरक्षा के लिए हम आपको बार-बार बुलाते हैं । आपको गौतमवंशियों ने उत्पन्न किया है ॥४ ॥

७४६१. **प्र हि रिरिक्ष ओजसा दिवो अन्तेभ्यस्परि ।**
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमनु स्वधां ववक्षिथ ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने ओज से, द्युलोक से परे भी प्रतिष्ठित हैं । भू-मण्डल का तेज भी आपको व्याप्त नहीं कर सकता । आप (हमारे लिए) स्वधा (तृप्तिदायक अन्न) लाएँ ॥५ ॥

७४६२. **नकिः परिष्टिर्मघवन्मघस्य ते यद्दाशुषे दशस्यसि ।**
अस्माकं बोध्युचथस्य चोदिता मंहिष्ठो वाजसातये ॥६ ॥

हे मघवन् (धनवान्) इन्द्रदेव ! जब आप दाताओं को धन प्रदान करना चाहते हैं, तो उसे रोकने वाला कोई नहीं होता । स्तोताओं के लिए धन के प्रेरक, सर्वश्रेष्ठ दाता आप, हमारे-उचथ के-स्तोत्रों को जानें ॥६ ॥

[सूक्त - ८९]

[**ऋषि** - नृमेध आङ्गिरस और पुरुमेध आङ्गिरस । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - १-४ प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) , ५-६ अनुष्टुप् , ७ बृहती ।]

७४६३. **बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।**
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥१ ॥



यज्ञ के संवर्धक हे मरुतो ! जिस सोम के द्वारा समस्त देवताओं ने इन्द्रदेव को जाग्रत् तथा ज्योति-सम्पन्न किया था; रिपुओं का संहार करने वाले उस 'बृहत् साम' का आप सब, देवराज इन्द्रदेव के निमित्त गान करें ॥१ ॥

७४६४. **अपाधमदभिशस्तीरशस्तिहाथेन्द्रो द्युम्न्याभवत् ।**
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण ॥२ ॥

अत्यधिक तेज से सम्पन्न हे मरुतो ! वे इन्द्रदेव समस्त हिंसक रिपुओं तथा दुष्कर्मियों का संहार करने वाले हैं। इसी कारण वे ओजस्वी हुए। हे इन्द्रदेव ! समस्त देवता, मित्रता के निमित्त आपके समीप पहुँचते हैं ॥२ ॥

७४६५. **प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।**
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥३ ॥

हे मरुतो ! महान् इन्द्रदेव के लिए स्तुतियाँ अर्पित करें । वे शतकर्मा सैकड़ों पर्वों (ग्रन्थियों) वाले वज्र से वृत्र को मारने वाले हैं ॥३ ॥

७४६६. **अभि प्र भर धृषता धृषन्मनः श्रवश्चित्ते असद् बृहत् ।**
अर्षन्त्वापो जवसा वि मातरो हनो वृत्रं जया स्वः ॥४ ॥

सुदृढ़ मानस वाले हे इन्द्रदेव ! समस्त श्रेष्ठ अन्न आपके ही हैं । अपने बलशाली मानस द्वारा आप हमें उस अन्न से परिपूर्ण करें । आप मातृभूत जलधारा को वेग से प्रवाहित करें । हे इन्द्रदेव ! आप वृत्र का संहार करें तथा जल को जीत लें ॥४ ॥

७४६७. **यज्जायथा अपूर्व्य मघवन्वृत्रहत्याय ।**
तत्पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उत द्याम् ॥५ ॥

हे अद्भुत वैभवशाली इन्द्रदेव ! आपने वृत्र (असुरता) का संहार करने के लिए प्रकट होकर पृथ्वी को विस्तृत करने के साथ-साथ द्युलोक को भी स्थिर किया ॥५ ॥

७४६८. **तत्ते यज्ञो अजायत तदर्क उत हस्कृतिः ।**
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम् ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके प्राकट्य काल से ही श्रेष्ठ यज्ञ-कर्मों की उत्पत्ति हुई तथा दिन के नियामक सूर्यदेव स्थापित हुए। उत्पन्न हुए तथा आगे उत्पन्न होने वाले सभी प्राणी आपके द्वारा अभिभूत (संव्याप्त) हैं ॥६ ॥

७४६९. **आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि ।**
घर्मं न सामन्तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अपरिपक्व (गौ या पृथ्वी) से परिपक्व (दूध या पोषण पदार्थ) उत्पन्न किया तथा आकाश में सूर्यदेव को स्थापित किया । जिस प्रकार याजक यज्ञ (अग्नि) को प्रकट करते हैं, उसी प्रकार उक्त स्तुतियों से इन्द्रदेव में हर्ष -उल्लास की वृद्धि होती है । हे स्तोताओ ! स्तुत्य, इन्द्रदेव की प्रसन्नता के लिए 'बृहत् साम' का गान करो ॥७ ॥



[सूक्त- ९०]

[**ऋषि** - नृमेध आङ्गिरस और पुरुमेध आङ्गिरस । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - प्रगाथ (विषमा बृहती, समा सतोबृहती) ।]

७४७०. **आ नो विश्वासु हव्य इन्द्रः समत्सु भूषतु ।**
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहा परमज्या ऋचीषमः ॥१ ॥

संग्राम में रक्षा के लिए बुलाने योग्य, वृत्रहन्ता, धनुष की श्रेष्ठ प्रत्यंचा के समान, उत्तम मंत्रों से स्तुत्य हे इन्द्रदेव ! हमारे (तीनों) सवनों एवं स्तोत्रों को आप सुशोभित करें ॥१ ॥

७४७१. **त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।**
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप सर्वप्रथम धनदाता हैं । ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । आपसे हम पराक्रमी एवं श्रेष्ठ सन्तानों की कामना करते हैं ॥२ ॥

७४७२. **ब्रह्मा त इन्द्र गिर्वणः क्रियन्ते अनतिद्भुता ।**
इमा जुषस्व हर्यश्व योजनेन्द्र या ते अमन्महि ॥३ ॥

प्रार्थनीय तथा अश्ववान् हे इन्द्रदेव ! आप हमारे सत्यरूप स्तोत्रों द्वारा सुसंगत होकर उनको ग्रहण करें तथा अन्यों के द्वारा बोले गये मन्त्रों का भी सेवन करें ॥३ ॥

७४७३. **त्वं हि सत्यो मघवन्ननानतो वृत्रा भूरि न्यृञ्जसे ।**
स त्वं शविष्ठ वज्रहस्त दाशुषेऽर्वाञ्चं रयिमा कृधि ॥४ ॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप अनेकों वृत्रों (असुरों) का संहार करने वाले हैं तथा यथार्थ रूप में किसी के अधीन न होने वाले हैं । आप अत्यन्त शक्तिशाली तथा अपने हाथ में वज्र धारण करने वाले हैं । आप आहुति प्रदान करने वाले याजकों की ओर ऐश्वर्य प्रेषित करें ॥४ ॥

[पौराणिक वृत्रासुर एक था, किन्तु अवरोधक आसुरी प्रवृत्तियों के रूप में अनेक वृत्रों का संहार करना अभीष्ट है ।]

७४७४. **त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पते ।**
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इदनुत्ता चर्षणीधृता ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप बलशाली, सोमपायी तथा कीर्तिवान् हैं । आप मानव मात्र के हित के लिए अत्यधिक बलशाली शत्रुओं को बिना किसी सहायता के अकेले ही नष्ट करने में समर्थ हैं ॥५ ॥

७४७५. **तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे ।**
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ॥६ ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! जिस प्रकार पिता से पुत्र धन का भाग माँगता है, उसी प्रकार हम आपसे श्रेष्ठ ऐश्वर्य की याचना करते हैं । आप धन तथा ज्ञान-सम्पन्न सबके आश्रयदाता हैं । आपके श्रेष्ठ सुख हमें प्राप्त हों ॥६ ॥

[सूक्त - ९१]

[**ऋषि** - अपाला आत्रेयी । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - अनुष्टुप्, १-२ पंक्ति ।]

इस सूक्त की ऋषि आत्रेयी अपाला हैं । पौराणिक संदर्भ में वे महर्षि अत्रि की पुत्री अपाला हैं । आध्यात्मिक सन्दर्भ में



आत्रेयी त्रिगुणों या त्रिदोषों से परे अपाला (अ-पाला-असंरक्षित अथवा अप-अला, अर्थात् दोषों को दूर करने वाली) हैं। पौराणिक संदर्भ से अपाला को चर्मरोग होने से उसके पति रुष्ट हो गये। अपाला ने पिता के घर रहकर सूर्योपासना द्वारा आरोग्य प्राप्त किया। आध्यात्मिक संदर्भ से अपाला है-बुद्धि। वह विकारग्रस्त होती है, तो पति जीवात्मा रुष्ट होता है। ऐसी स्थिति में वह अपाला (असंरक्षित) हो जाती है। तब वह पिता अत्रि (त्रिगुणातीत परमात्मा) के सान्निध्य में रहकर सूर्योपासना (प्रेरक सविता) के प्रभाव से अप-अला (दोषों को परे हटाने वाली) हो जाती है। इन दोनों ही संदर्भों में इस सूत्र के मंत्रार्थों की संगति बैठ जाती है-

७४७६. **कन्या३ वारवायती सोममपि स्रुताविदत्।**
अस्तं भरन्त्यब्रवीदिन्द्राय सुनवै त्वा शक्राय सुनवै त्वा ॥१ ॥

जल की ओर (स्नान द्वारा पवित्र होने के लिए) उन्मुख कन्या (अपाला) मार्ग में सोम (पोषक तत्त्व) प्राप्त करती है। घर लौटती हुई वह कहती है (हे सोम !) तुम्हें मैं इन्द्र (जीवात्मा) तथा शक्र (शक्तिशाली मन) के लिए प्रयुक्त करूँगी ॥१ ॥

[बुद्धि उपासनापरक प्रयोगों द्वारा ब्राह्मी चेतना में स्नान करके निर्मल बनने का प्रयास करती है। उसी क्रम में वह सोम के स्रोत भी पा लेती है। वह सोम के सदुपयोग की योजना बनाती है।]

७४७७. **असौ य एषि वीरको गृहंगृहं विचाकशत्।**
इमं जम्भसुतं पिब धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् ॥२ ॥

(अपाला कहती है) ये वीर इन्द्रदेव जो प्रकाशित होकर प्रत्येक घर (प्रकोष्ठ) में पहुँचते हैं । (वे) पीने के लिए निष्पादित इस 'धानावन्त' (खीलों युक्त या धारक क्षमता युक्त) , करम्भ (क्रियाशील) तथा अपूपवन्त (पुए की तरह या विस्तारयुक्त) प्रशंसनीय सोम का पान करें ॥२ ॥

७४७८. **आ चन त्वा चिकित्सामोऽधि चन त्वा नेमसि।**
शनैरिव शनकैरिवेन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३ ॥

(हे इन्द्रदेव या पुरुष !) हम (अपाला) आपको समझने (तुष्ट करने) में समर्थ नहीं हैं; किन्तु समझने की इच्छुक हैं। हे सोमदेव ! आप इन्द्रदेव के लिए शनैः-शनैः (औषधि की तरह निर्धारित मात्रा में) प्रवाहित हों ॥३ ॥

७४७९. **कुविच्छकत्कुवित्करत्कुविन्नो वस्यसस्करत्।**
कुवित्पतिद्विषो यतीरिन्द्रेण सङ्गमामहै ॥४ ॥

अपने स्वामी की रुष्टता के कारण भ्रमणशील हम (अपाला) ने इन्द्रदेव (सूर्य) की बहुत उपासना की है। वे हमें बहुत प्रकार से सामर्थ्य, सक्रियता तथा साधन-सम्पन्न बनाएँ ॥४ ॥

७४८०. **इमानि त्रीणि विष्टपा तानीन्द्र वि रोहय। शिरस्ततस्योर्वरामादिदं म उपोदरे ॥५ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप मेरे पिता के मस्तिष्क, उर्वरा (भूमि या मनोभूमि) तथा मेरे उदर-इन तीन स्थलों को विशेष प्रयोजनों के लिए श्रेष्ठ या उपजाऊ बनाएँ ॥५ ॥

७४८१. **असौ च या न उर्वरादिमां तन्वं१ मम।**
अथो ततस्य यच्छिरः सर्वा ता रोमशा कृधि ॥६ ॥

आप हमारे इस उर्वर भूमि, हमारे इस शरीर तथा रचयिता के मस्तिष्क को अंकुरणशील या पुलकित करें ॥६ ॥

७४८२. **खे रथस्य खेऽनसः खे युगस्य शतक्रतो।**
अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्व्यकृणोः सूर्यत्वचम् ॥७ ॥





उन शतक्रतु (शतकर्मा-इन्द्रदेव) ने रथ (इन्द्रियों युक्त काया), अनस (शकट की तरह पोषक प्राण) तथा दोनों को जोड़ने वाले 'युग' (मन) इन तीन स्थानों या छिद्रों से अपाला को पवित्र करके उसकी त्वचा (बाहरी संरक्षक सतह) को सूर्यदेव के तेज से युक्त बना दिया ॥७॥

['रथ' अन्नमय कोश को कह सकते हैं, 'अनस' प्राणमय कोश है, मनोमय कोश चेतना एवं पंचभूतों को जोड़ने वाला 'युग' (जुआ) है। अपाला (बुद्धि) की अभिव्यक्ति के यही माध्यम हैं, अतः इन्हें अपाला की त्वचा कह सकते हैं। उपासना से प्राप्त सोम पीकर समर्थ हुआ जीवात्मा (इन्द्र) छिद्रों से अपाला को निर्मल बनाकर उसे सूर्य सदृश कान्तियुक्त विज्ञानमय कोश का अधिकारी बना देता है।]

[सूक्त - ९२]

[**ऋषि** - श्रुतकक्ष आङ्गिरस अथवा सुकक्ष आङ्गिरस। **देवता** - इन्द्र। **छन्द** - गायत्री, १- अनुष्टुप्।]

७४८३. **पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत।**
विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम् ॥१॥

हे याजको! सामर्थ्यवान्, सैकड़ों प्रकार के यज्ञादि कर्म करने वाले, शत्रुनाशक, सोमपायी इन्द्रदेव की विशेष स्तोत्रों से प्रार्थना करो ॥१॥

७४८४. **पुरुहूतं पुरुष्टुतं गाथान्यं१ सनश्रुतम्। इन्द्र इति ब्रवीतन ॥२॥**

हे ऋत्विजो! सहायता के लिए बहुतों द्वारा बुलाए जाने वाले, अनेकों द्वारा स्तुति किये जाने वाले तथा सनातन काल से प्रसिद्ध उन इन्द्रदेव की वन्दना करो ॥२॥

७४८५. **इन्द्र इन्नो महानां दाता वाजानां नृतुः। महाँ अभिज्ञ्वा यमत् ॥३॥**

सभी को गति प्रदान करने वाले, धन-धान्य से परिपूर्ण करने वाले, महान् इन्द्रदेव हमारे सामने प्रकट हों और हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३॥

७४८६. **अपादु शिप्र्यन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः। इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः ॥४॥**

किरीटधारी इन्द्रदेव ने देवताओं के लिए हवि देने में निपुण याज्ञिकों द्वारा समर्पित जौ के आटे और दूध से मिश्रित सोमरस रूपी हविष्यान्न को ग्रहण किया ॥४॥

७४८७. **तम्वभि प्रार्चतेन्द्रं सोमस्य पीतये। तदिद्ध्यस्य वर्धनम् ॥५॥**

उन इन्द्रदेव की सोमपान के निमित्त प्रार्थना करें। यह सोमरस उनको समृद्धिशाली बनाने वाला है ॥५॥

७४८८. **अस्य पीत्वा मदानां देवो देवस्यौजसा। विश्वाभि भुवना भुवत् ॥६॥**

वे इन्द्रदेव हर्षप्रदायक सोमरस पान करके अपने महान् ओज के द्वारा समस्त लोकों को नियन्त्रित करते हैं ॥६॥

७४८९. **त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम्। आ च्यावयस्यूतये ॥७॥**

हे याजको! अपनी समस्त वाणियों द्वारा उच्चारित उत्तम स्तुतियों से अपने संरक्षण के लिए असुरजयी इन्द्रदेव का आवाहन करो ॥७॥

७४९०. **युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम्। नरमवार्यक्रतुम् ॥८॥**

युद्ध में पराजित न होने वाले, शत्रुओं पर भारी पड़ने वाले तथा सोमरस का पान करने वाले, अपरिवर्तनीय निर्णय वाले तथा नायक इन्द्रदेव का सहयोग पाने के लिए हम आवाहन करते हैं ॥८॥



७४९१. शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम। अवा नः पार्ये धने ॥९ ॥

दर्शनीय, सर्वज्ञ हे इन्द्रदेव ! आप हमें पर्याप्त धन प्रदान करें। शत्रुओं के पास से भी जीत कर लाये हुए धन को हमारे संरक्षण हेतु प्रयुक्त करें ॥९ ॥

७४९२. अतश्चिदिन्द्र ण उपा याहि शतवाजया। इषा सहस्रवाजया ॥१० ॥

हे इन्द्रदेव ! सैकड़ों प्रकार के बलों से परिपूर्ण हजारों प्रकार के पोषक तत्त्वों एवं रसों सहित अन्तरिक्ष से आप हमारे यज्ञ में पधारने की कृपा करें ॥१० ॥

७४९३. अयाम धीवतो धियोऽर्वद्भिः शक्र गोदरे। जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥११ ॥

हे बलशाली तथा वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप पहाड़ों को भी नष्ट करने वाले हैं। हम विवेकपूर्ण कार्यों को करें तथा आपके द्वारा प्रदत्त अश्वों से हम युद्ध में विजयश्री का वरण करें ॥११ ॥

७४९४. वयमु त्वा शतक्रतो गावो न यवसेष्वा। उक्थेषु रणयामसि ॥१२ ॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! जिस प्रकार गोपालक अपनी गौओं को जौ द्वारा हर्षित करते हैं, उसी प्रकार हम आपको अपने स्तोत्रों द्वारा हर्षित करते हैं ॥१२ ॥

७४९५. विश्वा हि मर्त्यत्वनानुकामा शतक्रतो। अगन्म वज्रिन्नाशसः ॥१३ ॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप वज्र धारण करने वाले हैं। समस्त मानव कामनाओं की पूर्ति करना चाहते हैं, उसी प्रकार हम भी ऐश्वर्य की आकांक्षा करते हैं ॥१३ ॥

७४९६. त्वे सु पुत्र शवसोऽवृत्रन् कामकातयः। न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥१४ ॥

शक्ति-पुत्र हे इन्द्रदेव ! ऐश्वर्य की अभिलाषा करने वाले पुरुष आपकी ही प्रार्थना करते हैं; क्योंकि आपसे अधिक श्रेष्ठ कोई अन्य देवता नहीं हैं ॥१४ ॥

७४९७. स नो वृषन्त्सनिष्ठया सं घोरया द्रवित्न्वा। धियाविड्ढि पुरन्ध्या ॥१५ ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप रिपुओं के लिए भयंकर तथा सत्पुरुषों के लिए ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। आप अपनी श्रेष्ठ गुणों वाली मेधा से हमारा संरक्षण करें ॥१५ ॥

७४९८. यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः। तेन नूनं मदे मदेः ॥१६ ॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आपके लिए अति तेजस्वी अभिषुत किया हुआ सोमरस तैयार किया गया है, उसका पान करके आप तृप्त हों और धनादि देकर हमको आनन्दित करें ॥१६ ॥

७४९९. यस्ते चित्रश्रवस्तमो य इन्द्र वृत्रहन्तमः। य ओजोदातमो मदः ॥१७ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो सोमरस अत्यन्त कीर्तिमान्, अद्‌भुत, हर्षप्रदायक, ओज-प्रदायक तथा वृत्र का संहार करने वाला है; उसे हमने आपके निमित्त अभिषुत किया है ॥१७ ॥

७५००. विद्मा हि यस्ते अद्रिवस्त्वादत्तः सत्य सोमपाः। विश्वासु दस्म कृष्टिषु ॥१८ ॥

वज्रधारी तथा अविनाशी हे इन्द्रदेव ! आप देखने योग्य तथा सोमरस पीने वाले हैं। समस्त मनुष्यों को आपने जो ऐश्वर्य प्रदान किया है, वह हमें भी ज्ञात है ॥१८ ॥

७५०१. इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः। अर्कमर्चन्तु कारवः ॥१९ ॥

आनन्दमयी प्रकृति वाले, इन्द्रदेव के निमित्त निकाले गये दिव्य सोमरस की हम स्तोतागण स्तुतियों द्वारा प्रशंसा करते हैं ॥१९ ॥



७५०२. **यस्मिन् विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः । इन्द्रं सुते हवामहे ॥२० ॥**

उन कान्तिमान् इन्द्रदेव का हम सोमयज्ञ में आवाहन करते हैं, जिनकी स्तुति यज्ञ के सातों ऋत्विज् करते हैं ॥२० ॥

७५०३. **त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत । तमिद्वर्धन्तु नो गिरः ॥२१ ॥**

प्रेरणादायी, उत्साह बढ़ाने वाले, तीन चरणों में सम्पन्न होने वाले यज्ञ का विस्तार देवगण करते हैं साधक गण उस यज्ञ की प्रशंसा करते हैं ॥२१ ॥

७५०४. **आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः । न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥२२ ॥**

हे इन्द्रदेव ! नदियों के समुद्र में मिलने की भाँति सोमरस आपके अन्दर प्रविष्ट होता है । हे इन्द्रदेव ! आपसे अधिक महान् कोई अन्य देव नहीं है ॥२२ ॥

७५०५. **विव्यक्थ महिना वृषन्भक्षं सोमस्य जागृवे । य इन्द्र जठरेषु ते ॥२३ ॥**

शक्तिमान् , जागरणशील हे इन्द्रदेव ! आप सोमपान के लिए अपनी ख्याति से सभी स्थानों में व्याप्त रहते हैं । आपके द्वारा उदरस्थ सोम भी प्रशंसनीय है ॥२३ ॥

७५०६. **अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन् । अरं धामभ्य इन्दवः ॥२४ ॥**

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा प्रदत्त सोमरस आपके लिए पर्याप्त हो, आपके साथ-साथ यह सभी देवताओं के लिए भी पर्याप्त हो ॥२४ ॥

७५०७. **अरमश्वाय गायति श्रुतकक्षो अरं गवे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥२५ ॥**

श्रुतकक्ष ऋषि गौओं, अश्वों और इन्द्रदेव के आवास (स्वर्ग) की प्राप्ति के लिए स्तोत्रों का गान करते हैं ॥२५ ॥

७५०८. **अरं हि ष्मा सुतेषु णः सोमेष्विन्द्र भूषसि । अरं ते शक्र दावने ॥२६ ॥**

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा अभिषुत सोमरस को आप विभूषित करते हैं । आप ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं । आपके निमित्त यह सोमरस पर्याप्त हो ॥२६ ॥

७५०९. **पराकात्ताच्चिदद्रिवस्त्वां नक्षन्त नो गिरः । अरं गमाम ते वयम् ॥२७ ॥**

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! दूर रहते हुए भी हमारी प्रार्थनाएँ आपके समीप पहुँचती हैं । हम आपके ऐश्वर्य को प्रचुर परिमाण में ग्रहण करें ॥२७ ॥

७५१०. **एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः । एवा ते राध्यं मनः ॥२८ ॥**

हे बलवान् इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में शत्रुओं को पराजित करने वाले, युद्ध में अडिग रहने वाले आप शूरवीर हैं । आपका मन (संकल्पशील) प्रशंसा के योग्य है ॥२८ ॥

७५११. **एवा रातिस्तुवीमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः । अधा चिदिन्द्र मे सचा ॥२९ ॥**

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त साधन सभी याजक प्राप्त करते हैं । आप हमें ऐश्वर्यवान् बनाकर हमारी सहायता करें ॥२९ ॥

७५१२. **मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते । मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥३० ॥**

अन्नाधिपति, बलवान् हे इन्द्रदेव ! आप गौ के दूध में मिलाये गये मधुर सोमरस का पान कर आनन्दित हों । आलसी ब्राह्मण की भाँति निष्क्रिय न रहें ॥३० ॥



७५१३. मा न इन्द्राभ्या३दिशः सूरो अक्तुष्वा यमन्। त्वा युजा वनेम तत् ॥३१ ॥

हे इन्द्रदेव ! सर्वत्र विचरणशील, सभी ओर शस्त्र फेंकने वाले (राक्षस) रात्रि के समय हमारे निकट न आ सकें। वे (पास में आयें भी तो) आपके अनुग्रह से ही नष्ट हो जाएँ ॥३१ ॥

७५१४. त्वयेदिन्द्र युजा वयं प्रति ब्रुवीमहि स्पृधः। त्वमस्माकं तव स्मसि ॥३२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे हैं और हम आपके। आपके ही सहयोग से हम शत्रुओं का सामना कर सकेंगे ॥३२ ॥

७५१५. त्वामिद्धि त्वायवोऽनुनोनुवतश्चरान्। सखाय इन्द्र कारवः ॥३३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी इच्छा करने वाले, हम सखारूप स्तोतागण आपकी ही प्रार्थना करते हैं ॥३३ ॥

[सूक्त - ९३]

[**ऋषि** - सुकक्ष आङ्गिरस। **देवता** - इन्द्र, ३४ इन्द्र तथा ऋभुगण। **छन्द** - गायत्री।]

७५१६. उद्घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य ॥१ ॥

जगद् विख्यात, ऐश्वर्य-सम्पन्न, शक्तिशाली, मानवमात्र के हितैषी और (दुष्टों पर) अस्त्रों से प्रहार करने वाले उदीयमान सूर्य इन्द्रदेव ही हैं ॥१ ॥

७५१७. नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा। अहिं च वृत्रहावधीत् ॥२ ॥

अपने बाहुबल से शत्रु के निन्यानवे निवास केन्द्रों को विध्वंस करने वाले और वृत्रनामक दुष्ट का नाश करने वाले इन्द्रदेव हमें अभीष्ट धन प्रदान करें ॥२ ॥

७५१८. स न इन्द्रः शिवः सखाश्वावद् गोमद्यवमत्। उरुधारेव दोहते ॥३ ॥

वे हमारे लिए कल्याणकारी मित्ररूप इन्द्रदेव, गौओं की असंख्य दुग्ध-धाराओं के समान हमें बहु संख्यक धन प्रदान करें ॥३ ॥

७५१९. यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे ॥४ ॥

वृत्र के संहारक, अभी उदय हुए हे (सूर्यरूप) इन्द्रदेव ! आपसे प्रकाशित होने वाला वह सब कुछ(सम्पूर्ण जगत्) आपके अधिकार में ही है ॥४ ॥

७५२०. यद्वा प्रवृद्ध सत्पते न मरा इति मन्यसे। उतो तत्सत्यमित्तव ॥५ ॥

प्रगति करने वाले तथा सज्जनों का पालन करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप स्वयं को अमर मानते हैं, आपका ऐसा मानना ही यथार्थ है ॥५ ॥

७५२१. ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे। सर्वांस्ताँ इन्द्र गच्छसि ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो सोमरस दूर अथवा निकट के स्थानों में अभिषुत किया जाता है, आप उन समस्त स्थानों पर पधारते हैं ॥६ ॥

७५२२. तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत् ॥७ ॥

जो वृत्रहन्ता हैं, हम उनकी प्रशंसा और स्तुति करते हैं। वे दानदाता इन्द्रदेव हमें धन-धान्य से परिपूर्ण करें ॥७ ॥

७५२३. इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स मदे हितः। द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः ॥८ ॥

दान देने के लिए ही उत्पन्न हुए इन्द्रदेव बलवान् बनने के लिए सोमपान करते हैं। प्रशंसनीय कार्य करने वाले वे देव, सोम पिलाये जाने योग्य हैं ॥८ ॥



७५२४. **गिरा वज्रो न सम्भृतः सबलो अनपच्युतः। ववक्ष ऋष्वो अस्तृतः ॥९॥**

वज्रपाणि, स्तुतियों से प्रशंसित, बलवान्, तेजस्वी, वीर और अपराजेय इन्द्रदेव साधकों को ऐश्वर्य देने की इच्छा रखते हैं ॥९॥

७५२५. **दुर्गे चिन्नः सुगं कृधि गृणान इन्द्र गिर्वणः। त्वं च मघवन् वशः ॥१०॥**

प्रार्थनीय तथा धनवान् हे इन्द्रदेव ! जब आप हमारे ऊपर कृपा करते हैं, तब आप हमें दुर्गम स्थानों तक सरलतापूर्वक पहुँचने योग्य बना देते हैं ॥१०॥

७५२६. **यस्य ते नू चिदादिशं न मिनन्ति स्वराज्यम्। न देवो नाध्रिगुर्जनः ॥११॥**

हे इन्द्रदेव ! आपकी आज्ञा तथा आपके अनुशासन का कोई देवता अथवा अग्रणी मनुष्य भी उल्लंघन नहीं कर सकते ॥११॥

७५२७. **अधा ते अप्रतिष्कुतं देवी शुष्मं सपर्यतः। उभे सुशिप्र रोदसी ॥१२॥**

हे इन्द्रदेव ! द्युलोक तथा पृथ्वीलोक दोनों ही आपके अदम्य सामर्थ्य की उपासना करते हैं ॥१२॥

७५२८. **त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च । परुष्णीषु रुशत् पयः ॥१३॥**

हे इन्द्रदेव ! काले, लाल आदि अनेकानेक रंग की गौओं में देदीप्यमान श्वेत दुग्ध को आपने स्थापित किया, यह आपकी अद्‌भुत सामर्थ्य ही है ॥१३॥

७५२९. **वि यदहेरध त्विषो विश्वे देवासो अक्रमुः। विदन्मृगस्य ताँ अमः ॥१४॥**

जब समस्त देवता 'अहि' नामक राक्षस से भयभीत होकर भाग गये, तब इन्द्रदेव ने उस रिपु की सामर्थ्य को पहचान लिया ॥१४॥

७५३०. **आदु मे निवरो भुवद्वृत्रहादिष्ट पौंस्यम्। अजातशत्रुरस्तृतः ॥१५॥**

जब से वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ने हमारे रिपुओं का संहार किया, तभी से वे रिपुविहीन तथा अपराजेय हो गये ॥१५॥

७५३१. **श्रुतं वो वृत्रहन्तमं प्र शर्धं चर्षणीनाम्। आ शुषे राधसे महे ॥१६॥**

हे ऋत्विजो ! वृत्रहन्ता, बलशाली, हितैषी इन्द्रदेव की स्तुति करके, तुम्हारे निमित्त महान् ऐश्वर्य प्रदान करता हूँ ॥१६॥

७५३२. **अया धिया च गव्यया पुरुणामन्पुरुष्टुत। यत्सोमेसोम आभवः ॥१७॥**

बहुत से नामों से युक्त, बहुप्रशंसित हे इन्द्रदेव ! प्रत्येक सोमयज्ञ में जहाँ आप पहुँचते हैं, वहाँ गौओं की कामना वाली बुद्धि से हम आपकी स्तुति करते हैं ॥१७॥

७५३३. **बोधिन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः। शृणोतु शक्र आशिषम् ॥१८॥**

जिस देव के लिए बहुत से व्यक्ति सोमरस तैयार करते हैं, जो हमारी कामनाओं के ज्ञाता हैं, युद्धक्षेत्र में शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं, सामर्थ्यवान् और वृत्र संहारक वे इन्द्रदेव हमारी स्तुतियों को ध्यान से सुनें ॥१८॥

७५३४. **कया त्वन्न ऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन्। कया स्तोतृभ्य आ भर ॥१९॥**

हे अभीष्ट फलदायक इन्द्रदेव ! आप किस साधन से रक्षा करते हुए हमें अति हर्ष प्रदान करते हैं ? कौन सी संरक्षण सामर्थ्य से आप स्तोताओं को सम्पन्न बनायेंगे ? ॥१९॥



७५३५. **कस्य वृषा सुते सचा नियुत्वान्वृषभो रणत्। वृत्रहा सोमपीतये ॥२० ॥**

सामर्थ्यवान्, अश्ववान्, वृत्रहन्ता तथा अभिलाषाओं की पूर्ति करने वाले हे इन्द्रदेव ! किस याजक के सोम अभिषव में भाग लेकर आप हर्षित होंगे ? ॥२० ॥

७५३६. **अभी षु णस्त्वं रयिं मन्दसानः सहस्त्रिणम्। प्रयन्ता बोधि दाशुषे ॥२१ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप हर्षित होकर हमें सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य प्रदान करें। हवि प्रदाताओं को प्रेरित करने वाले आप, हमारी स्तुतियों पर ध्यान दें ॥२१ ॥

७५३७. **पत्नीवन्तः सुता इम उशन्तो यन्ति वीतये। अपां जग्मिर्निचुम्पुणः ॥२२ ॥**

पोषक जल से युक्त यह अभिषुत सोमरस इन्द्रदेव द्वारा पिये जाने की कामना करता हुआ उनकी ओर प्रवाहित होता है। सोमरस उनको आनन्दित करते हुए जल में समाविष्ट हो ॥२२ ॥

७५३८. **इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधासो अध्वरे। अच्छावभृथमोजसा ॥२३ ॥**

इन्द्रदेव की प्रशंसा करने वाले याजकगण अपनी शक्ति से हमारे यज्ञ में अवभृथ स्नान (यज्ञ की समाप्ति पर होने वाला स्नान) होने तक यज्ञाहुतियाँ देते हैं ॥२३ ॥

७५३९. **इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या। वोळ्हामभि प्रयो हितम् ॥२४ ॥**

स्वर्णिम केशों वाले तथा साथ-साथ आनन्दित होने वाले इन्द्रदेव के दोनों अश्व, उन (इन्द्रदेव) को सोमरूप अन्न की ओर ले आएँ ॥२४ ॥

७५४०. **तुभ्यं सोमाः सुता इमे स्तीर्णं बर्हिर्विभावसो। स्तोतृभ्य इन्द्रमा वह ॥२५ ॥**

हे अग्निदेव ! आपके लिए यह सोमरस शोधित हुआ है। पवित्र कुश (आसन के रूप में) बिछाये गये हैं। आप स्तोताओं के निमित्त इन्द्रदेव का आवाहन करें ॥२५ ॥

७५४१. **आ ते दक्षं वि रोचना दधद्रत्ना वि दाशुषे। स्तोतृभ्य इन्द्रमर्चत ॥२६ ॥**

हे याजको ! स्तुति करने वालों के निमित्त आप इन्द्रदेव की उपासना करें, जिससे हवि प्रदाता यजमान को वे शक्ति तथा रत्न प्रदान करें ॥२६ ॥

७५४२. **आ ते दधामीन्द्रियमुक्था विश्वा शतक्रतो। स्तोतृभ्य इन्द्र मृळय ॥२७ ॥**

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! बलवर्धक समस्त स्तोत्रों को हम आपके निमित्त उच्चारित करते हैं। स्तुति प्रदान करने वालों को आप सुख प्रदान करें ॥२७ ॥

७५४३. **भद्रम्भद्रं न आ भरेषमूर्जं शतक्रतो। यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२८ ॥**

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप हमें सुखकारी अन्न-बल से युक्त ऐश्वर्य प्रचुर मात्रा में प्रदान करें, क्योंकि आप ही हमें सुखी बनाते हैं ॥२८ ॥

७५४४. **स नो विश्वान्या भर सुवितानि शतक्रतो। यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२९ ॥**

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! यदि आप हमें सुख प्रदान करने की इच्छा करते हैं, तो समस्त हितकारी ऐश्वर्यों से हमें परिपूर्ण करें ॥२९ ॥

७५४५. **त्वामिद्वृत्रहन्तम सुतावन्तो हवामहे। यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३० ॥**

रिपुओं का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! सोम अभिषव करने वाले हम याजक, जब आपका आवाहन करें, तब आप हमें सुख प्रदान करें ॥३० ॥



७५४६. **उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३१ ॥**

हे सोमाधिपति इन्द्रदेव ! अपने श्रेष्ठ घोड़ों के द्वारा आप हमारे सोमयज्ञ में बार-बार पधारें ॥३१ ॥

७५४७. **द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३२ ॥**

जो इन्द्रदेव वृत्रहन्ता तथा शतक्रतु इन दो नामों (या कर्मों) से जाने जाते हैं, वे हमारे द्वारा अभिषुत सोमरस के निकट अपने अश्वों द्वारा पधारें ॥३२ ॥

७५४८. **त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३३ ॥**

हे शत्रुहन्ता इन्द्रदेव ! सोमरस को पीने की इच्छा से आप हमारे यज्ञ में अश्वों के माध्यम से पधारें ॥३३ ॥

७५४९. **इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम् । वाजी ददातु वाजिनम् ॥३४ ॥**

शक्ति-सम्पन्न इन्द्रदेव हमें श्रेष्ठ धन से सदैव परिपूर्ण करें । वे अन्न प्राप्ति के लिए श्रेष्ठ उत्तराधिकार प्रदान करें । हे बलशाली ! आप हमें बलवान् बनाएँ ॥३४ ॥

[सूक्त - ९४]

[**ऋषि** - बिन्दु अथवा पूतदक्ष आङ्गिरस । **देवता** - मरुद्गण । **छन्द** - गायत्री ।]

७५५०. **गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् । युक्ता वह्नी रथानाम् ॥१ ॥**

धन-सम्पन्न मरुतों की माता गौ (उत्पादक किरणें), अन्नादि उत्पन्न करने की इच्छा से अपने पुत्रों को दुग्ध (सोम) का पान कराती हैं । वे मरुद्गणों को रथ से नियोजित करती हैं ॥१ ॥

७५५१. **यस्या देवा उपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते । सूर्यामासा दृशे कम् ॥२ ॥**

माता गौ के समीप (गोद में) रहकर समस्त देवगण अपने-अपने व्रतों का विधिवत् निर्वाह करते हैं । सूर्य तथा चन्द्रमा भी इनके निकट रहकर समस्त भुवनों को आलोकित करते हैं ॥२ ॥

७५५२. **तत्सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः । मरुतः सोमपीतये ॥३ ॥**

हे मरुतो ! समस्त स्तोतागण आपके सामर्थ्य की विधिवत् प्रार्थना करते हैं ; अतः सोमरस पीने के लिए आप यहाँ पधारें ॥३ ॥

७५५३. **अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः । उप स्वराजो अश्विना ॥४ ॥**

हमारे द्वारा शोधित इस सोमरस का पान तेजस्वी मरुद्गण तथा अश्विनीकुमार करते हैं ॥४ ॥

७५५४. **पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः । त्रिषधस्थस्य जावतः ॥५ ॥**

मित्र, अर्यमा और वरुणदेव इस संस्कारित हुए और तीन पात्रों में रखे हुए प्रशंसनीय सोमरस का पान करते हैं ॥५ ॥

७५५५. **उतो न्वस्य जोषमाँ इन्द्रः सुतस्य गोमतः । प्रातर्होतेव मत्सति ॥६ ॥**

इन्द्रदेव भी प्रातः यज्ञ करने वाले होता की भाँति इस गोदुग्ध युक्त सोम का पान करके आनन्दित होते हैं ॥६ ॥

७५५६. **कदत्विषन्त सूरयस्तिर आप इव स्त्रिधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ॥७ ॥**

विद्वान् मरुद्गण वक्र गति द्वारा कब उत्पन्न होंगे ? वे रिपुओं का संहार करने वाले हैं । पुनीत शक्ति ग्रहण करने वाले वे मरुद्गण हमारे यज्ञ में कब पधारेंगे ? ॥७ ॥



७५५७. **कद्वो अद्य महानां देवानामवो वृणे । त्मना च दस्मवर्चसाम् ॥८ ॥**

हे मरुतो ! आप अत्यन्त तेजोयुक्त, श्रेष्ठ तथा प्रदीप्त हैं । आपसे सुरक्षा की प्रार्थना हम स्तोतागण कब करें ? ॥८ ॥

७५५८. **आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन्रोचना दिवः । मरुतः सोमपीतये ॥९ ॥**

जिन मरुद्‌गणों ने धरती के समस्त पदार्थों तथा दिव्य लोक के तेजोयुक्त पदार्थों को संवर्धित किया है, हम उन वीरों को सोमरस पीने के लिए आहूत करते हैं ॥९ ॥

७५५९. **त्यान्नु पूतदक्षसो दिवो वो मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥१० ॥**

हे मरुद्‌गण ! आप अत्यन्त तेजोयुक्त तथा पुनीत शक्ति से सम्पन्न हैं । हम सोमरस पीने के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥१० ॥

७५६०. **त्यान्नु ये वि रोदसी तस्तभुर्मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥११ ॥**

जिन मरुतों ने आकाश तथा धरती को आधार प्रदान किया है, उनका हम सोमरस पीने के लिए आवाहन करते हैं ॥११ ॥

७५६१. **त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥१२ ॥**

जो मरुद्‌गण पर्वतों पर निवास करने वाले हैं तथा शक्ति से सम्पन्न हैं, उन मरुतों के समूह का सोमरस पान करने के निमित्त हम आवाहन करते हैं ॥१२ ॥

[सूक्त - ९५]

[**ऋषि** - तिरश्ची आङ्गिरस । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - अनुष्टुप्]

७५६२. **आ त्वा गिरो रथीरिवाऽस्थुः सुतेषु गिर्वणः**
अभि त्वा समनूषतेन्द्र वत्सं न मातरः ॥१ ॥

हे स्तुत्य इन्द्रदेव ! रथारूढ़ होकर सुरक्षित पहुँचने वाले योद्धा के समान तथा बछड़े के पास शीघ्र पहुँचने वाली गौ के समान, 'सोमयाग' में हमारी स्तुतियाँ आपके पास पहुँच जाती हैं ॥१ ॥

७५६३. **आ त्वा शुक्रा अचुच्यवुः सुतास इन्द्र गिर्वणः ।**
पिबा त्व१ स्यान्धस इन्द्र विश्वासु ते हितम् ॥२ ॥

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! आपके निमित्त समस्त दिशाओं में सोमरस विद्यमान है । अभिषुत सोमरस आपके समीप शीघ्र गमन करे । हे इन्द्रदेव ! आप अन्नरूप सोमरस का पान करें ॥२ ॥

७५६४. **पिबा सोमं मदाय कमिन्द्र श्येनाभृतं सुतम् ।**
त्वं हि शश्वतीनां पती राजा विशामसि ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप समस्त प्रजाओं के स्वामी तथा सम्राट् हैं । श्येन पक्षी (रूपिणी गायत्री देवी - तैत्ति० सं० ६.१.६.४ के अनुसार) द्वारा लाये हुए तथा अभिषुत किये हुए सोमरस का आप उत्साहित होने के लिए पान करें । आप समस्त प्रजाओं के स्वामी तथा शासक हैं ॥३ ॥

७५६५. **श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।**
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥४ ॥



हे इन्द्रदेव ! सत्कार करने वाले 'तिरश्री' ऋषि के स्तोत्रों को आप सुनें । हे महान् इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ बल एवं गौ प्रदान करते हुए हमें धन-सम्पदा से परिपूर्ण करें ॥४ ॥

७५६६. **इन्द्र यस्ते नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।**
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो भी साधक नवीन आनन्ददायी स्तुतियों से आपका स्तवन करते हैं, उन्हें आप सनातन यज्ञ से वृद्धि को प्राप्त हुई तथा मन को पवित्र करने वाली बुद्धि प्रदान करें ॥५ ॥

७५६७. **तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थानि वावृधुः ।**
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ॥६ ॥

जिन इन्द्रदेव की महिमा मंत्रों और स्तोत्रों द्वारा गायी गई है, उन महान् पराक्रमी इन्द्रदेव की हम भक्तिभाव से स्तुति करते हैं ॥६ ॥

७५६८. **एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।**
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप शीघ्र पधारें । शुद्ध रूप से उच्चरित साम और यजुर्मन्त्रों द्वारा हम आपका स्तवन करते हैं । बलवर्धक, मंत्रों से शोधित किया गया, गो-दुग्ध मिश्रित सोमरस आपको आनन्द प्रदान करे ॥७ ॥

७५६९. **इन्द्र शुद्धो न आ गहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।**
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः ॥८ ॥

हे पवित्र इन्द्रदेव ! आप हमारे निकट आएँ । आप पवित्र होकर पवित्र साधनों सहित आएँ । पवित्र होकर ही हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । पवित्र होकर सोमपान करके आप आनन्दित हों ॥८ ॥

७५७०. **इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।**
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ॥९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप पवित्र हैं । हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । उत्तम कर्मों में आने वाले विघ्नों को दूर करें । ऐश्वर्य देने में समर्थ आप हमारे मन्त्रों से शुद्ध होकर शत्रुओं को विनष्ट करें ॥९ ॥

[सूक्त - ९६]

[**ऋषि** - तिरश्री आङ्गिरस अथवा द्युतान मारुत । **देवता** - इन्द्र , १४ वें के चतुर्थ चरण के मरुद्गण, १५ इन्द्राबृहस्पती । **छन्द** - त्रिष्टुप् , ४ विराट्]

७५७१. **अस्मा उषास आतिरन्त याममिन्द्राय नक्तमूर्म्याः सुवाचः ।**
अस्मा आपो मातरः सप्त तस्थुर्नृभ्यस्तराय सिन्धवः सुपाराः ॥१ ॥

उन इन्द्रदेव के कारण उषाओं ने अपनी चाल को तेज किया । उनके निमित्त रात के चौथे प्रहर में श्रेष्ठ प्रार्थनाएँ उच्चरित की जाती हैं । उन इन्द्रदेव के कारण ही जल (स्नेह) से पूर्ण सप्त मातृकायें (या नदियाँ) प्रवाहित होती हैं तथा सिन्धु (नदियाँ या समुद्र) मनुष्यों के लिए सुगमता से पार करने योग्य हो जाती हैं ॥१ ॥

७५७२. **अतिविद्धा विथुरेणा चिदस्त्रा त्रिः सप्त सानु संहिता गिरीणाम् ।**
न तद्देवो न मर्त्यस्तुतुर्याद्यानि प्रवृद्धो वृषभश्चकार ॥२ ॥



अपने वज्र के द्वारा इन्द्रदेव ने बिना किसी की सहायता के एकत्रित हुए पहाड़ों (या मेघों) के इक्कीस शिखरों को नष्ट कर दिया । उन समृद्धिशाली तथा शक्तिशाली इन्द्रदेव ने जिस शौर्य को प्रकट किया, उसे कोई भी मानव अथवा देव नहीं कर सकते ॥२ ॥

७५७३. **इन्द्रस्य वज्र आयसो निमिश्ल इन्द्रस्य बाह्वोर्भूयिष्ठमोजः ।**
शीर्षन्निन्द्रस्य क्रतवो निरेक आसन्नेषन्त श्रुत्या उपाके ॥३ ॥

इन्द्रदेव अपने कठोर वज्र को परिपुष्ट भुजाओं में धारण करते हैं । संग्राम में प्रस्थान के समय वे अपने सिर पर मुकुट धारण करते हैं । उनके आदेशों को सुनने तथा मानने के लिए समस्त प्रजाएँ विद्यमान रहती हैं ॥३ ॥

७५७४. **मन्ये त्वा यज्ञियं यज्ञियानां मन्ये त्वा च्यवनमच्युतानाम् ।**
मन्ये त्वा सत्वनामिन्द्र केतुं मन्ये त्वा वृषभं चर्षणीनाम् ॥४ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञों में सर्वाधिक पूज्य, च्युत न होने वाले पर्वतों को भी वज्र के प्रहार से विदीर्ण करने वाले तथा मनुष्यों में सबसे अधिक बुद्धि वाले हैं । हम आपके सम्बन्ध में ऐसी मान्यता रखते हैं ॥४ ॥

७५७५. **आ यद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र धत्से मदच्युतमहये हन्तवा उ ।**
प्र पर्वता अनवन्त प्र गावः प्र ब्रह्माणो अभिनक्षन्त इन्द्रम् ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! मद से चूर 'अहि' नामक असुर का संहार करने के लिए जब आप अपने वज्र को हाथ में उठाते हैं, उस समय आपके सम्मुख पर्वत (मेघ) तथा गौएँ (किरणें) नत होते हैं और विद्वान् लोग आपकी प्रार्थना करते हैं ॥५ ॥

७५७६. **तमु ष्टवाम य इमा जजान विश्वा जातान्यवराण्यस्मात् ।**
इन्द्रेण मित्रं दिधिषेम गीर्भिरुपो नमोभिर्वृषभं विशेम ॥६ ॥

जो इन्द्रदेव समस्त प्राणियों को उत्पन्न करते हैं तथा जिनके बाद समस्त जगत् पैदा हुआ, उन इन्द्रदेव को हम स्तोतागण अपनी प्रार्थनाओं द्वारा अपना मित्र बनाते हैं । नमस्कार करते हुए उन शक्तिशाली देव के समीप बैठते हैं ॥६ ॥

७५७७. **वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।**
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! वृत्रासुर के भय से आपके सभी सहायक देवगण आपका परित्याग करके चारों दिशाओं में पलायन कर गये । तदनन्तर मरुद्गणों का सहयोग लेकर आपने शत्रु-सेना को परास्त किया ॥७ ॥

७५७८. **त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना उस्रा इव राशयो यज्ञियासः ।**
उप त्वेमः कृधि नो भागधेयं शुष्मं त एना हविषा विधेम ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! तिरसठ मरुतों ने बैलों के समूह के समान एकत्रित होकर आपको समृद्ध किया; इससे आप वंदनीय हो गये । हम आपके आश्रय में आते हैं,अतः आप हमें सम्पत्ति प्रदान करें । हम भी सोम की आहुतियाँ समर्पित करके आपकी सामर्थ्य को बढ़ाते हैं ॥८ ॥

७५७९. **तिग्ममायुधं मरुतामनीकं कस्त इन्द्र प्रति वज्रं दधर्ष ।**
अनायुधासो असुरा अदेवाश्चक्रेण ताँ अप वप ऋजीषिन् ॥९ ॥



हे इन्द्रदेव ! तीक्ष्ण हथियारों, वज्र तथा मरुतों से सम्पन्न आपकी सेनाओं का कौन शत्रु प्रतिरोध कर सकता है ? सोम से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप, हथियार रहित, देवत्व विहीन राक्षसों को भी अपने चक्र से विनष्ट न करें ॥९ ॥

७५८०. मह उग्राय तवसे सुवृक्तिं प्रेरय शिवतमाय पश्वः ।
गिर्वाहसे गिर इन्द्राय पूर्वीर्धेहि तन्वे कुविदङ्ग वेदत् ॥१० ॥

हे याजको ! आप पशुओं को प्राप्त करने के निमित्त, अत्यन्त शौर्यवान् तथा हितकारी इन्द्रदेव की प्रार्थना करें । उन प्रार्थनीय इन्द्रदेव के निमित्त बारम्बार प्रार्थनाएँ करें, जिससे वे हमारी सन्तानों के लिए प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१० ॥

७५८१. उक्थवाहसे विभ्वे मनीषां द्रुणा न पारमीरया नदीनाम् ।
नि स्पृश धिया तन्वि श्रुतस्य जुष्टतरस्य कुविदङ्ग वेदत् ॥११ ॥

हे स्तोताओ ! नाविकों द्वारा नदी पार कराने की तरह आप अपनी स्तुतियों को बुद्धिपूर्वक महान् इन्द्रदेव के लिए प्रेषित करें । वे यशस्वी इन्द्रदेव हमें तथा हमारी सन्तानों को प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें ॥११ ॥

७५८२. तद्विविड्ढि यत्त इन्द्रो जुजोषत्स्तुहि सुष्टुतिं नमसा विवास ।
उप भूष जरितर्मा रुवण्यः श्रावया वाचं कुविदङ्ग वेदत् ॥१२ ॥

हे स्तोताओ ! आप इन्द्रदेव के निमित्त श्रेष्ठ प्रार्थनाएँ करें । आप उनकी इच्छा के अनुरूप प्रार्थनाएँ करें । आप अपनी गरीबी के लिए विलाप न करें, वरन् पवित्र मन से उनकी प्रार्थना करें । वे आपको प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करेंगे ॥१२ ॥

७५८३. अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः ।
आवत्तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नेहितीर्नृमणा अधत्त ॥१३ ॥

त्वरित गतिशील, दस हजार सैनिकों सहित आक्रमण करने वाले, सम्पूर्ण संसार को दुःख देने वाले, 'अंशुमती' नदी (यमुना) के तट पर विद्यमान, (सबको आकर्षित करके अपने चंगुल में फँसा लेने वाले) कृष्णासुर पर सर्वप्रिय इन्द्रदेव ने प्रत्याक्रमण करके शत्रुओं की सेना को पराजित कर दिया ॥१३ ॥

७५८४. द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तमुपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः ।
नभो न कृष्णमवतस्थिवांसमिष्यामि वो वृषणो युध्यताजौ ॥१४ ॥

इन्द्रदेव ने कहा-'अंशुमती' नदी के तट पर गुफाओं में घूमते हुए 'कृष्णासुर' को हमने सूर्य के सदृश देख लिया है । हे शक्तिशाली मरुतो ! हम आपके सहयोग की आकांक्षा करते हैं । आप संग्राम में उसका संहार करें ॥१४ ॥

७५८५. अध द्रप्सो अंशुमत्या उपस्थेऽधारयत्तन्वं तित्विषाणः ।
विशो अदेवीरभ्या३ चरन्तीर्बृहस्पतिना युजेन्द्रः ससाहे ॥१५ ॥

'अंशुमती' नदी के तट पर शीघ्रगामी कृष्णासुर तेज-सम्पन्न होकर निवास करता है । इन्द्रदेव ने बृहस्पति-देव की सहायता से, सभी ओर से आक्रमण के लिए बढ़ती हुई उसकी सेनाओं को परास्त किया ॥१५ ॥

७५८६. त्वं ह त्यत्सप्तभ्यो जायमानोऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूळ्हे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणं धाः ॥१६ ॥



अजातशत्रु हे इन्द्रदेव ! वृत्रादि सात राक्षसों के उत्पन्न होते ही आप उनके शत्रु हो गये । (राक्षसों द्वारा स्थापित किये गये) अंधकार से द्युलोक और पृथ्वी को (उद्धार करके) आपने प्रकाशित किया । अब आपने इन लोकों को भली-भाँति स्थिर करके ऐश्वर्यवान् तथा सौन्दर्यशाली बना दिया है ॥१६ ॥

७५८७. **त्वं ह त्यदप्रतिमानमोजो वज्रेण वज्रिन्धृषितो जघन्थ ।**
त्वं शुष्णस्यावातिरो वधत्रैस्त्वं गा इन्द्र शच्येदविन्दः ॥१७ ॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप रिपुओं को दबाने वाले हैं । असीमित शक्ति वाले 'शुष्णासुर' को आपने अपने वज्र से विनष्ट किया । राजर्षि 'कुत्स' के निमित्त आपने उसे (शुष्णासुर को) अपने हथियारों द्वारा काट डाला तथा अपने बल से गौओं (किरणों या जलधाराओं) को उत्पन्न किया ॥१७ ॥

७५८८. **त्वं ह त्यद्वृषभ चर्षणीनां घनो वृत्राणां तविषो बभूथ ।**
त्वं सिन्धूँरसृजस्तस्तभानान् त्वमपो अजयो दासपत्नीः ॥१८ ॥

मनुष्यों में सामर्थ्यवान् हे इन्द्रदेव ! आप ही उन रिपुओं का संहार करके बलशाली हुए हैं । आपने ही अवरुद्ध सरिताओं को प्रवाहित किया तथा दस्युओं द्वारा नियन्त्रित किये हुए जल प्रवाहों को अपने अधिकार में किया ॥१८ ॥

७५८९. **स सुक्रतू रणिता यः सुतेष्वनुत्तमन्युर्यो अहेव रेवान् ।**
य एक इन्नर्यपांसि कर्ता स वृत्रहा प्रतीदन्यमाहुः ॥१९ ॥

सत्कर्म करने वाले इन्द्रदेव सोमयागों में आनन्दित होते हैं । वे अकेले ही मनुष्यों के युद्धों में वृत्र तथा अन्य रिपुओं का संहार अपने पराक्रम द्वारा करते हैं । वे दिन के सदृश ऐश्वर्यवान् हैं तथा अत्यधिक मन्यु (परिष्कृत क्रोध) प्रकट करने वाले हैं ॥१९ ॥

७५९०. **स वृत्रहेन्द्रश्चर्षणीधृत्तं सुष्टुत्या हव्यं हुवेम ।**
स प्राविता मघवा नोऽधिवक्ता स वाजस्य श्रवस्यस्य दाता ॥२० ॥

जो वृत्र का संहार करने वाले तथा मुनष्यों का पालन करने वाले हैं, ऐसे आवाहनीय इन्द्रदेव को हम अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा आहूत करते हैं । जो हमारे संरक्षक तथा नियन्त्रक हैं, ऐसे धनवान् इन्द्रदेव हमें अन्न प्रदान करने वाले हैं ॥२० ॥

७५९१. **स वृत्रहेन्द्र ऋभुक्षाः सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूव ।**
कृण्वन्नपांसि नर्या पुरूणि सोमो न पीतो हव्यः सखिभ्यः ॥२१ ॥

शिल्पकारों के संग निवास करने वाले तथा वृत्र का संहार करने वाले इन्द्रदेव प्रकट होते ही आवाहन करने योग्य हो गये । अनेकों व्यक्तियों के निमित्त कल्याणकारी कर्मों को करते हुए, वे इन्द्रदेव पान किये गये सोमरस के सदृश सखाओं द्वारा वरण करने योग्य हो गये ॥२१ ॥

[सूक्त - ९७]

[**ऋषि** - रेभ काश्यप । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - बृहती ; १०, १३ अतिजगती; ११-१२ उपरिष्टाद्बृहती; १४ त्रिष्टुप; १५ जगती ।]

७५९२. **या इन्द्र भुज आभरः स्वर्वाँ असुरेभ्यः ।**
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः ॥१ ॥



आत्मशक्ति सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप राक्षसों से जीतकर लाये गये धन से स्तोताओं का संरक्षण करें और जो आपका आवाहन करते हैं, उनकी वृद्धि करें ॥१ ॥

७५९३. **यमिन्द्र दधिषे त्वमश्वं गां भागमव्ययम् ।**
यजमाने सुन्वति दक्षिणावति तस्मिन् तं धेहि मा पणौ ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! आपके पास जो गौएँ, अश्व तथा अविनाशी ऐश्वर्य विद्यमान है, उसे आप सोमयागी तथा दक्षिणा प्रदान करने वाले याजकों को प्रदान करें । आप उसे सम्पत्ति अर्जित करने वाले कृपण जमाखोरों को न दें ॥२ ॥

७५९४. **य इन्द्र सस्त्यव्रतोऽनुष्वापमदेवयुः ।**
स्वैः ष एवैर्मुमुरत्पोष्यं रयिं सनुतर्धेहि तं ततः ॥३ ॥

हे इन्द्रदेव ! जो कुमार्गगामी व्यक्ति अपने कर्तव्यों पर ध्यान नहीं देता, वह अपने ही आचरण से अपने ऐश्वर्य को विनष्ट कर देता है । आप उसके ऐश्वर्य को उससे छिपाकर हमें प्रदान करें ॥३ ॥

७५९५. **यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।**
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतावाँ आ विवासति ॥४ ॥

सामर्थ्यवान् , वृत्रहन्ता हे इन्द्रदेव ! आप दूरस्थ हों या निकट हों, श्रेष्ठ घोड़ों के समान वेगवान् स्तुतियों से सोमयज्ञ में याजक आपका आवाहन करते हैं ॥४ ॥

७५९६. **यद्वासि रोचने दिवः समुद्रस्याधि विष्टपि ।**
यत्पार्थिवे सदने वृत्रहन्तम यदन्तरिक्ष आ गहि ॥५ ॥

वृत्र का संहार करने वालों में सर्वश्रेष्ठ हे सामर्थ्यवान् इन्द्रदेव ! आप दिव्यलोक के आलोकित स्थान में निवास करते हों, समुद्र के तल में हों; भूमि या अन्तरिक्ष में जहाँ भी हों; आप उस स्थान से हमारे समीप पधारें ॥५ ॥

७५९७. **स नः सोमेषु सोमपाः सुतेषु शवसस्पते ।**
मादयस्व राधसा सूनृतावतेन्द्र राया परीणसा ॥६ ॥

सामर्थ्य के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस पीने वाले हैं । सोमरस संस्कारित होने पर आप हमें मधुर वचनों से सम्पन्न प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करके हर्षित करें ॥६ ॥

७५९८. **मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्यः ।**
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र परा वृणक् ॥७ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे रक्षक तथा बन्धु हैं । आप हमारे इस यज्ञ में पधारें । हमें आप अपने से कभी भी दूर न करें ॥७ ॥

७५९९. **अस्मे इन्द्र सचा सुते नि षदा पीतये मधु ।**
कृधी जरित्रे मघवन्नवो महदस्मे इन्द्र सचा सुते ॥८ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे यज्ञ मण्डप में साथ-साथ विद्यमान होकर मधुर सोमरस का पान करने के निमित्त आसीन हों । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं को महान् संरक्षण प्रदान करें ॥८ ॥



७६००. **न त्वा देवास आशत न मर्त्यासो अद्रिवः ।**
विश्वा जातानि शवसाभिभूरसि न त्वा देवास आशत ॥९ ॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! कोई भी मनुष्य अथवा देवता आपकी बराबरी नहीं कर सकते । आप अपनी शक्ति से समस्त प्राणियों को परास्त करने वाले हैं ॥९ ॥

७६०१. **विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरं सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।**
क्रत्वा वरिष्ठं वर आमुरिमुतोग्रमोजिष्ठं तवसं तरस्विनम् ॥१० ॥

ऋत्विग्गण यज्ञ में मिल-जुलकर, सेनानायक, पराक्रमी-संगठित सेना से युक्त, शस्त्रास्त्र धारण करने वाले इन्द्रदेव को प्रकट करते हैं । वे शत्रुहन्ता, उग्र, महिमाशाली, तीव्र गति से कार्य करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं ॥१० ॥

७६०२. **समीं रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये ।**
स्वर्पतिं यदीं वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ॥११ ॥

रेभादि ऋषियों (याजकों) ने सोमपान के लिए इन्द्रदेव की स्तुति की । जब (स्तोतागण), देवलोक के स्वामी, बल एवं वैभवसम्पन्न इन्द्रदेव की वन्दना करते हैं , तो वे व्रतधारी ओज एवं संरक्षण-साधनों से युक्त हो जाते हैं ॥११ ॥

७६०३. **नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरा ।**
सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः ॥१२ ॥

नम्र स्वभाव वाले विद्वान् (रेभ आदि) नेत्रों एवं वाणी से इन्द्रदेव को नमस्कार करते हैं । किसी से द्रोह न करने वाले हे श्रेष्ठ, तेजस्वी स्तोताओ ! आप भी इन्द्रदेव के कानों को प्रिय लगने वाली ऋचाओं से उनकी स्तुति करें ॥१२ ॥

७६०४. **तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं शवांसि ।**
मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो ववर्तद्राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥१३ ॥

धनवान् , वीर, महाबलशाली, अपराजेय इन्द्रदेव को हम सहायतार्थ बुलाते हैं । सबसे महान् , यज्ञों में पूज्य इन्द्रदेव की स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हैं । वे वज्रधारी ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए हमारे सभी मार्ग सुलभ बनाएँ ॥१३ ॥

७६०५. **त्वं पुर इन्द्र चिकिदेना व्योजसा शविष्ठ शक्र नाशयध्यै ।**
त्वद्विश्वानि भुवनानि वज्रिन् द्यावा रेजेते पृथिवी च भीषा ॥१४ ॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप अपने ओज से रिपुओं की समस्त पुरियों को ध्वस्त करना जानते हैं । वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके डर से समस्त लोक तथा द्यावा-पृथिवी प्रकम्पित होते हैं ॥१४ ॥

७६०६. **तन्म ऋतमिन्द्र शूर चित्र पात्वपो न वज्रिन्दुरिताति पर्षि भूरि ।**
कदा न इन्द्र राय आ दशस्येर्विश्वप्स्न्यस्य स्पृहयाय्यस्य राजन् ॥१५ ॥

शूरवीर तथा अद्‌भुत तेजस्वी हे इन्द्रदेव ! आप अपने सत्य से हमारा संरक्षण करें । हे वज्रिन् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार नाविक जल से पार लगा देते हैं, उसी प्रकार आप पापों तथा विपत्तियों से हमें पार लगा दें । आप हमें विविध रूपों वाले वांछित ऐश्वर्य को कब प्रदान करेंगे ? ॥१५ ॥



[सूक्त - ९८]

[**ऋषि** - नृमेध आङ्गिरस । **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - उष्णिक्, ७, १०-११ ककुप्, ९, १२ पुर उष्णिक्]

७६०७. **इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत्। धर्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥१ ॥**

हे उद्गाताओ ! विवेक-सम्पन्न, महान् , स्तुत्य, ज्ञानवान् इन्द्रदेव के निमित्त आप लोग बृहत्साम (नामक स्तोत्रों) का गायन करें ॥१ ॥

७६०८. **त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः । विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ॥२ ॥**

सूर्य को प्रकाशित करने वाले, दुष्ट-दुराचारियों को पराजित करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप विश्वकर्मा हैं, विश्व के प्रकाशक हैं, महान् हैं ॥२ ॥

७६०९. **विभ्राजञ्ज्योतिषा स्व१रगच्छो रोचनं दिवः । देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ॥३ ॥**

अपने तेज का विस्तार करते हुए सूर्य को प्रकाशित करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप पधारें । समस्त देवतागण आपसे मित्रतापूर्वक सम्पर्क स्थापित करना चाहते हैं ॥३ ॥

७६१०. **एन्द्र नो गधि प्रियः सत्राजिदगोह्यः । गिरिर्न विश्वतस्पृथुः पतिर्दिवः ॥४ ॥**

सर्वप्रिय, सभी शत्रुओं को जीतने वाले, अपराजेय हे इन्द्रदेव ! पर्वत के सदृश सुविशाल, द्युलोक के अधिपति आप (अनुदान देने हेतु) हमारे पास पधारें ॥४ ॥

७६११. **अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी । इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः ॥५ ॥**

सत्यपालक, सोमपायी हे इन्द्रदेव ! आप आकाश और पृथ्वी दोनों लोकों को अपने प्रभाव में लेने में समर्थ हैं । हे द्युलोक के स्वामी ! आप सोमयाग कर्त्ताओं को उन्नति प्रदान करने वाले हैं ॥५ ॥

७६१२. **त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र दर्ता पुरामसि । हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥६ ॥**

हे इन्द्रदेव ! आप दुष्टों के अविनाशी पुरों का नाश करने वाले, अज्ञान मिटाने वाले, यज्ञकर्त्ता, मनुष्यों के मनोबल को बढ़ाने वाले तथा प्रकाशलोक के स्वामी हैं ॥६ ॥

७६१३. **अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा कामान्महः ससृज्महे । उदेव यन्त उदभिः ॥७ ॥**

स्तोत्रों से पूजित हे इन्द्रदेव ! आपके पास हम लोग बड़ी-बड़ी कामनाएँ लेकर उसी प्रकार आते हैं, जैसे जल स्वभावत: जल समूह की ओर (नाले नदी की ओर तथा नदियाँ समुद्र की ओर) प्रवाहित होता है ॥७ ॥

७६१४. **वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि । वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे ॥८ ॥**

वज्रधारी, शूरवीर हे इन्द्रदेव ! जैसे नदियों के जल से समुद्र की गरिमा बढ़ती है, उसी तरह हम अपनी स्तुतियों से आपकी गरिमा का विस्तार करते हैं ॥८ ॥

७६१५. **युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे । इन्द्रवाहा वचोयुजा ॥९ ॥**

गमनशील इन्द्रदेव के महान् रथ में आज्ञा मात्र से ही दो श्रेष्ठ घोड़े नियोजित हो जाते हैं । स्तोतागण उन्हें स्तोत्रों से नियोजित करते हैं ॥९ ॥

७६१६. **त्वं न इन्द्रा भरँ ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे । आ वीरं पृतनाषहम् ॥१० ॥**

अनेक कार्यों के सम्पादनकर्त्ता , ज्ञानी हे इन्द्रदेव ! आप हमें शक्ति एवं ऐश्वर्य से पूर्ण करें तथा शत्रु को जीतने वाला पुत्र भी प्रदान करें ॥१० ॥



७६१७. त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ। अधा ते सुम्नमीमहे ॥११ ॥

सबको आश्रय देने वाले शतकर्मा हे इन्द्रदेव ! आप पिता तुल्य पालन करने वाले और माता तुल्य धारण करने वाले हैं। हम आपके पास सुख माँगने के लिए आते हैं ॥११ ॥

७६१८. त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे शतक्रतो। स नो रास्व सुवीर्यम् ॥१२ ॥

असंख्यों द्वारा स्तुत्य, बलवान्, प्रशंसित, शक्तिशाली हे इन्द्रदेव ! हम आपकी स्तुति करते हुए कामना करते हैं कि हमें उत्तम, तेजस्वी सामर्थ्य प्रदान करें ॥१२ ॥

[सूक्त - ९९]

[**ऋषि** - नृमेध आङ्गिरस। **देवता** - इन्द्र । **छन्द** - प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती)।]

७६१९. त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन्वज्रिन्भूर्णयः।
स इन्द्र स्तोमवाहसामिह श्रुध्युप स्वसरमा गहि ॥१ ॥

याजकों द्वारा प्रदत्त सोमरस का निरन्तर सेवन करने वाले हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप ऋत्विजों द्वारा उच्चारित स्तोत्रों को सुनते हुए यज्ञस्थल पर पधारें ॥१ ॥

७६२०. मत्स्वा सुशिप्र हरिवस्तदीमहे त्वे आ भूषन्ति वेधसः।
तव श्रवांस्युपमान्युक्थ्या सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥२ ॥

शिरस्त्राण धारक, अश्वपालक, स्तुति के योग्य हे इन्द्रदेव ! आपका पूजन करने वाले विविध सामग्री से आपको सुसज्जित करते हैं। आप सोमरस से तृप्त हों। हे स्तुतियोग्य इन्द्रदेव ! सोम के बाद आपके अनुरूप अन्न (हविष्य) भी आपको प्रदान किये जाते हैं ॥२ ॥

७६२१. श्रायन्तइव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत।
वसूनि जाते जनमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम ॥३ ॥

जैसे किरणें सूर्य के आश्रय में रहती हैं, वैसे ही इन्द्रदेव सम्पूर्ण जगत् के आश्रयदाता हैं। पिता से पुत्र को प्राप्त होने वाले धन के भाग की भाँति इन्द्रदेव से हम अपने भाग की कामना करते हैं, क्योंकि वे ही जन्म लिए हुए तथा जन्म लेने वालों को अपना-अपना भाग प्रदान करते हैं ॥३ ॥

७६२२. अनर्शरातिं वसुदामुप स्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः।
सो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ॥४ ॥

हे स्तोताओ ! सात्विक पुरुषों को धनादि दान करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करें, क्योंकि इनके दान कल्याणकारी प्रेरणा प्रदान करने वाले हैं। जब इन्द्रदेव अपने मन के अनुरूप फल देने की प्रेरणा करते हैं, तो उपासक की कामना को नष्ट नहीं करते ॥४ ॥

७६२३. त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः।
अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ॥५ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप संग्राम में शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं। सबके जन्मदाता आप, पालन न करने वालों एवं असुरों को नष्ट करने वाले हैं ॥५ ॥



७६२४. **अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा।**
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥६ ॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार माता-पिता अपने शिशु की रक्षा में तत्पर रहते हैं । आकाश और पृथ्वी उसी प्रकार शत्रु-संहारक आपके बलों के अनुगामी होते हैं । जब आप वृत्रासुर का वध करते हैं , तब आपके क्रोध के समक्ष युद्ध के लिए तत्पर सभी शत्रुपक्ष वाले कमजोर पड़ जाते हैं ॥६ ॥

७६२५. **इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम्।**
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्र्यावृधम् ॥७ ॥

हे साधको ! अपने संरक्षण के लिए , शत्रु-संहारक, सर्वप्रेरक, वेगवान् , यज्ञस्थल पर जाने वाले, उत्तम रथी, अहिंसनीय, जलवृष्टि करने वाले तथा अजर-अमर इन्द्रदेव का आवाहन करो ॥७ ॥

७६२६. **इष्कर्तारमनिष्कृतं सहस्कृतं शतमूतिं शतक्रतुम्।**
समानमिन्द्रमवसे हवामहे वसवानं वसूजुवम् ॥८ ॥

अपनी सुरक्षा के लिए हम, रिपुओं का संस्कार करने वाले, सैकड़ों यज्ञादि सत्कर्म करने वाले, अनेकों प्रकार से संरक्षण प्रदान करने वाले, सदैव समान रहने वाले, संसार को आच्छादित करने वाले तथा ऐश्वर्य प्रदान करने वाले इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं ॥८ ॥

[सूक्त - १००]

[**ऋषि** - १-३, ६-१२ नेम भार्गव; ४-५ इन्द्र । **देवता** - इन्द्र , १०-११ वाक् । **छन्द** - त्रिष्टुप् , ६ जगती, ७-९ अनुष्टुप् ।]

७६२७. **अयं त एमि तन्वा पुरस्ताद्विश्वे देवा अभि मा यन्ति पश्चात्।**
यदा मह्यं दीधरो भागमिन्द्रादिन्मया कृणवो वीर्याणि ॥१ ॥

हे इन्द्रदेव ! रिपुओं पर विजय प्राप्त करने के निमित्त हम आपके आगे-आगे चलते हैं तथा समस्त देवता (संरक्षक बनकर) हमारे पीछे-पीछे चलते हैं । आप हमें शौर्य तथा ऐश्वर्य आदि भोग्य-पदार्थ प्रदान करें ॥१ ॥

७६२८. **दधामि ते मधुनो भक्षमग्रे हितस्ते भागः सुतो अस्तु सोमः।**
असश्च त्वं दक्षिणतः सखा मेऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ॥२ ॥

हे इन्द्रदेव ! अभिषुत सोमरस आपके लिए भली-भाँति रखा हुआ है । उस सोमभाग को हम आपके सामने प्रस्तुत करते हैं । आप हमारे सखारूप होकर दाहिने हाथ के सदृश रहें, जिससे हम और आप मिलकर अनेकों असुरों का संहार कर सकें ॥२ ॥

७६२९. **प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति।**
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभि ष्टवाम ॥३ ॥

शक्ति के आकांक्षी हे मनुष्यो ! वास्तव में यदि इन्द्रदेव शक्तिशाली हैं, तो उनके निमित्त यथार्थरूप में प्रार्थना करें; किन्तु 'भृगु' वंशीय 'नेम' ऋषि तो कहते हैं कि इन्द्रदेव नाम का कोई भी नहीं है । यदि कोई है , तो उन्हें किस व्यक्ति ने देखा है ? यदि कोई नहीं है , तो हम किसकी प्रार्थना करें ? ॥३ ॥



७६३०. **अयमस्मि जरितः पश्य मेह विश्वा जातान्यभ्यस्मि मह्ना ।**
ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्त्यादर्दिरो भुवना दर्दरीमि ॥४ ॥

हे स्तोताओ ! 'हम' आपके समीप हैं, आप हमें देखें । हम अपनी महिमा से समस्त जीवों को परास्त कर देते हैं । सत्य की दिशाएँ हमें समृद्ध करती हैं । रिपुओं को विदीर्ण करने वाले, हम समस्त लोकों को विनष्ट कर सकते हैं ॥४ ॥

७६३१. **आ यन्मा वेना अरुहन्नृतस्यँ एकमासीनं हर्यतस्य पृष्ठे ।**
मनश्चिन्मे हृद आ प्रत्यवोचदचिक्रदञ्छिशुमन्तः सखायः ॥५ ॥

जब यज्ञ की अभिलाषा करने वालों ने हमें अकेले ही यज्ञ के बीच में आसीन कर दिया, तब उन लोगों के मन ने हमारे हृदय से कहा कि हम सन्तानों वाले, सखारूप आपका आवाहन कर रहे हैं ॥५ ॥

७६३२. **विश्वेत्ता ते सवनेषु प्रवाच्या या चकर्थ मघवन्निन्द्र सुन्वते ।**
पारावतं यत्पुरुसम्भृतं वस्वपावृणोः शरभाय ऋषिबन्धवे ॥६ ॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आपने अपने भ्राता रूप 'शरभ' (समर्थ सहयोगी) ऋषि के निमित्त 'पारावत' (पर्वत की तरह अवरोधक) के प्रचुर ऐश्वर्य को अपने अधिकार में कर लिया है । इन सोम अभिषव करने वालों को आपने जो ऐश्वर्य प्रदान किया है; आपके वे समस्त कार्य सराहनीय हैं ॥६ ॥

७६३३. **प्र नूनं धावता पृथङ्नेह यो वो अवावरीत् ।**
नि षीं वृत्रस्य मर्मणि वज्रमिन्द्रो अपीपतत् ॥७ ॥

हे पराक्रमियो ! उन इन्द्रदेव ने वृत्र के मर्मस्थल पर वज्र द्वारा प्रहार कर दिया है, इसलिए निश्चित रूप से अब आप सभी रिपुओं पर चढ़ाई (आक्रमण) करें ; क्योंकि कोई भी ऐसा योद्धा नहीं है , जो आपको अवरुद्ध कर सके ॥७ ॥

७६३४. **मनोजवा अयमान आयसीमतरत्पुरम् ।**
दिवं सुपर्णो गत्वाय सोमं वज्रिण आभरत् ॥८ ॥

मन के वेग से चलने वाले गरुड़, लौह नगरों को पार करते हुए दिव्यलोक में पहुँचकर वज्रधारी इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस ले आएँ ॥८ ॥

७६३५. **समुद्रे अन्तः शयत उद्ना वज्रो अभीवृतः ।**
भरन्त्यस्मै संयतः पुरःप्रस्रवणा बलिम् ॥९ ॥

उन इन्द्रदेव का वज्र पानी (मेघों) से आवृत होकर समुद्र (अंतरिक्ष) के बीच विद्यमान रहता है । युद्ध की इच्छा करने वाले शत्रु , उस (वज्र) के लिए अपनी बलि चढ़ाते हैं ॥९ ॥

७६३६. **यद्वाग् वदन्त्यविचेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।**
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि क्व स्विदस्याः परमं जगाम ॥१० ॥

अब अज्ञानियों को ज्ञान-सम्पन्न बनाने वाली तथा विद्वानों को आनन्दित करने वाली वाणी जब यज्ञों में प्रकट होती है, तब चारों दिशाओं से अन्न तथा जल का दोहन होता है । यह दिव्य वाणी किस स्थान से प्रकट हुई, कुछ पता नहीं है ? ॥१० ॥



७६३७. देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥११ ॥

देवताओं ने जिस दिव्यवाणी को उत्पन्न किया, विविध प्रकार के पशु (प्राणी) उसका उच्चारण करते हैं । अन्न और बल प्रदान करने वाली तथा गौ के सदृश हर्ष प्रदान करने वाली , वह वाणी हमारे द्वारा भली-भाँति स्तुत होती हुई , हमारे समीप आए ॥११ ॥

७६३८. सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व द्यौर्देहि लोकं वज्राय विष्कभे ।
हनाव वृत्रं रिणचाव सिन्धूनिन्द्रस्य यन्तु प्रसवे विसृष्टाः ॥१२ ॥

हे सखा विष्णुदेव ! आप अत्यधिक पराक्रम प्रकट करें । हे द्युलोक ! आप हमारे वज्र के गमन के लिए विस्तृत स्थान प्रदान करें । हे विष्णुदेव ! हम और आप एक साथ होकर वृत्र का संहार करें और जल को प्रवाहित करें । वे जल, मुक्त होकर इन्द्रदेव के आदेश से प्रवाहित हों ॥१२ ॥

[सूक्त - १०१]

[**ऋषि** जमदग्नि भार्गव । **देवता** - १ से ५ वें के तृतीय चरण तक मित्रावरुण, ५ वें के चतुर्थ चरण से ६ तक आदित्यगण, ७-८ अश्विनीकुमार, ९-१० वायु , ११-१२ सूर्य, १३ उषा अथवा सूर्यप्रभा, १४ पवमान, १५-१६ गौ । **छन्द** - १-२, ५-१२ प्रगाथ (विषमा बृहती, समासतो बृहती) , ३ गायत्री, ४ सतोबृहती, १३ बृहती, १४ - १६ त्रिष्टुप् ।]

७६३९. ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये ।
यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टय आचक्रे हव्यदातये ॥१ ॥

जो व्यक्ति मित्रावरुण को अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिए आहुति प्रदान करता है, वही यथार्थ रूप में, देवताओं को हर्षित करने के लिए आहुति प्रदान करता है ॥१ ॥

७६४०. वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा नरा राजाना दीर्घश्रुत्तमा ।
ता बाहुता न दंसना रथर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥२ ॥

वे मित्रावरुण अत्यन्त शक्ति-सम्पन्न, तेज-सम्पन्न, श्रेष्ठनायक, विराट् दृष्टि-सम्पन्न तथा महान् मेधावी हैं । वे अपनी दोनों बाहुओं के सदृश सूर्य की रश्मियों के साथ यज्ञ-कृत्य में पधारते हैं ॥२ ॥

७६४१. प्र यो वां मित्रावरुणाजिरो दूतो अद्रवत् । अयःशीर्षा मदेरघुः ॥३ ॥

हे मित्रावरुणदेवो ! जो यजमान सेवा करने के लिए दूत के रूप में आपके समीप आते हैं, वे स्वर्ण से अलंकृत सिर वाले होकर हर्ष प्रदायक धन प्राप्त करते हैं ॥३ ॥

७६४२. न यः संपृच्छे न पुनर्हवीतवे न संवादाय रमते ।
तस्मान्नो अद्य समृतेरुरुष्यतं बाहुभ्यां न उरुष्यतम् ॥४ ॥

हे मित्रावरुणदेवो ! जो व्यक्ति किसी प्रश्न में रस नहीं लेते । यज्ञ-कर्म तथा श्रेष्ठ भाषण से भी हर्षित नहीं होते, ऐसे शत्रु के साथ युद्ध में आप अपने बाहुबल से हमारी रक्षा करें ॥४ ॥

[जो दुराग्रही व्यक्ति सहज जिज्ञासापूर्वक, सत्परामर्श एवं सत्कर्म को भी मान्यता नहीं देता, उससे तो बलपूर्वक ही निपटना पड़ता है ।]



७६४३. **प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो ।**
वरूथ्यं१ वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत ॥५ ॥

हे परमार्थी याज्ञिको ! 'मित्र' 'वरुण' और 'अर्यमादेव' के यज्ञशाला में प्रतिष्ठित होने के बाद आप छन्दोबद्ध गेय स्तोत्रों से उनकी प्रार्थना करें ॥५ ॥

७६४४. **ते हिन्विरे अरुणं जेन्यं वस्वेकं पुत्रं तिसृणाम् ।**
ते धामान्यमृता मर्त्यानामदब्धा अभि चक्षते ॥६ ॥

वे मित्रावरुणदेव लाल रंग के सूर्य के सदृश ओजस्वी, विजय प्राप्त कराने वाले तथा सबको निवास प्रदान करने वाले होकर तथा तीनों लोकों (द्युलोक, भूलोक तथा अन्तरिक्ष लोक) के इकलौते पुत्र सूर्य को उदय होने के निमित्त प्रेरणा देते हैं । आलस्यरहित अविनाशी देवगण मनुष्यों के स्थानों का निरीक्षण करते हैं ॥६ ॥

७६४५. **आ मे वचांस्युद्यता द्युमत्तमानि कर्त्वा ।**
उभा यातं नासत्या सजोषसा प्रति हव्यानि वीतये ॥७ ॥

सत्य का पालन करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे द्वारा उच्चारित की गई वाणी के पास हवियों के सेवन करने के निमित्त पधारें ॥७ ॥

७६४६. **रातिं यद्वामरक्षसं हवामहे युवाभ्यां वाजिनीवसू ।**
प्राचीं होत्रां प्रतिरन्तावितं नरा गृणाना जमदग्निना ॥८ ॥

धन-धान्य से सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! हम, आप दोनों से नीतियुक्त दान की कामना करते हैं । जमदग्नि ऋषि से स्तुत्य होकर उनकी प्राचीन स्तुतियों को समृद्ध करते हुए आप दोनों पधारें ॥८ ॥

७६४७. **आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।**
अन्तः पवित्र उपरि श्रीणानो३यं शुक्रो अयामि ते ॥९ ॥

हे वायो ! भली-भाँति अभिषुत किये गये पवित्र सोमरस को हम आपके लिए प्रदान करते हैं । दिव्यलोक का स्पर्श करने वाले हमारे इस यज्ञ में, श्रेष्ठ स्तोत्रों के समीप आप पधारें ॥९ ॥

७६४८. **वेत्यध्वर्युः पथिभी रजिष्ठैः प्रति हव्यानि वीतये ।**
अधा नियुत्व उभयस्य नः पिब शुचिं सोमं गवाशिरम् ॥१० ॥

हे वायो ! याजकगण आपके सेवन के लिए आहुतियों को सरल मार्गों से ले जाते हैं । आप शुद्ध तथा गौदुग्ध मिले हुए, हमारे दोनों तरह के सोमरस का पान करें ॥१० ॥

७६४९. **बण्महाँ असि सूर्य बळादित्य महाँ असि ।**
महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देव महाँ असि ॥११ ॥

प्रेरक, अदितिपुत्र हे इन्द्रदेव ! यह सुनिश्चित सत्य है कि आप महान् तेजस्वी हैं । हे देव ! आप महान् शक्तिशाली भी हैं, आपकी महानता का हम गुण-गान करते हैं ॥११ ॥

७६५०. **बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।**
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥१२ ॥



हे सूर्यदेव ! आप अपने यश के कारण महान् हैं। देवों के बीच विशेष महत्त्व के कारण आप महान् हैं। आप तमिस्रा (अन्धकार) रूपी असुरों का नाश करने वाले हैं। पुरोहित के समान देवों का नेतृत्व करने वाले हैं। आपका तेज अदम्य, सर्वव्यापी और अविनाशी है ॥१२ ॥

७६५१. **इयं या नीच्यर्किणी रूपा रोहिण्या कृता।**
चित्रेव प्रत्यदर्श्यायत्य१न्तर्दशसु बाहुषु ॥१३ ॥

वे सौन्दर्य युक्त उषा देवी नीचे की तरफ मुख किए हुए सूर्य के प्रताप से ही उत्पन्न हुई हैं। वे विश्व की दशों दिशाओं से आती हुई, चिह्नित गौ के सदृश दर्शनीय हैं ॥१३ ॥

७६५२. **प्रजा ह तिस्रो अत्यायमीयुर्न्य१न्या अर्कमभितो विविश्रे।**
बृहद्ध तस्थौ भुवनेष्वन्तः पवमानो हरित आ विवेश ॥१४ ॥

तीनों भुवनों में जिन प्रजाओं का सृजन किया गया है, वे समस्त प्रजाएँ सूर्यदेव के आश्रित रहती हैं। वे विराट् सूर्यदेव समस्त लोकों में व्याप्त हैं तथा वायुदेव समस्त दिशाओं में समाविष्ट हो रहे हैं ॥१४ ॥

७६५३. **माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।**
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥१५ ॥

हम विद्वान् लोगों से यही कहते हैं कि वे अपराधरहित तथा न मारने योग्य गौओं को न मारें; क्योंकि गौ-रुद्रों की माँ, वसुओं की पुत्री, आदित्यों की बहिन तथा अमृत की मूल हैं ॥१५ ॥

[यहाँ गौ का अर्थ गाय तथा दिव्य विद्या भी सिद्ध होता है। विद्या के सूत्रों की अवमानना ही उनका हनन है। वह पातक मनुष्य को ले डूबता है।]

७६५४. **वचोविदं वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम्।**
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामा मावृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः ॥१६ ॥

जो वाणी को प्रेरणा प्रदान करती हैं, सबको देवत्व प्रदान करती हैं, हर प्रकार से वर्णित की जाती हैं तथा हमारी ओर आती हैं, ऐसी गौ (विद्या) को हीन बुद्धि वाले मनुष्य ही त्यागते हैं ॥१६ ॥

[सूक्त - १०२]

[**ऋषि** - प्रयोग भार्गव अथवा अग्नि बार्हस्पत्य अथवा अग्नि - पावक अथवा सहस के पुत्र - गृहपति और यविष्ठ अथवा उन दोनों में से कोई एक। **देवता** - अग्नि। **छन्द** - गायत्री।]

७६५५. **त्वमग्ने बृहद्वयो दधासि देव दाशुषे। कविर्गृहपतिर्युवा ॥१ ॥**

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त ज्ञानी, घर के मालिक तथा हमेशा युवा बने रहने वाले हैं। हवि प्रदान करने वालों को आप महान् अन्न प्रदान करते हैं ॥१ ॥

७६५६. **स न ईळानया सह देवाँ अग्ने दुवस्युवा। चिकिद्विभानवा वह ॥२ ॥**

हे तेजसम्पन्न अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ ज्ञानी हैं। हमारी भावविह्वल पुकार से प्रेरित होकर समस्त देवों को आप यहाँ ले आएँ ॥२ ॥

७६५७. **त्वया ह स्विद्युजा वयं चोदिष्ठेन यविष्ठ्य। अभि ष्मो वाजसातये ॥३ ॥**



अत्यन्त बलशाली हे अग्निदेव ! समस्त देवों को सन्मार्ग में प्रेरित करने वाले आप ही हैं। हम आपके सहयोग से धन-धान्य प्राप्त करने के लिए रिपुओं को परास्त करें ॥३ ॥

७६५८. और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥४ ॥

समुद्र में वास करने वाले हे अग्निदेव ! 'भृगु' और 'अप्नवान्' आदि ज्ञानी ऋषियों ने सच्चे मन से आपकी प्रार्थना की है । हम भी हृदय से आपकी स्तुति करते हैं ॥४ ॥

७६५९. हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम् ॥५ ॥

मेघों के सदृश गर्जना करने वाले, सागर में सोने वाले, वायु के सदृश शब्द करने वाले अत्यन्त शक्तिशाली तथा विद्वान् अग्निदेव को हम बुलाते हैं ॥५ ॥

[मेघ गर्जन के पीछे विद्युत्, समुद्र में वडवाग्नि तथा वायु की गतिशीलता के पीछे ऊष्मा, यह तीनों अग्नि के ही विभिन्न रूप हैं ।]

७६६०. आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥६ ॥

'भग' देवता के भोग के सदृश तथा आदित्य के उदय होने के सदृश सागर में सोने वाले अग्निदेव को हम बुलाते हैं ॥६ ॥

७६६१. अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् । अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥७ ॥

हे ऋत्विजो ! अपने श्रेष्ठतम पारमार्थिक कार्यों (यज्ञों) में सहायक, अतिश्रेष्ठ, सबके हितैषी तथा बलशाली अग्निदेव का सान्निध्य प्राप्त करो ॥७ ॥

७६६२. अयं यथा न आभुवत्त्वष्टा रूपेव तक्ष्या । अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥८ ॥

विश्वकर्मा (बढ़ई) जिस प्रकार लकड़ी को संस्कारित करके उत्तम स्वरूप प्रदान करता है, उसी प्रकार इन अग्निदेव के कर्मों से हम यशस्वी होते हैं एवं श्रेष्ठ स्वरूप प्राप्त करते हैं ॥८ ॥

७६६३. अयं विश्वा अभि श्रियोऽग्निर्देवेषु पत्यते । आ वाजैरुप नो गमत् ॥९ ॥

सभी प्रकार के ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाले अग्निदेव हमारे निकट अन्न एवं धन सहित पधारें ॥९ ॥

७६६४. विश्वेषामिह स्तुहि होतॄणां यशस्तमम् । अग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥१० ॥

हे याजको ! समस्त होताओं में सर्वाधिक कीर्तिमान् तथा यज्ञों में प्रमुख अग्निदेव की यज्ञमण्डप में आप प्रार्थना करें ॥१० ॥

७६६५. शीरं पावकशोचिषं ज्येष्ठो यो दमेष्वा । दीदाय दीर्घश्रुत्तमः ॥११ ॥

जो अग्निदेव देवताओं में सर्वश्रेष्ठ तथा अत्यन्त ज्ञानी होकर याजकों के गृह (यज्ञमण्डप) में प्रदीप्त होते हैं, हम उन पवित्र ज्योतिरूप अग्निदेव की प्रार्थना करें ॥११ ॥

७६६६. तमर्वन्तं न सानसिं गृणीहि विप्र शुष्मिणम् । मित्रं न यातयज्जनम् ॥१२ ॥

हे स्तोताओ ! अश्व की भाँति सेवा करने योग्य, अत्यन्त शक्ति-सम्पन्न, सखा की तरह हर्ष प्रदायक तथा रिपुओं का संहार करने वाले उन अग्निदेव की प्रार्थना करें ॥१२ ॥

७६६७. उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः । वायोरनीके अस्थिरन् ॥१३ ॥

हे अग्निदेव ! यजमान की वाणी से उच्चरित होने वाली प्रिय स्तुतियाँ आपके गुणों को प्रकट करती हैं । वे (यजमान) वायु के सहयोग से आपको प्रदीप्त करते हैं ॥१३ ॥



७६६८. **यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसन्दिनम्। आपश्चिन्नि दधा पदम् ॥१४॥**

जिन अग्निदेव (या अग्निकुण्ड) के चारों ओर तीन धारण क्षमताएँ (या मेखलाएँ) बँधी हुई हैं तथा जिनके चारों ओर विभिन्न लोक (या कुशाएँ) खुली स्थिति में स्थापित हैं; उन (अग्निदेव) के साथ जल भी स्थिर पद प्राप्त करता है ॥१४॥

[मेखलाओं के चारों ओर नाली बनाकर भी जल डाला जाता है तथा अग्नि के प्रभाव से वाष्परूप में जल विभिन्न लोकों में भी संतत बना रहता है।]

७६६९. **पदं देवस्य मीळ्हुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः। भद्रा सूर्य इवोपदृक् ॥१५॥**

प्रशंसनीय और तेजस्वी अग्निदेव के स्थान, रिपुओं की बाधाओं से रहित एवं सुरक्षित हैं। उनका दर्शन भी सूर्य दर्शन के समान कल्याणकारी है ॥१५॥

७६७०. **अग्ने घृतस्य धीतिभिस्तेपानो देव शोचिषा।**
आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥१६॥

हे अग्निदेव! आपकी वृद्धि के साधनभूत, घी से समर्थ (प्रज्वलित) होते हुए, आप अपनी लपटों के द्वारा देवों का आवाहन करें तथा उनका यजन करें ॥१६॥

७६७१. **तं त्वाजनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः। हव्यवाहममर्त्यम् ॥१७॥**

हे अग्निदेव! आप विद्वान्, अविनाशी तथा आहुतियों का वहन करने वाले हैं। सभी देवताओं ने आपको माता के समान उत्पन्न किया है ॥१७॥

७६७२. **प्रचेतसं त्वा कवेऽग्ने दूतं वरेण्यम्। हव्यवाहं नि षेदिरे ॥१८॥**

हे ज्ञानी अग्निदेव! आप श्रेष्ठ ज्ञान वाले, आहुतियों का वहन करने वाले तथा वरण करने योग्य हैं। आपको समस्त देवता सम्मानपूर्वक प्रतिष्ठित करते हैं ॥१८॥

७६७३. **नहि मे अस्त्यघ्न्या न स्वधितिर्वनन्वति। अथैतादृग्भरामि ते ॥१९॥**

हे अग्निदेव! हमारे पास (अग्नि के लिए उपयोगी) दुग्ध प्रदान करने वाली गौ नहीं है और न ही लकड़ी (समिधा) काटने वाली कुल्हाड़ी है, फिर भी अपने कल्याण के लिए (अभाव में भी) हम आपका पोषण करते हैं ॥१९॥

७६७४. **यदग्ने कानि कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि।**
ता जुषस्व यविष्ठ्य ॥२०॥

हे सामर्थ्यवान् अग्निदेव! जो भी समिधाएँ आपके निमित्त समर्पित की जाएँ, वे सभी घृत-आहुतियों के समान ही आपको परमप्रिय हों। आप उन सभी को प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करें ॥२०॥

७६७५. **यदत्त्युपजिह्विका यद्वम्रो अतिसर्पति। सर्वं तदस्तु ते घृतम् ॥२१॥**

हे तरुण अग्निदेव! दीमक जिस काष्ठ को चट कर जाती है, वल्मीक जिस काष्ठ को खा जाती है, ऐसे काष्ठ की समिधाएँ आपको घृतवत् प्रिय हों ॥२१॥

७६७६. **अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः। अग्निमीधे विवस्वभिः ॥२२॥**

मनोयोगपूर्वक अग्नि प्रदीप्त करने वाले साधक अपनी श्रद्धा को भी प्रदीप्त करते हैं। अस्तु, (सूर्य किरणों) के साथ ही अग्निहोत्र की व्यवस्था करते हैं ॥२२॥



[सूक्त - १०३]

[**ऋषि** - सोभरि काण्व । **देवता** - अग्नि, १४ अग्नि और मरुद्गण । **छन्द** - बृहती, ५ विराड्रूपा; ७, ९, ११, १३ सतोबृहती; ८, १२ ककुप्, १० ह्रसीयसी (गायत्री), १४ अनुष्टुप् ।]

७६७७. **अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन्व्रतान्यादधुः ।**
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्त नो गिरः ॥१ ॥

धर्ममार्गों के ज्ञाता अग्निदेव प्रकट हो गये हैं, जिनके माध्यम से यज्ञ के नियम पूरे किये जाते हैं । उत्तम मार्ग से प्रकट हुए, सज्जनों की प्रगति के आधार अग्निदेव हमारी स्तुतियाँ स्वीकार करें ॥१ ॥

७६७८. **प्र दैवोदासो अग्निर्देवाँ अच्छा न मज्मना ।**
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ॥२ ॥

इन्द्रदेव के समतुल्य शक्तिशाली अग्निदेव 'दिवोदास' (दिव्य कार्यों के लिए समर्पित व्यक्ति) के लिए पृथ्वी पर प्रकट हुए । अपने यज्ञीय कार्यों के परिणाम स्वरूप वे (दिवोदास) स्वर्ग के अधिकारी बने ॥२ ॥

७६७९. **यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः ।**
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाऽग्निं धीभिः सपर्यत ॥३ ॥

कर्त्तव्य परायणों से कर्महीन मनुष्य भयभीत रहते हैं । हे मनुष्यो ! सहस्रों देने वाले-बुद्धिपूर्वक उत्तम कर्मों से सहस्रों ऐश्वर्य देने वाले-अग्निदेव की सेवा करो ॥३ ॥

७६८०. **प्र यं राये निनीषसि मर्तो यस्ते वसो दाशत् ।**
स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ॥४ ॥

सर्वाधार हे अग्निदेव ! जो साधक ऐश्वर्य के लिए आपके उपासक बनकर हवि प्रदान करते हैं, वे सहस्रों व्यक्तियों के पोषण में सक्षम वीर पुत्र को उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं ॥४ ॥

७६८१. **स दृळहे चिदभि तृणत्ति वाजमर्वता स धत्ते अक्षिति श्रवः ।**
त्वे देवत्रा सदा पुरूवसो विश्वा वामानि धीमहि ॥५ ॥

प्रचुर ऐश्वर्यों के स्वामी हे अग्निदेव ! जो याजक आपकी प्रार्थना करते हैं, वे शक्तिशाली रिपुओं की सुदृढ़ पुरियों में विद्यमान अन्न को, अपने अश्वों द्वारा विनष्ट करके, अविनाशी कीर्ति ग्रहण करते हैं । हे अग्निदेव ! आप जैसे महान् दाता के अधीन रहकर हम भी श्रेष्ठ ऐश्वर्यों को प्राप्त करें ॥५ ॥

७६८२. **यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।**
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्यग्नये ॥६ ॥

याजकों को धन-धान्य के रूप में अपार वैभव देकर आनन्दित करने वाले अग्निदेव की, हम प्रथम स्तुति करते हैं, जैसे उन्हें सर्वप्रथम सोम का पात्र समर्पित किया जाता है ॥६ ॥

७६८३. **अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।**
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ॥७ ॥

हे अग्ने ! श्रेष्ठ दान-दाता और देवपक्षधर यजमानों द्वारा रथ में जोते गये अश्वों के रथ वाहक के समान ही आपकी स्तुति की जाती है । आप याजकों के पुत्र-पौत्रादिकों को, धनवानों के धन को छीनकर प्रदान करें ॥७ ॥



७६८४. प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे । उपस्तुतासो अग्नये ॥८ ॥

हे स्तोताओ ! आप श्रेष्ठ स्तोत्रों द्वारा अग्निदेव की स्तुति करें । वे महान् सत्य और यज्ञ के पालक, महान् तेजस्वी और रक्षक हैं ॥८ ॥

७६८५. आ वंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्नवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ॥९ ॥

वीरों के समान प्रतापी अग्निदेव, आवाहित एवं प्रदीप्त होकर श्रेयस्कर अन्न-धन प्रदान करते हैं । इन अग्निदेव की अनुकूलता हमें प्रचुर मात्रा में धन-धान्य प्रदान करे ॥९ ॥

७६८६. प्रेष्ठमु प्रियाणां स्तुह्यासावातिथिम् । अग्निं रथानां यमम् ॥१० ॥

हे स्तोताओ ! जो अग्निदेव आत्मीय जनों में सबसे अधिक पूज्य अतिथि स्वरूप तथा समस्त रथों का नियंत्रण करने वाले हैं, उन अग्निदेव की आप सभी प्रार्थना करें ॥१० ॥

[सभी प्रकार के रथ-वाहन, अग्नि अर्थात् ऊर्जा के ही किसी न किसी रूप से संचालित होते हैं ।]

७६८७. उदिता यो निदिता वेदिता वस्वा यज्ञियो ववर्तति ।
दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाजं सिषासतः ॥११ ॥

वे अग्निदेव अत्यन्त विद्वान् और वन्दनीय हैं तथा वे प्रकट और गुप्त ऐश्वर्यों को प्रदान करते हैं । जिनकी विशाल लपटें, अधोगामी सागर की तरंगों की तरह भयंकर हैं, उन अग्निदेव की आप प्रार्थना करें ॥११ ॥

७६८८. मा नो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः । यः सुहोता स्वध्वरः ॥१२ ॥

हमारे प्रिय अतिथि स्वरूप अग्निदेव को यज्ञ से दूर मत ले जाओ । वे देवताओं को बुलाने वाले, धनदाता एवं अनेकों मनुष्यों द्वारा स्तुत्य हैं ॥१२ ॥

७६८९. मो ते रिषन्ये अच्छोक्तिभिर्वसोऽग्ने केभिश्चिदेवैः ।
कीरिश्चिद्धि त्वामीट्टे दूत्याय रातहव्यः स्वध्वरः ॥१३ ॥

सबको निवास प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! जो यजमान अपनी श्रेष्ठ वाणियों तथा श्रेष्ठ साधनों के द्वारा आपकी साधना करते हैं, वे कभी भी दुःखी नहीं होते । यज्ञ सम्पादन करने वाले एवं आहुति प्रदान करने वाले याजक तथा सन्देशवाहक का कार्य करने वाले भी आपकी स्तुति करते हैं ॥१३ ॥

७६९०. आग्ने याहि मरुत्सखा रुद्रेभिः सोमपीतये ।
सोभर्या उप सुष्टुतिं मादयस्व स्वर्णरे ॥१४ ॥

मरुतों के मित्र हे अग्निदेव ! आप हमारे यज्ञमण्डप में सोमपान के निमित्त मरुद्गणों के साथ पधारें । हे अग्निदेव ! मुझ 'सोभरि' ऋषि की प्रार्थनाओं को ग्रहण करके आप हर्षित हों ॥१४ ॥

॥ इति अष्टमं मण्डलं समाप्तम् ॥



ॐ त्र्यम्बकं यजामहे
सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्
मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्॥

— ऋ० ७.५९.१२

हम सुरभित पुण्य, कीर्ति एवं पुष्टिवर्धक (पोषण साधनों को बढ़ाने वाले) तथा तीन प्रकार से संरक्षण देने वाले (त्र्यम्बक) भगवान् की उपासना करते हैं। वे रुद्रदेव हमें उर्वारुक फल (ककड़ी-खरबूजा आदि) की तरह मृत्युबन्धन से मुक्त करें, (परन्तु) अमरता के सूत्रों से दूर न करें।

[आचार्य सायण ने "त्र्यंबक" का अर्थ त्रिदेवों-ब्रह्मा, विष्णु, महेश के पितृरूप देव भी किया है। जिस प्रकार ककड़ी-खरबूजा आदि पकने पर डंठल से सहज छूट जाते हैं, वैसे ही हम मृत्यु या संसार से मुक्त हो जाएँ; किन्तु अमृतत्व से जुड़े रहें, ऐसी प्रार्थना की गई है।]

***



परिशिष्ट - १

ऋग्वेद भाग - ३ के ऋषियों का संक्षिप्त परिचय

१. **अपाला आत्रेयी (८.९१.१-७ *)** - वैदिक ग्रन्थों में जहाँ मन्त्रद्रष्टा ऋषियों की प्रतिष्ठा है, वहीं मन्त्रद्रष्ट्री ऋषिकाओं का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसी क्रम में मन्त्रद्रष्ट्री अपाला आत्रेयी भी प्रतिष्ठित हैं। उन्हें ऋ० ८.९१ सूक्त के दर्शन करने का गौरव प्राप्त है। सप्तर्षि मंडल के प्रसिद्ध ऋषि अत्रि की सुपुत्री होने के कारण उन्हें 'आत्रेयी' विशेषण से विभूषित किया जाता है। बृहद्देवता २.८२ में अनेक ऋषि-ऋषिकाओं के साथ अपाला आत्रेयी के ऋषित्व का भी प्रतिपादन है **घोषा गोधा विश्ववारा अपालोपनिषन्निषत्**। आचार्य सायण ने भी ऋग्वेद भाष्य में उनके ऋषित्व को विवेचित करते हुए लिखा है - **अत्रेः पुत्र्यपालाख्या त्वग्दोष परिहारायानेन सूक्तेनेन्द्रं स्तुतवती। अतः सैवर्षिः** (ऋ० ८.९१ सा० भा०)। ऋग्वेद ८.९१.७ में अपाला का नाम भी उल्लिखित है - **अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्व्यकृणोः सूर्यत्वचम्**।

२. **अर्चनाना आत्रेय (८.४२)** द्र० - ऋ० भाग - १।

३. **आयु काण्व (८.५२)** - कण्वगोत्रीय ऋषि 'आयु' का ऋषित्व ऋ० ८.५२ में दृष्टिगोचर होता है, इस सूक्त में ऋषि ने इन्द्रदेव की स्तुति की है। कण्व ऋषि के वंश में जन्म लेने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद 'काण्व' संयुक्त करके इन्हें आयु काण्व कहा गया। इनके सम्बन्ध में अन्यत्र कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं होता; पर आचार्य सायण ने अपने ऋग्वेद भाष्य में इनका ऋषित्व विवेचित किया है - **इति दशर्चं चतुर्थं सूक्तम् आयवमैन्द्रम्। अनुक्रान्तं च - 'यथा मनावायुः' इति। काण्व आयुर्ऋषिः इन्द्रो देवता** (ऋ० ८.५२ सा० भा०)। वैदिक कोश पृष्ठ ३८ के अनुसार 'आयु' नामक एक राजा भी हुए हैं, जो 'कुत्स' और 'अतिथिग्व' से सम्बन्धित थे। 'पिशल' के अनुसार आयु 'पक्थों' के राजा थे, जो इन्द्र की सहायता से 'वेश' पर विजयी हुए थे (ऋ० १०.४९.५), पर ये आयु कण्ववंशीय नहीं थे।

४. **आसङ्ग प्लायोगि (८-१.३०-३३)** - वैदिक ऋषियों में आसङ्ग प्लायोगि भी मंत्रद्रष्टा के रूप में प्रख्यात हैं। इन्हें ऋग्वेद के कुछ मंत्रों (८.१.३०-३३) के द्रष्टा होने का गौरव प्राप्त हुआ है, जिनमें इनके द्वारा मेधातिथि को दिये गये दान का वर्णन करके आत्म स्तुति की गई है। कहा जाता है कि आसङ्ग, राजा प्लयोग के पुत्र थे, जिसके कारण इनके नाम के साथ अपत्यार्थक पद 'प्लायोगि' संयुक्त किया जाता है। आचार्य सायण लिखते हैं कि एक बार दैव शापवश राजा आसङ्ग प्लायोगि का पुंस्त्व समाप्त हो गया और वे स्त्री हो गये थे, तब ऋषि मेधातिथि के प्रयत्न से वे पुनः पुरुष हुए और उन्हें (मेधातिथि को) प्रचुर धन प्रदान किया- **प्लयोगनाम्नो राज्ञः पुत्र आसङ्गाभिधानो राजा देवशापात् स्त्रीत्वमनुभूय पश्चात्तपोबलेन मेधातिथेः प्रसादात् पुमान् भूत्वा तस्मै बहुधनं दत्त्वा स्वकीयमन्तरात्मानं दत्तदानं स्तुहि ....** (ऋ० ८.१ सा० भा०)। इस दान-स्तुति के कारण ही इन्हें ऋषित्व प्राप्त हुआ है। इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए सायणाचार्य ने लिखा है-**अतस्तासामासङ्गाख्यो राजा ऋषिः** (ऋ० ८.१ सा० भा०)। आत्मस्तुति करने के कारण **'या तेनोच्यते सा देवता'** सूत्र के अनुसार ये उपरोक्त चार ऋचाओं के देवता भी हैं-**'स्तुहि स्तुहि' इत्याद्याश्चतस्र आत्मकृतस्य दानस्य स्तूयमानत्वात्तद्देवताकाः** (ऋ० ८.१ सा० भा०)।

५. **इन्द्र (८.१००.४-५)** द्र०-ऋ० भाग-१, २।

६. **इरिम्बिठि काण्व (८.१६-१८)** - इरिम्बिठि काण्व द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद तथा सामवेद में मिलते हैं, जिनमें प्रायः इन्द्रदेव की और कहीं-कहीं अदिति की स्तुति की गई है। कण्व गोत्रीय होने के कारण इन्हें 'काण्व' कहा जाता है। इनके सन्दर्भ में अन्यत्र कोई विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता; परन्तु आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व को स्वीकार करते हुए लिखा है - **'प्र सम्राजम्' इति द्वादशर्चं चतुर्थं सूक्तमिरिम्बिठिनाम्नः काण्वस्यार्षं गायत्रमैन्द्रम्** (ऋ० ८.१६ सा० भा०)।

७. **उशना काव्य (८.८४)** - 'उशना काव्य' का ऋषित्व ऋक्, यजु, साम तीनों वेदों में उपन्यस्त है। कविपुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ 'काव्य' विशेषण संयुक्त किया जाता है। इनके नाम का एक अन्य रूप है "कवि उशनस्।" ये ब्राह्मणों के आचार्य

---

* **ऋग्वेद के मंडल, सूक्त तथा मन्त्रों की संख्या।**



के रूप में प्रख्यात रहे हैं। बाद में देवासुर-संग्राम के प्रसङ्ग में इन्हें असुरों का पुरोहित (शुक्राचार्य) कहा गया है। इनके द्वारा आग्नेय मंत्रों का दर्शन किया गया है। आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व की विवेचना इन शब्दों में की है .... **कवेः पुत्रस्योशनस आर्षं गायत्रमाग्नेयम्। तथानुक्रम्यते - 'प्रेष्ठमुशना काव्य आग्नेयम्' इति** (ऋ० ८.८४ सा० भा०)। यजुर्वेद में इनका ऋषित्व १३.५२-५८ में दृष्टिगोचर होता है। महर्षि कात्यायन ने इनके ऋषित्व का प्रतिपादन सर्वानुक्रमणी में किया है।

८. एकद्यू नौधस (८.८०) - 'एकद्यू नौधस' का ऋषित्व ऋग्वेद ८.८० में दृष्टिगोचर होता है, जिसमें इनके द्वारा इन्द्रदेव की स्तुति की गई है। नोधस् के पुत्र होने के कारण एकद्यू नाम के साथ अपत्यार्थक विशेषण नौधस संयुक्त किया जाता है। इनके विषय में अन्यत्र तो कोई विवरण उपलब्ध नहीं होता; पर आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व का उल्लेख किया है - **अत्रेयमनुक्रमणिका - 'न ह्यन्यं दशैकद्यूनौधसो गायत्रेऽन्त्या दैवी त्रिष्टुप्' इति। एकद्यूर्नाम नोधसः पुत्र ऋषिः** (ऋ० ८.८० सा० भा०)।

९. कलि प्रागाथ (८.६६) - वैदिक ऋषियों में कलि प्रागाथ का नाम भी निर्दिष्ट है। ये अश्विनीकुमारों के कृपापात्र हैं। इनका ऋषित्व ऋग्वेद एवं सामवेद में दृष्टिगोचर होता है। प्रगाथ पुत्र होने के कारण कलि को प्रागाथ विशेषण से विभूषित किया जाता है। ऋग्वेद ८.६६.१५ में इनके लिए बहुवचनान्त शब्द 'कलयः' का प्रयोग हुआ है - **सोम इद्धः सुतो अस्तु कलयो मा बिभीतन**। इनके ऋषित्व को स्वीकारते हुए आचार्य सायण लिखते हैं - **सप्तमं सूक्तं प्रगाथ पुत्रस्य कलेरार्षम्**। (ऋ० ८.६६ सा० भा०)। अथर्ववेद में भी गन्धर्वों के साथ कलि के नाम का उल्लेख मिलता है, किन्तु वहाँ कलि, द्यूतक्रीड़ा से सम्बन्धित प्रतीत होते हैं - **वशा समुद्रमध्यष्ठाद् गन्धर्वैः कलिभिः सह** (अथर्व० १०.१०.१३)।

१०. कश्यप मारीच (८.२९) - वैदिक ऋषियों में सप्तर्षिमण्डल के एक प्रमुख ऋषि कश्यप का नाम भी आता है। इनके द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद तथा सामवेद में उपलब्ध होते हैं। मरीचि पुत्र होने के कारण इन्हें कश्यप मारीच कहते हैं। आचार्य सायण ने इनका मरीचि पुत्र तथा ऋषि होना इन शब्दों में विवेचित किया है - **मरीचि पुत्रः कश्यपो वैवस्वतो मनुर्वा ऋषिः** (ऋ० ८.२९ सा० भा०)। बृहद्देवता में वर्णन मिलता है कि कश्यप ऋषि प्रजापति के पौत्र, मरीचि के पुत्र तथा दक्ष की अदिति आदि तेरह पुत्रियों के पति थे - **प्राजापत्यो मरीचिर्हि मारीचः कश्यपो मुनिः। तस्य देव्योऽभवञ्जाया दाक्षायण्यस्त्रयोदश** (बृह० ५.१४३)। बृहद्देवता में एक अन्यस्थल पर इनके ऋषित्व का भी उल्लेख है - **विहव्यः कश्यप ऋषिर् अवत्सारश्च नाम यः** (बृह० ३.५७)।

११. कुमार आग्नेय (७.१०१-१०२) - ऋग्वैदिक ऋचाओं में कुमार आग्नेय का ऋषित्व दृष्टिगोचर होता है, किन्तु इन ऋचाओं के वैकल्पिक ऋषि के रूप में वसिष्ठ का नाम भी निर्दिष्ट है। कुमार आग्नेय को अग्नि पुत्र माना गया है। इनके ऋषित्व तथा अग्निपुत्रत्व को प्रमाणित करते हुए आचार्य सायण लिखते हैं - **'एते कुमार आग्नेयोऽपश्यद्वसिष्ठ एव वा' इति वक्ष्यमाणत्वादग्निपुत्रः कुमार ऋषिर्वसिष्ठो वा** (ऋ० ७.१०१ सा० भा०)। बृहद्देवताकार ने अग्निताप को कुमार प्रतिपादित किया है। अग्नि से उत्पन्न ताप उसका पुत्र आग्नेय ही हुआ, जिसे कुमार (आग्नेय) कहा गया है- **हरः कुमाररूपेण ब्रुवंस्तामभ्यभाषत** (बृह० ५.२१)। कुमार नामक कई ऋषियों का उल्लेख मिलता है - कुमार आग्नेय (ऋ० ७.१०१-१०२), कुमार आत्रेय (ऋ० ५.२.१,३-८,१०-१२), कुमार यामायन (ऋ० १०.१३५) तथा कुमार हारीत (यजु० १२.६९-७२)।

१२. कुरुसुति काण्व (८.७६-७८) - कुरुसुति काण्व का ऋषित्व ऋग्वेद तथा सामवेद में विवेचित है। कण्व गोत्रीय ऋषियों को काण्व कहा जाता है। उसी परम्परा में ऋषि कुरुसुति काण्व भी हैं। इनके विषय में अन्यत्र कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं होता, पर आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व की विवेचना अपने ऋग्वेद भाष्य में की है - **कुरुसुतिर्नाम काण्व ऋषिः।...... 'इमं नु द्वादश कुरुसुतिः काण्वः' इति** (ऋ० ८.७६ सा० भा०)।

१३. कुसीदी काण्व (८.८१-८३) - कुसीदी (कुसीदिन्) ऋषि कण्व के पुत्र थे, इसी कारण उन्हें भी काण्व कहा जाता है। इनका ऋषित्व ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं सामवेद तीनों वेदों में दृष्टिगोचर होता है। इनके द्वारा दृष्ट ऋचाएँ इन्द्र से सम्बन्धित हैं। यजुर्वेद भाष्य में आचार्य महीधर ने कुसीदी काण्व का ऋषित्व विवेचित किया है - **कुसीदिदृष्टा गायत्र्याश्विन पुरोरुक्** (यजु० ३३.४७ मही० भा०)। ऋग्वेद के सुप्रसिद्ध भाष्यकार आचार्य सायण ने भी इनका ऋषित्व प्रतिपादित किया है - **इति नवर्चं प्रथमं सूक्तं कण्वपुत्रस्य कुसीदिन आर्षं गायत्रमैन्द्रम्** (ऋ० ८.८१ सा० भा०)। बृहद्देवता में भी इनका ऋषित्व प्रमाणित किया गया है - **यमोऽग्निस्तापसः कुत्सः कुसीदी त्रित एव च** (बृह० ३.५८)। निरुक्त में कुसीदिन् शब्द का अर्थ ब्याज लेने वाला बताया गया है।

१४. कृत्नु भार्गव (८.७९) - कृत्नु भार्गव, भृगुवंशीय ऋषि हैं। इसी कारण इन्हें भार्गव कहते हैं। इनके द्वारा दृष्ट ऋचाएँ मात्र ऋग्वेद में मिलती हैं। कोश ग्रन्थों के अनुसार कृत्नु शब्द के अर्थ-भली-भाँति करने वाला, करने के योग्य शक्तिशाली, कलाकार आदि हैं। ऋग्वेद में कर्तनशील या कर्त्ता के अर्थ में कई स्थानों पर यह शब्द प्रयुक्त हुआ है। कुछ स्थलों पर यह शब्द इन्द्र के लिए भी मिलता है। कृत्नु भार्गव के ऋषित्व विषयक प्रमाण अन्यत्र तो अनुपलब्ध हैं; किन्तु सायणाचार्य ने इसका प्रतिपादन इन शब्दों में किया है - **'अयं कृत्नुर्नव कृत्नुर्भार्गवः सौम्यमन्त्यानुष्टुप्' इति। भार्गवः कृत्नुर्ऋषिः** (ऋ० ८.७९ सा० भा०)।



१५. कृश काण्व (८.५५) - कृश काण्व भी वैदिक ऋषियों में प्रतिष्ठा प्राप्त हैं। इनका ऋषित्व मात्र ऋग्वेद में ही दृष्टिगोचर होता है। कण्व ऋषि के वंशज होने के कारण इनका अपत्यार्थक उपनाम काण्व भी है। इनके ऋषित्व का वर्णन अन्यत्र नहीं मिलता; किन्तु आचार्य सायण के ऋग्वेद भाष्य में इसका (ऋषित्व का) विवेचन मिलता है - **'भूरीत्' इति पञ्चर्चं सप्तमं सूक्तं काण्वस्य कृशस्यार्षं प्रस्कण्वदान देवताकं गायत्रम्** (ऋ० ८.५५ सा० भा०)। वालखिल्य सूक्त ८.५४.२ में संवर्त के साथ कृश को इन्द्र के लिए यज्ञ करने वाला वर्णित किया गया है ; किन्तु ये कृश (८.५४.२) काण्व नहीं हैं और न ऋषि हैं, वरन् एक यजमान के रूप में वर्णित हैं।

१६. कृष्ण आङ्गिरस (८.८५-८७) - ऋग्वेद तथा सामवेद में भी कृष्ण आङ्गिरस का ऋषित्व निर्दिष्ट है। ऋ० ८.८५.३ में ऋषि के रूप में इनका नाम मिलता है- **अयं वां कृष्णो अश्विना हवते वाजिनीवसू** (ऋ० ८.८५.३)। अङ्गिरस् गोत्रीय होने से इन्हें कृष्ण आंगिरस कहा जाता है। इनके ऋषित्व को विवेचित करते हुए सायणाचार्य ऋग्वेद भाष्य में लिखते हैं - **'आ मे हवम्' इति नवर्चं पञ्चमं सूक्तम्। कृष्णो नामाङ्गिरस ऋषिः** (ऋ० ८.८५ सा० भा०)। कौषीतकि ब्राह्मण ३०.९ में भी इन्हें आङ्गिरस गोत्रीय कृष्ण प्रतिपादित किया गया है। इनके पुत्र विश्वक (जिन्हें अपत्यवाचक नाम 'कार्ष्णि' से सम्बोधित किया जाता है) अगले सूक्त ८.८६ के द्रष्टा हैं। उनका (विश्वक का) पैतृक नाम 'कृष्णिय' भी ऋग्वेद के अन्य सूक्तों में मिलता है।

१७. गोपवन आत्रेय (८.७३-७४) - गोपवन आत्रेय अत्रि वंशीय ऋषि हैं। इसी कारण इन्हें आत्रेय भी कहते हैं। इनके वंशज गौपवन हैं, जिनका वर्णन काण्वशाखीय बृ० उ० २.६.१.४ की प्रथम दो वंश सूचियों में 'पौतिमाष्य' के शिष्य के रूप में मिलता है। गोपवन आत्रेय द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद तथा सामवेद में भी मिलते हैं, जो अश्विनी कुमारों, श्रुतर्वण तथा अग्निदेव से सम्बन्धित हैं। सामवेद के २९ वें मंत्र में इनका नाम भी उल्लिखित है- **तं त्वा गोपवनो गिरा...**। ऋग्वेद में इनके द्वारा दृष्ट सूक्त के वैकल्पिक ऋषि के रूप में सप्तवध्रि का नाम लिया जाता है - **'उदीराथां गोपवन आत्रेयः सप्तवध्रिर्वाश्विनम्'** (ऋ० ८.७३ सा० भा०)।

१८. गोषूक्ति - अश्वसूक्ति काण्वायन (८.१४-१५) - गोषूक्ति और अश्वसूक्ति कण्वगोत्रीय ऋषि हैं। इसी कारण इन्हें काण्वायन कहा जाता है। इन दोनों ऋषियों का समुदित ऋषित्व प्राप्त होता है। इनके द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद में प्राप्त होते हैं, जो इन्द्र से सम्बन्धित हैं। इनके ऋषित्व के सन्दर्भ में आचार्य सायण विवेचना करते हैं- **तथा चानुक्रान्तम् - 'यदिन्द्र पञ्चोना गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ' इति** (ऋ० ८.१४ सा० भा०)। पंचविंश ब्राह्मण १९.४.९ में 'गौषूक्त' नाम के एक साम द्रष्टा का ऋषि रूप में उल्लेख मिलता है। सम्भवतः ये वही गोषूक्ति हैं, जिनका ऋषित्व ऋ० ८.१४-१५ में वर्णित है। ताण्ड्य महाब्राह्मण में गोषूक्त शब्द ऋषिनाम के रूप में उल्लिखित है। ऐसा प्रतीत होता है कि गोषूक्त के पुत्र अथवा वंशजों का नाम 'गोषूक्ति' है।

१९. जमदग्नि भार्गव (८.१०१) - द्र० ऋ० भाग-२।

२०. तिरश्ची आङ्गिरस (८.९५-९६) - वैदिक ऋषियों में तिरश्ची आङ्गिरस का नाम भी प्रतिष्ठित है। ऋग्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद में इनके द्वारा दृष्ट मन्त्र उपलब्ध होते हैं, जो प्रायः इन्द्र से सम्बन्धित हैं। अङ्गिरस् गोत्रीय होने के कारण 'तिरश्ची' को आङ्गिरस कहते हैं। पंचविंश ब्राह्मण १२.६.१२ में भी तिरश्ची आङ्गिरस नाम के ऋषि का उल्लेख है। ऋग्वेद ८.९५ सा० भा० में इनका स्पष्ट ऋषित्व विवेचित है - **तिरश्चीर्नामाङ्गिरस ऋषिः**। इसी सूक्त की चौथी ऋचा में इस सूक्त के ऋषि तिरश्ची का नाम भी उल्लिखित है - **श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति**। ऋ० ८.९६ के ऋषि तिरश्ची आङ्गिरस अथवा द्युतान मारुत् हैं। आचार्य सायण इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं - **द्युतानाख्यो मरुतां पुत्र ऋषिस्तिरश्चीर्नामाङ्गिरसो वा**।

२१. त्रित आप्त्य (८.४७) - द्र०-ऋ० भाग-१।

२२. त्रिशोक काण्व (८.४५) - एक प्राचीन ऋषि के रूप में त्रिशोक का उल्लेख सभी वेदों में मिलता है; किन्तु यजुर्वेद और अथर्ववेद में इनका नाम 'त्रिशोक' ही मिलता है, जबकि ऋग्वेद और सामवेद में इनके नाम के साथ अपत्यवाचक विशेषण 'काण्व' संयुक्त मिलता है। यजुर्वेद भाष्य में आचार्य महीधर द्वारा इनका ऋषित्व इस प्रकार प्रमाणित किया गया है - **अग्नीन्द्र देवत्या गायत्री त्रिशोक दृष्टा** (यजु० ७.३२ मही० भा०)। इनका गोत्र स्पष्ट न होने से इन्हें अनुक्त गोत्र वाला कहा गया है। सम्भवतः इसीलिए इन्हें कण्व वंशीय मान लिया गया है, इस तथ्य का उल्लेख आचार्य सायण अपने ऋग्वेद भाष्य में करते हैं-**'आ घ द्विचत्वारिंशत्त्रिशोक आद्याग्नेन्द्री'। अनुक्तगोत्रत्वात् काण्वस्त्रिशोक ऋषिः** (ऋ० ८.४५ सा० भा०)। बृहद्देवता (६.८१) में भी त्रिशोक का ऋषित्व वर्णित है।

२३. देवातिथि काण्व (८.४) - वैदिक ऋषियों में देवातिथि काण्व का नाम भी प्रख्यात है। कण्ववंशीय होने से इन्हें काण्व की संज्ञा प्रदान की गई है। पञ्चविंश ब्राह्मण ९.२.१९ में इनका नाम साममन्त्रों के द्रष्टा के रूप में उल्लिखित है। इन्हीं मन्त्रों की शक्ति से इन्होंने कूष्माण्डों को गौओं के रूप में परिवर्तित कर दिया था, जिसके फलस्वरूप ये अपने पुत्र सहित मरुस्थल में भी तृप्तिदायक भोजन पा सके थे, जहाँ शत्रुओं द्वारा इन्हें डाल दिया गया था। आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व का विवेचन इन शब्दों में किया



है - **'य दिन्द्र:' इत्येकविंशत्यृचं चतुर्थं सूक्तं काण्वगोत्रस्य देवातिथेरार्षम्** (ऋ० ८.४ सा० भा०)। पौराणिक कोश पृष्ठ २३६ में देवातिथि नामक दो अन्य व्यक्तियों का भी वर्णन मिलता है। प्रथम वे, जो क्रोधन के पुत्र तथा ऋष्य के पिता थे। दूसरे वे, जो अक्रोधन के पुत्र तथा दक्ष के पिता थे।

२४. द्युतान मारुत (८.९६) - द्युतान मारुत का ऋषित्व सामवेद तथा ऋग्वेद में दृष्टिगोचर होता है। मरुतों के वंशज होने से इन्हें मारुत कहा जाता है। वाजसनेयी संहिता ५.२७, तैत्तिरीय संहिता ५.५.९.४ और काठक संहिता १५.७ में इन्हें एक दैवी पुरुष के रूप में वर्णित किया गया है। एक उद्धरण द्रष्टव्य है - **द्युतानः त्वा। द्युतानो दीप्यमानः त्वां मारुतो वायुः मिनोतु** (यजु० ५.२७ उ० भा०)। शतपथ ब्राह्मण ३.६.१.१६ में इन्हें वायु कहा गया है। पंचविंश ब्राह्मण १७.१.७ में द्युतान मारुत को साममंत्र द्रष्टा के रूप में वर्णित किया गया है। आचार्य सायण इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए तिरश्ची आङ्गिरस को वैकल्पिक ऋषि के रूप में स्वीकार करते हैं - **द्युतानाख्यो मरुतां पुत्र ऋषिस्तिरश्चीर्नामाङ्गिरसो वा** (ऋ० ८.९६ सा० भा०)।

२५. द्युम्नीक वासिष्ठ (८.८७) - वैदिक ऋषियों में द्युम्नीक वासिष्ठ भी प्रतिष्ठित हैं। वसिष्ठ पुत्र होने के कारण इन्हें वासिष्ठ कहा जाता है। इनके द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद ८.८७ में मिलते हैं; किन्तु आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व को वैकल्पिक रूप में स्वीकार किया है। इनका वैकल्पिक ऋषि उनने प्रियमेध आङ्गिरस को माना है। अपने ऋग्वेद भाष्य में आचार्य सायण लिखते हैं - **वसिष्ठ पुत्रो द्युम्नीक ऋषिराङ्गिरस प्रियमेधो वा** (ऋ० ८.८७ सा० भा०)। इनके विषय में अन्यत्र अन्य कोई विवरण उपलब्ध नहीं होता।

२६. नाभाक काण्व (८.३९-४२) - नाभाक काण्व का ऋषित्व ऋग्वेद ८.३९-४२ में दृष्टिगोचर होता है। कण्व गोत्रीय होने के कारण इन्हें काण्व कहा जाता है। वैदिक कोश पृष्ठ २४२ के अनुसार ये 'नभाक' के वंशज हैं। इस नाम के आधार पर ही अपत्यवाचक पद नाभाक बनता है। निरुक्त में भी नाभाक का उल्लेख एक ऋषि के रूप में हुआ है - **नाभाकस्य प्रशस्तिभिर्यः ....** (नि० १०.५)। बृहद्देवताकार ने इनका ऋषित्व इन शब्दों में विवेचित किया है - **नाभाकश्चैव निर्दिष्टो दुवस्युर्ममतासुतः** (बृह० ३.५६)। ऋग्वेद में इनका ऋषित्व प्रमाणित करते हुए आचार्य सायण लिखते हैं - **'अग्निमस्तोषि' इति दशर्चं नवमं सूक्तं काण्वस्य नाभाकस्यार्षम्** (ऋ० ८.३९ सा० भा०)।

२७. नारद काण्व (८.१३) - वैदिक ऋषियों के क्रम में नारद काण्व का नाम भी उल्लेखनीय है। ये कण्व ऋषि के वंशज हैं, इसी कारण इन्हें काण्व की संज्ञा प्राप्त हुई है। अथर्ववेद में अनेक बार एक देवशास्त्रीय ऋषि के रूप में नारद का उल्लेख हुआ है; किन्तु इनके साथ काण्व पद संयुक्त नहीं है। यथा - **यो ब्राह्मणस्य सद्धनमभि नारद मन्यते** (अथर्व० ५.१९.९)। ऐतरेय ब्राह्मण में उन्हें हरिश्चन्द्र का पुरोहित वर्णित किया गया है - **'अथ' पुत्रेच्छानिमित्तकथनान्तरम् 'एनं' पुत्रार्थिनं हरिश्चन्द्रं नारद उवाच** (ऐत० ब्रा० ७.१३)। षड्विंश ब्राह्मण (३.९) की वंश सूची में नारद को बृहस्पति का शिष्य कहा गया है। मैत्रायणी संहिता १.५.८ में एक आचार्य के रूप में उनका उल्लेख सनत्कुमार के साथ मिलता है। आचार्य सायण नारद काण्व का ऋषित्व प्रमाणित करते हुए अपने ऋग्वेद भाष्य में लिखते हैं - ....**प्रथमं सूक्तं काण्वस्य नारदस्यार्षमौष्णिहमैन्द्रम्** (ऋ० ८.१३ सा० भा०)।

२८. नीपातिथि काण्व (८.३४.१-१५) - नीपातिथि काण्व का ऋषित्व ऋग्वेद तथा सामवेद में भी दृष्टिगोचर होता है। कण्वगोत्रीय होने से इन्हें काण्व कहते हैं। पंचविंश ब्राह्मण १४.१०.४ में उनके द्वारा दृष्ट साममंत्रों का उल्लेख है। ऋग्वेद में कुछ स्थानों पर उनका वर्णन एक योद्धा तथा यज्ञकर्त्ता के रूप में मिलता है - **यथा प्रावो मघवन्मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने** (ऋ० ८.४९.९) तथा ____ **नीपातिथौ मघवन्मेध्यातिथौ पुष्टिगौ श्रुष्टिगौ सचा** (ऋ० ८.५१.१)। आचार्य सायण इन्हें ऋ० ८.३४.१-१५ का ऋषि स्वीकार करते हुए अपने भाष्य में उल्लेख करते हैं - **'एन्द्र याहि' इत्यष्टादशर्चं चतुर्थं सूक्तं काण्वस्य नीपातिथेरार्षमानुष्टुभम्।**

२९. नृमेध और पुरुमेध आङ्गिरस (८.८९-९०) - नृमेध और पुरुमेध का प्रायः सम्मिलित ऋषित्व दृष्टिगोचर होता है। कहीं-कहीं केवल नृमेध द्वारा दृष्ट मंत्र भी मिलते हैं, पर पुरुमेध द्वारा स्वतंत्र रूप से दृष्ट मंत्र कहीं नहीं मिलते। ऋग्वेद और सामवेद में इनके नाम के साथ आङ्गिरस पद संयुक्त है। आचार्य सायण का मत है कि अनुक्त गोत्र होने के कारण इन्हें आङ्गिरस मान लिया गया है - **'बृहदिन्द्राय' इति सप्तर्चं नवमं सूक्तम्। नृमेधपुरुमेधावृषी। तौ चानुक्तत्वादाङ्गिरसौ** (ऋ० ८.८९ सा० भा०)। सम्भवतः यजुर्वेद में वर्णित नाम (नृमेध-पुरुषमेधौ) ऋग्वेद में वर्णित नाम (नृमेध-पुरुमेधौ) का अपभ्रंश रूप है। यजुर्वेद के भाष्यकार आचार्य महीधर ने युग्म रूप में इन ऋषियों का ऋषित्व वर्णित किया है - **नृमेध पुरुषमेधदृष्टा** (यजु० २०.३० मही० भा०)। ऋग्वेद में ८.८९-९० सूक्त जहाँ नृमेध और पुरुमेध द्वारा सम्मिलित रूप से दृष्ट है, वहीं ऋ० ८.९८-९९ केवल नृमेध द्वारा दृष्ट है। आचार्य सायण नृमेध आङ्गिरस का एकाकी ऋषित्व भी प्रमाणित करते हुए लिखते हैं - **तत्र 'इन्द्राय' इति द्वादशर्चं पञ्चमं सूक्तमाङ्गिरसस्य नृमेधाख्यस्यार्षमैन्द्रम्** (ऋ० ८.९८ सा० भा०)। कुछ स्थानों पर नृमेध के साथ सुमेध नाम भी मिलता है।

३०. नेम भार्गव (८.१००.१-३; ६-१२) - भृगुवंशी नेम का ऋषित्व ऋग्वेद में दृष्टिगोचर होता है। इनके नाम के साथ अपत्यार्थक पद भार्गव संयुक्त हो जाने से इन्हें नेम भार्गव कहते हैं। इनके द्वारा दृष्ट मन्त्रों में इन्द्रदेव की स्तुति वर्णित है। बृहद्देवता



ने इनके ऋषित्व का विवेचन इन शब्दों में किया है - **तृचेनेन्द्रमपश्यंस्तं नेमोऽयमिति भार्गवः** (बृह० ६.११७) । आचार्य सायण ने लिखा है - **'अयं ते च' इति द्वादशर्चं सप्तमं सूक्तं भृगुगोत्रस्य नेमस्यार्षम्** (ऋ० ८.१०० सा० भा०)।

३१. नोधा गौतम (८.८८) - द्र०-ऋ० भाग १ ।

३२. पर्वत काण्व (८.१२) - पर्वत कण्वगोत्रीय ऋषि हैं। अपत्यवाचक पद के साथ इन्हें 'पर्वत काण्व' कहा जाता है। इनके द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में मिलते हैं। इनका नाम प्रायः नारद काण्व के साथ मिलता है, अर्थात् अधिकांश मंत्रों में इन दोनों (पर्वत और नारद काण्व) का समुदित ऋषित्व प्राप्त होता है। ऐतरेय ब्राह्मण (७.३४ और ८.२१) में पर्वत और नारद को सोमक साहदेव्य का गुरु तथा आम्बाष्ठ्य और युधांश्रोष्टि का अभिषेक कर्त्ता वर्णित किया गया है। केवल पर्वत काण्व द्वारा दृष्ट सूक्त ८.१२ है, जिसमें इन्द्रदेव की स्तुति की गई है। आचार्य सायण इनका ऋषित्व विवेचित करते हुए लिखते हैं- **य 'इन्द्र' इति त्रयस्त्रिंशदृचं सप्तमं सूक्तं कण्वगोत्रस्य पर्वताख्यस्यार्षमौष्णिहमैन्द्रम्** (ऋ० ८.१२ सा० भा०)।

३३. पुनर्वत्स काण्व (८.७) - वैदिक ऋषियों के क्रम में पुनर्वत्स काण्व का ऋषित्व भी निर्दिष्ट है। कण्वगोत्रीय होने से इनके नाम के साथ काण्व विशेषण संयुक्त किया जाता है। इनके द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद ८.७ में मिलते हैं, जिनमें मरुद्गणों की स्तुति की गई है। आचार्य सायण इनके ऋषित्व को प्रतिपादित करते हुए अपने ऋग्वेद भाष्य में उल्लेख करते हैं - **'प्र यद्वः' इति षट्त्रिंशदृचं द्वितीयं सूक्तं कण्वगोत्रस्य पुनर्वत्सस्यार्षं मारुतं गायत्रम्** (ऋ० ८.७ सा० भा०)। पुनर्वत्स शब्द से तात्पर्य सामान्यतया उस बछड़े से है, जिसने दूध पीना छोड़कर पुनः दूध पीना प्रारम्भ कर दिया हो। उसी प्रकार पुनर्वत्स उस व्यक्ति का नाम है, जो सांसारिक कार्यवश कुछ देर के लिए प्रभुनाम से अलग हो गया हो और कार्य समाप्ति पर पुनः भगवन्नाम में रत हो गया हो।

३४. पुरुहन्मा आङ्गिरस (८.७०) - पुरुहन्मा आङ्गिरस को भी वैदिक ऋषि की प्रतिष्ठा प्राप्त है। इन्हें अङ्गिरा गोत्रीय माना जाता है। इसी कारण इन्हें आङ्गिरस कहते हैं। पञ्चविंश ब्राह्मण १४.९.२९ में पुरुहन्मा को वैखानस कहा गया है- **वैखानस पुरुहन्मन्**। इनके द्वारा दृष्ट सूक्त ८.७० है, जिसमें इन्द्रदेव की स्तुति की गई है। इनके विषय में अन्यत्र कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं होता; पर आचार्य सायण इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए लिखते हैं- **यो राजा पंचोना पुरुहन्मा बार्हतं .... । पुरुहन्मा ऋषिः । .....इति परिभाषयाङ्गिरसः** (ऋ० ८.७० सा० भा०)। एक ऋचा में इनके नाम का उल्लेख भी मिलता है - **इन्द्रं तं शुम्भ-पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि** (ऋ० ८.७०.२)।

३५. पुष्टिगु काण्व (८.५०) - वैदिक ऋषियों में पुष्टिगु काण्व का ऋषित्व भी निर्दिष्ट है। कण्वगोत्रीय होने के कारण पुष्टिगु के साथ काण्व पद संयुक्त किया जाता है। इनके द्वारा दृष्ट सूक्त ऋ० ८.५० है, जो वालखिल्य सूक्त के नाम से प्रख्यात है। इसमें इनने इन्द्रदेव की स्तुति की है। आचार्य सायण ने इस सूक्त का भाष्य नहीं किया है तथा अन्यत्र भी इनके विषय में कोई विवरण उपलब्ध नहीं होता। ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में इनका नाम 'पुष्टिगुः काण्वः' अंकित है। सामान्यतया पुष्टिगु का अर्थ है-'पुष्टियुक्त हैं गौएँ (इन्द्रियाँ) जिसकी, वह व्यक्ति'। एक ऋचा में ये इन्द्रियों के पुष्ट (श्री-सम्पन्न एवं तेजस्वी) होने की कामना भी करते हैं- **मयि गोत्रं हरिश्रियम्** (ऋ० ८.५०.१०)।

३६. पृषध्र काण्व (८.५६) - पृषध्र काण्व, कण्ववंशीय ऋषि हैं। ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त ८.५६ इन्हीं के द्वारा दृष्ट है, जिसमें इनके द्वारा प्रस्कण्व की दान-स्तुति तथा अग्निसूर्य की स्तुति की गई है। ऋ० ८.५२.२ में मेध्य और मातरिश्वन् के साथ इनका नाम उल्लिखित है- **पृषध्रे मेध्ये मातरिश्वनीन्द्र सुवाने अमन्दथाः** । शांखायन श्रौत सूत्र (१६.११.२५.२७) में प्रस्कण्व के आश्रय दाता के रूप में इनका नामोल्लेख मिलता है। इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए बृहद्देवताकार ने लिखा है - **प्रस्कण्वश्च पृषध्रस्य प्रादाद्वसु किंचन** (बृह० ६.८५)। अन्यत्र इनके विषय में कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं होता।

३७. प्रगाथ घौर अथवा काण्व (८.१.१-२,८.१०) - द्र० - ऋ० भाग-१ ।

३८. प्रयोग भार्गव अथवा अग्नि बार्हस्पत्य अथवा अग्नि पावक अथवा सहसपुत्र गृहपति और यविष्ठ (८.१०२) - ऋग्वेद ८.१०२ के ऋषित्व के सम्बन्ध में पाँच विकल्प उपलब्ध होते हैं। प्रथम में भृगुगोत्रीय प्रयोग (प्रयोग भार्गव), द्वितीय में अग्नि बार्हस्पत्य, तृतीय में अग्नि पावक (पावक विशेषण से युक्त अग्नि), चतुर्थ में सहस के दो पुत्र गृहपति और यविष्ठ (जो अग्नियों के ही दो नाम हैं) समुदित रूप से तथा पंचम विकल्प में इन दोनों (गृहपति और यविष्ठ) में से कोई एक इस सूक्त के ऋषि हैं। उपर्युक्त पाँचों ऋषि विकल्पों वाले मंत्र यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में नहीं मिलते। आचार्य सायण ऋग्वेद ८.१०२ के ऋषि के सम्बन्ध में लिखते हैं - **भृगुगोत्रः प्रयोगो नामर्षिः । बार्हस्पत्यः पावकविशेषणविशिष्टोऽग्न्याख्यो वा । यद्वा । सहोनाम्नः पुत्रौ गृहग्पतियविष्ठसंज्ञकौ द्वावग्नी । .... तस्मादस्य तावृषी । अथवा तयोरन्यतरः** (ऋ० ८.१०२ सा० भा०)। इस सूक्त में ऋषियों द्वारा अग्निदेव की स्तुति की गई है।

३९. प्रस्कण्व काण्व (८.४९) - द्र० - ऋ० भाग-१ ।



प्रियमेध आङ्गिरस (८.६८-६९) - 'प्रियमेध' ऋषि द्वारा दृष्ट मंत्र चारों वेदों में दृष्टिगोचर होते हैं। अङ्गिरा गोत्रीय होने से इन्हें आङ्गिरस की उपाधि से विभूषित किया जाता है। ऋग्वेद ८.६८-६९ सूक्त इन्हीं के द्वारा दृष्ट हैं। प्रियमेध को आङ्गिरस मानते हुए आचार्य सायण ने प्रतिपादित किया है - **आ त्वैकोना प्रियमेध .... । आङ्गिरसः प्रियमेध ऋषि** (ऋ० ८.६८ सा० भा०)।

बिन्दु अथवा पूतदक्ष आङ्गिरस (८.९४) - बिन्दु और पूतदक्ष ऋषि अङ्गिरा के वंशज हैं। इसी कारण इन्हें आङ्गिरस कहा जाता है। ऋ० ८.९४ का ऋषि, विकल्प से बिन्दु अथवा पूतदक्ष को माना जाता है। आचार्य सायण इस तथ्य को स्वीकार करते हुए लिखते हैं - **तत्र 'गौर्धयति' इति द्वादशर्चमाद्यं वार्षं गायत्रं मरुद्देवताकम्** (ऋ० ८.९४ सा० भा०)। बिन्दु आङ्गिरस का एकाकी ऋषित्व ऋ० ९.३० में उपलब्ध होता है। इसे सायणाचार्य प्रमाणित करते हैं - **'प्र धाराः' इति षड्चं षष्ठं सूक्तं बिन्दुनाम्न आङ्गिरसस्यार्षं गायत्रं ....** (ऋ० ९.३० सा० भा०)। इस सूक्त में पवमान सोम देवता की स्तुति की गई है, जबकि ऋ० ८.९४ में मरुत् देवता की स्तुति है।

४२. **ब्रह्मातिथि काण्व (८.५)** - ब्रह्मातिथि कण्व गोत्रीय ऋषि हैं। इसलिए इनके नाम को काण्व विशेषण से विभूषित किया जाता है। ऋग्वेद एवं सामवेद में इनका ऋषित्व संप्राप्य है। ऋग्वेद ८.५ के ऋषित्व का प्रतिपादन करते हुए सायणाचार्य लिखते है - **दूरादित्येकोनचत्वारिंशदृचं पंचमं सूक्तं कण्वगोत्रस्य ब्रह्मातिथेरार्षं** (ऋ० ८.५ सा० भा०)। उपर्युक्त सूक्त में ऋषि द्वारा अश्विनीकुमारों एवं कशु नामक राजा की दान स्तुति की गई है।

४३. **भर्ग प्रागाथ (८.६०-६१)** - बृहती, ककुभ् तथा सतोबृहती छन्दों का सामूहिक नाम प्रगाथ है। सामवेद में इस नाम के छन्द बड़ी संख्या में संप्राप्य हैं। इन छन्दों के रचयिता, ऋग्वेद के अष्टम मंडल के अधिकांश सूक्तों के ऋषि प्रगाथ कहे जाते हैं। भर्ग प्रागाथ भी प्रगाथ परम्परा के ऋषि हैं, इसीलिए इन्हें प्रागाथ की संज्ञा प्रदान की जाती है। आचार्य सायण ने तो भर्ग प्रागाथ का ऋषित्व विवेचित करते हुए उन्हें प्रगाथ पुत्र कहा है - **तत्राग्न आ याहीति विंशत्यृचं प्रथमं सूक्तं प्रगाथपुत्रस्य भर्गस्यार्षमाग्नेयम्। ....अग्न आ विंशतिर्भर्गः प्रागाथ आग्नेयं प्रागाथं त्विति** (ऋ० ८.६० सा० भा०)।

४४. **मत्स्य सांमद अथवा मान्य मैत्रावरुणि अथवा मत्स्य जालनद्ध (८.६७)** - ऋग्वेद ८.६७ के ऋषित्व के सन्दर्भ में तीन विकल्प प्राप्त होते हैं - प्रथम सम्मद नामक महामत्स्य के पुत्र मत्स्य साम्मद, द्वितीय मित्रावरुण के पुत्र मान्यमैत्रावरुणि तथा तृतीय जाल में फँसी बहुत सी मछलियाँ अर्थात् मत्स्य जालनद्ध। **यस्य वाक्यं स ऋषिः** सूत्र के अनुसार ये ही इस सूक्त के ऋषि हैं। आचार्य सायण इनके ऋषित्व को विवेचित करते हुए अपने ऋग्वेद भाष्य में लिखते हैं - **त्यान्नु सैका मत्स्यः सांमदो मैत्रावरुणिर्मान्यो वा बहवो वा मत्स्या जालनद्धा आदित्यानस्तुवन्। संमदाख्यस्य महामीनस्य पुत्रो मत्स्यो यद्वा मित्रावरुणयोः पुत्रो मान्योऽथवा बहवो वा मत्स्या जालनद्धाः संतो बंधनमोक्षायादित्यानस्तुवन्। अतस्त एवर्षयः** (ऋ० ८.६७ सा० भा०)। इस सूक्त (ऋ० ८.६७) में आदित्यगणों की स्तुति का वर्णन मिलता है। इस सूक्त के सन्दर्भ में बृहद्देवता (६.८८-९०) में एक कथा मिलती है कि धीवरों द्वारा सरस्वती नदी के जल में मछलियाँ देखकर उसमें जाल डाला गया और मछलियों को पकड़ कर नदी के बाहर सूखी भूमि पर फेंक दिया गया। मरने से भयभीत होकर मछलियों ने आदित्यों की स्तुति की, तब आदित्यों द्वारा उन्हें मुक्त कर दिया गया। तदुपरान्त आदित्यों ने धीवरों से प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप करते हुए कहा कि आप लोग क्षुधा से भयभीत न हों, स्वर्ग को प्राप्त करेंगे। ऋग्वेद १.१६५.१४-१५ तथा बृहद्देवता ४.५२ में 'मान्य' शब्द का प्रयोग ऋषि अगस्त्य के लिए हुआ है। ऋषि अगस्त्य को मित्रावरुण का ही पुत्र माना जाता है। बृहद्देवताकार ने मान्य शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में एक स्थान पर लिखा है- **मानेन संमितो यस्मात् तस्मान्मान्य इहोच्यते। यद्वा कुम्भादृषिर्जातः कुम्भेनापि हि मीयते॥ कुम्भ इत्यभिधानं तु परिमाणस्य लक्ष्यते** (बृह० ५.१५३-५४)। अर्थात् एक मात्रा विशेष द्वारा मापे जाने के कारण ऋषि अगस्त्य का नाम 'मान्य' पड़ गया अथवा वे कुम्भ से जन्मे थे और कुम्भ भी मापने के साधन के रूप में प्रयुक्त होता था। इसलिए कुम्भ के एक परिमाण विशेष होने के कारण ऋषि अगस्त्य का दूसरा नाम 'मान्य' पड़ गया।

४५. **मनु वैवस्वत (८.२७-३१)** - मनु वैवस्वत द्वारा दृष्ट मंत्र ऋक्, यजु और साम तीनों वेदों में प्राप्त होते हैं। विवस्वान् से अश्विनीकुमारों, यम और यमी की उत्पत्ति का सन्दर्भ वेदों में मिलता है। सम्भवतः विवस्वान् (आदित्य) से ही मनु की उत्पत्ति हुई है, जिसके कारण इनके साथ अपत्यार्थक पद वैवस्वत संयुक्त किया जाता है। गीता में वर्णित है कि विवस्वान् ने मनु को योग का उपदेश दिया है - **विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्** (गीता ४.१)। अतः मनु के विवस्वान् के शिष्य होने की सम्भावना भी युक्तिसंगत है; परन्तु आचार्य सायण ने अपने ऋग्वेद भाष्य में इन्हें विवस्वान् का पुत्र कहकर इनका ऋषित्व निरूपित किया है - **विवस्वतः पुत्रो मनुर्ऋषिः** (ऋ० ८.२७ सा० भा०)। यजुर्वेद भाष्य में आचार्य महीधर ने इनका अपत्यार्थक पदरहित नाम ही विवेचित किया है - **मनुदृष्टा वैश्वदेवी** (यजु० ३३.९१ मही० भा०)। ऋग्वेद में मनु को प्रथम जन्मदाता एवं मनुष्यों के आदि पुरुष के रूप में भी प्रतिष्ठा प्राप्त है। शतपथ ब्राह्मण (१३.४.३.३) में भी इस तथ्य को स्वीकार किया गया है - **मनुर्वैवस्वतो राजेत्याह।**



४६. मातरिश्वा काण्व (८.५४) - मातरिश्वा काण्व, कण्व गोत्रीय ऋषि हैं। इनके द्वारा दृष्ट मंत्र ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त (८.५४) में दृष्टिगत होते हैं, जिसमें इन्द्र और विश्वेदेवा की स्तुति की गई है। देवों में भी मातरिश्वन् का नाम मिलता है। ऋग्वेद ३.२९.११; ३.२६.२ में वर्णन मिलता है कि अरणियों अथवा वायु में प्रवृद्ध होने के कारण अग्नि ही मातरिश्वा हैं।

४७. मेधातिथि तथा मेध्यातिथि काण्व (८.१.३-२९) - द्र० ऋ० भाग-१।

४८. मेध्य काण्व (८.५३; ५७-५८) - ऋग्वेद ८.५३; ५७-५८ के ऋषि मेध्य काण्व माने जाते हैं। इन सूक्तों में इन्द्रदेव और अश्विनीकुमारों की स्तुति की गई है। कण्ववंशीय होने से इनके नाम के साथ काण्व विशेषण सम्बद्ध किया जाता है। ऋग्वेद में मेध्य काण्व द्वारा दृष्ट सूक्त (८.५३; ५७-५८) वालखिल्य सूक्त के नाम से प्रसिद्ध हैं, जिनका आचार्य सायण ने भाष्य प्रस्तुत नहीं किया है तथा ऋ० ८.५७-५८ की चर्चा बृहद्देवता में भी नहीं मिलती। इसलिए इनके विषय में अन्य कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं होता। ऋ० ८.५२.२ में एक प्राचीन यज्ञकर्त्ता का नाम मेध्य मिलता है।

४९. रेभ काश्यप (८.९७) - रेभ काश्यप अश्विनीकुमारों के विशेष कृपापात्र के रूप में ख्याति प्राप्त हैं। इन्हें उन्होंने (अश्विनी कुमारों ने) बाढ़ एवं कैद से बचाया था। ऋग्वेद में स्तुतिगान करने वाले कारु या गायक को भी रेभ कहा गया है। रेभ काश्यप, कश्यप गोत्रीय ऋषि हैं। इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए आचार्य सायण लिखते हैं - **या इन्द्रेति पञ्चदशर्चं चतुर्थं सूक्तं काश्यपस्य रेभस्यार्षमैन्द्रम्** (ऋ० ८.९७ सा० भा०)। अन्यत्र भी इनके ऋषित्व के प्रमाण मिलते हैं। जैसे - **रेभमेतत्संज्ञम् ऋषिम्** (ऋ० १.११२.५ सा० भा०), **विप्रुतं रेभमुदनि प्रवृक्तम्** (ऋ० १.११६.२४) तथा - **नरा वृषणा रेभमप्सु** ___ (ऋ० १.११७.४)। सामवेद में भी इनका ऋषित्व दृष्टिगोचर होता है।

५०. वत्स काण्व (८.६, ११) - वत्स काण्व, कण्व वंशीय ऋषि हैं। इनका ऋषित्व ऋक्, यजु, साम तथा अथर्व चारों वेदों में प्राप्त होता है। ऋग्वेद तथा सामवेद में वत्स के साथ काण्व पद संयुक्त है, जबकि यजुर्वेद और अथर्ववेद में, ऋषिनाम में केवल वत्स ही मिलता है, वहाँ काण्व पद नहीं मिलता। ऋ० ८.६ तथा ८.११ के मंत्र ही यजुर्वेद ४.१६, ७.४० तथा २६.१५ में मिलते हैं, पर वहाँ (यजुर्वेद में) ऋषिनाम में केवल 'वत्स' शब्द ही मिलता है। इसी प्रकार अथर्ववेद २०.११५ तथा २०.१३८ में भी ऋषिनाम में केवल वत्स अंकित है। सामवेद ८, २०, १३७ के ऋषि वत्स काण्व हैं, जबकि सामवेद २६५ के ऋषि वत्स हैं। ऋ० १०.१८७ के ऋषि वत्स आग्नेय हैं। इस सूक्त में अग्निदेव की स्तुति की गई है, इसलिए इसे आग्नेय सूक्त भी कहते हैं। सम्भवतः इसी कारण वत्स के साथ आग्नेय विशेषण सम्बद्ध कर दिया गया होगा। आचार्य सायण ऋ० ८.६ के द्रष्टा वत्स काण्व का ऋषित्व विवेचित करते हुए लिखते हैं - **तत्र महाँ इन्द्र इत्यष्टाचत्वारिंशदृचं प्रथमं सूक्तं काण्वस्य वत्सस्यार्षं गायत्रम्** ।

५१. वश अश्व्य (८.४६) - वैदिक ऋषियों में अश्व पुत्र वश भी प्रतिष्ठित हैं। अश्व के पुत्र होने के कारण इनके साथ अपत्यार्थक पद अश्व्य संयुक्त किया जाता है। ऋ० ८.४६ इन्हीं के द्वारा दृष्ट है। ऋग्वेद में कई स्थानों पर वर्णित विवरण के अनुसार ये अश्विनीकुमारों के शरणार्थी प्रतीत होते हैं। शांखायन श्रौत सूत्र में भी यह उल्लेख है कि पृथुश्रवा कानीत द्वारा इन्हें दान प्रदान किया गया था। बृह० ६.७९-८० से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है- **वशायाश्व्याय यत्प्रादात्कानीतस्तु पृथुश्रवाः । तदत्र स्तूयते दानम् आ स एत्वेवमादिभिः** । वश अश्व्य के ऋषित्व को विवेचित करते हुए आचार्य सायण लिखते हैं- **तत्र 'त्वावतः' इति त्रयस्त्रिंशदृचं चतुर्थं सूक्तमश्वपुत्रस्य वशाख्यस्यार्षम्** (ऋ० ८.४६ सा० भा०)।

५२. वसिष्ठ पुत्रगण (७.३३. १०-१४) - ऋग्वेद के सप्तम मण्डल के तैंतीसवें सूक्त में वसिष्ठ और उनके पुत्रों का परस्पर वार्तालाप है। ऋ० ७.३३.१-९ में जहाँ वसिष्ठ ने अपने पुत्रों को लक्ष्य करके वार्ता की है, वहाँ **'यस्य वाक्यं स ऋषिः । या तेनोच्यते सा देवता'** सूत्र के अनुसार वसिष्ठ ऋषि हैं और उनके पुत्र देवता हैं, किन्तु ऋ० ७.३३.१०-१४ में उनके पुत्रों ने उनका उत्तर देते हुए पिता वसिष्ठ से वार्ता की है। वहाँ उपर्युक्त सूत्र के अनुसार ही वसिष्ठ पुत्रगण इन ऋचाओं के ऋषि हैं और वसिष्ठ देवता हैं। आचार्य सायण इस तथ्य की पुष्टि इन शब्दों में करते हैं- **आदितो नवानां वसिष्ठ ऋषिः । वसिष्ठपुत्राणां स्तूयमानत्वात्त एव देवता। विद्युतो ज्योतिरित्यादिभिर्दशम्यादिभिः स्वपुत्रैर्वसिष्ठः स्तूयते। अतो वसिष्ठो देवता। त एव ऋषयः । या तेनोच्यते इति न्यायात्** । (ऋ० ७.३३ सा० भा०)।

५३. वसिष्ठ मैत्रावरुणि (७.१-३१) - वसिष्ठ मैत्रावरुणि का ऋषित्व ऋग्वेद के सप्तम एवं नवम मण्डल के अनेक सूक्तों में प्राप्त होता है। इनके द्वारा दृष्ट मन्त्र यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद में भी संप्राप्य हैं। वसिष्ठ को मित्र और वरुण का पुत्र माना जाता है, इसी कारण ऋग्वेद और सामवेद में इनके नाम के साथ अपत्यार्थक पद 'मैत्रावरुणि' संयुक्त मिलता है, जबकि यजुर्वेद और अथर्ववेद में केवल वसिष्ठ नाम ही प्रयुक्त किया गया है- **वैष्णवी त्रिष्टुप् वसिष्ठदृष्टा** (यजु० ५.१६ मही० भा०)। ऋ० ७.३३.११ के आधार पर वसिष्ठ को मित्रावरुण और उर्वशी का पुत्र माना गया है- **उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन्मनसोऽधि जातः** । वसिष्ठ एक प्राचीन ऋषि हैं। वेदों, पुराणों, रामायण, महाभारत आदि प्रायः सभी धर्मग्रन्थों में इनका नाम मिलता है।



इनकी पत्नी अरुन्धती तथा शक्ति आदि इनके सौ पुत्र थे। पहले ये सूर्य वंश के पुरोहित थे, बाद में ये इक्ष्वाकुवंश के पुरोहित हो गये। वसिष्ठ के जीवन की महत्वपूर्ण घटना है, विश्वामित्र से शत्रुता। ऋग्वेद में ही कुछ स्थलों पर वसिष्ठ पुत्र शक्ति से विश्वामित्र की शत्रुता का वर्णन मिलता है। इस घटना का विस्तृत विवरण तैत्तिरीय संहिता ७.४.७.१ और पञ्चविंश ब्राह्मण ४.७.३;८.२.३ में मिलता है, जिनमें वसिष्ठ के पुत्रों का सुदासों द्वारा वध और वसिष्ठ द्वारा सुदासों को प्रतिशोध स्वरूप पराजित करना वर्णित है। विश्वामित्र सुदास के पुरोहित थे, इसकी पुष्टि निरुक्त २.२४ से होती है। वसिष्ठ मैत्रावरुणि के ऋषित्व को विवेचित करते हुए आचार्य सायण लिखते हैं- **सप्तमं मंडलं वसिष्ठोऽपश्यदित्युक्तत्वान्मंडलद्रष्टा वसिष्ठ ऋषिः** (ऋ० ७.१ सा० भा०)। महामृत्युञ्जय मंत्र के द्रष्टा भी वसिष्ठ ही हैं- **त्र्यम्बकं द्वे अनुष्टुभौ पूर्वस्यां वसिष्ठ** (यजु० सर्वा० १.१५)।

५४. विरूप आङ्गिरस (८.४३-४४) विरूप आंगिरस अंगिरस् गोत्रीय ऋषि हैं। इनका ऋषित्व चारों वेदों में दृष्टिगोचर होता है। इनके पुत्र का नाम सध्रि वैरूप है, जिनके द्वारा ऋग्वेद का १०.११४ सूक्त दृष्ट है। यजुर्वेद सर्वानुक्रम सूत्र में इनका ऋषित्व इन शब्दों में विवेचित है- **समिधा विरूप आङ्गिरसः** (यजु० सर्वा० १.१०); आचार्य महीधर ने भी इनके ऋषित्व के सम्बन्ध में लिखा है, पर उनने पद नाम उल्लिखित नहीं किया है- **आग्नेयी गायत्री विरूप दृष्टा** (यजु० ११.७१)। सायणाचार्य ने इनके ऋषित्व का उल्लेख किया है- **त्रयस्त्रिंशदृचं प्रथमं सूक्तमाङ्गिरसस्य विरूपस्यार्षं गायत्रमग्निदेवताकम्** (ऋ०८.४३ सा० भा०)।

५५. विश्वक कार्ष्णि (८.८६) - विश्वक कार्ष्णि ऋग्वेद ८.८६ सूक्त के वैकल्पिक द्रष्टा के रूप में प्रतिष्ठित हैं, ये ऋ० ८.८५.३-४ के द्रष्टा कृष्ण ऋषि के पुत्र हैं; इसी कारण इन्हें कार्ष्णि अथवा कृष्णिय भी कहते हैं। ये अश्विनीकुमारों के कृपा पात्र थे, जिन्होंने इनके खोये पुत्र विष्णापू को ढूँढ़कर वापस ला दिया था। ऋग्वेद में इसका वर्णन मिलता है- **युवं नरा स्तुवते कृष्णियाय विष्णाप्वं ददथुर्विश्वकाय।........... अश्विनावदत्तम्** (ऋ० १.११७.७)। इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए सायणाचार्य ने लिखा है- **विश्वको नाम कृष्णस्य पुत्रः कृष्ण एव वर्षिः। ___** (ऋ० ८.८६ सा० भा०)।

५६. विश्वमना वैयश्व (८.२३-२६) - विश्वमना का ऋषित्व चारों वेदों में सम्प्राप्य है। इन्हें व्यश्व वंशज माना जाता है, इसी कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद '**वैयश्व**' संयुक्त किया जाता है। आचार्य सायण ने इन्हें व्यश्व का पुत्र कहते हुए इनका ऋषित्व विवेचित किया है- **व्यश्वपुत्रो विश्वमना ऋषिः** (ऋ० ८.२४ सा० भा०)। ऋग्वेद और सामवेद में इनके नाम के साथ इनका पैतृक नाम संयुक्त है, जबकि यजुर्वेद और अथर्ववेद में केवल विश्वमना नाम ही मिलता है। वृत्रहन्ता इन्द्र को विश्वमना का मित्र भी वर्णित किया गया है- **विश्वानि विश्वमनसो धिया नो वृत्रहन्तम** (ऋ० ८.२४.७)। पञ्चविंश ब्राह्मण १५.५.२० में भी इसी प्रकार का वर्णन मिलता है।

५७. व्यश्व आङ्गिरस (८.२६) - व्यश्व आंगिरस, अंगिरस् गोत्रीय ऋषि हैं। इनका ऋषित्व ऋग्वेद तथा यजुर्वेद में दृष्टिगोचर होता है। पञ्चविंश ब्राह्मण १४.१०.९ में इन्हें सामद्रष्टा ऋषि भी कहा गया है। ऋ० ८.२६ तथा यजु० २७.३४ का ऋषित्व इन्हीं को प्राप्त है। ऋ० ८.२६ सूक्त का इक्कीसवाँ मंत्र ही यजुर्वेद २७.३४ में मिलता है; किन्तु आचार्य सायण ने ऋषि विषयक उल्लेख में विकल्प रूप से इनके पुत्र विश्वमना वैयश्व को भी इसी सूक्त में ऋषित्व प्रदान किया है- **आंगिरसो व्यश्वो वैयश्वो विश्वमना वा ऋषिः** (ऋ० ८.२६ सा० भा०)। आचार्य महीधर ने अपने यजुर्वेद भाष्य में इनके नाम के साथ अपत्यार्थक पद का प्रयोग नहीं किया है- **गायत्री व्यश्व द्रष्टा** (यजु० २७.३४ मही० भा०); जबकि यजुर्वेद सर्वानुक्रम सूत्र में पद नाम सहित इनका ऋषित्व प्रमाणित है- **तव वायो व्यश्व आंगिरसः** (यजु० सर्वा० ३.९); व्यश्व आंगिरस अश्विनीकुमारों के कृपा पात्र ऋषि हैं।

५८. शक्ति वासिष्ठ (७.३२.२६ पूर्वा०) - शक्ति वासिष्ठ, वसिष्ठ ऋषि के पुत्र हैं। इनके द्वारा दृष्ट ऋ० ७.३२.२६ का पूर्वार्द्ध मंत्र है। जैमिनीय ब्राह्मण २.३९० में विश्वामित्रों द्वारा शक्ति को अग्नि में प्रक्षिप्त किये जाने का वर्णन मिलता है। शाट्यायन ब्राह्मण के अनुसार वसिष्ठ पुत्र शक्ति, इस मंत्र (ऋ०७.३२.२६) के पूर्वार्द्ध के द्रष्टा हैं और उत्तरार्द्ध के स्वयं वसिष्ठ हैं। इसका कारण यह वर्णित है कि जब सुदास के पुत्रों (सौदासों) द्वारा (विश्वामित्र के प्रतिशोध स्वरूप) शक्ति को अग्नि में फेंका जा रहा था, तब उन्हें मंत्र के पूर्वार्द्ध का दर्शन हुआ और आधी ऋचा कहते-कहते वे जल गये। बाद में ऋचा का उत्तरार्द्ध वसिष्ठ ऋषि ने पूर्ण किया - **सौदासैरग्नौ प्रक्षिप्यमाणः शक्तिरन्त्यं प्रगाथमालेभे सोऽर्धर्च उक्तेऽदह्यत। तं पुत्रोक्तं वसिष्ठः समापयतेति........। मंडलद्रष्टा वासिष्ठ ऋषिः। 'इन्द्र क्रतुं नः' इति प्रगाथ-स्यार्धर्चस्य च वसिष्ठपुत्रः शक्तिर्वसिष्ठो वा** (ऋ० ७.३२ सा० भा०)। शाट्यायनक का अनुसरण करने वाले षड्गुरु शिष्य ने शक्ति की कथा इस प्रकार वर्णित की है- विश्वामित्र शक्ति से पराजित होकर जमदग्नि ऋषि के पास पहुँचे, उन्होंने इन्हें ससर्परी वाक् विद्या सिखाई। बाद में विश्वामित्र ने प्रतिशोध लेने के लिए उन्हें (शक्ति को) वन में जलवा दिया। ऋ० का ७.३२.२६ मंत्र सामवेद में दो बार (२५९, १४५६) मिलता है, किन्तु वहाँ इन दोनों मंत्रों के ऋषि वसिष्ठ ही माने गये हैं। इसी प्रकार ऋग्वेद के ७.३२.२६-२७ मंत्र, अथर्ववेद २०.७९.१-२ में पठित हैं। वहाँ इन दोनों मंत्रों में शक्ति और वसिष्ठ का ऋषि विकल्प वर्णित हैं।



५९. शशकर्ण काण्व (८.९) - शशकर्ण काण्व का ऋषित्व ऋग्वेद ८.९ में दृष्टिगत होता है। कण्व गोत्रीय होने के कारण इन्हें काण्व कहते हैं। इस सूक्त में अश्विनीकुमारों की स्तुति की गई है। शशकर्ण का शाब्दिक अर्थ है - **"शशः कर्णो यस्य"** (**शश् प्लुतगतौ**) अर्थात् प्लुतगति युक्त हैं कर्ण जिनके, ऐसे ये शशकर्ण हैं। इनके कान अधिक क्रियाशील हैं, अस्तु ये बहुश्रुत हैं। जो बहुश्रुत होते हैं, वे ही महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हस्तगत करते हैं। जो बहुत सुनने वाले न बनकर बहुत बोलते हैं, वे उत्कृष्ट उपलब्धियाँ नहीं पा सकते। शशकर्ण काण्व के सन्दर्भ में अन्यत्र तो कोई विशेष विवरण उपलब्ध नहीं होता, पर आचार्य सायण ने इनका ऋषित्व निरूपित किया है **आ नूनमित्येकविंशत्यृचं चतुर्थं सूक्तं शशकर्णस्यार्षमश्विदेवत्यम्** (ऋ० ८.९ सा० भा०)।

६०. शश्वती आङ्गिरसी (८.१.३४) - ऋग्वेद ८.१.३४ की ऋषिका शश्वती आङ्गिरसी हैं। अंगिरस् सुता होने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यार्थक पद आङ्गिरसी संयुक्त किया जाता है। शश्वती आङ्गिरसी, 'आसङ्ग प्लायोगि' की धर्मपत्नी थीं। एक बार उनके पति पुंस्त्वरहित होकर स्त्री हो गये थे, तब मेध्यातिथि के प्रयत्न से वे पुनः पुरुष बने। तदुपरांत उनने शश्वती को आनन्दित किया। पति के पुंस्त्व प्राप्त कर लेने पर शश्वती ने ८.१.३४ ऋचा का दर्शन कर पति की स्तुति की। अतः इस ऋचा का ऋषित्व इन्हीं को प्राप्त हुआ है। आचार्य सायण ने शश्वती आङ्गिरसी का ऋषित्व इन शब्दों में प्रमाणित किया है - **अस्यासंगस्य भार्याङ्गिरसः सुता शश्वत्याख्या भर्तुः पुंस्त्वमुपलभ्य प्रीता सती स्वभर्तारमन्वस्य स्थूरमित्यनया स्तुतवती। अतस्तस्या ऋचः शश्वत्यृषिका** (ऋ० ८.१ सा० भा०)। बृहद्देवताकार ने भी शश्वती के ऋषित्व का प्रतिपादन किया है - **.... यमी नारी च शश्वती** (बृह० २.८३), **.... तुष्टावाङ्गिरसी नारी वसन्ती शश्वती पतिम्** (बृह० ६.४०)।

६१. श्यावाश्व आत्रेय (८.३५-३६) - द्र० - ऋ० भाग-२।

६२. श्रुतकक्ष और सुकक्ष आङ्गिरस (८.९२-९३) - ऋग्वेद ८.९२ में श्रुतकक्ष और सुकक्ष का वैकल्पिक ऋषित्व मिलता है। अङ्गिरस् गोत्रीय होने के कारण इन्हें 'आङ्गिरस' की संज्ञा प्राप्त हुई है। आचार्य सायण इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए लिखते हैं - **'पान्तमा व' इति त्रयस्त्रिंशदृचं द्वादशं सूक्तमाङ्गिरसस्य श्रुतकक्षस्य सुकक्षस्य वार्षमैन्द्रम्** (ऋ० ८.९२ सा० भा०); किन्तु यजुर्वेद तैंतीसवें अध्याय का पैंतीसवाँ मंत्र श्रुतकक्ष और सुकक्ष द्वारा समुदित रूप से दृष्ट है। यजुर्वेद में ऋषि नाम में अपत्यार्थक पद 'आङ्गिरस' प्रयुक्त नहीं हुआ है। आचार्य महीधर लिखते हैं - **श्रुतकक्षसुकक्षदृष्टा गायत्री ऐन्द्राग्नपुरोरुक्** (यजु० ३३.३५ मही० भा०)। ऋग्वेद ८.९३ में सुकक्ष का स्वतन्त्र ऋषित्व संप्राप्य है। आचार्य सायण ने इस तथ्य को इन शब्दों में प्रमाणित किया है - **.... त्रयोदशं सूक्तं सुकक्षस्यार्षं गायत्रमैन्द्रम्** (ऋ० ८.९३ सा० भा०)।

६३. श्रुष्टिगु काण्व (८.५१) - श्रुष्टिगु काण्व का नाम वैदिक ऋषियों में अधिक ख्यातिलब्ध नहीं है। ये ऋ० ८.५१ सूक्त के द्रष्टा हैं, जो (सूक्त) वालखिल्य सूक्त शृंखला में परिगणित किया जाता है। आचार्य सायण ने इसका भाष्य नहीं किया है। कण्व गोत्रीय होने के कारण श्रुष्टिगु को 'काण्व' कहा जाता है। ऋग्वेद की सर्वानुक्रमणी में उपर्युक्त सूक्त के ऋषि नाम में **'श्रुष्टिगुः काण्वः'** अंकित है। ऋ० ८.५१.७ मंत्र ही सामवेद ३०० में संगृहीत है, वहाँ ऋषि नाम में इन्हीं का नाम उल्लिखित है। ऋ० ८.५१.१ में इनका नाम भी मिलता है- **पुष्टिगौ श्रुष्टिगौ सचा**। श्रुष्टिगु शब्द का अर्थ है - **'श्रुष्टि' इति क्षिप्रनाम** (नि० ६.१३)। गु - गौएँ- इन्द्रियाँ अर्थात् शीघ्रता से कार्य करने वाली हैं इन्द्रियाँ जिनकी, वे श्रुष्टिगु हैं।

६४. सध्वंस काण्व (८.८) - सध्वंस काण्व, कण्व ऋषि के वंशज हैं, इसी कारण उन्हें काण्व की संज्ञा प्रदान की गई है। ऋग्वेद का ८.८ सूक्त इन्हीं के द्वारा दृष्ट है, जिसमें अश्विनीकुमारों की स्तुति की गई है। अधिक प्रख्यात न होने के कारण इनके विषय में विशेष विवरण तो उपलब्ध नहीं होता, किन्तु आचार्य सायण ने अपने ऋग्वेद भाष्य में इनका ऋषित्व इस प्रकार विवेचित किया है - **आ नो विश्वाभिरिति त्रयोविंशत्यृचं तृतीयं सूक्तं सध्वंसाख्यस्य काण्वस्यार्षमानुष्टुभम्** (ऋ० ८.८ सा० भा०)। सामान्यतया सध्वंस शब्द का अर्थ है - **'ध्वंसेन सह वर्तते' इति सध्वंसः** अर्थात् जो बुराई के ध्वंस में प्रवृत्त है, बुराई को अपने अन्दर नहीं पनपने देता। सध्वंस काण्व ऋषि सम्भवतः उपर्युक्त विशेषताओं से युक्त रहे होंगे, इसी कारण उनका यह नाम पड़ा।

६५. सप्तवध्रि आत्रेय (८.७३) - द्र० - ऋ० भाग २।

६६. सहस्र वसुरोचिष् आङ्गिरस (८.३४.१६-१८) - सहस्र वसुरोचिष् आङ्गिरस ८.३४.१६-१८ के ऋषि माने जाते हैं। सामान्यतः सहस्र वसुरोचिष् का अर्थ है - हजारों देदीप्यमान यज्ञ। यद्यपि देदीप्यमान यज्ञों के ऋषित्व का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता, तथापि यह भी सम्भव है कि उक्त ऋचाओं के द्रष्टा ने अपना नाम प्रकट न किया हो और ऋचाओं का प्रमुख वर्ण्य विषय या सिद्धान्त ही ऋषिनाम से प्रख्यात हो गया हो। इसी प्रकार सामान्य अर्थों में आङ्गिरस शब्द का अर्थ है- अङ्गिरागोत्रीय अर्थात् जो अंगारों से उत्पन्न हुआ है, उसका वंशज। यदि वसुरोचिष् का अर्थ है देदीप्यमान यज्ञ, तो इस सन्दर्भ में आङ्गिरस का अर्थ अंगारों से उत्पन्न देदीप्यमान यज्ञ ही हो सकता है। जो भी हो, सहस्र वसुरोचिष् आङ्गिरस के सम्बन्ध में अन्यत्र कोई विशेष विवरण



उपलब्ध नहीं होता, किन्तु आचार्य सायण ने इनका प्रतिपादन किया है **वसुरोचिषोऽङ्गिरोगोत्राः सहस्रसंख्याका आ यदिन्द्रश्चेत्यादीनां तासां तिसृणामृषयः** (ऋ० ८.३४ सा० भा०)।

६७. सुदीति तथा पुरुमीळ्ह आङ्गिरस (८.७१) - ऋग्वेद ८.७१ के ऋषि सुदीति और पुरुमीळ्ह आङ्गिरस अथवा इन दोनों में से कोई एक माने गये हैं। आचार्य सायण इस तथ्य को इन शब्दों में विवेचित करते हैं - **त्वं नो अग्न इति पंचदशर्चं द्वितीयं सूक्तं। सुदीतिपुरुमीळ्हावृषी तयोरन्यतरो वा** (ऋ० ८.७१ सा० भा०)। अङ्गिरस् गोत्रीय होने से इन्हें आङ्गिरस कहा गया है। ऋग्वेद के इस सूक्त के ४ मंत्र - १,१०,११ तथा १४ सामवेद -६,४९,१५४ तथा १५१५ में संगृहीत हैं और १४ वाँ मंत्र अथर्ववेद २०.१०३ में संगृहीत है,इनका ऋषित्व भी वहाँ सुदीति और पुरुमीळ्ह दोनों को प्राप्त हुआ है। उपर्युक्त मंत्र में सुदीति और पुरुमीळ्ह का नामोल्लेख भी मिलता है - **अग्निं राये पुरुमीळ्ह श्रुतं नरोऽग्निं सुदीतये छर्दिः** (ऋ० ८.७१.१४)।

६८. सुपर्ण काण्व (८.५९) - सुपर्ण काण्व कण्वगोत्रीय हैं,इसी कारण इनके नाम के साथ अपत्यार्थक पद 'काण्व' संयुक्त किया जाता है। इनका ऋषित्व ऋ० ८.५९ में दृष्टिगोचर होता है,जो वालखिल्य सूक्त के नाम से प्रख्यात है। इस सूक्त में इन्द्रावरुण की स्तुति की गई है। आचार्य सायण ने इस सूक्त का भाष्य प्रस्तुत नहीं किया है,इसलिए ऋषि विषयक उल्लेख भी नहीं हुआ है। अनुक्रमणी में इनका नाम '**सुपर्णः काण्वः**' अंकित है। तैत्तिरीय संहिता ४.३.३.२ तथा काठक संहिता ३९.७ में भी सुपर्ण नाम के एक ऋषि का नामोल्लेख मिलता है। ऋग्वेद १.१६०.२०,२.४२.२,४.२६.४ में भी सुपर्ण नाम का उल्लेख है,किन्तु वहाँ इसका अर्थ श्येन या गृध्र पक्षी है। ऋ० १०.१४४.४ में सुपर्ण को श्येन का पुत्र कहा गया है - **यं सुपर्णः परावतः श्येनस्य पुत्र आभरत्**। बृहद्देवता में भी कई स्थानों पर सुपर्ण का नामोल्लेख हुआ है - **वैश्वानरो हि सुपर्णो विवस्वान्** (बृह० ८.१२७); **अपांनपाद्दधिक्राश्च सुपर्णोऽथ पुरूरवाः** (बृह० १.१२४); किन्तु इस विवरण से यह निश्चित नहीं हो पाता कि यहाँ सुपर्ण (श्येन पुत्र) 'पक्षी' का उल्लेख है अथवा मन्त्रद्रष्टा ऋषि का।

६९. सोभरि काण्व (८.१९-२२) - सोभरि काण्व का ऋषित्व ऋग्वेद ८.१९-२२ तथा ८.१०३ में उपन्यस्त है। ये कण्ववंशीय हैं,इसी कारण इन्हें अपत्यवाचक पद काण्व से विभूषित किया जाता है। आचार्य सायण इनके ऋषित्व को प्रमाणित करते हुए लिखते हैं **... सप्तम सूक्तं काण्वस्य सोभरेरार्षम्** (ऋ० ८.१९ सा० भा०)। ऋ० (८.१९.२) में इनका नामोल्लेख भी है - **अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम्**। बृहद्देवता में सोभरि काण्व के सम्बन्ध में एक कथा वर्णित है,कि जब वे (सोभरि) अपने वंश के लोगों के साथ कुरुक्षेत्र में यज्ञ कर रहे थे,तब चूहों ने उनके अन्न और विभिन्न हविष्यों को खा लिया। उस समय सोभरि ने चित्र,इन्द्र और सरस्वती की दान-स्तुति की - **कण्वस्य सोभरेश्चैव यजतो वंशजैः सह** (बृह० ६.५८-५९)। सोभरि काण्व द्वारा दृष्ट ऋ० ८.१०३ के कई मंत्र साम० ४७,५१,५८ आदि में संगृहीत हैं,पर वहाँ ऋषिनाम में 'सौभरि काण्व' उल्लिखित है।

७०. हर्यत प्रागाथ (८.७२) - ऋग्वेद के अष्टम मंडल के ऋषि प्रागाथ के नाम से जाने जाते हैं। यह नामकरण इस कारण हुआ कि इन ऋषियों ने प्रगाथ मंत्रों का दर्शन किया था। बृहती या ककुभ् एवं सतोबृहती मंत्रों के समूह को प्रगाथ कहा जाता है,इसलिए इन मंत्रों के द्रष्टा प्रागाथ हुए। हर्यत नाम के ऋषि जिनने ऋ० ८.७२ का दर्शन किया है,इसी प्रागाथ परम्परा के ऋषि हैं। अतएव इन्हें हर्यत प्रागाथ कहा जाता है। आचार्य सायण ने इनके ऋषित्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है - **हविष्कृणुता हर्यतः प्रागाथो हविषां स्तुतिर्वैति। प्रगाथ पुत्रो हर्यत ऋषिः** (ऋ० ८.७२ सा० भा०)। बृहद्देवता ६.३५ के अनुसार प्रगाथ नाम के एक ऋषि भी हुए हैं,जो कण्व के भाई तथा घोर के पुत्र थे - **कण्वश्चैव प्रगाथश्च घोरपुत्रौ बभूवतुः**। सम्भवतः इन्हीं घोर पुत्र प्रगाथ ऋषि के कोई पुत्र हर्यत नाम के रहे हों,जिसके कारण उन्हें अपत्यार्थक पद के साथ हर्यत प्रागाथ कहा गया है।



परिशिष्ट - २

ऋग्वेद भाग - ३ के देवताओं का संक्षिप्त परिचय

१. **अग्नि (७.१, ३, ४, १२; ८.११, २३, ३९)** - द्र० - ऋ० भाग - १ ।

२. **अग्नि - सूर्य (८.५६.५)** - 'अग्नि-सूर्य' युग्म देवता के रूप में ऋग्वेद ८.५६.५ में वर्णित हुए हैं। दोनों ज्योति-प्रभा से प्रकाशित होते हैं। अग्नि पृथिवी के और सूर्य द्युलोक के प्रकाशक देव हैं। रूप में भिन्नता होते हुए भी दोनों समान ज्योतिपुंज माने जाते हैं - **ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा** (यजु० ३.९)। अग्नि को सूर्य का वर्चस् कहा गया है - **त्वमग्ने सूर्यवर्चा असि** (मैत्रा० सं० १.५.८)। सूर्य को अग्नि का उत्पत्तिस्थल भी कहा गया है - **सूर्योऽग्नेर्योनिरायतनम्** । (तैत्ति० ब्रा० ३.९.२१.२)। सूर्य को प्रातः सवन में आहूत किया जाता है और अग्नि को सायं सवन में - **तस्मादग्नये सायं हूयते सूर्याय प्रातः** (तैत्ति० ब्रा० २.१.२.६)। सूर्य और अग्नि को मनुष्यों और देवों के 'चक्षुस्' के रूप में स्वीकार किया गया है - **सूर्याग्नी चक्षुर्भ्याम्** (तैत्ति० सं० ५.७.१२.१)।

३. **अग्नि-सूर्य-अनिल (८.१८.९)** - अग्नि-सूर्य-अनिल तीनों देवों को संयुक्त रूप से ऋ० ८.१८.९ में देवता स्वीकार किया गया है। ये तीनों देवगण क्रमशः पृथिवी, द्यौ और अन्तरिक्ष लोक के देवता के रूप में निर्दिष्ट हैं। जैमिनीय ब्राह्मण में इन तीनों देवों को संयुक्त रूप से उल्लिखित किया गया है - **अग्निराजिदोहं वायुराजिदोहमसावादित्य आजिदोहम्** (जैमि० ब्रा० २.२५५)। बृहद्देवताकार ने इन तीनों देवों के देवत्व को इन शब्दों में वर्णित किया है - **स्तुताः शमिति पच्छस्तु अग्निसूर्यानिलास्त्रयः** (बृह० ६.५०)। ऋग्वेद ८.१८.९ के प्रत्येक पाद में क्रमशः अग्नि, सूर्य और अनिल इन तीनों की स्तुति है।

४. **अब्जा अहि (७.३४.१६)** - जल से उत्पन्न 'अहि' (अब्जा अहि) का देवत्व भी ऋग्वेद ७.३४.१६ में दृष्टिगोचर होता है। बृहद्देवताकार ने 'अब्जा अहि' को उक्त ऋचा के देवता के रूप में प्रमाणित किया है - **स्तौत्यृगब्जामहिं तत्र मा नोऽहिं बुध्यमेव च** (बृह० ५.१६५)। अगले श्लोक में बृहद्देवता में वर्णित है कि अहि मेघों पर प्रहार करता है अथवा मेघों के मध्य चला जाता है। यह अहि ही बुध्य है, क्योंकि यह बुध्न अथवा अन्तरिक्ष में उत्पन्न हुआ है। यह तथ्य निरुक्त से भी प्रतिपादित होता है- **योऽहिः स बुध्यः । बुध्नम् अन्तरिक्षं तन्निवासात्** (नि० १०.४४)।

५. **अश्विनी कुमार (७.६७-७४; ८.८-१०)** - द्र० ऋ० भाग-१ ।

६. **अहिर्बुध्न्य (७.३४.१७)** - अहिर्बुध्न्य देवता की स्तुति ऋग्वेद की ऋचा ७.३४.१७ में की गयी है। सम्भवतः 'अहि' राक्षस को ही उक्त ऋचा में 'अहिर्बुध्न्य' और ऋग्वेद ऋचा ७.३४.१६ में 'अब्जा अहि' की संज्ञा प्रदान की गयी है। बृहद्देवताकार ने भी इसी तथ्य को पुष्ट किया है - **योऽहिः स बुध्न्यो बुध्ने हिणोऽन्तरिक्षेऽभिजायते** (बृह० ५.१६६)। अन्तरिक्ष से उत्पन्न होने के कारण अहिर्बुध्न्य और अन्तरिक्षीय जल (मेघों) से उत्पन्न होने के कारण 'अहि' को ही 'अब्जा अहि' संज्ञा से उपन्यस्त किया गया है। मेघों में निहित गुप्त अग्नि को ही अहिर्बुध्न्य कहा गया है - **अग्निर्वा अहिर्बुध्न्यः** (कौषी० ब्रा० १६.७)। इसे लोक (पृथिवी) के रक्षक के रूप में भी वर्णित किया गया है - **अहिर्बुध्न्यो भुवनस्य रक्षिता** (काठ० संक० ६०.७)। आचार्य सायण ने इनके देवत्व को प्रमाणित किया है - **'एकविंशतिर्द्विपदा अब्जामहेरर्धर्च उत्तरोऽहिर्बुध्न्याय'** (ऋ० ७.३४ सा० भा०)।

७. **आदित्यगण (७.५१-५२; ८.५६, ६७)** - द्र० ऋ० भाग - १ ।

८. **आदित्य - उषा (८.४७.१४-१८)** - आदित्यगणों के साथ उषा का देवत्व केवल ऋग्वेद ८.४७.१४-१८ में ही मिलता है। इन ऋचाओं में उनसे दुःस्वप्न नाश करने की प्रार्थना की गयी है। आदित्यदेव (सूर्य) देवी उषा के पीछे-पीछे चलते हैं - **सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चा** (मैत्रा० सं० ४.१४.४)। आदित्यों को आकाश की आत्मा और उषा को **दुहितर्दिवः** (आकाश पुत्री) के रूप में उल्लिखित किया गया है - **तस्यैतस्याकाशस्यात्मा दमुमूढो यदसावादित्यः** (जैमि० ब्रा० २.५६)। **यच्च गोषु दुष्ष्वप्न्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः** (ऋ० ८.४७.१४)। आचार्य सायण ने ऋग्वेद भाष्य में इनके संयुक्त देवत्व को प्रमाणित किया है - **'यच्च गोषु' इत्याद्याः पञ्चर्च उषोदेवताका आदित्यदेवताकाश्च** (ऋ० ८.४७ सा० भा०)।

९. **आपः (७.४७, ४९)** - द्र० ऋ० भाग-१ ।

१०. **आसङ्ग (८.१.३०-३४)** - आचार्य सायण ने ऋग्वेद ८.१ सूक्त की व्याख्या में 'आसङ्ग' को ऋषि और देवता दोनों ही रूपों में वर्णित किया है। यहाँ ऋग्वेद ८.१.३०-३३ इन चार ऋचाओं में आसङ्ग ने स्वयं अपने ही दान का वर्णन किया है। '**या तेनोच्यते**



सा देवता' सूत्र के अनुसार आसङ्ग को ही इन ऋचाओं का देवता स्वीकार किया गया है। अगली ऋचा में इनकी भार्या शश्वती आङ्गिरसी ने भी इनके दान की स्तुति की है। इनके विषय में आचार्य ने यह वर्णित किया है कि राजा आसङ्ग जो स्त्री हो गये थे, मेधातिथि ऋषि के तपोबल से पुनः पुंस्त्व को धारण किया; इससे प्रसन्न होकर उन्होंने ऋषि को विपुल धन दिया। उक्त ऋचाओं में अपने दान की स्तुति उन्होंने स्वयं की है - **प्लयोगनाम्नो राज्ञः पुत्र आसङ्गाभिधानो राजा देवशापात् स्त्रीत्वमनुभूय पश्चात्तपोबलेन मेधातिथेः प्रसादात् पुमान् भूत्वा तस्मै बहु धनं दत्त्वा स्वकीयमन्तरात्मानं दत्तदानं स्तुहि** ....(ऋ० ८.१ सा० भा०)। बृहद्देवताकार ने भी इसी तथ्य को उपन्यस्त किया है - **स्त्रियं सन्तं पुमांसं तम् आसङ्ग कृतवानृषिः** ..... (बृह० ६.४१)।

११. इन्द्र (७.१९-३२; ८.१५-१७) - द्र० ऋ० भाग-१।

१२. इन्द्र-ऋभुगण (८.९३.३४) - ऋग्वेद की एक ऋचा ८.९३.३४ में इन्द्र और ऋभुगण को युग्म देवता के रूप में मान्यता प्राप्त हुई है। ऋभु पद यहाँ बहुवचन 'ऋभवः' के रूप में प्रयुक्त हुआ है। इनके तीन और नाम अथवा तीन कोटियाँ प्रचलित हैं - ऋभुक्षन् , वाज और विभ्वन्। इन्द्रदेव के साथ इनका आवाहन किया गया है - **इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन् वि नृम्णम्** (ऋ० ७.४८.३)। वे इन्द्रदेव के समान ही शक्तिसम्पन्न हैं - **ऋभुर्न इन्द्रः शवसा नवीयान्** (ऋ० १.११०.७)। इन्द्रदेव के मित्र के रूप में ये प्रतिष्ठित हुए हैं - **इन्द्रस्य सख्यमृभवः समानशुर्मनोर्नपातो अपसो दधन्विरे** (ऋ० ३.६०.३)। परन्तु कहीं इन्द्रदेव के पुत्र के रूप में भी ये परिकल्पित हुए हैं - **ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य** (ऋ० ७.४८.१)। बृहद्देवताकार ने (१.१२७ में) इन्द्र से सम्बद्ध देवों में ऋभुओं की भी गणना की है।

१३. इन्द्राग्नी (७.९३, ९४; ८.३८, ४०) - द्र० ऋ० - भाग-१।

१४. इन्द्राबृहस्पती (७.९७.१०; ७.९८.७) - द्र० ऋ० भाग-१।

१५. इन्द्राब्रह्मणस्पती (७.९७.३, ९) - ऋग्वेद (७.९७) में 'इन्द्राबृहस्पती' युग्म देवता की स्तुति की गयी है, परन्तु इस सूक्त की दो ऋचाओं (३ ,९) में इन्द्राब्रह्मणस्पती की स्तुति भी हुई है। बृहद्देवताकार ने इनके देवत्व को ग्रन्थ में उपन्यस्त किया है - **तृतीया नवमी चैव स्तौतीन्द्राब्रह्मणस्पति** (बृह० ६.२७)। आचार्य सायण ने इन्द्राब्रह्मणस्पती के संयुक्त देवत्व को ऋग्वेद भाष्य में स्पष्ट वर्णित किया है - **प्रथमैन्द्री तृतीयानवम्योरिन्द्राब्रह्मणस्पती देवता** (ऋ० ७.९७ सा० भा०)।

१६. इन्द्रावरुण (७.८२-८५; ८.५९) - द्र० ऋ० भाग-१।

१७. इन्द्रावायू (७.९०.५, ७; ७,९१.२) - द्र० ऋ० भाग-१।

१८. इन्द्राविष्णू (७.९९.४-६) - द्र० ऋ० भाग-१।

१९. इन्द्रासोम (रक्षोहण) (७.१०४.१-७, १५, २५) - द्र० ऋ० भाग-१।

२०. इळ (७.२.३) - द्र० - ऋ० भाग-१।

२१. उषा (७.४१.७; ७.७५- ८१) - द्र० - उषस्-ऋ० भाग-१।

२२. उषासानक्ता (७.२.६) - द्र० - ऋ० भाग-१।

२३. ऋक्षाश्वमेध (८.६८.१४-१९) - ऋग्वेद के आठवें मण्डल के अड़सठवें सूक्त की छः ऋचाओं में ऋक्ष और अश्वमेध के दान की स्तुतियाँ प्रतिपादित हैं। सायण भाष्य में ऋग्वेद अनुक्रमणी का उद्धरण इनके देवत्व के विषय में इस प्रकार है - '**अन्त्याः षळृक्षाश्वमेधयोर्दानस्तुतिः** (ऋ० ८.६८ सा० भा०)। बृहद्देवताकार ने इन दोनों की दानस्तुति के सम्बन्ध में केवल पाँच ऋचाएँ कही हैं - **ऋक्षाश्वमेधयोरत्र पञ्च दानस्तुति पराः** (बृह० ६.९२)। इस विरुद्ध उक्ति का वर्णन आचार्य सायण ने ऋ० ८.६८.१४ के भाष्य में किया है। ऋक्ष और अश्वमेध राजाओं का नामोल्लेख उक्त सूक्त की पन्द्रहवीं ऋचा में मिलता है - **ऋज्राविन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि। आश्वमेधस्य रोहिता** (ऋ० ८.६८.१५)।

२४. ऋत्विज् (८.५८.१) - द्र० - ऋ० भाग-२।

२५. ऋभुगण (७.४८.१-३) - द्र० - ऋ० भाग - १।

२६. कशु चैद्य (८.५.३८-३९) - ऋग्वेद के आठवें मण्डल के पाँचवें सूक्त की सैंतीसवीं ऋचा की अर्धऋचा और अन्तिम दो ऋचाओं में चेदि पुत्र कशु नामक राजा की दानस्तुति प्रतिपादित है। चेदि के पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद चैद्य संयुक्त हुआ है। आचार्य सायण ने अपने भाष्य में इनके देवत्व को इन शब्दों में उपन्यस्त किया है - **अन्त्येषु पञ्चस्वर्धर्चेषु चेदिपुत्रस्य कशुनाम्नो राज्ञो दानं स्तूयते** (ऋ० ८.५ सा० भा०)। बृहद्देवताकर ने भी अपने ग्रंथ में इनकी दानस्तुति के देवत्व को प्रमाणित किया है - **इत्यर्धर्चो द्विऋचश्चान्त्यः कशोर्दानस्तुतिः स्मृता** (बृह० ६.४५)।

२७. कुरुङ्ग (८.४.१९-२१) - आठवें मण्डल के चौथे सूक्त की अन्तिम तीन ऋचाओं (१९-२१) में राजा कुरुङ्ग के दान की स्तुति



की गयी है। बृहद्देवता ग्रन्थ में इसी तथ्य की पुष्टि होती है - **दानं राज्ञः कुरुङ्गस्य स्थूरं राध इति स्तुतम्** (६.४४)। आचार्य सायण ने भी इनकी दानस्तुति के देवत्व को ऋग्वेद भाष्य में इन शब्दों में प्रमाणित किया है - **'स्थूरं राधः' इत्यादिभिस्तिसृभिः कुरुङ्गदानस्य स्तूयमानत्वात्तास्तद्देवताकाः** (ऋ० ८.४ सा० भा०)। उक्त ऋचाओं के भाष्य में आचार्य सायण ने कुरुङ्ग को राजा के रूप में वर्णित किया है,जो देवातिथि ऋषि को अश्वादि ऐश्वर्य का दान देते हैं। इनके अपत्यवाचक पद का अन्यत्र कहीं उल्लेख नहीं आता है। कुरुङ्ग का भावार्थ उन्होंने 'विजय के लिए गमनशील' अथवा 'कुल का अनुगमन करने वाले' के रूप में किया है - **कुरून्जेतुं गच्छति कुलं गच्छतीति वा कुरुङ्गः** (ऋ० ८.४.१९ सा० भा०)।

२८. गङ्गादि नदियाँ (७.५०.४) - ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर नदियों की स्तुति की गयी है। **'या तेनोच्यते सा देवता'** सूत्र के अनुसार ऋग्वेद ७.५०.४ में गङ्गादि नदियों को प्रतिपाद्य विषय स्वीकार किया गया है। बृहद्देवता ग्रन्थ में १.११२;२.७३;४.२५ आदि अनेक स्थानों पर नदियों का देवत्व उल्लिखित हुआ है। ऋग्वेद में गङ्गा,यमुना,सरस्वती,सरयू ,सिन्धु ,विपाशा (व्यास) एवं शुतुद्री (सतलज) आदि नदियों का उल्लेख कई अलग-अलग स्थानों पर मिलता है। ऋ० ७.५०.४ में सभी नदियों से अहिंसाप्रद होने की कामना की गयी है। आचार्य सायण ने इस स्थान पर उनके देवत्व को प्रमाणित किया है - **चतुर्थी गङ्गादिनदीदेवताका** (ऋ० ७.५० सा० भा०)।

२९. चित्र (८.२१.१७-१८) - चित्र की दानस्तुति का देवत्व ऋ० (८.२१.१७-१८) में दृष्टिगोचर होता है। बृहदेवताकार ने अपने ग्रन्थ में सोभरि और चित्र की कथा इस प्रकार वर्णित की है - कण्व पुत्र सोभरि कुरुक्षेत्र में यज्ञ कर रहे थे,तब चूहों ने उनके हवि पदार्थों का भक्षण कर लिया,तो भी ऋषि ने इन्द्र और सरस्वती की स्तुति के साथ चूहों के राजा चित्र की स्तुति की है। आगे चित्र ने ऋषि को सम्बोधित करके कहा - 'मैं पशु योनि में उत्पन्न होने के कारण स्तुति योग्य नहीं हूँ ,आप देवों की स्तुति करें।' ऋषि ने उक्त सूक्त की अन्तिम ऋचा में पुन: उसकी स्तुति की-**आखवः सोऽभितुष्टाव इन्द्रं चित्रं सरस्वतीम्** (बृह० ६.५९)। **तिर्यग्योनौ समुत्पन्नो देवता स्तोतुर्महसि** (बृह० ६.६२)। परन्तु आचार्य सायण ने उक्त दोनों ऋचाओं के भाष्य में चित्र को राजा के रूप में उल्लिखित किया है,जिन्होंने सरस्वती नदी के किनारे इन्द्र के लिए यज्ञ किया था और ऋषि को विपुल परिमाण में विविध धन-ऐश्वर्य प्रदान किया था-**चित्रो नाम राजा सरस्वतीतीर इन्द्रार्थं यागमकृत** (ऋ० ८.२१.१७ सा० भा०)। अन्तिम ऋचा में ये राजा के रूप में वर्णित हैं - **चित्र इद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु** (ऋ० ८.२१.१८)।

३०. तिरिन्दिर पारशव्य (८.६.४६-४८) - ऋग्वेद की तीन ऋचाओं (८.६.४६-४८) में तिरिन्दिर पारशव्य की दानस्तुति का देवत्व दृष्टिगोचर होता है। बृहद्देवता ग्रन्थ में इनके देवत्व को उपन्यस्त किया गया है - **तृचे तु शतमित्यस्मिन् दानं तैरिन्दिरं स्मृतम्** (बृह० ६.४७)। परशु नामक राजा के पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद 'पारशव्य' संयुक्त हुआ है। इन्होंने ऋषि को सहस्र प्रकार (अथवा संख्यक) का धन प्रदान किया था,इसी दान की स्तुति उक्त तीन ऋचाओं में मिलती है। आचार्य सायण ने इसी तथ्य को पुष्ट किया है- **तस्मिन् परशुनाम्नो राज्ञः पुत्रस्य तिरिन्दिरस्य दानं स्तूयते। अतः स तृचस्तद्देवताकः** (ऋ० ८.६ सा० भा०)। ऋग्वेद की एक ऋचा में इनका नामोल्लेख हुआ है - **शतमहं तिरिन्दिरे सहस्रं पर्शावा ददे** (ऋ० ८.६.४६)।

३१. त्रसदस्यु (८.१९.३६, ३७) - ऋग्वेद की दो ऋचाओं में राजर्षि त्रसदस्यु के दान की स्तुति मिलती है। पुरुकुत्स के पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद 'पौरुकुत्स्य' संयुक्त किया जाता है। आचार्य सायण ने इनकी दानस्तुति को उल्लिखित किया है - **षट्त्रिंशी सप्तत्रिंशी च त्रसदस्युनाम्नो राज्ञो दानस्तुति रूपत्वात्तद्देवताके** (ऋ० ८.१९ सा० भा०)। ऋग्वेद में इनका नामोल्लेख मिलता है - **अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम्** (ऋ० ८.१९.३६)। बृहद्देवताकार ने भी त्रसदस्यु की दानस्तुति का उल्लेख किया है - **आग्नेये स्तुती राजर्षेस् त्रसदस्योरदादिति** (बृह० ६.५१)।

३२. त्वष्टा (७.२.९) - द्र० - ऋ० भाग-१।

३३. दधिक्रा (७.४४.२-५) - दधिक्रा का अर्थ 'दैवी अश्व' किया गया है। बृहदेवता के अनुसार 'वह शक्ति जो आकाश में आठ मास तक जलों को धारण करके रखती है तथा कभी-कभी गर्जन करती है, उसे दधिक्रा कहा गया है - **अपामम्बरगर्भाधम् .... दधिक्रास्तेन कथ्यते** (बृह० २.५६)। संभवत: गर्जनशील और शक्ति रूप होने से ही इन्हें दैवी अश्व कहते हैं। निरुक्त (२.२७) में दधिक्रा की परिभाषा (**दधत् क्रामतीति वा दधत् क्रन्दतीति वा दधदाकारी भवतीति वा**) दी गयी है। ऋग्वेद के एक सूक्त ७.४४ की सभी ऋचाओं में दधिक्रा शब्द उल्लिखित किया है। इसके भाष्य में आचार्य सायण ने दधिक्रा का अर्थ 'अश्व-विशेष' किया है - **दधिक्राम् एतन्नामकमश्वविशेषं देवम्** (ऋ० ७.४४.२ सा० भा०)। इसके देवत्व के विषय में भाष्य में वर्णित है - **'दधिक्रां वः' इति पञ्चर्चमेकादशं सूक्तं वसिष्ठस्यार्षं दधिक्राख्यदेवताकम्** (ऋ० ७.४४ सा० भा०)।

३४. दिव्य होतागण प्रचेतस् (७.२.७) - द्र० - ऋ० भाग - १।

३५. देवगण (७.१०४.११; ८.६३.१२) - द्र० - ऋ० भाग-१।



३६. देवी द्वार (७.२.५) - द्र० - ऋ० भाग - १ ।

३७. देवियाँ (७.२.८) - इळा, भारती और सरस्वती के देवत्व को संयुक्त रूप से '**तिस्रो देव्यः**' कहकर उल्लिखित किया गया है। ये तीनों देवियाँ क्रमशः भूलोक, द्युलोक और अन्तरिक्ष लोक से सम्बद्ध हैं। बृहद्देवताकार ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है **अग्निमेवानुगेळा तु मध्यं प्राप्ता सरस्वती। अमुं स्थिताधि लोकं तु भारती भवति ह्यसौ** (बृह० ३.१३)। ऋ० ७.२.८ के अनुसार इळा का सम्बन्ध पार्थिव अग्नि और मनुष्यों के साथ, भारती का भारतों एवं दिव्य वाक् के साथ और सरस्वती का मध्यलोक के सारस्वतों के साथ हैं। इळा को पृथिवी, सरस्वती को सरस्वान् (वायु) की पत्नी और भारती को भरत (आदित्य) की पत्नी के रूप में उपन्यस्त किया गया है - **इळा पृथिवी सरस्वती। सर उदकम्। तस्मात् सरस्वान् वायुः। तस्य स्त्री सरस्वती। मही महती भारती भरतस्यादित्यस्य पत्नी** (ऋ० ५.५.८ सा० भा०)।

३८. द्यावापृथिवी (७.५३) - द्र० - ऋ० भाग-१ ।

३९. नराशंस (७.२.२) - अग्नि का ही एक रूप नराशंस के रूप में वर्णित है। आप्री सूक्तों में दूसरे या तीसरे मंत्र के देवता प्रायः 'नराशंस अग्नि' उल्लिखित हुए हैं। इसका शाब्दिक अर्थ आचार्य सायण ने मनुष्यों द्वारा प्रशंसनीय अग्निविशेष लिया है - **नराशंसस्य नरैः प्रशंसनीयस्य अग्निविशेषस्य** (ऋ० ७.२.२ सा० भा०)। 'निरुक्त' एवं प्राचीन कोश ग्रन्थों में भी यही तथ्य प्रतिपादित है कि अग्नि ही नराशंस है, क्योंकि यह मनुष्यों (याजकों) द्वारा प्रशंसित होती है - **अग्निरिति शाकपूणिः। नरैः प्रशस्यो भवति** (नि० ८.६)। काट्थक्य का भी यही मत है - **नराशंसो यज्ञ इति कात्थक्यो नरा अस्मिन्न् आसीनाः शंसन्ति**। बृहद्देवताकार ने भी इसी तथ्य को पुष्ट किया है - **नराशंसमिहैके तु अग्निमाहुरथेतरे। नराः शंसन्ति सर्वेऽस्मिन्न् आसीना इति वाध्वरे** (बृह० ३.२)।

४०. पर्जन्य (७.१०१-१०२) - द्र० -ऋ० भाग - १ ।

४१. पवमान (८.१०१.१४) - पार्थिव अग्नि पवित्रकारक होने से 'पवमान' के रूप में स्तुत हुई है। दिव्य प्रवहमान, सोम भी पवित्रकारक होने से 'पवमान' के रूप में प्रसिद्ध है। पवमान सोम द्युलोक और अन्तरिक्ष से पृथिवी की ओर प्रवाहित होता है - **पवमाना दिवस्पर्यन्तरिक्षादसृक्षत। पृथिव्या अधि सानवि** (ऋ० ९.६३.२७)। पवित्रकारक वायु को भी यह मान्यता दी गई है - **हरितः दिशः पवमानः वायुः आविवेश आविष्टः** (ऋ० ८.१०१.१४ सा० भा०)। ऐतरेय आरण्यक में भी यही अर्थ लिया गया है - **वायुरेव पवमानो दिशो हरित आविष्टः** (ऐत० आ० २.१.१)। काठक संहिता के अनुसार प्रवहमान पवित्रकारक वायु पवमान है - **अयं वाव यः (वायुः) पवते स पवमानः** (काठ० सं० २२.१०)। अग्नि, वायु के साथ आदित्य को भी पवमान कहा गया है -- **त्रयो हवा एते समुद्रा यत् पवमानाः। अग्निर्वायुरसावादित्यः** (जैमि० ब्रा० १.२७४)। प्राण भी पवित्रकारक होने से पवमान कहा गया है - **प्रजा वै हरितः। ता अयं प्राणः पवमान आविष्टः** (जैमि० ब्रा० २.२२९)।

४२. पाकस्थामा कौरयाण (८.३.२१-२४) - ऋग्वेद की चार ऋचाओं (८.३.२१-२४) में पाकस्थामा कौरयाण की दानस्तुति वर्णित हुई है, अतएव इसे ही इन ऋचाओं का देवता स्वीकार किया गया है। बृहद्देवताकार ने इनके देवत्व को ग्रन्थ में उपन्यस्त किया है - **पाकस्थाम्नस्तु भोजस्य चतुर्भिर्यमिति स्तुतम्** (बृह० ६.४२)। कुरयाण के पुत्र होने से इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद 'कौरयाण' संयुक्त हुआ है। आचार्य सायण के भाष्य में इस तथ्य की पुष्टि होती है - **एताश्चतस्रः कुरयाणस्य पुत्रस्य पाकस्थामनाम्नो राज्ञो दानस्तुतिप्रतिपादिकाः। अतस्तद्देवताकाः** (ऋ० ८.३ सा० भा०)। इनके नाम का उल्लेख उक्त सूक्त के २१, २२ और २४ वीं ऋचाओं में मिलता है।

४३. पूषा (८.४.१५-१८) - द्र० - ऋ० भाग-१ ।

४४. पृथिवी-अंतरिक्ष (७.१०४.२३उत्त०) - ऋग्वेद के कई स्थानों पर द्यावा-पृथिवी का देवत्व तो दृष्टिगोचर होता है; परन्तु पृथिवी-अन्तरिक्ष का युग्म देवत्व केवल ऋ० ७.१०४.२३ ऋचा के उत्तरार्ध में ही मिलता है। आचार्य सायण ने ऋग्वेद भाष्य में इनके देवत्व को उल्लिखित किया है **त्रयोविंश्या - पूर्वाऽर्धर्चो वसिष्ठस्य प्रार्थनापरः। अतस्तद्देवताकः। उत्तरोऽर्धर्चः पृथिव्यन्तरिक्षदेवत्यः** (ऋ० ७.१०४ सा० भा०)। इस ऋचा में पृथिवी-अन्तरिक्ष से पापों से रक्षा करने की प्रार्थना की गयी है। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार द्यौ, अन्तरिक्ष में और अन्तरिक्ष, पृथिवी में प्रतिष्ठित है - **द्यौरन्तरिक्षे प्रतिष्ठिता, अन्तरिक्षं पृथिव्याम् (प्रतिष्ठितम्-ऐत० ब्रा० ३.६)**। शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट है कि अन्तरिक्ष ही द्यावा-पृथिवी को थामता है - **अन्तरिक्षेण हीमे द्यावापृथिवी विष्टब्धे** (शत० ब्रा० १.२.१.६)।

४५. पृथुश्रवा कानीत (८.४६.२१-२४) - पृथुश्रवा कानीत की दानस्तुति ऋग्वेद की चार ऋचाओं में प्रतिपादित की गयी है। कनीत पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ 'कानीत' अपत्यवाचक पद संयुक्त हुआ। इन्होंने 'वश अश्व्य' नामक ऋषि को विपुल परिमाण में शोभन धन दान किया था। इसी दान की स्तुति के देवत्व को आचार्य सायण ने स्वीकार किया है - **'आ स एतु' इत्यादिभिश्चतसृभिः कनीतपुत्रस्य पृथुश्रवसो दानं स्तूयते। अतस्तद्देवताकाः** (ऋ० ८.४६ सा० भा०)। शौनक ऋषि ने इनके देवत्व

को वर्णित किया है - **वशायाश्व्याय यत्प्रादात्कानीतस्तु पृथुश्रवाः तदत्र स्तूयते दानमा स एत्वेवमादिभिः** (बृह० ६.७९-८०)।

४६. **प्रस्कण्व (८.५५; ८.५६.१-४)** - प्रस्कण्व की दानस्तुति का देवत्व ऋग्वेद ८.५५ और ८.५६.१-४ में दृष्टिगोचर होता है। ऋग्वेद अनुक्रमणी में इनकी दानस्तुति का देवत्व वर्णित होता है - **भूरीत् पञ्च कृशः प्रस्कण्वस्य दानस्तुतिर्गायत्रं तु तृतीयान्त्ये अनुष्टुभौ'** (वाल० सू० भा०)। ऋषि शौनक ने बृहद्देवता ग्रन्थ में प्रस्कण्व द्वारा पृषध्र को दिये गये दान की स्तुति के देवत्व को उल्लिखित किया है - **प्रस्कण्वश्च पृषध्रस्य प्रादाद्यद्वसु किंचन** (बृह० ६.८५)। कण्व पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद काण्व जोड़ा जाता है।

४७. **प्रस्वापिनी उपनिषत् (७.५५.२-८)** - ऋग्वेद अनुक्रमणी में प्रस्वापिनी उपनिषत् का देवत्व भी सात ऋचाओं (७.५५.२-८) में दृष्टिगोचर होता है - **बृहत्यादयोऽनुष्टुभः प्रस्वापिन्य उपनिषत् इति** (ऋ० ७.५५ सा० भा०)। बृहद्देवताकार ने इन ऋचाओं को प्रसुप्त करने वाली कहा है - **वास्तोष्पत्यश्चतस्रस्तु सप्त प्रस्वापिन्यः स्मृताः** (बृह० ६.२)। वसिष्ठ द्वारा वरुण के घर में प्रवेश के समय कुत्ते द्वारा भौंकने पर उन्होंने दो ऋचाओं द्वारा कुत्ते को सुला दिया - **स तं प्रस्वापयामास जनमन्यं च वारुणम्** (बृह० ६.१३)।

४८. **बृहस्पति (७.९७.२, ४-८)** - द्र० - ऋ० भाग-१।

४९. **भग (७.४१.२-६)** - द्र० - ऋ० भाग-१।

५०. **मरुद्गण (७.५६-५८; ८.७, २०)** - द्र० ऋ० भाग-१।

५१. **मरुत् - अग्नि (८.१०३.१४)** द्र० - ऋ० भाग-२।

५२. **मित्रावरुण (७.५०१; ७.६१)** - द्र० - ऋ० भाग-१।

५३. **रुद्रगण (७.४६; ७.५९.१२)** - द्र० - ऋ० भाग-१।

५४. **लिङ्गोक्त देवता (७.४१.१; ७.४४.१)** - द्र० - ऋ० भाग-१।

५५. **वरु सौषाम्ण (८.२४.२८-३०)** - ऋग्वेद के आठवें मण्डल के चौबीसवें सूक्त की तीन ऋचाएँ वरु सौषाम्ण की दानस्तुति के लिए समर्पित हैं। बृहद्देवताकार ने इनके देवत्व को उपन्यस्त किया है - **यथा वरो सुषाम्ण इत्युत्तमस्त्वौषसस्तृचः** (बृह० ६.६३)। आचार्य सायण ने इन्हें सुषामा राजा के पुत्र वरु नामक राजा के रूप में उल्लिखित किया है - **अन्त्यासु तिसृषु सुषामाख्यस्य राज्ञः पुत्रस्य वरुनाम्नो राज्ञो दानं स्तूयते। अतस्तद्देवताकाः** (ऋ० ८.२४ सा० भा०)। व्यश्वपुत्र विश्वमना ऋषि को वरु सौषाम्ण राजा द्वारा दिये गये दान का विस्तृत विवेचन ऋग्वेद ८.२४.२८ के सायण भाष्य में मिलता है - **हे वरो वरुनामक राजन् सुषाम्णे सुसाम्ने सुषामाख्यं राजानं स्वपितरमुद्दिश्य तस्योत्तमलोकप्राप्त्यर्थं .... व्यश्वेभ्यः व्यश्वपुत्रेभ्यः अस्मभ्यं धनमावह।**

५६. **वरुण (७.८६-८९; ८.४१)** - द्र० -ऋ० भाग-१।

५७. **वसिष्ठ और वसिष्ठ पुत्रगण (७.३३.१-१४)** - ऋग्वेद के सातवें मण्डल के तैंतीसवें सूक्त में वसिष्ठ और उनके पुत्रों का परस्पर संवाद है। इस सूक्त की प्रथम नौ ऋचाएँ वसिष्ठ मैत्रावरुणि द्वारा दृष्ट हैं। इनमें उन्होंने अपने पुत्रों को लक्ष्य करके वार्तालाप किया है, अतएव **'या तेनोच्यते सा देवता'** सूत्र के अनुसार यहाँ वसिष्ठ पुत्रगण का देवत्व दृष्टिगोचर होता है। इसके विपरीत १०-१४ तक की ऋचाएँ उनके पुत्रगणों द्वारा दृष्ट हैं और वसिष्ठ देवता हैं। आचार्य सायण ने वसिष्ठ और वसिष्ठ पुत्रगणों के देवत्व को प्रमाणित किया है **वसिष्ठ पुत्राणां स्तूयमानत्वात्त एव देवता। 'विद्युतो ज्योतिः' इत्यादिभिर्दशभ्यादिभिः स्वपुत्रैर्वसिष्ठः स्तूयते। अतो वसिष्ठो देवता** (ऋ० ७.३३ सा० भा०)।

५८. **वाक् (८.१००.१०, ११)** द्र० - ऋ० भाग-१।

५९. **वाजिन् (७.३८.७, ८)** - ऋग्वेद की दो ऋचाओं (७.३८.७,८) में 'वाजिन्' देवता स्तुत हुए हैं। आचार्य सायण ने इन ऋचाओं के भाष्य में वाजिन् को (बहुवचन वाचक) देवगणों के रूप में वर्णित किया है। ऐतरेय ब्राह्मण में इन्द्रियों के पराक्रम को 'वाजिन्' कहा गया है **इन्द्रियं वै वीर्यं वाजिनम्** (ऐत० ब्रा० १.१३)। अश्व भी पराक्रम का - शक्ति का प्रतीक होने से 'वाजिन्' शब्द वाच्य है। गति एवं शक्ति संयुक्त होने के कारण अग्नि, वायु और सूर्य को भी वाजिन् संज्ञा से निरूपित किया गया है **अग्निर्वायुः सूर्यः**। ते वै वाजिनः(तैत्ति० ब्रा० १.६.३.९)। गौ, अश्व, पुरुष और अन्नों में व्याप्त शक्ति को भी वाजिन् रूप माना गया है - **यदा वै गौरश्वः पुरुषोऽन्नस्य सुहितो भवत्यथ स वाजी भवति** (जैमि० ब्रा० ३.२९९)। आचार्य सायण ने इनके देवत्व को स्पष्ट निर्दिष्ट किया है - **सप्तम्यष्टम्यौ वाजिदेवताके** (ऋ० ७.३८ सा० भा०)। ऋषि शौनक ने इनके देवत्व को इस प्रकार निर्दिष्ट किया है - **उदु ष्य सवितुः सूक्तं शं नो वाजिन दैवतः** (बृह० ५.१६७)।

६०. **वायु (७.९०.१-४; ८.२६.२०-२५)** द्र० ऋ० भाग-१।

६१. **वास्तोष्पति (७.५४; ७.५५.१)** - वास्तोष्पति का देवत्व ऋग्वेद में चार स्थानों पर मिलता है। चारों ऋचाओं (७.५४;



७.५५.१) में 'वास्तोष्पते' शब्द उल्लिखित हुआ है। आचार्य सायण ने इन ऋचाओं के भाष्य में इन्हें गृहपालक देव कहकर सम्बोधित किया है। इनके देवत्व को भाष्य में इस प्रकार प्रमाणित किया है - **'वास्तोष्पते' इति तृचात्मकमेकविंशं सूक्तं वसिष्ठस्यार्षं त्रैष्टुभं वास्तोष्पत्यम्** (ऋ० ७.५४ सा० भा०)। वास्तोष्पति देव से सुख-ऐश्वर्य की कामना की गयी है - **वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या** (ऋ० ७.५४.३)। बृहद्देवता (२.४४) ग्रन्थ में इनके देवत्व को स्पष्ट उल्लिखित करते हुए इन्हें संसार को आवास प्रदान करने वाला कहा है - **वास्तु प्रयच्छंल्लोकस्य मध्यमः स तु पाति यत्। तेन वास्तोष्पतिं प्राह चतुर्भिरिममौर्वशः।** निरुक्त में भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है - **वास्तोष्पतिः - वास्तुर्वसतेर्निवासकर्मणः। तस्य पाता वा पालयिता वा** (नि० १०.१६)।

६२. विभिन्दु (८.२.४१-४२) - ऋग्वेद की दो ऋचाओं (८.२.४१-४२) में राजा विभिन्दु की दान स्तुति वर्णित हुई है। बृहद्देवताकार ने इन्हें काशी के राजा (काश्य) के रूप में उल्लिखित किया है - **शिक्षेत्यृग्भ्यां तु काश्यस्य विभिन्दोः परिकीर्तितम्** (बृह० ६.४२)। आचार्य सायण ने ऋग्वेद अनुक्रमणी का उद्धरण देकर इनके देवत्व को विवेचित किया है **अन्त्याभ्यां मेधातिथिर्विभिन्दोर्दानं तुष्टाव** (ऋ० ८.२ सा० भा०)। इन ऋचाओं के भाष्य में इनके दान का वर्णन किया गया है - **विभिन्दुनाम्नो राज्ञः सकाशाद्बहु धनं लब्ध्वा तदीयं दानमिदमादिकेन द्विऋचेन प्रशंसति** (ऋ० ८.२.४१ सा० भा०)। इनके नाम के साथ इनके अपत्यवाचक पद का कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

६३. विश्वेदेवा (७.३५-३७; ८.२७-३०) - द्र० - ऋ० भाग-१।

६४. विष्णु (७.९९.१-३; ७.१००) - द्र० - ऋ० भाग-१।

६५. वैश्वानर (अग्नि) (७.५-६, १३) - द्र० - ऋ० भाग-१।

६६. श्रुतर्वा आर्क्ष्य (८.७४.१३-१५) - श्रुतर्वा आर्क्ष्य राजा ने ऋषि गोपवन आत्रेय को जो दान दिया है, उसकी स्तुति ऋग्वेद की तीन ऋचाओं (८.७४.१३-१५) में उपन्यस्त है। आचार्य सायण ने अपने भाष्य में ऋग्वेद अनुक्रमणी के उद्धरण द्वारा इनके देवत्व को प्रमाणित किया है - **अन्त्यास्तिस्रोऽनुष्टुभ आर्क्षस्य श्रुतर्वणो दानस्तुतिः** (ऋ० ८.७४ सा० भा०)। ऋक्ष के पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ अपत्यवाचक पद आर्क्ष्य संयुक्त हुआ है। बृहद्देवताकार ने भी इनकी दानस्तुति के देवत्व को वर्णित किया है - **आत्मानमात्मना स्तुत्वा स्तौति दानं श्रुतर्वणः** (बृह० ६.९५)।

६७. सरस्वती (७.९५.१, २, ४-६) - द्र० - ऋ० भाग-१।

६८. सरस्वान् (७.९५.३; ७.९६.४-६) - द्र० - ऋ० भाग-१।

६९. सविता (७.३८.१-६; ७.४५) - द्र० - ऋ० भाग-१।

७०. सुदास पैजवन (७.१८.२२-२५) - वसिष्ठ ऋषि ने ऋग्वेद की चार ऋचाओं (७.१८.२२-२५) में सुदास पैजवन के दान की स्तुति की है। एक अन्य स्थान 'नकिः सुदासो' से आरम्भ ऋचा (ऋ० ७.३२.१०) में भी सुदास के दान को उल्लिखित किया गया है; परन्तु इस स्थान पर प्रमुख देवता इन्द्र हैं। पिजवन के पुत्र होने के कारण इनके नाम के साथ 'पैजवन' अपत्यवाचक पद संयुक्त हुआ है। आचार्य सायण ने एक ऋचा के भाष्य में दिवोदास को ही पिजवन नामान्तर से वर्णित किया है - **सुदासः राज्ञः पितरं दिवोदासं न दिवोदासमिव। दिवोदास इति पिजवनस्यैव नामान्तरम्।................ पैजवनस्य पिजवनपुत्रस्य सुदासः** (ऋ० ७.१८.२५ सा० भा०)। बृहद्देवताकार ने भी इनकी दानस्तुति के देवत्व को उपन्यस्त किया है - **नकिः सुदास इत्यस्यां दानं पैजवनस्य तु। वसिष्ठेन चतुर्भिस्तु द्वे नस्तुरिति कीर्तितम्** (बृह० ५.१६२-१६३)।

७१. सूर्य (७.६०.१; ८.१०१.११) - द्र - ऋ० भाग - १।

७२. सोम (७.१०४.९, १२, १३; ८.४८) - द्र - ऋ० भाग - १।

अन्य देवसमूह - वैदिक ऋषियों और देवताओं के सम्बन्ध में यह सूत्र प्रसिद्ध है - **यस्य वाक्यं स ऋषिः। या तेनोच्यते सा देवता** (ऋ० १०.१० सा० भा०)। इस सूत्र के अनुसार जिन वस्तुओं, पात्रों, उपकरणों, मनुष्यों और अमूर्त भावों को ऋचाओं में वर्ण्य विषय के रूप में उल्लिखित किया गया है, वे सब देवता की श्रेणी में मान्य हुए हैं। जैसे - **आशीः** (आशीर्वाद), **इज्यास्तवो** - (यजमान प्रशंसा), **इध्म अथवा समिद्ध अग्नि** (हवि), **गौ** (पशु), **दम्पती** (मानव), **बर्हि** (उपकरण), **मण्डूक समूह** (प्राणी), **वनस्पति** (हवि), **स्वाहाकृति** (अमूर्त भाव), **हविस्तुति** (अमूर्त भाव) आदि। इनकी स्तुति भी ऋग्वेद में की गयी है, अतएव इन्हें भी देवता की श्रेणी में परिगणित किया गया है।



परिशिष्ट - ३

ऋग्वेद भाग - ३ में प्रयुक्त छन्दों का संक्षिप्त विवरण

क्र० छन्द-नाम	पाद-विवरण	कुल वर्ण	उदाहरण
१. अतिजगती	१२+१२+१२+८+८	५२	८.९७.१३
२. अनुष्टुप्	८+८+८+८	३२	७.५५.५, ७
क. विराट् अनुष्टुप्	१०+१०+१० (अथवा)	३०	७.२२.४
	११+११+११	३३	७.१.१
३. उष्णिक्[1]	८ +८+१२	२८	८.१२.३
क. ककुप्	८+१२+८	२८	८.९.५
ख. ककुम्न्यङ्कुशिरा	११+१२+४	२७	८.४६.१५
ग. पुरउष्णिक्	१२+८+८	२८	७.६६.१६
४. गायत्री	८+८+८	२४	७.१५.२
क. उष्णिग्गर्भा	६+७+११	२४	८.२५.२३
ख. पादनिचृत्	७+७+७	२१	८.३१.१०; ८.४६.१
ग. प्रतिष्ठा	८+७+६	२१	८.११.१
घ. वर्धमाना	६+७+८	२१	८.११.२
ङ. शङ्कुमती[2]	८+५+८	२१	८.६८.१६
च. ह्रसीयसी	६+६+७	१९	८.१०३.१०
५. जगती	१२+१२+१२+१२	४८	८.९.१२
क. महापंक्ति	८ +८+८+८+८+८	४८	८.४०.५, ७
ख. द्विपदा (चतुर्विंशिका)	१२+१२	२४	८.४६.१३
६. त्रिष्टुप्	११+११+११+११	४४	८.१.३३
क. उपरिष्टाज्ज्योति	१२+१२+१२+८	४४	८.३५.७-९
ख. द्विपदा	११+११	२२	७.१७.१-२
ग. मध्येज्योति[3]	१२+८+१२+१२	४४	८.१०.२
घ. महाबृहती	१२+८+८+८+८	४४	८.३५.२३
ङ. विराड्रूपा	११+११+११+८	४१	८.१०३.५

१. उष्णिक् छन्द के एक भेद, परोष्णिक् का भी यही लक्षण है।

२. पिंगलाचार्य रचित छन्द-शास्त्र (३.५५) के अनुसार जिस छन्द के किसी एक पाद में पाँच अक्षर होते हैं, उसे 'शङ्कुमती' छन्द कहते हैं। शङ्कुमती गायत्री का एक भेद (६+६+६+५) भी निर्दिष्ट है।

३. पिंगल सूत्र के अनुसार मध्येज्योति त्रिष्टुप् के एक भेद (८+८+११+८ +८) के रूप में है।



क्र० छन्द-नाम	पाद-विवरण	कुल वर्ण	उदाहरण
७. द्विपदा विराट्	१२+८ अथवा १०+१०	२०	७.३२.३
८. पंक्ति	८+८+८+८+८	४०	८.३५.२४
क. आस्तार पंक्ति	८+८+१२+१२	४०	८.१०.४
ख. प्रस्तार पंक्ति	१२+१२+८+८	४०	७.९६.३
ग. विपरीता पंक्ति	८+१२+८+१२	४०	८.४६.१२
घ. विराट् पंक्ति	१०+१०+१०+१०	४०	८.९६.४
ड. संस्तार पंक्ति	१२+८+८+१२	४०	८.४६.२२
च. सतोबृहती पंक्ति	१२+८+१२+८	४०	८.१०१.४
९. प्रगाथ			
क. आनुष्टुभ प्रगाथ	८+८+८+८+८+८		
(अनुष्टुप् + २ गायत्री)	+८+ ८+८ +८	८०	८.६८.१-३
ख. काकुभ प्रगाथ	८+१२+८+१२+८	६८	८.२०.१-२
(ककुप् + सतोबृहतीपंक्ति)	+१२+८		
ग. बार्हत प्रगाथ	८+८+१२+८+१२+८	७६	७.५९.१-२
(बृहती + सतोबृहती पंक्ति)	+१२+८		
घ. विपरीतोत्तर प्रगाथ	८+८+१२+८	७६	८.४६.११-१२
(बृहती + विपरीता पंक्ति)	८+१२+८+१२		
१०. बृहती	८+८+१२+८	३६	७.१४.१; ८.१.६, ९, ११, १२, २०, २४, २७
क. उपरिष्टाद्बृहती	८+८+८+१२	३६	७.५५.२-४
ख. पिपीलिकामध्या	१३+८+१३	३४	८.४६.१४
ग. विषमपदाबृहती	९+८+११+८	३६	८.४६.२०
११. शक्वरी	८+८+८+८+८+८+८	५६	८.३६.५-६



परिशिष्ट - ४

ऋग्वेद संहितायाः वर्णानुक्रम-सूची, भाग-३

अंसेष्वा मरुतः खादयो ७,५६,१३
अक्षणश्चिद् गातुवित्तरा ८,२५,९
अगन्म महा नमसा ७,१२,१
अगोरुधाय गविषे ८,२४,२०
अग्न आ याह्यग्निभिः ८,६०,१
अग्निं वः पूर्व्यं हुवे ८,२३,७
अग्निं वः पूर्व्यं गिरा ८,३१,१४
अग्निं विश्वायुवेपसं ८,४३,२५
अग्निं वो देवमग्निभिः ७,३,१
अग्निं वो देवयज्यया ८,७१,१२
अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां ८,१०२,७
अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं ८,७१,११
अग्निः प्रत्नेन मन्मना ८,४४,१२
अग्निः शुचिव्रततमः ८,४४,२१
अग्निनेन्द्रेण वरुणेन ८,३५,१
अग्निं दूतं पुरो दधे ८,४४,३
अग्निं द्वेषो योतवै नो ८,७१,१५
अग्निं धीभिर्मनीषिणः ८,४३,१९
अग्निं न मा मथितं सं दिदीपः ८,४८,६
अग्निं नरो दीधितिभिः ७,१,१
अग्निमग्निं वो अध्रिगुं ८,६० १७
अग्निमस्तोष्यृग्मिय ८,३९,१
अग्निमिन्धानो मनसा ८,१०२,२२
अग्निमीळिष्वावसे ८,७१,१४
अग्निं मन्द्रं पुरुप्रियं ८,४३,३१
अग्निरिषां सख्ये ददातु नः ८,७१,१३
अग्निरीशे बृहतो अध्वरस्य ७,११,४
अग्निरुक्थे पुरोहितः ८,२७,१
अग्निर्जाता देवानामग्निः ८,३९,६
अग्निर्देवेषु संवसुः ८,३९,७
अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत् ८,४४,१६
अग्निर्हि जानि पूर्व्यः ८,७,३६
अग्निस्त्रीणि त्रिधातूनि ८,३९,९
अग्नी रक्षांसि सेधति ७,१५,१०
अग्ने कविर्वेधा असि ८,६०,३
अग्ने घृतस्य धीतिभिः ८,१०२,१६
अग्ने जरितर्विश्पतिः ८,६०,१९
अग्ने तव त्ये अजर ८,२३,११
अग्ने त्वं यशा अस्या ८,२३,३०
अग्ने धृतव्रताय ते ८,४४,२५
अग्ने नि पाहि नस्त्वं ८,४४,११
अग्ने भव सुषमिधा ७,१७,१
अग्ने भ्रातः सहस्कृत ८,४३,१६
अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं ८,३९,३
अग्ने माकिष्टे देवस्य ८,७१,८
अग्ने याहि दूत्यं ७,९,५
अग्ने याहि सुशस्तिभिः ८,२३,६
अग्ने रक्षा णो अंहसः ७,१५,१३
अग्ने वीहि हविषा ७,१७,३
अग्ने स्तोमं जुषस्व मे ८,४४,२
अघ्नते विष्णवे वयं ८,२५,१२
अङ्गिरस्वन्ता उत विष्णुवन्ता ८,३५,१४
अचेति दिवो दुहिता मघोनि ७,७८,४
अचेत्यग्निश्चिकितुः ८,५६,५
अच्छा गिरो मतयो ७,१०,३
अच्छा च त्वैना नमसा ८,२१,६
अच्छा नः शीरशोचिषं ८,७१,१०
अच्छा नो अङ्गिरस्तमं ८,२३,१०
अच्छायं वो मरुतः ७,३६,९
अच्छा हि त्वा सहसः सूनो ८,६०,२
अच्युता चिद्वो अज्मन्ना ८,२०,५
अजिरासो हरयो ये त आशवो ८,४९,८
अजैष्माद्यासनाम — उषो ८,४७,१८
अत्रे चिदस्मै कृणुथा ८,२७,१८
अतः समुद्रमुद्वतः ८,६,२९
अतः सहस्रनिर्णिजा ८,८,११
अतश्चिदिन्द्र ण उपा ८,९२,१०
अतारिष्म तमसस्पारमस्य ७,७३,१
अतिथिं मानुषाणां ८,२३,२५
अति नो विषिता पुरु ८,८३,३
अतिविद्धा विथुरेणा चिदस्रा ८,९६,२
अतीदु शुक्र ओहत ८,६९,१४
अतीहि मन्युषाविणं ८,३२,२१
अत्यासो न ये मरुतः ७,५६,१६
अत्रा वि नेमिरेषां ८,३४,३
अत्रीणां स्तोममद्रिवो मह ८,३६,६
अत्रेरिव शृणुतं पूर्वस्तुतिं ८,३५,१९
अदब्धस्य स्वधावतः ८,४४,२०
अदर्शि गातुवित्तमः ८,१०३,१
अदान्मे पौरुकुत्स्यः ८,१९,३६
अदितिर्न उरुष्यतु ८,४७,९
अदितिर्नो दिवा ८,१८,६
अद्याद्या श्वः श्व इन्द्र ८,६१,१७
अद्या मुरीय यदि यातुधानः ७,१०४,१५
अद्रोघमा वहोशतो यविष्ठ्य ८,६०,४
अधः पश्यस्व मोपरि ८,३३,१९
अध ज्मो अधवा दिवः ८,१,१८
अध द्रप्सो अंशुमत्या उपस्थे ८,९६,१५
अध प्रियमिषिराय ८,४६,२९
अध प्लायोगिरति दासदन्यान् ८,१,३३
अध यच्चारथे गणे ८,४६,३१
अध श्रुतं कवषं ७,१८,१२
अध स्या योषणा मही ८,४६,३३
अधा ते अप्रतिष्कुतं ८,९३,१२
अधा त्वं हि नस्करः ८,८४,६
अधा न्वस्य संदृशं जगन्वान् ७,८८,२
अधा मही न आयस्यना ७,१५,१४
अधा ह यन्तो अश्विना ७,७४,५
अधा हीन्द्र गिर्वणः ८,९८,७
अधि न इन्द्रैषां ८,८३,७
अधि या बृहतो दिवः ८,२५,७
अधीव यद्गिरीणां ८,७,१४
अधुक्षत् पिप्युषीमिषम् ८,७२,१६
अध्वर्यवा तु हि षिञ्च ८,३२,२४
अध्वर्यवोऽरुणं दुग्धमंशुम् ७,९८,१
अध्वर्यो द्रावया त्वं ८,४,११
अनर्वाणो ह्येषां पन्था ८,१८,२
अनर्शरातिं वसुदामुप स्तुहि ८,९९,४





































: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :



ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें : http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता :** विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार :** जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक :** मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।
- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार :** जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता :** जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्द्घोषक :** जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी :** जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक :** जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्‌बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी :** जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक :** जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक :** जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्‌भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक :** जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना :** जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।